# सिरमौर रियासत का इतिहास

कंवर रणज़ोर सिंह



# सिरमौर रियासत का इतिहास

कंवर रणज़ोर सिंह

अनुवाद
ए0एन0 वालिया




हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी शिमला

# सिरमौर रियासत का इतिहास

मार्गदर्शन : सुदर्शन वशिष्ठ
प्रकाशक सहयोगी : रमेश जसरोटिया
अनुवाद सहायोग : सूनृता गौतम, डॉ. श्यामा ठाकुर
सामग्री सहयोग : देवराज शर्मा
टाईप सैटिंग : रवीन्द्र नाथ, भूषण लता



प्रकाशक : हिमाचल कला संस्कृति
भाषा अकादमी शिमला

मूल्य : सजिल्द 300/–
पेपर बैक 275/–

प्रथम संस्करण : 2007

मुद्रक : मै. ईशान ऑफसेट एण्ड
लेज़र प्रिंट्स दिल्ली 110032

ISBN : 81 - 86755-53-5

# आमुख

हिमाचल प्रदेश में अनेक पुरातन पाण्डुलिपियों के साथ दुर्लभ पुस्तकें उपलब्ध हैं जिन में प्रदेश के इतिहास और संस्कृति की जानकारी दी गई है। किन्तु ऐसी पुस्तकें आम पाठकों के लिए उपलब्ध नहीं हैं। कुछ पुस्तकें ऐसी हैं जिनकी एक या दो प्रतियां ही उपलब्ध हैं। इसमें से अधिकांश उर्दू या फ़ारसी लिपि में हैं जिन्हें अब लोग पढ़ना नहीं जानते।

हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी 'दुर्लभ पुस्तक प्रकाशन' योजना के अन्तर्गत ऐसी महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का अनुवाद करवा कर प्रकशित कर रही है, यह प्रशंसनीय है। अभी तक अकादमी द्वारा इस महत्त्वपूर्ण शृखंला में 'तारीख़–ए–रियासत हण्डूर तथा तवारीख़ व जुगराफिया रियासत बिलासपुर कहलूर', 'पंजाब के प्रमुख राजा तथा नामी परिवार', 'कांगड़ा के कटोच वंश का इतिहास', जैसी पुस्तकों का उर्दू फ़ारसी से अनुवाद करवा कर प्रकाशित किया गया है। अकादमी द्वारा 'सिरमौर रियासत का इतिहास' पुस्तक को उर्दू–फारसी से हिन्दी में अनूदित करवा कर प्रकाशित करवाया गया है, यह एक सराहनीय प्रयास है। इस से एक तो दुर्लभ पुस्तक पाठकों तथा शोधकताओं को उपलब्ध होगी और दूसरे हिन्दी भाषा में उपलब्ध होगी। उर्दू और फ़ारसी के जानकार तो अब कम रह गये हैं।

अकादमी को ऐसे और कार्य भी हाथ में लेने चाहिएं। प्रदेश के इतिहास तथा संस्कृति की जानकारी के लिए ऐसी पुस्तकों का प्रकाशन बहुत उपयोगी है।

(वीरभद्र सिंह)
मुख्य मंत्री, हिमाचल प्रदेश
एवं
अध्यक्ष, हिमाचल अकादमी

# तारीख़–ए–सिरमौर

## हालात–ए–क़दीम–ओ–हाल रियासत सिरमौर

मय हालात राजगान व मुख़्तसर तजकरा–ए–खानदान
चंदरवंश व जयसलमेर, नीज़ मुख़्तसर हालात
मज़हब–ए–अहल–ए–हनूद व इसलाम


**मुअल्लिफ़**
**कंवर रणज़ोर सिंह साहिब रईस नाहन**


**रियासत सिरमौर पंजाब**


मतबुआ इंडियन प्रैस इलाहाबाद
1912

# एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज

हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी गत कई वर्षों से प्रदेश में उपलब्ध पाण्डुलिपियों तथा दुर्लभ पुस्तकों के संरक्षण में लगी हुई है। राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन के माध्यम से प्रदेश में उपेक्षित पाण्डुलिपियों को प्रकाश में लाया जा रहा है। इसी प्रकार दुर्लभ पुस्तकों के अनुवाद करवा कर प्रकाशन के द्वारा लुप्तप्रायः इतिहास व संस्कृति सामने आ रही है। हमारे प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति के ग्रन्थ उर्दू व फारसी में हैं जिस कारण आम पाठकों तथा शोधार्थियों के लिये सुगम नहीं हैं। इन का अंग्रेजी या हिन्दी में अनुवाद करवा कर प्रदेश की इस थाती को सस्ते दामों पर शोधकर्ताओं के लिये उपलब्ध करना अकादमी की प्रमुख योजनाओं में है।

**सिरमौर का इतिहास** भी इसी श्रृंखला में एक और उपलब्धि है। सिरमौर रियासत के राजघराने के एक महत्त्वपूर्ण सदस्य कंवर रणजोर सिंह ने लगभग सौ वर्ष पूर्व यह पुस्तक फारसी लिपि में लिखी। राजघराने से सम्बन्धित होने के कारण इन्हें रियासत में होने वाली घटनाओं की प्रामाणिक जानकारी थी। उन्होंने राजा फतेह प्रकाश और उन के पोते शमशेर प्रकाश द्वारा रियासत के प्राचीन काल से घटित घटनाओं के आधार पर तैयार किए रिकार्ड का गहन अध्ययन किया। नाहन के जगन्नाथ मंदिर व अन्य मंदिरों के पुजारियों से जानकारी ली। बड़े श्रम से उन्होंने उस समय के प्रतिष्ठित इतिहासकारों, जैसे कर्नल टॉड, आर.सी.दत्त, डब्ल्यू. डब्ल्यू. हंटर आदि

को भी पढ़कर एक सम्पूर्ण ग्रन्थ को अंतिम रूप दिया। पुस्तक में इतिहास के साथ–साथ भूगोल, तीर्थस्थान, मंदिर, नदी–नालों, पशु–पक्षियों की भी जानकारी दी गई है। शासकों द्वारा समय समय पर करवाए गए विकास कार्यों का चित्रण भी सुंदर ढंग से किया गया है जिस से पुस्तक रोचक बन गई है।

इस पुस्तक में इतिहास, भूगोल, वन–वनस्पति, पशु–पक्षी, विकास सभी का एक साथ वर्णन मिलता है। आशा है यह शोधकर्त्ताओं, पाठकों के लिए एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज साबित होगी।

पुस्तक का अनुवाद कार्य श्री अमर नाथ वालिया द्वारा किया गया है। जिसके लिये हम उनके आभारी हैं।

वैशाखी, 2007

**सुदर्शन वशिष्ठ**
सचिव अकादमी

# अनुवादक की कलम से

मूल पुस्तक 'तारीखे़–सिरमौर' नाहन के राजपरिवार के सदस्य कंवर रणज़ोर सिंह द्वारा सन् 1912 में लिखी गई थी। इस में रियासत के प्राचीन काल से लेकर (जब जैसलमेर के भट्टी राजघराने का सदस्य राजा बासू सिरमौर में आकर शासन करने लगा था) 1911 तक की ऐतिहासिक, राजनैतिक और सामाजिक घटनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन है। यह पुस्तक फारसी लिपि में लिखी गई थी, जिसका मुगल और अंग्रेजी शासन काल में आम प्रचलन था।

लगभग सौ वर्ष पुरानी होने के कारण अब इस पुस्तक की गिनी चुनी प्रतिलिपियां ही पुस्तकालयों में उपलब्ध हैं और वह भी समय और मौसम की मार से नष्ट होती जा रही हैं। अतः पुस्तक के महत्त्व को महसूस करते हुए अकादमी ने इसे अनूदित करवा कर प्रकाशित करने का निर्णय लिया है ताकि इसमें उपलब्ध धरोहर पाठकों और शोधकर्ताओं तक आसानी से उचित मूल्य पर पहुंचाया जा सके और यह बहुमूल्य धरोहर आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित रह सके।

इस पुस्तक के लेखन में कंवर रणज़ोर सिंह ने सिरमौर, पड़ोसी रियासतों और राजस्थान से सम्बन्धित काफी सामग्री का अध्ययन किया है, और पुस्तक को एक संपूर्ण इतिहास ही नहीं बनाया बल्कि इस में और भी कई प्रकार की बहुमूल्य जानकारियां शामिल कर दी हैं। उन्होंने 19 वीं शताब्दी में लिखी गई इतिहास की बहुत सी पुस्तकों से सामग्री एकत्रित कर और उसका शोध कर इसमें शामिल

किया। जिन पुस्तकों से कंवर रणजोर सिंह लाभान्वित हुए उनमें मुख्यतः कर्नल टॉड, हर बिलास, डब्ल्यू0 डब्ल्यू0 हंटर, आर.सी.दत्त आदि की पुस्तकें हैं।

कंवर साहिब ने जहां कहीं से भी सूचना मिली, उसे बड़ी मेहनत से एकत्रित किया और पाठकों तक पहुंचाया। पुस्तक में सिरमौर के शासकों द्वारा करवाए गए विकास कार्यों का विस्तार पूर्वक वर्णन है। साथ ही इस में गोरखा युद्ध, रियासतों के आपसी रिश्तों और मुगल बादशाहों के सिरमौर के राजाओं को जारी किए गए शाही फरमानों का भी जिक्र है, जो पुस्तक को रोचक और शोधकर्ताओं के लिए लाभप्रद बनाता है।

मैं अकादमी का आभारी हूं जिस ने इस बहुमूल्य पुस्तक के अनुवाद का उत्तरदायित्व मुझे सौंपा।

इस पुस्तक के अनुवाद के दौरान मैंने जो जुड़ाव इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक रचना के साथ पाया, उस की मुझे प्रसन्नता है। मैंने पूरा प्रयत्न किया है कि अनुवाद में कोई त्रुटि न रहे, तथापि/पाठक/ त्रुटि पाएं तो इसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं।

**अमर नाथ वालिया**
ग्रीन व्यू, लोअर जाखू
शिमला – 171001

# विषय / ग्रन्थ सूची

# भूमिका

यह बात इतिहासकारों को भली–भांति मालूम है कि हिन्दुओं की कड़ीवार इतिहास लिखने की बहुत ही कम रुचि रही है, न ही कभी उन्होंने इस तरफ ध्यान दिया कि उनके काल के हालात कड़ीवार और इतिहास के रूप में लिखे जाएं, क्योंकि वे इस विचार को पूरी तरह मानते थे कि यह संसार नश्वर है और उसकी हर चीज़ मिटने वाली है। इसलिए दुनिया के बीते हुए समय की बातों को लिखने का कोई लाभ नहीं है। वे इसी कारण जीवन का अधिकतर भाग धार्मिक शिक्षा और कर्म–काण्ड में व्यतीत करते थे। वे समझते थे कि वेदों का पढ़ना–पढ़ाना जीवन से मुक्ति पाने के लिए आवश्यक है। उस समय वेद मुंह–ज़बानी याद रखे जाते थे।

वेद के एक हिस्से के लिए 12 वर्ष, दो के लिए 24 वर्ष और तीनों के लिए 36 वर्ष का समय निर्धारित था। इसी विचार के कारण वेद को श्रुति कहते हैं अर्थात् वह शिक्षा जो श्रवण से प्राप्त की जाए। चाहे कुछ समय बाद महर्षियों ने इनको लिखित रूप देकर कुछ भागों में बांट दिया। फिर जब लिखने का रिवाज़ आम हुआ तो पहले–पहल धार्मिक पुस्तकें लिखी गईं और उसके पष्चात् दूसरी शिक्षाओं और कलाओं पर पुस्तकों की संरचना हुई। परन्तु इतिहास के रूप मे कोई विशेष किताब आरम्भ काल से नहीं लिखी गई।

वंशावलियां इत्यादि राय भाटों के पास रहती थीं मगर उनमें भी घटनाएं, उनके घटने की तिथि और वर्ष पूरे विवरण के साथ दर्ज़ नहीं किये जाते थे, इनमें केवल नाम ही नाम होते थे। इन वंशावलियों की ज़रूरत शादी–विवाह के समय जाति–गोत इत्यादि जानने के लिए होती थी और इसी कारण इनको सम्भाल कर रखा जाता था व शादी की रस्म पूरी करते समय पढ़ी जाती थीं जिनको 'शाखाचार' कहते हैं।

यह रिवाज़ हिन्दुओं में अब तक प्रचलित है।

अगर किसी विद्वान् ने किसी राजा–महाराजा के काल की घटनाओं को लिखा भी है तो उसमें कवियों की तरह काल्पनिक विचारों का ऐसा मिश्रित वर्णन कर दिया है जिस कारण असली और काल्पनिक घटना में फर्क़ करना बाद में कठिन हो गया। जो पुराण इत्यादि पुस्तकें हैं उनमें प्राचीन काल के राजाओं–महाराजाओं के समय की बातें लिखीं हैं, मगर उनकी स्थिति यह है कि उनमें हरेक घटना को धार्मिक रंग–ढंग में वर्णित किया गया है या यूं कहिए कि प्रत्येक घटना को किसी–न–किसी धार्मिक सिद्धान्त या कर्म का परिणाम बताया गया है। जिस कारण वह घटना केवल एक कहानी बन कर रह गई है और घटना के घटने का असली कारण लुप्त हो गया। सम्पूर्ण पुराण व इतिहास जिनका शब्दार्थ प्राचीन इतिहास है और जिनका उद्देश्य पुराने हालात दर्ज़ करना था, वह केवल धार्मिक पुस्तक बनकर रह गये।

असली ऐतिहासिक घटनायें शक के घेरे में आ गईं। हमारे विचार में हिन्दुस्तान का प्राचीन इतिहास प्राप्त न होने का ज़्यादातर यही कारण है। परन्तु कुछ इतिहासकारों के विचार में इसका कारण हिन्दुओं के पुस्तकालयों को बाहरी देशों के धार्मिक कट्टरवादियों द्वारा आक्रमणों से नष्ट किया जाना है। क्योंकि इन विद्वान् इतिहासकारों के विचार में हिन्दुओं जैसी सभ्य जाति में, जिन्होंने अपने काल में हरेक शिक्षा और कला को विकसित किया था, इतिहास का ज्ञान न होना एक अचम्भे की बात है। महाराज विक्रमाजीत, महाराजा भोज व पृथ्वीराज इत्यादि के काल की ऐतिहासिक घटनायें राजतरंगिणी व राजा बलि आदि पुस्तकों में मिलती है। इन पुस्तकों से सिंकदरे आज़म, अकबर आदि शिक्षा व ज्ञान के मित्र बादशाहों के समय के हालात मालूम करके फारसी भाषा में अनूदित किए गए। परन्तु उनको भी हिन्दुस्तान के प्राचीन काल के इतिहास को पूरे तौर पर तैयार करने में सफलता नहीं मिली क्योंकि ऐसी स्थिति में सही घटनाओं का कड़ीवार आसानी से प्राप्त होना अति कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव भी होता है।

लेकिन यूरोपीय विद्वानों जैसे सर विलियम जॉन्स, कोल ब्रुक, विल्सन की हिम्मत प्रशंसनीय है, जिन्होंने बड़ी मेहनत और परिश्रम से संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किया और पंडितों की सहायता लेकर संस्कृत की पुरानी पुस्तकों से हिन्दुओं की प्राचीन काल की घटनाओं को ज्ञात कर और असली घटनाओं को काव्य–कल्पना से शोध कर इतिहास के रूप में लिखा चाहे पुराने समय के पूर्ण हालात इनको भी प्राप्त न हो सके। अन्त में इनको भी लिखना पड़ा कि हिन्दुओं का कोई सम्पूर्ण इतिहास प्राप्त नहीं हो सका, जैसा कि एलफिन्स्टन साहब ने अपनी पुस्तक "हिन्द का इतिहास" के आरम्भ में लिखा है।

इन व्यक्तियों की मेहनत और परिश्रम से तथा उन घटनाओं से जो दूसरे देशों के सैलानियों ने अपनी यात्राओं के वर्णन में प्राचीन हिन्दुस्तान के बारे में लिखी थीं और जिनको यूरोपियन विद्वानों ने अंग्रेज़ी में अनुवाद करके हिन्द के पुराने हालात पर रोशनी डाली है, हम को आर्य हिन्दुओं के हालात के बारे में बहुत कुछ ज्ञात होता है इसके लिए तमाम भारतवासियों को उन विद्वानों का आभारी होना चाहिए।

अभी तक हिन्द का कोई इतिहास सम्पूर्ण ढंग से नहीं लिखा गया है जिसमें आरम्भ काल से पूरे हालात दर्ज हों। जब हिन्दुस्तान के बीते हुए काल के इतिहास की यह स्थिति है तो फिर रियासत सिरमौर के इतिहास का मौजूद होना भला क्योंकर सम्भव हो सकता है। अलबत्ता प्राचीन रियासत सिरमौर के कुछ हालात पुराने व्यक्तियों से मालूम होते हैं तथा इस रियासत के राजाओं की वंशावलियाँ भी मिलती हैं, परन्तु कड़ीवार हालात और घटनाएं किसी जगह भी नहीं लिखी गई हैं।

यह साधारण सी बात है कि जब किसी जगह का विकास होना होता है तो आरम्भ में वहां के शासक इस बारे में सोच–विचार करते हैं और फिर वहां हर प्रकार के ज्ञान और कला का विकसित होना आरम्भ हो जाता है। राजा कर्मप्रकाश के समय के बाद, जिनके शासन काल में रियासत सिरमौर का पतन हुआ था, राजा फ़तह प्रकाश का शासन काल शुरू हुआ और इस दौरान रियासत में शांति

और सुरक्षा स्थापित हुई और हर तरह का विकास हुआ।

राजा फ़तह प्रकाश को यह विचार आया कि अपने बुजुर्गों के हालात वर्षवार दर्ज किए जाएं इसलिए उन्होंने अपने बुजुर्गों के हालात, उस समय से जबकि जैसलमेर से आकर भट्टी वंश का बासु नामी राजकुमार सिरमौर में आ बसा था, रियासत के पुराने रिकॉर्ड की छान–बीन कर और पुराने लोगों से पूछताछ करके फ़ारसी भाषा में लिखवाए। यद्यपि ये हालात बहुत संक्षिप्त और बेतरतीब थे, फिर भी उनसे एक नींव बन गई।

राजा शमशेर प्रकाश को (जो कि राजा फ़तह प्रकाश के पोते और बड़े बुद्धिमान शासक हुए हैं और जिनके शासन काल में रियासत सिरमौर में ज्ञान की हरेक शाखा और कला में प्रगति हुई है) सिरमौर के इतिहास को विधिवत् तैयार करवाने का विचार आया। इसलिए उन्होंने कुछ व्यक्तियों को बारी–बारी सिरमौर का इतिहास तैयार करने के लिए नियुक्त किया, मगर यह विषय बड़ा शुष्क और अरुचिकर है जिसमें विशेष व्यक्ति ही रुचि रखते हैं। हालात को जान करके और शोध करके कड़ीवार इतिहास के रूप में लिखना बड़ा कठिन है जिसके लिए बहुत समय की आवश्यकता है तथा जिसको पूरा करना बिना परिश्रम और रुचि (interest) के अति कठिन है।

उन व्यक्तियों को, जो इस काम के लिए चुने गए थे, इसमें विशेष शौक नहीं था और न ही उन्होंने इसमें परिश्रम करना आवश्यक समझा। इसी वज़ह से सिरमौर का इतिहास राजा शमशेर प्रकाश के शासन काल में तैयार न हो सका लेकिन यह ज़रूर है कि इस पर काम उनके समय से शुरू हो गया था।

इस पुस्तक के लेखक को आरम्भ ही से कथाएं और पुराने ज़माने के हालात सुनने का शौक था। जब पुराने आदमियों से रियासत सिरमौर के प्राचीन काल के राजाओं के हालात इत्यादि सुनने का मौका मिला तो वह बड़े दिलचस्प मालूम हुए। इसलिए उन हालात को और ज़्यादा विस्तारपूर्वक मालूम करने की रुचि उत्पन्न हुई और इस बारे में और जानने की कोशिश की गई। कहावत है कि "जोइन्दा याबिन्दा" (जो तलाश करता है, वह पा ही लेता है)। सिरमौर के राजाओं की

वंशावलियां और रियासत के कुछ हालात और घटनाएं विभिन्न लोगों से प्राप्त हुईं, परन्तु बहुत ही संक्षेप में।

इसी दौरान ज्ञात हुआ कि रियासत नाहन के हैड ऑफिस में सिरमौर के पुराने ज़माने के कुछ हालात लिखित रूप में उपलब्ध हैं। लेखक ने राजा शमशेर प्रकाश से प्रार्थना की कि इन हालात को पढ़ने के लिए लेखक को इजाज़त दें। राजा साहब ने बड़ी मेहरबानी से आदेश दिया कि इस रिकॉर्ड की एक नकल करवा ली जाए। इस पर लेखक ने अपने क्लर्क द्वारा उस रिकॉर्ड को हैड ऑफिस से नकल करवा लिया।

इन हालात पर तथा दूसरी घटनाओं को ज्ञात करने के पश्चात् यह विचार पैदा हुआ कि सिरमौर का इतिहास विधिवत् और कड़ीवार तैयार किया जाए। यद्यपि यह एक महत्त्वपूर्ण और कठिन कार्य था, जिसके लिए बड़े परिश्रम और छानबीन की आवश्यकता थी, परन्तु ईश्वर की कृपा है कि वह जिस समय जिससे जो कार्य करवाना चाहता है उसके लिए वैसे ही विचार और कारण पैदा कर देता है। लेखक ने इस शेर को मद्देनज़र रखकर :

**मुश्किले नेस्त के आसां नशब्द।**
**मर्द बायद केः हारासां नशब्द।।**

(संसार में ऐसी कोई मुश्किल नहीं जो आसान न हो सके। आदमी को चाहिए कि वह इससे परेशान न हो)।।

**सिरमौर का इतिहास** लिखने की ठान ली और भगवान पर भरोसा करके इसको आरम्भ कर दिया। उन्हीं तरीकों, जो शोधकर्ताओं और इतिहासकारों ने इतिहास की छानबीन के लिए बतलाए हुए थे, के अनुसार कार्य करना शुरू कर दिया। हिन्द के इतिहास की कई पुस्तकें पढ़ना आरम्भ कीं और साथ ही पुराने आदमियों से पूछताछ करके एक डायरी तैयार करनी शुरू की।

इतिहास की पुस्तकों में, जिनका मैंने अध्ययन किया और जिनसे मुझको सिरमौर के इतिहास के हालात बारे जानकारी मिली, कर्नल टॉड साहब का "राजस्थान का इतिहास" है जिसमें इस योग्य

यूरोपियन ने बड़े परिश्रम और कठिन मेहनत से राजपूतों के वंशों की विस्तारपूर्वक जानकारी दी है और उनके बीते हुए समय के हालात और बहादुरी के कारनामों तथा उनके स्वभाव और गुणों के बारे में पूरी तरह शोध करके बड़े विस्तार से और अच्छे ढंग से लिखा है, जिसके लिए राजपूत कौम टॉड साहब की सदैव आभारी और शुक्रगुज़ार रहेगी।

इसके अतिरिक्त मिस्टर रमेश चन्द्र दत्त की पुस्तक "सिविलाईज़ेशन इन एनशियेन्ट इंडिया" (Civilization in Ancient India) से और हरबिलास शारदा की पुस्तक "हिन्दू सुपिरियोरिटी" (Hindu Superiority) जो कि इन योग्य हिन्दुस्तानियों ने हिन्दुओं के पुराने हालात बारे छानबीन करके लिखी हैं, से इस सिरमौर के इतिहास के लिखने में सहायता मिली है।

इसके अतिरिक्त उस डायरी से जो राजा फ़तह प्रकाश ने सिरमौर के हालात के सम्बन्ध में लिखवाई थी, उस मसौदा से जो राजा शमशेर प्रकाश के काल में तैयार हुआ था, कुछ सूचनाएं जगन्नाथ मन्दिर के महन्त से उपलब्ध पुराने कागज़ातों में से और कुछ हालात पुराने लोगों से पूछताछ करके इस पुस्तक में दर्ज़ किए गए हैं।

इस पुस्तक में और भी कुछ हालात विस्तारपूर्वक दर्ज किए जा सकते थे, मगर हिन्दुस्तान में अभी तक ऐसा रिवाज़ है कि शोधकर्ताओं को सहायता देने से लोग कतराते हैं। एक–दो व्यक्तियों, जिनके पास सिरमौर के राजाओं द्वारा दी गई कुछ सनदें और जानकारी है, और जो अब सिरमौर से पुराने इलाके कट जाने के कारण रियासत की सीमाओं से बाहर रह रहे हैं, ने ऐसा ही व्यवहार इस लेखक के साथ किया, वे हालात बतलाने और सनदें दिखलाने से कतराते रहे। ख़ैर! भगवान की कृपा से ज्यों–त्यों करके दूसरे माध्यमों से हालात और घटनाएं मालूम करके इस पुस्तक में दर्ज की गई हैं।

लेखक यह बात बताना भी ज़रूरी समझता है कि इस पुस्तक में पुराने समय के हिन्दुओं के स्वभाव और रहन–सहन का ढंग अथवा हिन्दुओं और मुसलमानों के धर्मों के सिद्धान्तों और मान्यताओं का वर्णन उसने अंग्रेज़ी की निम्नलिखित पुस्तकों से लिया है :

**एलफिन्स्टन का हिन्द का इतिहास**
**हन्टर का हिन्द का इतिहास**
**रमेश चन्द्र दत्त की हिन्दू सिविलाईज़ेशन**
**हरविलास की हिन्दू सुपिरियोरिटी**
**बैटनी की मोहम्मडनिज़्म**

इस बात पर आपत्ति हो सकती है कि इस पुस्तक में धर्मों का वर्णन अनावश्यक था। यद्यपि यह सही है, मगर लेखक ने केवल इस विचार से कि हिन्दुस्तान में अधिकतर दो ही कौमों और दो ही मज़हबों के लोग रहते हैं और उनके हालात उर्दू और हिन्दी की पुस्तकों में एक जगह नहीं मिलते, पाठकों की सूचना के लिए एक ही पुस्तक में लिख दिए हैं ताकि आजकल के लोग अपने बुजुर्गों के रहन–सहन के ढंग, स्वभाव–सभ्यता और मान्यताओं इत्यादि की जानकारी पाकर लाभान्वित हों।

लेखक को विश्वास है कि पाठकों को इस पुस्तक से उस समय के हालात बारे अगर पूरी सूचना नहीं मिलती तो कम–से–कम कुछ तो जानकारी मिलेगी। लेखक को यह आशा है कि यदि इस पुस्तक में किसी घटना के लिखने में कोई गलती या त्रुटि रह गई हो तो पाठक उसको नज़रअन्दाज़ करके क्षमा करें क्योंकि हर व्यक्ति गलती का पुतला है। जैसा कि एक अरबी कहावत कहती है :

**अल इन्सान मरक्कब मिन अलखताय व अलनसीं** (इन्सान भूल–चूक का भण्डार है)।

यह कार्य लेखक के लिए कठिन था और कई बार कठिनाइयां पेश भी आईं मगर मेरे लिए सिरमौर की इस कमी को पूरा करना ज़रूरी था और दूसरे यह कार्य देश और वंश की सेवा करने के लिए था। इस कारण इस के पूरा करने में मैंने जी–जान से प्रयत्न किया और इस में कार्यरत रहा क्योंकि इतिहास का होना सभ्य कौमों और देश के लिए बड़ा ज़रूरी समझा गया है। इतिहास सभ्यता और ज्ञान का एक बड़ा हिस्सा माना जाता है जैसा कि मैक्समूलर ने अपनी पुस्तक "इण्डिया व्हट कैन इट टीच अस" के सोलहवें पेज में लिखा है।

इसी विचार से लेखक ने सिरमौर के इतिहास को एकत्रित

करना और उसकी कमी को पूरा करना ज़रूरी समझा और परमेश्वर की कृपा से यह कार्य पूर्ण हुआ। अब परमात्मा से यह प्रार्थना है कि यह पुस्तक सिरमौर दरबार और जन साधारण को पसन्द आए और लेखक की कोशिश लाभदायक सिद्ध हो। ऊँ शान्ति।

अब मैं अन्त में बाबू सौदागर लाल बी.ए, देहलवी, जो रियासत सिरमौर के हैड ऑफिस में हैड क्लर्क हैं, का धन्यवाद करना ज़रूरी समझता हूं जिन्होंने इस पुस्तक के मसौदे को पढ़ने का कष्ट किया।

**नाहन दिसम्बर 1910 ईसवी**
**तदनुसार पौ0 सम्वत् 1967 विक्रमी**
**कंवर रणज़ोर सिंह सुपुत्र राजकुमार सुर्जन सिंह साहब**
**नाहन रियासत सिरमौर (पंजाब)**

# पहला भाग

## पहला अध्याय

### रियासत का नाम सिरमौर पड़ने का कारण

सिरमौर शब्द का अर्थ है सिर का ताज। असल में यह शब्द सरमौर था जो समय के साथ–साथ आम लोगों द्वारा गलत ढंग से कहे जाने पर सिरमौर हो गया। इसका नाम इसलिए भी सिरमौर पड़ा कि प्राचीन काल में यह रियासत बाकी सब रियासतों में सर्वोत्तम मानी जाती थी या यूं कहिए कि यह उन के सर का ताज थी। कुछ पहाड़ी रियासतें तो सिरमौर के अधीन थीं।

दूसरा कारण यह है कि ज़ैसलमेर वंश के एक राजा का नाम सिरमौर था जो कि शालिवाहन के बेटों में से एक राजा बुलंद का पुत्र था। यह माना जाता है कि इसी राजा सिरमौर ने अपने नाम पर इस रियासत की राजधानी का नाम सिरमौर रखा होगा। यह राजा रसालू के भाई का पुत्र था जिसने इस रियासत को स्थापित किया था, जिसका वर्णन आगे चल कर किसी अवसर पर किया जाएगा।

## दूसरा अध्याय

### प्राचीन काल में रियासत सिरमौर का क्षेत्रफल

इस रियासत का प्राचीन काल में क्या क्षेत्रफल था ठीक–ठीक मालूम नहीं हो सका, क्योंकि उस काल का कोई इतिहास नहीं मिला, परन्तु यह अनुमान लगाया जाता है कि उस काल में इस रियासत के क्षेत्रफल में पंजाब के तमाम पहाड़ी इलाके शामिल थे। टॉड साहब

(Mr. Todd) ने अपने द्वारा लिखित इतिहास की पुस्तक में जैसलमेर भाग के पहले अध्याय[1] में लिखा है कि प्रथम शालिवाहन जो जैसलमेर का राजा था उसके दूसरे बेटे रसालू ने पंजाब के पूरे पहाड़ी इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया था। इस रियासत में एक दो स्थान जैसे कि रसालू का पहाड़ जिसे दिवान कोट भी कहते हैं और जो अम्बाला के निकट है तथा एक पहाड़ी जो सिरमौरी ताल के पास है अब तक राजा रसालू के नाम से सम्बंधित है इसलिए यह समझा जाता है कि इस राजा रसालू की राजधानी सिरमौर ही रही होगी जिसकी प्रभुसत्ता उस काल में तमाम पहाड़ी इलाकों पर थी।

नोट :– टॉड द्वारा लिखित राजस्थान का इतिहास, भाग 2, अध्याय पहला (जैसलमेर) पृष्ठ 106, अंग्रेज़ी।

# तीसरा अध्याय

## प्राचीन काल में सिरमौर रियासत की राजधानी

इस रियासत की पहली राजधानी सिरमौर नामक स्थान पर थी जो क्यारदादून में था। यह राजधानी तब तक इस स्थान पर रही जब तक कि गिरी नदी में बाढ़ आने से यह स्थान नष्ट नहीं हुआ था। इसके नष्ट होने की एक पुरानी दन्तकथा अब भी लोग दोहराते हैं। कहा जाता है कि तत्कालीन राजा सिरमौर के दरबार में एक नटनी खेल तमाशा दिखाने के लिए आई और उसने कई प्रकार के तमाशे राजा सिरमौर को दिखलाए। उसमें एक तमाशा यह भी था कि एक धागे पर चल कर वह नटनी गिरी नदी को पार करेगी और इस करतब के बदले में राजा साहिब ने उसे अपनी रियासत का आधा हिस्सा यानी आधा राज देने का वचन दिया था। जब वह नटनी इस धागे पर चल कर नदी के उस पार पहुंची तो राजा साहिब और उनके कुछ अधिकारियों को आधा राज जाने की चिन्ता हुई और उन्होंने नटनी को धागे पर उस पार से इस पार आने को कहा।

जब नटनी नदी के बीचों–बीच धागे पर पहुंची तो उन्होंने उस धागे को काट डाला और नटनी नदी के बीच पानी में गिर पड़ी। गिरते–गिरते उसने श्राप दिया कि यह रियासत नष्ट हो जाए। हम इस दन्तकथा के बारे में अपनी टिप्पणी करना ज़रूरी नहीं समझते क्योंकि साधारण समझ–बूझ रखने वाला व्यक्ति भी इसकी सच्चाई के बारे में अनुमान लगा सकता है। जहां तक विचार किया जाता है यह केवल एक दन्तकथा ही है, क्योंकि प्राचीन काल में किसी भी घटना को अद्‌भुत ढंग से कहानी बना कर व्याख्या करने का रिवाज़ प्रचलित था, ताकि लोग उस कहानी को रुचिपूर्वक सुनें। ऐसा ज्ञात होता है कि गिरी नदी में बाढ़ की घटना के साथ नटनी की अद्‌भुत दन्त कथा को जोड़ दिया गया है। यह प्रत्यक्ष है कि एक धागे पर चल कर नदी को पार करना अति असम्भव है। यदि यह मान भी लिया जाए तो ऐसे व्यक्ति, जिसको नदी पर से एक धागे के माध्यम से पार करने की करामात हासिल हो, का गिर कर नष्ट हो जाना कदापि सम्भव नहीं लगता।

दूसरे, तमाशे के बदले में राज का आधा हिस्सा दे देने का वचन भी कुछ सत्य नहीं लगता। अथवा एक नटनी के साथ विश्वासघात करने से नदी में अचानक बाढ़ आ जाना और रियासत का नष्ट हो जाना बिल्कुल असम्भव है। यह तो सही ज्ञात होता है कि गिरी नदी में बाढ़ आने पर यह सिरमौर नामक स्थान अवश्य ही नष्ट हुआ होगा क्योंकि यह गिरी नदी के निकट स्थित है परन्तु शेष दन्त कथा सत्य मालूम नहीं होती। इस नष्ट हुए सिरमौर के ताल, पुराने भवन और अवशेष अब तक वहां मौजूद हैं।

# चौथा अध्याय

## प्राचीन काल में भी सिरमौर के शासक जैसलमेर वंश से थे

उस काल में जब सिरमौर नामक स्थान गिरी नदी में बाढ़ आने से नष्ट हुआ था, इस का अन्तिम राजा मदन सिंह था। यह राजा यादव वंशी था। जैसा कि टॉड के इतिहास में लिखा है, मदन सिंह जैसलमेर के रावल, शालिवाहन प्रथम की सन्तानों में से एक था जो कि निःसन्तान मर गया। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि सिरमौर के शासक प्राचीन काल में जैसलमेर वंश से थे।

टॉड के इतिहास में दर्ज है कि जैसलमेर के रावल राजा शालिवाहन का छोटा पुत्र रसालू था जिसने पंजाब के सारे पहाड़ी क्षेत्र को अपने अधीन कर लिया था। इस राजा रसालू का भाई बुलंद नामक था जो गज़नी में शासन करने के लिया गया था। राजा रसालू के नाम से पोंट (पोंटा) के निकट और अम्बाला के सामने अब तक एक पहाड़ राजा रसालू की टीहरी के नाम से प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि प्राचीन काल में इस पहाड़ी पर राजा रसालू के भवन थे। इस स्थान पर कुछ लोगों को गड़ा हुआ धन भी प्राप्त हुआ है। इससे यह ज्ञात होता है कि रियासत सिरमौर की पहली नींव इस राजा रसालू ने डाली होगी और राजा सिरमौर जो राजा बुलंद का पुत्र था, रसालू के भाई का बेटा था, जिसने संभवतः राजधानी का नाम अपने नाम पर सिरमौर रखा होगा जिसके अवशेष अब तक क्यारदादून में पाये जाते हैं।

टॉड राजस्थान पृष्ठ 1085,

टॉड पृष्ठ 1060

# पांचवां अध्याय

## सिरमौर के वर्तमान राजाओं के खानदान का वर्णन

जब सिरमौर नामक स्थान गिरी नदी की बाढ़ में नष्ट हो गया और राजवंश और नगर के दूसरे वासी भी नष्ट हो गए तो उस वक्त कुछ समय तक, जिसकी अवधि ठीक–ठीक मालूम नहीं है, यह रियासत बिना शासक के रही और रियासत के प्रबन्ध में अव्यवस्था फैल गई। जब जनपद ने शासन में खराबी को महसूस किया तो उनमें से कुछ विद्वान् और समझदार लोगों ने सुझाव रखा कि किसी व्यक्ति को इस अचानक घटी घटना का समाचार लेकर जैसलमेर भेजा जाए ताकि वहां से एक राजकुमार को शासक के तौर पर यहाँ लाया जाए। एक व्यक्ति, जिसका नाम होशनाक राय भाट था, को जैसलमेर भेजा गया जिसने वहाँ पहुंच कर जैसलमेर के शासक शालिवाहन द्वितीय से इस घटना का वर्णन किया और एक राजकुमार को सिरमौर भेजने की प्रार्थना की। जैसलमेर के शासक ने इस प्रार्थना पर अपने तीसरे बेटे हासू को सिरमौर जाने के लिए आदेश दिया और उस को होशनाक भाट के साथ भेज दिया। जब राजकुमार हासू अपनी धर्मपत्नी के साथ सरहिन्द के निकट पहुंचा तो उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना से सिरमौर जनपद को बहुत दुःख हुआ और उन की आशाओं पर कुछ समय के लिए पानी फिर गया। मगर ईश्वर सर्व शाक्तिमान और दयालु है और हर निराश आदमी को उस से तसल्ली मिलती है, इस लिए भगवान ने गरीब जनपद के दुःख दर्द को जानते हुए और उन की दशा पर रहम करते हुए उन के दिलों को फिर खुशी की उम्मीद दिलाई। अर्थात् यह ज्ञात हुआ कि राजकुमार हासू की पत्नी, जो उसके साथ आई थी, गर्भवती है। रास्ते में आते हुए पोका नामक स्थान

के सामने जो कि सिरमौर ताल के निकट है, पलास के वृक्ष के नीचे उसने एक पुत्र को जन्म दिया।(पृष्ठ 1085, बाल्यूम II) जैसे कि टॉड के इतिहास में दर्ज है "बद्रीनाथ के पहाड़ों में एक रियासत है जहां का राजा यादव वंशी है। वह गज़नी से आया था और शालिवाहन प्रथम की सन्तान में से था। उस समय जब इस रियासत के राजा का निःसन्तान स्वर्गवास हुआ तो एक व्यक्ति इस बारे सूचना देंने जैसलमेर आया कि कोई राजा वहां के वास्ते भेज दिया जाए ताकि खाली पड़ी गद्दी पर वह जा कर बैठे"। राजकुमार हासू को उन्होंने वहां से भेज दिया मगर वह रास्ते में स्वर्गसिधार गया और उसकी पत्नी जो उसके साथ थी वह गर्भवती थी, उसको पलास (ढाक) के वृक्ष के नीचे पुत्र पैदा हुआ जिसका नाम पालसु रखा गया ।

इस कारण इस वंश को पलासिया कहते हैं, यद्यपि टॉड (Todd) के इतिहास में इस रियासत को बद्रीनाथ की पहाड़ियों में स्थित बताया गया है, मगर बद्रीनाथ की पहाड़ियों में कोई ऐसी रियासत नहीं है जिसका मुख्य पूर्वज जैसलमेर वंश से हो। बद्रीनाथ की पहाड़ियों में केवल एक रियासत टिहरी गढ़वाल है जिसके मुख्य पूर्वज का नाम कनकपाल है जिसका जैसलमेर की वंशावली में कोई ज़िक्र नहीं है और न ही दूसरी घटनाओं से यह साबित होता है कि यह घटना रियासत गढ़वाल से सम्बन्धित है क्योंकि रियासत गढ़वाल में कोई भी अवशेष इत्यादि इस घटना के सबूत में नहीं मिलते।

रियासत सिरमौर में कई अवशेष ऐसे मिलते हैं और ऐसी घटनाओं के बारे में सुना जाता है जिनसे यह ज्ञात होता है कि यह घटना, जिसका वर्णन टॉड ने अपने इतिहास की पुस्तक में किया है, सिरमौर से सम्बन्धित है क्योंकि इस रियासत का नाम जैसलमेर के एक राजा के नाम पर पड़ा है जिसका नाम सिरमौर था अथवा एक पहाड़ का नाम राजा रसालू के नाम पर होना और राजाओं के वंश का नाम पलासिया होना, जैसा कि टॉड ने लिखा है, इस बात को साबित करता है कि ज़रूर यही रियासत सिरमौर है जिसके शासक के जैसलमेर से आने के बारे में टॉड ने लिखा है। इसलिए ढाक अर्थात् पलास की लकड़ियों को जो कि प्राचीन काल की समझी जाती हैं,

जिसके नीचे सिरमौर वंश का प्रथम पूर्वज पैदा हुआ था, अब तक ब्याह–शादी के अवसर पर राजा के परिवार में पूजा जाता है। ये लकड़ियां एक ब्राह्मण परिवार के घर में, जो पटेत गोत्र से है, नाहन में रखी हुई हैं और विवाह–शादी के समय महल में लाई जाती हैं तथा राजा के परिवार की स्त्रियों द्वारा इनकी पूजा की जाती है।

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जिस रियासत का पता टॉड ने अपनी इतिहास की पुस्तक में बद्रीनाथ के एक पहाड़ में दिया है, वह वास्तव में बद्रीनाथ में स्थित नहीं है बल्कि हिमालय के पहाड़ में है। यह सम्भव है कि हिमालय पहाड़ लिखने के स्थान पर गलती से बद्रीनाथ लिखा गया हो और यह भी हो सकता है कि इस रियासत का राज्य उस काल में गढ़वाल तक फैला हो। क्योंकि इस बात को गुज़रे हुए थोड़ा ही समय हुआ है, जब रियासत सिरमौर की सीमा हरिद्वार तक थी।

इसके अतिरिक्त रियासत सिरमौर के राजा के परिवार में कुछ ऐसे रीति–रिवाज़, त्यौहार आदि अभी भी प्रचलित हैं जो कि जैसलमेर के रावल परिवार में मनाए जाते हैं, अर्थात् कनपटे जोगी का राजगुरु कहलाना और हर वर्ष दशहरे के अवसर पर सिरमौर के राजा का उस जोगी के पास जाकर, "जो कि गद्दी का महन्त होता है, भेंट अर्पित करना और उस जोगी का राजा को अपना चेला मानकर "नादी" देना आदि। यह रिवाज जैसलमेर के वंश में अर्थात् भट्टी राजपूत कौम में प्राचीन काल से जारी है। (टॉड – वॉल्यूम 2, पेज 1074 और अध्याय – जैसलमेर)। इसके अतिरिक्त रियासत सिरमौर में त्यौहार भी वही और उसी प्रकार मनाए जाते हैं जैसे कि राजपूताना में। उदाहरण के तौर पर नागपंचमी, तीज और दशहरा आदि। असूज (आश्विन) मास के पहले नवरात्र को देवी के मन्दिर में जाकर खाण्डा (दो धारी तलवार) रखना और नौ दिन के बाद उसको जलूस के साथ उठाना और देवी मन्दिर में भैंस या बकरी की बलि देना और फिर दशहरे के दिन चौगान में फौज और रिसाले इत्यादि की परेड करना। इस के अतिरिक्त सिरमौर के राजा के महलों को आज तक नाहन में रोलाबेढ़ा कहते हैं।

(टॉड पेज 481, वॉल्यूम 1, अंग्रेजी)। इन महलों के निकट जो एक छोटा पक्का तालाब है उसको रावलीजोहड़ी कहते हैं। राजपूताना में औरतों के महल को रोला कहते हैं इसी तरह ड्योढ़ी को पोल और दरबान को पोलिया कहते हैं (टॉड पेज 191, वॉल्यूम 1) जैसा कि राजपूताना में कहा जाता है। इसी प्रकार नाहन में भी उनको पोल और पोलिया कहते हैं। सरकारी महल में जनता सभाघर को बारादरी कहते हैं जिसे राजपूताना में दरीखाना कहते हैं (टॉड पेज 189, वॉल्यूम 1)। इन सारी बातों से यह प्रमाणित होता है कि सिरमौर के राजा का वंश निश्चित ही जैसलमेर के रावल वंश में से है। क्योंकि यह आम दस्तूर है कि जिस जगह व जिस वंश से जो कोई अलग होता है वह अपने प्राचीन रीति–रिवाजों का उसी तरह पाबंद रहता है और उनको उसी तरह से अपने यहां प्रचलित करता है जैसे कि असली जगह पर होते हैं।

उस समय की एक दन्तकथा आज भी लोग बताते हैं। वे कहते हैं कि जिस समय रानी से पलास (ढाक) के वृक्ष के नीचे टिक्का साहब पैदा हुए थे उस समय टिक्का साहब के साथ एक सांप भी पैदा हुआ था। मगर मेरे विचार में यह केवल एक दन्तकथा है क्योंकि मनुष्य के साथ सांप का पैदा होना सम्भव नहीं है। मैं इस दन्तकथा की सच्चाई को इस प्रकार समझता हूं कि जहां पर टिक्का साहब की उत्पत्ति हुई होगी वहां कोई नाग देवता का मन्दिर होगा जिसकी पूजा प्राचीन काल से हिन्दुओं में प्रचलित थी। लोगों ने टिक्का साहब की उत्पत्ति को नाग देवता की कृपा ही समझा होगा, क्योंकि हिन्दुओं में प्राचीन काल में किसी अच्छी या बुरी घटना के घटित होने को किसी देवता की प्रसन्नता या खोट (नाराज़गी) से जोड़ा जाता था। रानी ने नाग देवता की पूजा उस मन्दिर में उस समय की होगी। नाग देवता का एक मन्दिर, जिसको नाग नानूना के नाम से जाना जाता है, अब तक सिरमौरी ताल के निकट जहां, पर सिरमौर की पहली राजधानी थी, मौजूद है।

उस दन्तकथा की वास्तविकता इस तरह होगी कि टिक्का साहब के उत्पन्न होने के समय कोई सांप यहां जंगल होने के कारण

निकला होगा। नाग–देवता की पूजा अब तक सिरमौर के शाही परिवार में होती है और नाग देवता का एक मन्दिर नाहन तथा दूसरा सिरमौर में है, जिनके लिए आज तक रियासत से मुआफी मिली हुई है। इससे यह पाया जाता है कि उस समय से नाग देवता की पूजा इस वंश में प्रचलित हुई।

नाग देवता का मन्दिर जो नाहन में है वहां पर सिरमौर के राजा के वंश वालों का चूड़ाकर्म संस्कार होता है अर्थात् बाल–मुण्डन की रस्म की जाती है। यह सब हालात इस बात की पुष्टि करते हैं कि सिरमौर के राजाओं का वंश जो अब सिरमौर में शासन करता है, जैसलमेर से आया है और पहला वंश, जो गिरी नदी में बाढ़ आने के कारण नष्ट हो गया था वह भी जैसलमेर से था जिसका वर्णन हम पहले कर चुके हैं। इसी कारण सिरमौर के नष्ट हो जाने के पश्चात् वहां से एक पत्रवाहक समाचार लेकर जैसलमेर भेजा गया था। इससे भी इस घटना की पुष्टि होती है कि वह वंश और यह वंश एक ही वंश से उत्पन्न हुए हैं क्योंकि अगर सिरमौर में कोई दूसरा वंश शासन करता होता तो पत्रवाहक को जैसलमेर भेजने की आवश्यकता नहीं थी तथा पत्रवाहक को किसी और स्थान पर राजपूताना में भेजा जाता। मगर पत्रवाहक का खास जैसलमेर को जाना, इस बात को स्पष्ट करता है कि नष्ट होने वाले वंश का सम्बन्ध जैसलमेर से था, जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है। लेखक को दो–एक राजाओं के इतिहास बारे लिखी गई पुस्तकों को पढ़ने का अवसर मिला है जिनमें सिरमौर के वंश के बारे में उल्लिखित है कि सिरमौर का उग्रसेन नामक प्रथम पूर्वज 1059 ईसवी में गंगा स्नान करने आया और सिरमौर की गद्दी को खाली देखकर उसने उस पर कब्जा कर लिया। परन्तु इस लेख की किसी भरोसेमंद पुस्तक से पुष्टि नहीं हुई और न उग्रसेन नामक कोई व्यक्ति सिरमौर और जैसलमेर के वंशों की कड़ी में मिलता है इसलिए यह लेख सही नहीं है। अब हम सिरमौर के इतिहास के उस काल में पहुंचते हैं जब जैसलमेर वंश ने दूसरी बार सिरमौर रियासत में अपना शासन आरम्भ किया था

सिरमौर के राजाओं के वंश की स्थापना की थी, फिर एक के बाद एक शासक गद्दी पर बैठते गए और विभिन्न स्थानों पर अपनी शक्ति और समय के लिहाज़ से अपनी राजधानी स्थापित करके शासन करते रहे। परन्तु इससे पहले कि हम सिरमौर के राजाओं का कड़ीवार उल्लेख करें, यह मुनासिब समझते हैं कि जैसलमेर और चंद्रवंशियों का कुछ वर्णन संक्षेप में किया जाए जिससे यह वंश उत्पन्न हुआ है।

# दूसरा भाग

## पहला अध्याय

## चन्द्रवंश का वर्णन जिसमें जैसलमेर वंश भी शामिल है

हिन्दुओं की मान्यताओं के अनुसार सारी सृष्टि का प्रथम पूर्वज अर्थात् आदिपुरुष ब्रह्म है जिसको सबसे पहले परमात्मा (नारायण) ने पैदा किया और ब्रह्म ही को आरम्भ में वेद का ज्ञान हुआ जिसको तमाम हिन्दु मानते हैं। ब्रह्म ने अपने दृढ़ निश्चय से पहले स्वयंभू मनु को उत्पन्न किया और फिर मनु ने दस महा ऋषियों अर्थात् मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रचेता, वसिष्ठ, भृगु और नारद को तथा छः मनु अर्थात् स्वारोचिष, औत्तमि, तामस, रैवत, चाक्षुष व वैवस्वत को उत्पन्न किया (मनु अध्याय एक, श्लोक 11, 33, 35 व 62)। इन महर्षियों से और सात मनुओं से सावर्णि, दक्ष सावर्णि, ब्रह्म सावर्णि, धर्म सावर्णि रुद्र सावर्णि, रोचस और इन्द्रसावर्णि उत्पन्न हुए।

महर्षि अत्रि से चन्द्रमा उत्पन्न हुए। यह वह चन्द्रमा नहीं है जो आकाश पर चमकता है बल्कि वह महर्षि अत्रि का बेटा था जिसका नाम चन्द्रमा था। इसकी सन्तान चन्द्रवंशी कहलाई। चन्द्रमा से बुद्ध उत्पन्न हुए। महर्षि मरीचि से कश्यप ऋषि का पुत्र सूरज पैदा हुआ। यह भी वह सूरज नहीं है जो आकाश पर चमकता है। सूरज से महाराज इक्ष्वाकु उत्पन्न हुए जिसकी पुत्री इला से बुद्ध का विवाह हुआ। इस विवाह से महाराजा पुरुरवा उत्पन्न हुए।

पुरुरवा से नहुष और उससे ययाति और ययाति से यदु उत्पन्न हुए जिससे यदु वंश उत्पन्न हुआ, जो कि चन्द्र वंश की एक शाखा है। श्री कृष्ण यदु वंश से और श्री रामचन्द्र सूर्यवंश की एक शाखा रघुवंश से थे। श्री रामचन्द्र श्री कृष्ण से बहुत पहले हुए हैं।

बीते समय में हिन्दुस्तान के शासक आम तौर से इन्हीं दो वंशों में से थे जो अधिक शक्तिशाली और मशहूर होते रहे हैं। उस समय केवल हिन्द की सीमाएं दूसरे देशों तक फैली हुई थीं, (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम II, पेज 1052) जैसा कि महाभारत इत्यादि पुस्तकों से ज्ञात होता है। काबुल, कन्धार, बलोचिस्तान इत्यादि क्षेत्र तो हिन्दुस्तान का भाग ही थे जहां पर अब से कुछ समय पहले जैसलमेर के भट्टी वंश के लोग शासन करते थे। इन स्थानों पर हिन्दुओं के मन्दिरों इत्यादि के खंडहर और अवशेष अब तक मिलते हैं।

श्री हरबिलास तो अपनी पुस्तक "हिन्दू सुपीरिऑरिटि" में लिखते हैं कि महाराजा पुरुरवा, जो कि चन्द्रवंश का एक महाराजा था, का शासन सागर के तेरह द्वीपों में था, (हिन्दू सुपीरिऑरिटि, पेज 121)। सर विलियम जोन्स लिखते हैं कि हिन्दुओं का सम्बन्ध पर्शिया, आस्ट्रैलिया, मिस्र, यूनान, फुनेसिया, सितिहा, चीन, जापान इत्यादि देशों से भी था (हरबिलास, हिन्दू सुपीरिऑरिटि, पेज 147)। जावा, बाली, माले इत्यादि द्वीपों में तो अब तक हिन्दुओं की बनावट वाले मन्दिर व दूसरे अवशेष मिलते हैं।

टॉड साहब ने अपने इतिहास में लिखा है कि समुद्री जहाज़ द्वारा हिन्दुओं की अवाजाही अमेरिका, अफ्रीका, अरब, फारस, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में थी और हिन्दू नाविक–ज्ञान से भलि–भांति परिचित थे। मनु अध्याय आठ, श्लोक 106, ऋग्वेद अष्टक प्रथम, वर्ग 34, मंत्र 8 और यजुर्वेद, अध्याय छः, मंत्र 21 में समुद्री जहाज़ का वर्णन है (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम II, पेज 1052)।

इसके अलावा एलफिन्स्टन अपनी इतिहास की पुस्तक में लिखते हैं कि हिन्दू व्यापारी रूस, फारस, तुर्कीस्तान में अब तक आबाद हैं (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 260)।

इससे यह बात प्रमाणित होती है कि उस समय में जहाज़ों द्वारा दूसरे देशों में जाने के लिए कोई पाबन्दी नहीं थी और यूरोपीय देशों अमेरिका, अफ्रीका इत्यादि से हिन्दुओं का लेन–देन और रिश्तेदारी जारी थी तथा विवाह भी वहां हो जाते थे, जैसा कि महाराजा धृतराष्ट्र का विवाह राजा गंधार (कन्धार) की पुत्री से हुआ था और अर्जुन का

विवाह अमेरिका के महाराजा कोरद (की पुत्री) से और राजकुमार अनिरुद्ध का विवाह राजा बाणासुर की पुत्री से। यह राजा युनिट, जो मिस्र में है, का शासक था। महाराजा चन्द्रगुप्त का विवाह सिकन्दर महान के प्रधानमन्त्री सेल्यूकस की पुत्री से हुआ था (हिन्दू सुपीरिऑरिटि, पेज 193)।

इससे यह स्पष्ट होता है कि उन देशों के लोग उस काल में उसी फिरका (जाति) के थे जिसके हिन्दू थे और वे वेद को ही मानते थे। बल्कि कुछ इतिहासकारों की राय है कि हिन्दू, फारसी, यूरोपियन, रूसी एक ही जाति से हैं और वे सब आर्य कहे जाते थे, जिसका अर्थ है "श्रेष्ठ"। वे सब आरम्भ में एक ही स्थान पर रहते थे। यद्यपि उस स्थान के बारे में पूरे विश्वास से यह नहीं कहा जा सकता कि वह कहां था। कुछ इतिहासकारों का विचार है कि वह स्थान मध्य एशिया में पामीर है और कुछ का विचार है कि वह कश्मीर है (दत्त का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 121)। प्रोफेसर ज़िमिर की राय है की वह स्थान कश्मीर ही है। एलफिन्स्टन के विचार में भी आर्यों का आरम्भिक स्थान हिन्दुस्तान में है (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 98)। श्री हरबिलास भी सर वॉल्टर ऐली के हवाले से हिन्दुस्तान ही को वह स्थान बताते हैं, चाहे वह स्थान पामीर है चाहे कश्मीर (हिन्दू सुपीरिऑरिटि, पेज 144) परन्तु इसमें संदेह नहीं कि हिन्दुस्तान के उत्तर पश्चिम में यह स्थान हिमालय के निकट था जिस स्थान से सब आर्य लोग विभिन्न स्थानों को गये।

जो फिरका पश्चिम में गया उनमें से एक ने तो फारस के राज्य की स्थापना की, जो ईरान के नाम से मशहूर हुआ। शब्द "आर्य" और "आन" से मिल कर ईरान हो गया जिसका अर्थ है आर्यों के रहने का स्थान। वहां के वासी ईरानी कहलाये। एक फिरके ने एथन्स अर्थात् यूनान और स्पारटा की नींव डाली और वह यूनानी कहलाये और एक और इटली को गया, उसने सैवन हिल्स यानी रोम को आबाद किया (हंटर का संक्षिप्त इतिहास, पेज 52) और एक ने स्पेन को जाकर आबाद किया।

इसी प्रकार जो फिरका पूर्व की ओर आया वह सिन्धु नदी के

किनारों पर आबाद हुआ और इस देश का नाम आर्यवर्त रखा। बाद में दूसरे आर्यों से अलग पहचान रखने के लिए खुद को इन्दु आर्य कहा अर्थात् चन्द्रमा की नस्ल के आर्य क्योंकि संस्कृत में इन्दु चन्द्रमा को कहते हैं और यही शब्द समय के साथ–साथ अधिक प्रयोग से बिगड़कर इन्दु से हिन्दु हो गया। कुछ का विचार है कि ये लोग पहले सिन्धु कहलाते थे। यह शब्द बाद में बिगड़ कर हिन्दू हो गया। मगर हमारी राय में असल में यह शब्द इन्दु से बिगड़ कर हिन्दू हुआ क्योंकि संस्कृत में ई बदल कर में आम तौर पर हे हो जाया करता है।

इसलिए यूनानी इत्यादि लोग हिन्दुओं को इन्डॉमी कहते थे और इसी कारण यह इन्दोस्थान अर्थात् इन्दु आर्यों के रहने की जगह से प्रसिद्ध हुआ। फिर धीरे–धीरे समय के साथ–साथ हिन्दुस्तान बन गया। इन इन्दु आर्यों ने धीरे–धीरे द्रविड़ इत्यादि जंगली जातियों और तातारियों पर, जो आर्यों से पहले हिन्दुस्तान में आबाद थे, विजय पाकर उन्हें यहां से निकाल दिया और स्वयं पंजाब और गंगा नदी तक अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। इसी तरह आहिस्ता–आहिस्ता पूर्ण हिन्दुस्तान आर्यों के कब्ज़े में आ गया। आर्य लोग अबोरीजन्स (अनार्यों) के मुकाबले में कद में लम्बे और रंग में गोरे तथा चौड़े माथे और उठी हुई नाक वाले सुन्दर लोग थे। हिन्दू, यूरोपियन और पारसियों की शक्ल और रंग–ढंग आपस में मिलते–जुलते हैं। यद्यपि अब आबो–हवा और मौसम की विभिन्नता के कारण इनकी रंगत में कुछ फर्क़ आ गया है परन्तु इनके चेहरे की बनावट एक जैसी है। इसी कारण इन्दु आर्यों ने स्वयं और अबोरीजन्स (अनार्यों) में फर्क करने के लिए वर्ण शब्द जिसका अर्थ रंग है, का प्रयोग करना आरम्भ किया था (हंटर का संक्षिप्त इतिहास, पेज 40) जो बाद में जाति के लिए प्रयोग होने लगा। जैसा कि आजकल भी आम तौर पर यूरोपियन लोगों के लिए 'गोरा' और हिन्दुतानियों के लिए 'काला' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

हंटर अपनी इतिहास की पुस्तक में तो यह भी लिखते हैं कि हिन्दू, ग्रीक, अंग्रेज़, रोमन और पारसी एक ही नस्ल से हैं, आरम्भ में इनका धर्म भी एक ही था और वे एक ही भाषा बोलते थे क्योंकि हिन्दी

और अंग्रेज़ी भाषाओं में बहुत से शब्द आपस में मिलते हैं। जैसा कि शब्द 'फादर' अंग्रेज़ी में बाप को कहते हैं, संस्कृत में 'पितृ' और फारसी में 'पिदर' कहते हैं। मां को अंग्रेज़ी में 'मदर', संस्कृत में मातृ और फारसी में 'मादर' कहते हैं। भाई को अंग्रेज़ी में 'ब्रदर', संस्कृत में भ्राता और फारसी में 'बरादर' कहते हैं। लड़की को अंग्रेज़ी में 'डॉटर', संस्कृत 'दुहितृ' और फारसी में 'दुखतर' कहते हैं। इसी तरह हिन्दुओं और अंग्रेज़ों के देवताओं के नामों में भी सामान्यता है। जैसा कि संस्कृत में 'दयायूस पितृ', रोमन में 'डीएस पीटर' और ग्रीक (यूनानी) में 'ज़ीएस' कहते हैं। संस्कृत में वर्ण, लैटिन में यूरेनस और यूनानी में ऑरीनेस कहते हैं। संस्कृत में आग को अग्नि और लेटिन में इग्निस कहते हैं (हंटर का संक्षिप्त इतिहास, पेज 53 व 56)।

यद्यपि अब देश अलग–अलग होने के कारण उनके रहन–सहन के ढंग और धर्म में विभिन्नता आ गई है परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि आरम्भ में ये सब लोग एक ही नस्ल के थे और इनका धर्म भी एक ही था, लेकिन वैदिक धर्म पर पाबन्द न रहने के कारण वे लोग गैर–जाति के समझे जाने लगे। जैसा कि मनु अध्याय 10, श्लोक 43 में लिखा है कि पुण्डरिका, ओडर, द्रौड़, योन, कम्बोज, साका, पहलुवा, चीना, कीरात्, दर्दास और कौहस वैदिक धर्म पर अटल न रहने के कारण क्षत्रिय वर्ण से गिर गए। इन कौमों को श्री हरबिलास विलियम जोन्स के हवाले से इस तरह स्पष्ट करते हैं कि चीना चीन के, पहलुवा फारस के, कम्बोज कम्बोडिया के, योन यूनान के, द्रौड़ ब्रिटेन के और कौहस बलोचिस्तान के वासियों को कहते हैं (हरबिलास, हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज़ 195)।

मिस्टर टॉड अपने इतिहास में लिखते हैं कि आयोनिन, असीरियन, मीड सूरजवंश और चन्द्र वंश की शाखाओं अर्थात् योन (आयोनिन), असू (असीरियन) और मेंडा (मीड) से हैं (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम I पेज, 629)। हिन्दुओं ने सारे संसार को निम्नलिखित सात द्वीपों अर्थात् महाद्वीप व सात सागरों में बांटा था और एक द्वीप में कई खण्ड यानी भाग होते थे। हिन्दुस्तान जम्बू द्वीप का खण्ड है जिसका नाम चन्द्रवंशी महाराजा भरत के नाम से भारतखण्ड प्रसिद्ध हुआ।

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| जम्बू द्वीप | एशिया | नौ खण्ड | क्षारसागर | इण्डियन ओशन |
| प्लक्षद्वीप | दक्षिणी अमेरिका | सात खण्ड | क्षीर सागर | व्हाईट ओशन |
| पुष्कर द्वीप | उत्तरी अमेरिका | दो खण्ड | अक्षय सागर | पैसिफिक ओशन |
| क्रौंच द्वीप | अफ्रीका | सात खण्ड | सर सागर | एटलांटिक ओशन |
| शाल्मली द्वीप | ऑस्ट्रेलिया | सात खण्ड | विदेही सागर | आर्कटिक ओशन |
| साका द्वीप | यूरोप | सात खण्ड | घृत सागर | रैड सी |
| कुश द्वीप | ओशानिया | सात खण्ड | सिन्धु सागर | अरेबियन सी |

खण्डों के नाम और इनका क्षेत्र और शासकों इत्यादि के बारे में भागवत और महाभारत आदि पुस्तकों में पूरा विवरण है। इन देशों पर सूर्य और चन्द्रवंश के क्षत्रियों की संतान शासन करती रही है। भागवत में लिखा है कि महाराजा प्रियव्रत ने जो कि सारे संसार का सम्राट था, ये देश अपने सात बेटों को बांट कर दिये थे। हिन्दुस्तान में सूरजवंश की पहली राजधानी अयोध्या में, जो कि अवध में है, थी और चन्द्रवंश की प्रयाग अर्थात् इलाहाबाद में थी। परन्तु कुछ समय पश्चात् इनके पांच अलग–अलग राज्य स्थापित हो गए अर्थात् एक पौरु जिस राज्य में दिल्ली, जिसको इन्द्रप्रस्थ कहते थे और इसके निकटवर्ती क्षेत्र शामिल थे। दूसरी राजधानी पांचाल जिसका राज्य कन्नौज में था और तीसरी कौशल जिसका शासन अवध में था, चौथी वैदेही जिसका शासन तिरहुट में था और पांचवीं काश्या जिसका शासन काशी अर्थात् बनारस में था।

मिस्टर टॉड अपनी पुस्तक राजस्थान का इतिहास, वॉल्यूम I में लिखते हैं कि चन्द्रवंशियों की पहली राजधानी महेशवती, जो कि महेशवाड़ा के नाम से विख्यात है, नर्मदा नदी के तट पर स्थित है। इसको महाराजा सहस्त्र अर्जुन उर्फ सहस्त्रबाहु ने आबाद किया था। चन्द्रवंश की छप्पन शाखाएं हैं जो छप्पन कुल (परिवार) जादों (यादवों) के परिवारों के नाम से प्रसिद्ध हैं और वे एक समय में पूर्वी भारत के शासक थे। श्री कृष्ण भी यदुवंशी थे और कौरव–पाण्डव भी। कौरु व पौरु एक ही शाखा का नाम है जो चन्द्रवंश की नस्ल से है, पहले–पहल पुरु नाम का राजा इस परिवार में हुआ जिसके नाम से पौरु वंश प्रसिद्ध हुआ। इसके पश्चात् कुरु नाम का राजा इस परिवार में हुआ जिसके नाम से कौरु वंश की नींव पड़ी। युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम इत्यादि पांच भाई पौरु या कौरु वंश के थे, मगर बाद में अपने पिता

के नाम से वे पाण्डव कहलाए और धृतराष्ट्र की संतान कौरु ही कहलाती रही।

कौरवों और पाण्डवों के बीच एक महायुद्ध हुआ था जिसका सम्पूर्ण वर्णन महाभारत में मिलता है। इस युद्ध के कारण हिन्दुओं के राज्य को बहुत क्षति पहुंची थी क्योंकि इस युद्ध में पूरे हिन्दुस्तान के तथा जाने–माने सरदार, राजा, महाराजा, (कोकेशिया) से लेकर हिन्द महासागर तक और तिब्बत आदि देशों के कोक़ाफ जिनसे हिन्दुओं का सम्बन्ध था, अपनी–अपनी फौज लेकर इस महायुद्ध में कौरवों या पाण्डवों की तरफ से शामिल हुए थे (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 54)। इसी महायुद्ध में राजपूतों के बहुत से जाने–माने परिवार नष्ट हो गए थे। यह युद्ध थानेश्वर के स्थान पर लड़ा गया था। 18 दिन तक भीषण लड़ाई के बाद युद्ध समाप्त हुआ। इसमें हिन्दुस्तान के बड़े–बड़े बहादुर दिलेर योद्धा वीर गति को प्राप्त हुए और लाखों की तादाद में लोग हताहत हुए। महाभारत में लिखा है कि दोनों तरफ की फौजों की संख्या अठारह अक्षौहिणी (एक अक्षौहिणी में 21, 870 हाथी, 21,870 रथ सवार, 65,610 घुड़ सवार और 1,09,350 पैदल सैनिक, कुल संख्या 2,18,700, इसको 18 से गुणा करने से कुल संख्या हुई 39,36,600) थी, जिसमें से बहुत कम संख्या बाकी बची थी।

अंत में इस युद्ध में युधिष्ठिर, अर्जुन इत्यादि पांच भाइयों को विजय प्राप्त हुई और कौरवों का परिवार अपने दूसरे रिश्तेदारों और सम्बन्धियों के संग नष्ट हुआ। युधिष्ठिर ने इस राज्य को दोबारा प्राप्त करके अपना सम्वत् जारी किया जो कि विक्रमाजीत के समय तक यानी 1100 वर्ष तक जारी रहा। महाभारत के युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर ने, जिसको टॉड के अनुसार 1900 ईसवी तक 4,659 वर्ष गुज़रे हैं, अपने पोते परीक्षित को हस्तिनापुर के राज्य पर बिठाकर स्वयं संन्यास ले लिया (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 54)। पाण्डवों की संतान ने 31 पीढ़ियों तक लगातार हिन्दुस्तान में 1,864 वर्ष तक राज्य किया। इनकी नस्ल का आखिरी शासक ख़मेरराज था और वह मसीही से 610 साल पूर्व दिल्ली में राज करता रहा।

इसके पश्चात् दूसरा परिवार जिसका नाम विश्वश्रवा था शासक हुआ। इस परिवार के 14 महाराजा 500 वर्ष तक दिल्ली के सिंहासन पर बैठे, फिर तीसरा महाराजा वीरबाहु का परिवार दिल्ली का शासक हुआ। इस परिवार के 15 महाराजाओं ने शासन किया। इसके बाद चौथा परिवार दहूदसेन दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। उसके 9 महाराजाओं ने राज किया। इसके बाद हिन्दुस्तान का राज्य विक्रमाजीत पंवर के हाथ आया। उसने इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) से राजधानी को उज्जैन में बदल लिया और 800 साल तक इन्द्रप्रस्थ हिन्दुस्तान की राजधानी नहीं रहा। इस के बाद तनवर राजपूत जाति के राजा अनंगपाल ने दोबारा इन्द्रप्रस्थ में राजधानी स्थापित की। महाराजा अनंगपाल ने जो कि चन्द्रवंश की तनवर शाखा से था, अपने दोहते पृथ्वीराज चौहान को इन्द्रप्रस्थ के सिंहासन पर बिठाया। पृथ्वीराज यहां का अन्तिम हिन्दू शासक था, जिसके बाद हिन्दुस्तान का राज्य मुसलमान बादशाहों के कब्ज़े में चला गया।

आर्य हिन्दुओं का राज्य हिन्दुस्तान में बहुत पुराने समय में स्थापित हुआ था और दूसरे राज्यों के मुकाबले अधिक प्राचीन था। मिस्टर टॉड ने अपने इतिहास में लिखा है कि हिन्दुओं का राज्य हिन्दुस्तान में ईसा से 2,256 वर्ष पहले स्थापित हुआ था। मिस्र का राज्य मसीही से पूर्व 2,188 वर्ष, एलेस्ट्रिया का राज्य 2,056 वर्ष पूर्व और चीन वालों का राज्य मसीही से 2,207 वर्ष पूर्व स्थापित हुआ था। परन्तु पलैनी, मैगस्थनीज़ और अबुल फज़ल की राय है कि हिन्दुओं के राज्य की स्थापना मसीही से छः–सात हज़ार वर्ष पूर्व हुई (हरविलास, हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज़ 9)। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार हिन्दुओं का राज्य इससे भी बहुत पहले स्थापित हो चुका था, क्योंकि पांच हज़ार वर्ष इस कलियुग को हुए जिसके आरम्भ में कृष्ण जी और युधिष्ठिर इत्यादि हुए हैं। इससे पहले भी बहुत ज़्यादा समय गुज़रा था जिसमें उदाहरण के तौर पर बहुत से राजे--महाराजे जैसे कि रामचन्द्र इत्यादि हो चुके हैं। इसलिए हम आर्य हिन्दुओं के स्वभाव, आदतों और राज्य करने के रंग–ढंग और क़ायदे--कानून का संक्षिप्त विवरण पाठकों की सूचना के लिए दर्ज़ कर रहे हैं। आशा है कि यह उन्हें रोचक लगेगा।

हिन्दुओं के शासन काल में देश का एक शासक होता था, जिसको महाराजा या चक्रवर्ती राजा कहते थे, आजकल उसे बादशाह कहते हैं। देश के छोटे भाग के शासक को राजा कहते थे। राजा व महाराजा का दायित्व था कि वह देश के अपने भाग में शान्ति बनाए रखे और जनता की सुरक्षा और न्याय करता रहे। वह सदा सतर्क रहे और राज्य के कारोबार की अनदेखी न करे। पशु–पक्षियों के शिकार, मदिरा–पान, भोग–विलास, जुआ, धोखाधड़ी करने, पीठ पीछे बुराई करने, कड़वा बोलने, आवारागर्दी करने और अपने आप नाचने, गाने बजाने से स्वयं को दूर रखे (मनु अध्या0 सात, श्लोक 45 से 48)। जो लोग अच्छे परिवार से हों, पढ़े लिखे और योद्धा हों, उन को मंत्री नियुक्त करे, जिन की संख्या केवल सात हो। इन में से जो सब से अधिक बुद्धि रखता हो उस को मुख्यमंत्री नियुक्त करे। इन में से हर एक को शासन का एक–एक विभाग बांट दे और स्वयं उन की निगरानी करता रहे, ताकि वे जनता को न सताएं और अपने विभाग के कार्य में कोई ढील न बरतें।

राजा अपने समय को इस तरह से विभाजित करे कि दिन निकलने से पूर्व उठे और अपने नितनियमों से फारिग़ होकर कचहरी में जाए, जनता की फरियाद सुने और निपटारा करे,, फिर अकेले में मंत्रियों से विचार विमर्श करे। इस के पश्चात् राजा व्यायाम और स्नान कर के भगवान का स्मरण करे। फिर स्त्री कक्ष में जा कर खाना खाए और आराम करे। दोपहर के बाद अपनी सेना का निरीक्षण और फिर सैर और मनोरंजन इत्यादि। सूर्य अस्त होने के बाद गुप्तचरों से समाचार सुने, बाद में खाना खा कर कुछ समय गाना सुने और फिर स्त्री कक्ष में जा कर आराम करे (मनु अध्याय सात, श्लोक 145, 146 और 147)।

मनु के धर्मशास्त्र में राजा के लिए फौजदारी के मामलों में दीवानी मामलों से अधिक ध्यान देने की ज़रूरत पर बल दिया है तथा दोनों तरफ के लोगों और उनके गवाहों के रंग–ढंग, तौर–तरीके, चेहरे की जांच–परख करने की हिदायत भी दी है। शासन के प्रबन्ध आदि की बाबत मनु के सातवें अध्याय में और दीवानी और फौजदारी मामलों

के फैसले देने के बारे में आठवें अध्याय में नियम और दण्ड इत्यादि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। झूठ बोलना, चोरी, मदिरा–पान, वध को घोर अपराध बताया गया है। इसलिए झूठी गवाही का दण्ड देश निकाला और चोरी की सजा, शरीर का कोई अंग काटना, पराई स्त्री से अकेले में बात करना या उसको उपहार भेजना या उसके शरीर इत्यादि को छूना या उससे अकेले में बैठकर बात करने को अपराध बताया गया है। जिसके लिए मस्तक को दाग कर देश निकाले का दण्ड दिया जाता था और ज़न्हा की सजा यह थी कि स्त्री और पुरुष का वध कर दिया जाता था या उनको देश निकाला दिया जाता था (मनु अध्याय 8, श्लोक 334, 352 और 359)।

सार्वजनिक मार्गों को नष्ट करना और खाने–पीने की घटिया चीज़ें बेचना या उनमें कोई हानिकारक चीज़ को मिलाने के लिए दण्ड दिया जाता था। यदि कोई वैद्य अपनी अज्ञानता और ढील के कारण किसी को हानि पहुंचाता या कोई किसी के साथ बदतमीज़ी से बात करता तो वह सजा का पात्र होता था (मनु अध्याय 9, श्लोक 282, 284, 286 और 291)। अगर कोई मंत्री या सरकारी कर्मचारी किसी से अन्याय करे या घूस ले तो उसके अपराध में उसकी जायदाद ज़ब्त कर ली जाती थी (मनु अध्याय 9, श्लोक 231 और 234)। फौजदारी के अपराधों के लिए कड़ी सजा दी जाती थी ताकि बाकी की जनता उससे नसीहत ले। दीवानी मामलों और शहादत (गवाही) के कायदे–कानून ऊंची श्रेणी के थे जिनकी एलफिन्स्टन ने भी अपनी पुस्तक "हिन्द के इतिहास" में बहुत प्रशंसा की है (एलफिन्स्टन का हिन्द का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 58)। खेती–बाड़ी की उपज के 1/6 भाग और वाणिज्य से मुनाफे के 1/20 भाग पर राजा का अधिकार होता था। परन्तु जो राजा न्याय और सुरक्षा दिये बिना ही जनता से कर लेता था उसको बड़ा अपराधी माना जाता था (मनु अध्याय 8, श्लोक 307 और 308)।

जनता के लिए आदेश था कि वह बादशाह का आदेश माने और उसे सम्मान दें क्योंकि बादशाह को मनुष्य को शक्ल में देवता बतलाया गया है (मनु अध्याय 7, श्लोक, पेज 8)। इसी तरह

माता–पिता, बुजुर्गों, बुद्धिजीवियों, आदरणीय लोगों का आदर करना अनिवार्य था (मनु अध्याय 8, श्लोक, पेज 395)। शादी–विवाह और विरासत के कायदे–कानून तथा दूसरे रस्म रिवाजों इत्यादि की विधि का गृह्य सूत्र में और मनु के धर्मशास्त्र में विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है। कहने का तात्पर्य यह है कि हिन्दुओं में वह कायदे–कानून प्रचलित थे जो कि सभ्य कौमों के लिए अनिवार्य होते हैं जिनकी पाबन्दी जनता–जनार्दन के लिए अनिवार्य थी। इन्हीं कायदे–कानूनों के कारण प्राचीन काल के हिन्दुओं के स्वभाव और आदतें उत्तम श्रेणी की थीं जिनके लिए सारा संसार उनकी प्रशंसा करता है। जैसा कि मिस्टर दत्त ने अपनी पुस्तक "हिन्द का इतिहास" व "सिविलाइज़ेशन" में लिखा है कि हिन्दू सच बोलना बड़ा ज़रूरी समझते थे क्योंकि सच को वह अपना धर्म मानते थे। भूत और वर्तमान काल के इतिहासकारों जैसे कि मिस्टर पियू, आर्यन, एलफिन्स्टन, हंटर, अबुल फज़ल, कर्नल स्लीमन, मैक्समूलर इत्यादि की राय है कि हिन्दू बड़े सच्चे, वफादार, मीठे स्वभाव वाले, बुद्धिमान और बहादुर होते थे (दत्त हिस्ट्री, वॉल्यूम II, पेज 73 व एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 386 तथा हरबिलास की हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज 34 और 35)।

शिक्षा के लिए साधारण पाठशाला होती थी जिसमें गरीब–अमीर सब शिक्षा प्राप्त करते थे। ब्राह्मणों के लिए शिक्षा प्राप्त करना अनिवार्य था क्योंकि यह आदेश था कि अगर ब्राह्मण अनपढ़ रहे तो उसको दण्ड दिया जाए बल्कि उस गांव के सभी वासियों को भी सजा दी जाए। इन्हीं पाबन्दियों के कारण प्राचीन काल में हिन्दुओं ने हर प्रकार के ज्ञान और कला में योग्यता प्राप्त की। संस्कृत भाषा के बारे में यूरोपियन बुद्धिजीवियों जैसे कि विलियम जोन्स, मैक्समूलर, एलफिन्स्टन का विचार है कि यह भाषा अति उत्तम श्रेणी की और साफ–सुथरी है और दूसरे सभ्य देशों के साहित्य की नींव है। आज तक संस्कृत जैसे साहित्य व व्याकरण किसी दूसरी भाषा में मौजूद नहीं हैं (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 282 तथा हरबिलास की हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज़ 202, 203 व 229)। फिलॉसोफी (तर्क शास्त्र) के बारे में मिस्टर दत्त व एलफिन्स्टन लिखते हैं कि उसका आरम्भ हिन्दुओं ने किया था,

उनसे यूनानियों ने इसे प्राप्त किया (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 243 तथा दत्त का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 292)।

हिन्दू फिलॉसोफी को दर्शन अर्थात् बुद्धि का आईना कहते हैं। हिन्दुओं के यहां फिलॉसोफी छः प्रकार की है जो षड्दर्शन के नाम से प्रसिद्ध है। विज्ञान और रसायन (केमिस्ट्री) के बारे में इतिहासकारों की राय है कि हिन्दू इनसे भली–भान्ति परिचित थे क्योंकि आयुर्वेद और ज्योतिष का आविष्कार करने वाले हिन्दू ही थे (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 280 तथा हरबिलास की हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज 222 तथा दत्त का इतिहास वॉल्यूम II, पेज 246)। उन्होंने बड़ा विकास किया था जो कि विज्ञान और रसायन के ज्ञान के बिना असम्भव है। ये दोनों ही ज्ञान हिन्दुओं से अरब वालों ने प्राप्त किए फिर वहां से यूरोप में गए (हरबिलास की हिन्दू सुपीरिऑरिटी पेज 340)। हंटर साहब भी अपने इतिहास में ऐसा ही लिखते हैं। वह कहते हैं कि थोड़ा ही समय गुज़रा है जब 1702 ईसवी में राजा जयसिंह ने विख्यात फ्रांसिसी ज्योतिषी डी0 ला0 हियू (De La Hieu) की सितारों की सूची को सही किया था। इसी प्रकार आयुर्वेद के ज्ञान की बाबत भी हंटर लिखते हैं कि अरब और यूनान वालों ने हिन्दुओं से ही इस ज्ञान को प्राप्त किया था। अरब वालों से यूरोपियनों ने इसे हासिल किया। इसलिए यूरोपी आयुर्वेद की पुस्तकों में हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध वैद्य चरक का हवाला मौजूद है (हंटर का हिन्द का संक्षिप्त इतिहास, पेज 64 व 65 तथा एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 279)।

एलफिन्स्टन अपने इतिहास में लिखते हैं कि हिन्दुओं को औषधियों के बारे और उनके शरीर पर प्रभाव की अच्छी खासी जानकारी थी। वे धातुओं को खाने–पीने की औषधियों में प्रयोग में लाते थे। उन्हें शल्य चिकित्सा की भी जानकारी थी क्योंकि वे आंख से मोतिया निकालना और मसाना से पत्थरी निकालना इत्यादि में शल्य चिकित्सा का प्रयोग ही करते थे। शल्य चिकित्सा के लिए वे लगभग 127 यंत्र काम में लाते थे (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 280)। एनाटॉमी इत्यादि को वह विद्यार्थियों को मृत लाशों के बदले मोम की शक्लों और मृत पशुओं द्वारा सिखलाते थे (हंटर, पेज 64 तथा

हरबिलास हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज 307)। मुनष्यों और पशुओं के इलाज के लिए चिकित्सालय स्थापित थे। गणित, ज्यामिति, अक्लीन्दिस, ट्रिग्नोमैट्री और अलजेबरा इत्यादि ज्ञान का आविष्कार भी हिन्दुओं ने किया था। एलफिन्स्टन और दत्त ने लिखा है कि यह ज्ञान हिन्दोस्तान में शुरू हुआ था और वहां से अरब और यूरोप में गया (एलफिनस्टन वॉल्यूम I, पेज 250 तथा दत्त वॉल्यूम I, पेज 279)।

संगीत विद्या भी हिन्दुस्तान में प्राचीन काल से प्रचलित है। इसका वर्णन साम वेद में किया गया है। संगीत विद्या को गन्धर्व विद्या कहते हैं। एलफिन्स्टन और हरबिलास ने विलियम जोन्स के हवाले से लिखा है कि हिन्दुओं की संगीत विद्या बड़ी नियमित और उत्तम श्रेणी की है, यद्यपि वह बारीकी के कारण समझ में नहीं आती और अंग्रेज़ों को नहीं भाती परन्तु अंग्रेजी संगीत से अधिक आनन्दमय और दिल में उतरने वाली है। अंग्रेज़ी संगीत में केवल फुल टोन व हाफ टोन है, परन्तु हिन्दुस्तानी संगीत में टोन के चार भाग अर्थात् 1/4 टोन तक सुर का भाग किया गया है और यही कारण है कि वह अंग्रेज़ों को नहीं भाता। संगीत की शुरुआत हिन्दुस्तान में हुई और वहां से यह फारस गया और फिर फारस से अरब और ग्यारहवीं शताब्दी में अरब से यूरोप पहुंचा (एलफिन्स्टन, वॉल्यूम I, पेज 504, हंटर, पेज 65 तथा हरबिलास, पेज 372)।

हिन्दू दूसरी कलाओं जैसे भवन–निर्माण व हस्तकला इत्यादि में भी निपुण थे। प्राचीन काल के मन्दिरों, मीनारों और किलों की बनावट से यह भली–भान्ति स्पष्ट होता है। हिन्दू रेशमी व सूती कपड़ा भी अति उत्तम और बारीक बनाते थे और इसमें रंग भी बहुत पक्का और सुन्दर भरते थे। कुछ हस्तशिल्पों में यूरोप वाले अभी भी उनका मुकाबला नहीं कर सकते (एलफिन्स्टन, वॉल्यूम I, पेज 317)। हरबिलास प्रोफेसर विल्सन और डॉ. हरे के हवाले से लिखता है कि हिन्दू विभिन्न धातुओं जैसे कि लोहा, तांबा, पीतल को ढालने की विधि भी जानते थे (हरबिलास, हिन्दू सुपीरिऑरिटी, पेज 402), जैसा कि लोहे की मीनारों, मन्दिरों की शहतीरों और दरवाज़ों इत्यादि से प्रतीत होता है।

आर्य हिन्दुओं ने हिन्दुस्तान को द्रविड़ और मंगोल इत्यादि कौमों से तलवार के ज़ोर पर जीता था, इससे यह विचार उचित मालूम होता है कि हम यहां आर्य हिन्दुओं के युद्ध और दूसरे प्रबन्धों की विधि के बारे में पाठकों को कुछ जानकारी उपलब्ध करवाएं।

हिन्दुओं के युद्ध के तौर–तरीके बड़े सभ्य और नियमित थे। एलफिन्स्टन अपनी इतिहास की पुस्तक में कहते हैं कि हिन्दुओं में लड़ाई बड़ी करुणा से की जाती थी और वे हारे हुए शत्रु के साथ अच्छा व्यवहार करते थे (एलफिन्स्टन, वॉल्यूम I, पेज 152)। प्रत्येक क्षत्रिय के लिए सैन्य–शिक्षा अनिवार्य थी। सैन्य–शिक्षा का वर्णन धनुर्वेद (यजुर्वेद का एक उपवेद) में विस्तार से किया गया था परन्तु वह ग्रन्थ किसी कारणवश नष्ट हो गया है। यद्यपि इसका कुछ–कुछ वर्णन अग्नि–पुराण व महाभारत इत्यादि पुस्तकों में मिलता है।

राजा अपनी सेना की, युद्ध के समय, स्वयं कमान सम्भालते थे। यद्यपि यह विधि कभी–कभी देश व कौम के लिए बड़ी हानिकारक साबित होती थी क्योंकि राजा के मारे जाने से कुल सेना तितर–बितर हो जाती थी और जीतने वाले को हार का मुंह देखना पड़ता था। परन्तु नियमों के अनुसार राजा का सेना के साथ जाना अनिवार्य समझा जाता था, इस कारण वे जाते थे और बड़ी बहादुरी से लड़ते थे जिनके उदाहरणों से इतिहास भरा पड़ा है। सेना चार प्रकार की होती थी जिसको चतुरंग कहते थे, अर्थात् हाथी, रथ के सवार, घुड़सवार और पैदल सैनिक। इनके पास हथियार भी भान्ति– भान्ति के होते थे जिनके नाम प्राचीन ग्रंथों में मिलते हैं परन्तु अब उनका अनुवाद करना असम्भव है, क्योंकि उनकी भांति के हथियार आजकल मौजूद नहीं हैं। उस काल में तोप और बन्दूक का होना भी मालूम होता है। क्योंकि उस समय शतघ्नी नामी हथियार का ज़िक्र मिलता है जिसका अर्थ वह हथियार है कि जिससे एक फायर में एक सौ सैनिक मारे जाएं, इसका वर्णन महाभारत में है तथा हरबिलास ने अपनी पुस्तक में इसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। एलफिन्स्टन ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि हिन्दुओं की युद्ध की सबसे प्रभावित विधि गोले फैंकना था जिसमें वे निपुण और चतुर थे और घुड़सवारों का आक्रमण भी बड़ा

असरदार और सफलतापूर्ण होता था (एलफिन्स्टन वॉल्यूम I, पेज 1057)।

राज्य के विभिन्न विभागों के प्रबंध के लिए अलग–अलग बोर्ड और अधिकारी नियुक्त होते थे। जैसे कि एक मंत्री जिसके पास शहर का विभाग होता था, उसके अधीन छः शाखाएं होती थीं। हरेक में पांच सदस्य होते थे,

एक के पास हस्तकला और शिल्पकला की निगरानी का प्रबंध होता था, दूसरे के पास बाहर से आए वाणिज्यों और यात्रियों की सुरक्षा और ख़ैर–खबर लेने का ज़िम्मा अर्थात् इन लोगों को जिन वस्तुओं की आवश्यकता हो वह उन्हें उपलब्ध करवाना और यदि वे अस्वस्थ हो जाएं तो उनका उपचार करना और अगर उनमें से कोई मर जाए तो उसकी चल–अचल सम्पत्ति को उसके वारिसों तक पहुंचाना। तीसरे के पास जन्म–मृत्यु के नक्शे तैयार करना, जनसंख्या की कमी बढ़ौतरी का हिसाब रखना, जनता के स्वास्थ्य बारे प्रस्ताव बनाना, कर आदि लगाना और उसके बारे पूरी सूचना देने की ज़िम्मेदारी थी। चौथे के पास दुकानदारों की निगरानी करना ताकि वह घटिया वस्तुएं न बेचें और कम वज़न के बाटों से वस्तुओं को न तोलें। वस्तुओं की दरें तय करना भी उसकी ज़िम्मेवारी थी। पांचवें के सुपुर्द देश में हस्त व शिल्प कला द्वारा बनाई गई चीज़ों को खरीदना ताकि कारीगरों को उनके बेचने में कठिनाई न हो और फिर इन वस्तुओं को दूसरे देशों में बेचने इत्यादि का प्रबंध करना था। छठे के सुपुर्द कर इत्यादि के खाते तैयार करके कर को वसूल करना और उसका पूरा हिसाब–किताब रखना था।

सेना के प्रबन्ध विभाग के अधीन भी छः बोर्ड होते थे और हरेक में पांच सदस्य होते थे। एक बोर्ड के अधीन समुद्री सेना और उसका प्रबन्ध होता था। दूसरे के सुपुर्द वाहनों तथा सैनिकों को ख़ाने–पीने का सामान पहुंचाना और पशुओं के लिए चारा इत्यादि का प्रबंध करना होता था। (तीसरे और चौथे बोर्ड का यहां हवाला नहीं है – अनुवादक)। पांचवें के सुपुर्द वाहनों के सवार होते थे और छठे के सुपुर्द हाथी होते थे। एक विभाग खेती–बाड़ी, नहरों और जंगलों के प्रबंध और निगरानी के लिए मुकर्रर था जो कि इन सब पर कर इत्यादि

वसूल करता था और उसका हिसाब रखता था।

हर दस गांव के पीछे एक अधिकारी, फिर उसके ऊपर सौ गांवों का एक बड़ा अधिकारी होता था। इस तरह सारे देश को भागों में बांट कर उसका प्रबन्ध किया जाता था। हिन्दुओं के राजा, महाराजा इन्हीं नियमों का पालन करते थे। महाराज विक्रमाजीत, भोज, चन्द्रगुप्त, अशोक इत्यादि के राज्यों का प्रबन्ध इन्हीं नियमों के अनुसार होता था, जिसका वर्णन इतिहास की विभिन्न पुस्तकों से मिलता है। इससे पूर्व कि हम जैसलमेर रियासत की घटनाओं के बारे में वर्णन करें, हम चन्द्रवंश की वंशावली के बारे में, जिसमें जैसलमेर परिवार भी शामिल है, लिखते हैं।

# दूसरा अध्याय

## जैसलमेर रियासत की घटनाएं

अब हम उस विषय को छोड़कर जो कि हिन्दुस्तान के इतिहास से सम्बन्धित है, जैसलमेर के परिवार की तरफ आते हैं जिसके लिए हमको हिन्दुस्तान के इतिहास की तरफ ध्यान देना पड़ा था। इसे हम श्री कृष्ण से आरम्भ करके संक्षिप्त घटनाओं का वर्णन करते हैं।

श्री कृष्ण चन्द्रवंश की यदु नस्ल से थे। यह परिवार चंद्रवंश में सबसे प्रसिद्ध था और इसकी ही सन्तान जैसलमेर का भट्टी परिवार है। यदु वंश की छप्पन शाखाएं थीं जिनमें से आठ शाखाएं प्रसिद्ध हुईं अर्थात् करोली के यादु शासक, जैसलमेर के भट्टी शासक और कच्छ–भुज के जरेजा शासक मगर सोमतेजा, मोदेचा, बदमोण, बदवा, सोहा का अब कुछ पता नहीं लगता कि कहां आबाद हैं।

एक समय यदु सम्पूर्ण हिन्दुस्तान के शासक थे और उनका बड़ा प्रभुत्व था। श्री कृष्ण की आठ रानियां थीं जिनमें से बड़ी रानी

रुक्मिणी के प्रद्युम्न उत्पन्न हुआ। प्रद्युम्न के अनिरुद्ध और अनिरुद्ध के वज्र उत्पन्न हुए। इस वज्र से जैसलमेर का भट्टी परिवार शुरू हुआ। वज्र के दो पुत्र थे एक नाभ और दूसरा अक़हीर। जब यदु परिवार घरेलु लड़ाई के कारण, जो द्वारका के निकट प्रभास क्षेत्र में हुई, नष्ट हो गया और श्री कृष्ण को भी एक भील ने घायल कर दिया तब वज्र अपने निकटवर्तियों से मिलने के लिए मथुरा जा रहा था परन्तु रास्ते में ही समाचार पहुंचा कि उसके सारे सगे–सम्बन्धी नष्ट हो गए हैं तो वह यह समाचार सुनकर सदमे से मर गया और नाभ को राजगद्दी मिली जो मथुरा वापिस आया।

जब युधिष्ठिर ने श्री कृष्ण की मृत्यु का समाचार सुना तो संसार त्याग कर हस्तिनापुर का राज अर्जुन के पोते परीक्षित को दे दिया (महाभारत प्रस्तहालक पर्व, पहला अध्याय) और स्वयं अपने दूसरे भाइयों अर्जुन, भीम इत्यादि और रानी द्रौपदी के साथ साधुओं के भेष में प्रयागराज (इलाहाबाद) होते हुए द्वारका पहुंचे। वहां से पंजाब और हरिद्वार से होते हुए बदरीकाश्रम यानी बदरीनाथ के पहाड़ों में चले गए और हिमालय पर्वत में जाकर लुप्त हो गए या गलकर शरीर त्याग दिया। श्री कृष्ण के दूसरे पुत्र जो युधिष्ठिर के साथ गए थे, दुर्गम क्षेत्र सिन्धु नदी को छोड़कर जाबलीस्तान में प्रवेश कर गए और उन्होंने गजनी (ग़ज़नी) को आबाद किया और समरकंद तक तमाम देशों को अपने अधीन कर लिया। फिर उन्होंने पंजाब पर आक्रमण किया और शालिवाहनपुर नामक शहर आबाद किया। 1577 ईसवी में (यह सन् गलत मालूम होता है–अनुवादक) तनोत, द्रावल अर्थात् लुद्रुवा को जो जैसलमेर से पहले उसकी राजधानी थी और फिर जैसलमेर को जो वर्तमान में भट्टी कौम, जो श्री कृष्ण के वारिसों में से है, की राजधानी है, को आबाद किया (टॉड, पेज 97 वॉल्यूम I)।

वज्र की मृत्यु के बाद नाभ को गद्दी मिली और वह अवध को आया "महाभारत में वज्र और नाभ एक ही नाम है परन्तु टॉड के राजस्थान में नाभ को वज्र का पुत्र लिखा है।" इसके पश्चात् नाभ मरुस्थल का राजा हुआ (टॉड, पेज 253, वॉल्यूम I) और केहर द्वारका को चला गया। नाभ से पृथ्वीबाहु उत्पन्न हुआ जिसने श्री कृष्ण के

चिह्न (झंडे) और राज्य का छत्र, जिसको विश्वकर्मा ने बनाया था, विरासत में पाया। उसका एक पुत्र बाहुबल था जिसका विवाह मालवा के राजा विजय सिंह की पुत्री कमलावती से हुआ था। राजा ने बहुत से हाथी–घोड़े, आभूषण और जवाहरात आदि दहेज में दिए थे। रानी कमलावती, जो पनवर जाति की थी, से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बाहु था। बाहु से सुबाहु उत्पन्न हुआ और सुबाहु से रीझ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसने बारह साल राज किया। उसकी शादी मालवा के राजा बीर सिंह की पुत्री सुभाग सुन्दरी से हुई।

जब रानी सुभाग सुन्दरी गर्भ से थी तो उसने एक रात स्वप्न में देखा कि उसके यहां एक सफेद हाथी पैदा हुआ है। ज्योतिषियों ने उसे एक शुभ स्वप्न बताया और कहा कि वह पुत्र बड़ा होनहार होगा। उसका नाम गज रखा जाए। जब यह जवान हुआ तो पूर्व देश के यदु राजा ने नारियल भेजकर विवाह का प्रस्ताव रखा जिसे स्वीकार कर लिया गया। इसी समय के बीच समाचार मिला कि सागर के किनारे म्लेच्छ जाति, जिसने इससे पूर्व राजा सुबाहु पर आक्रमण किया था, खुरासान के शासक फरीदशाह की कमान में चार लाख सवारों के साथ आक्रमण के लिए चली आ रही है और उनसे भयभीत होकर जनता भाग रही है।

यह सुनकर राजा ने सही सूचना लाने के लिए गुप्तचर भेजे और स्वयं मुकाबले के लिए हरिव नामक स्थान के लिए रवाना हुआ और उसका अपने शत्रु से जो खुरासान में कंज नामक स्थान पर ठहरा हुआ था, भीषण युद्ध हुआ जिसमें शत्रु पराजित हुआ और उसके तीस हज़ार सैनिक मारे गए। राजा को भी इस युद्ध में चार हज़ार सैनिकों की हानि हुई। शत्रु ने फिर आक्रमण किया और राजा रीझ ने फिर उससे मुकाबला किया। परन्तु वह इस मुकाबले में घायल हो गया। जब इसका पुत्र गज अपनी रानी हंसावती के साथ वहां था उस समय राजा रीझ की मृत्यु हो गई।

इन दोनों युद्धों में खुरासान के बादशाह की हार हुई थी इस लिए उसने फिर रोम के बादशाह से मदद मांगी। उसने रोम के बादशाह को कहा कि वह काफिरों के देश में इस्लाम और कुरान के

शासन को स्थापित करना चाहता है। जब खुरासान का बादशाह इस प्रकार अपनी शक्ति को बढ़ा रहा था तब राजा गज ने अपने राज्य के तमाम अधिकारियों से विचार विमर्श किया। यह फैसला हुआ कि शत्रु की इतनी बड़ी सेना का बिना किला बनाए मुकाबला असम्भव है। इसलिए उत्तरी पहाड़ियों के बीच में एक किले का निर्माण किया जाए। राजा गज ने इस के लिए अपने मित्रों से सहायता मांगी और अपनी कुलदेवी से जीत के लिए प्रार्थना की। देवी का आदेश हुआ कि एक किले का निर्माण करो और उसका नाम गजनी रखो।

जब इस किले का निर्माण कार्य सम्पूर्ण होने वाला था तो राजा को समाचार मिला कि रोम और खुरासान के बादशाह उसकी ओर बढ़ते आ रहे हैं। राजा गज शत्रु से मुकाबले के लिए दोलापुर स्थान पर जो आठ कोस की दूरी पर था शत्रु से लोहा लेने के लिए आया। दूसरी तरफ से दोनों बादशाहों ने मिलकर कूच किया, परन्तु रात के समय बदहज़मी के कारण खुरासान के बादशाह की मृत्यु हो गई। जब रोम के बादशाह अर्थात् सिकन्दर ने यह समाचार सुना तो उसको चिन्ता हुई परन्तु फिर भी वह अपनी सेना के साथ आगे बढ़ा। जब उसकी सेना चार कोस की दूरी पर थी तब राजा गज और उसके सरदार धर्मार्थ दान देकर और "जोगनी" को पीठ पर बांध कर युद्ध के स्थान पर चल पड़े। दोनों तरफ के सैनिकों ने भूखे शेरों की तरह एक-दूसरे पर आक्रमण किया, मानो पृथ्वी पर भूचाल आ गया और आकाश काला पड़ गया, कुछ नहीं सूझता था। बादशाह के पच्चीस हज़ार सैनिक मारे गए और बाकी सेना तितर-बितर हो गई, घोड़े-हाथी भी इधर-उधर भाग गए और बादशाह का सिंहासन भी वहीं रह गया।

इस युद्ध में राजा गज के सात हज़ार सैनिक काम आये परन्तु उसको जीत प्राप्त हुई। यादव सेना जीतकर अपनी राजधानी को वापिस आई। रविवार, तीन वैशाख, सम्वत् धर्मराज युधिष्ठिर, 3008, बसंत ऋतु, रोहिणी नक्षत्र में राजा गज ग़ज़नी के राज सिंहासन पर बैठा और यादव वंश को कायम रखा। इस जीत से उसकी शक्ति और भी बढ़ गई और उसने देश के पश्चिमी क्षेत्र को भी अपने कब्जे में कर लिया। फिर उसने कश्मीर के राजा गंधर्व कपिल को हाज़िर होने का

संदेश भेजा परन्तु राजा ने उत्तर दिया कि अगर वह बिना युद्ध किये उसके अधीन होगा तो सारा संसार उस पर हंसेगा। यह उत्तर सुनकर राजा गज ने कश्मीर पर आक्रमण किया और वहां के राजा की पुत्री से विवाह कर लिया। इस विवाह से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम शालिवाहन रखा गया।

शालिवाहन बारह वर्ष का ही था कि राजा गज को सूचना मिली कि खुरासानी सेना फिर आक्रमण करना चाहती है। इस पर उसने शालिवाहन और अपनी दूसरे निकटवर्ती सम्बन्धियों को पूर्व की ओर भेज दिया। जब शत्रु ग़ज़नी से पांच कोस की दूरी पर था तो राजा गज स्वयं उस से मुकाबले के लिए गया और किले की सुरक्षा अपने फूफा सहदेव के हवाले कर दी। राजा और बादशाह के बीच भीषण युद्ध हुआ और दोनों इस युद्ध में मारे गए। एक लाख मुसलमान और तीस हज़ार हिन्दू मारे गए। शाह के पुत्र ने ग़ज़नी का घेराव किया और सहदेव ने उसका तीस दिन तक मुकाबला किया। इसके पश्चात् सहदेव ने किले से निकल कर युद्ध किया, जिसमें उसके नौ हज़ार सैनिक मारे गए।

जब यह समाचार शालिवाहन को प्राप्त हुआ तो उसने बारह दिन शोक मनाया और फिर पंजाब में आया। एक स्थान पर उसने बहुत सा पानी देखा जहां वह ठहर गया और अपने फिरके के लोगों को जमा करके उसने वहां रविवार, आठ भादों, विक्रमी सम्वत् 72 को अपने नाम से एक शहर की बुनियाद रखी, जो अब लाहौर के नाम से प्रसिद्ध है। जो भूमिपति इस शहर के निकटवर्ती क्षेत्रों में रहते थे उन सब ने उसका स्वामित्व स्वीकार कर लिया। शालिवाहन ने पूरे पंजाब देश पर जीत प्राप्त की। उसके पन्द्रह पुत्र थे, वे सब राजा हुए। पुत्रों के नाम बुलंद, रसालु, दहर, मगंदा, बच्चा, रूपा, सुन्दर, लेख, जस, कर्ण, निमां, मात, पनंग, कन्कु और जगोर थे।

राजा शालिवाहन का विवाह दिल्ली के राजा जयपाल की पुत्री से हुआ। जब वह अपनी रानी के साथ दिल्ली से लौटा तो उसने मन में ठानी कि वह ग़ज़नी को फिर हासिल करके अपने पिता का बदला लेगा। इस इरादे से उसने अटक नदी को पार करके ग़ज़नी पर

आक्रमण किया। ग़ज़नी का शासक जलाल उसके मुकाबले में तीस हज़ार सैनिक लेकर आया परन्तु शालिवाहन ने उस पर जीत प्राप्त की और ग़ज़नी पर कब्ज़ा कर लिया। इसके पश्चात् शालिवाहन ने अपने पुत्र बुलन्द को ग़ज़नी की गद्दी पर बिठाया और स्वयं अपनी राजधानी पंजाब को लौट आया, परन्तु कुछ ही समय बाद उसकी मृत्यु हो गयी और बुलन्द ने शासन सम्भाल लिया। इस बीच उसके भाई (नाम नहीं दिय,........ अनुवादक) ने पंजाब के कुल पहाड़ी क्षेत्रों को अपने कब्ज़े में ले लिया।

बुलन्द के सात पुत्र थे जिनके नाम थे भट्टी, भूपति, कोलर, जन्ज, सिरमौर, भलसरण और मसगेरलू। बुलन्द ने ग़ज़नी को अपने पोते चकत्त्यू, जो कि "भूपति का पुत्र था", को सौंप दिया और स्वयं शालिवाहनपुर में रहा। चकत्त्यू ग़ज़नी में शासन करता रहा। उस समय तुर्क कौम बड़ी उन्नति कर रही थी। उसने ग़ज़नी के आस–पास के क्षेत्रों में अपनी प्रभुसत्ता जमानी शुरू कर दी। चकत्त्यू ने इस मुसलमान कौम के केवल सैनिक ही अपने नौकर नहीं रखे बल्कि उसने अपने तमाम अधिकारी और कर्मचारी उसी कौम से नियुक्त किये। इन अधिकारियों ने उसे सुझाव दिया कि यदि वह अपने पिता का धर्म त्याग दे तो वह उसको बल्ख और बुखारा का बादशाह नियुक्त कर देंगे जहां उज़बिक कौम के लोग रहते हैं।

बल्ख़ के बादशाह का कोई पुत्र नहीं था केवल एक लड़की थी। चकत्त्यू ने उससे विवाह कर लिया और बल्ख–बुख़ारा का बादशाह बन गया तथा अट्ठाईस हज़ार सैनिक भी उसको मिले। इस प्रकार वह बल्ख़स्तान से हिन्दुस्तान तक का बादशाह हो गया और उससे मुगलों की चुगत्यी (चुग़ताई–अनुवादक) कौम उत्पन्न हुई। चकत्त्यू के आठ पुत्र हुए उनके नाम देवसी, भैरवी, खम काहन्, नाहर, जयपाल, धरसी, बिजली काहन् और सहसम्बंध थे। बुलन्द के तीसरे पुत्र कोलर के आठ पुत्र हुए जिनके नाम वंशावली में दर्ज हैं। इनमें से लगभग सब ही मुसलमान हो गए थे और उन्होंने सिंधु नदी के पश्चिमी क्षेत्र में आवास कर लिया। बुलन्द के चौथे पुत्र जन्ज के सात पुत्र थे,

उनके नाम भी वंशावली में लिखित हैं और ये भी विभिन्न कौमों के प्रथम पूर्वज हुए और इन सब की सन्तान जन्ज नाम से प्रसिद्ध हुई।

भट्टी बुलन्द का सबसे बड़ा पुत्र था, वह अपने पिता की मृत्यु के बाद राजगद्दी पर बैठा। उसने चौदह राजाओं को जीतकर अपने अधीन किया। उसके पास साठ हज़ार घुड़सवार और अनगिनत पैदल सेना थी, इसके अतिरिक्त चौबीस हज़ार खच्चरें सरकारी खज़ाने के अधीन थीं। कनकपुर के राजा बीरवाहन के भघेल पर किए गए आक्रमण का जवाब देने के लिए उसने अपनी सेना को लौहार में एकत्रित किया। बीरवाहन चालीस हज़ार सैनिक लेकर उससे लड़ने के लिये आया था परन्तु युद्ध में उसका कत्ल हो गया और भट्टी की जीत हुई। उस समय से इस परिवार का नाम यादव से बदल कर भट्टी प्रसिद्ध हुआ।

भट्टी के दो पुत्र थे, मंगल राव और मसूर राव। भट्टी के पश्चात् मंगल राव राज गद्दी पर बैठा, उसका भाग्य उसके पिता जैसा न था। ग़ज़नी के बादशाह दोबन्दी ने एक भारी सेना के साथ लाहौर पर आक्रमण किया। मंगल राव मुकाबले में न आया और अपने बड़े पुत्र को लेकर जंगल को चला गया। शत्रु ने शालिवाहनपुर (लाहौर) (टॉड ने अपने इतिहास में शालिवाहनपुर को लाहौर के निकट कोई पुराना शहर बताया है, वॉल्यूम II, उर्दू, पेज 263) को, जहां राजा रहा करता था, घेर लिया। मंगल राव के छः पुत्र थे जिनके नाम थे मुआज़म राव, कलरसी, मूलराज, शिवराज, फूल, केवला सूर।

भट्टी का छोटा पुत्र मसूर राव भी बच कर भाग गया था। उसके दो पुत्र थे, अभय राव और सरण राव। उसका बड़ा पुत्र लखी नामक जंगल का मालिक हुआ। उसकी संतान अभोरिया भट्टी कहलाने लगी। जिस स्थान पर अब भटिण्डा का दुर्ग स्थित है, उसके आस–पास के क्षेत्र को लखी जंगल कहते हैं। यहां के घोड़े मशहूर हुआ करते थे। दूसरा पुत्र सरण राव अपने भाई से लड़ कर अलग हो गया था। उसकी संतान सरण जट्ट के नाम से मशहूर हुई। मंगल राव, जिसने गारा नदी के किनारे पर शरण ली थी, इस नदी के पार चला गया जहां उसने एक नये क्षेत्र को अपने अधीन कर वहां राज्य

स्थापित किया। उस समय बराहा कौम गारा नदी के तट पर और बताना में बूता राजपूत, पोगल में परमार कौम, ग्रामीण क्षेत्र में सूदा कौम और लुदर में लुदर राजपूत रहते थे। मंगल राव ने राजा सूदा की सहमति से लुदर, बराहा और सूदा क्षेत्र के मध्य में अपना आवास बनाया।

मंगल राव की मृत्यु के बाद उसका पुत्र मुआज़म राव, जो कि अपने पिता के साथ गया था, राजगद्दी पर बैठा। आस–पास के राजाओं ने उसका राजा होना मंजूर किया और राजगद्दी के समय उन्होंने उसके पास विभिन्न उपहार भी भेजे। अमरकोट के राजा सूदा की पुत्री से उसका विवाह हुआ। उसके तीन पुत्र केहर, मूलराज और गूगल हुए। मुआज़म राव की मृत्यु के बाद केहर गद्दी पर बैठा, उसने कई युद्ध लडे और नाम पाया। उसका विवाह झालावार के राजा देवरा की पुत्री से बड़ी धूमधाम से हुआ, उसने एक दुर्ग की नींव भी डाली थी जिसका नाम उसने तनु देवी के नाम पर तनवत् रखा था। इस दुर्ग का निर्माण कार्य मंगलवार, माघ सुदी, पूर्णमासी, विक्रमी सम्वत् 787 तदनुसार 731 ईस्वी को पूरा हुआ। बराहा के राजा जसरत ने तनवत के किले पर आक्रमण किया था, परन्तु मूलराज ने उसको बड़ी कुशलता से बचा लिया और राजा बराहा को मजबूर होकर वापिस लौटना पड़ा। कुछ दिनों के पश्चात् उनमें सुलह हो गई और राजा बराहा का विवाह मूलराज की पुत्री से हुआ।

भट्टी परिवार के इतिहास में केहर का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। यह ख़लीफा वलीद का समकालीन था, जो हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने वाला पहला व्यक्ति था। केहर के पांच पुत्र थे जिनका नाम तनु, अवतीराय, चतुर, मामरेव और तवायम् था। इन सबके संतान हुई जो अलग–अलग परिवारों के प्रथम पूर्वज हुए। ये सब भाई बड़े भाग्यशाली थे, उन्होंने राजपूतों का इलाका चिनाऱ जीत लिया था परन्तु राजपूतों ने अपना बदला केहर से ले लिया अर्थात् जब वह शिकार कर रहा था तो उस पर आक्रमण करके उसका वध कर दिया। केहर के वध के बाद उसका पुत्र तनु गद्दी पर बैठा। उसने बराहा और लंगाहा (मुलतान वालों का इलाका) नष्ट किया, परन्तु

हुसैन शाह लंगाहा पठानों, वर्धमान, दूदी, कहज़ी, खोखरा, घखड़, फील और जुहिया के मुकाबले के लिए इलाका बराहा में पहुंचा। वहां बराहा का राजा भी उसके साथ मिल गया और तनु अपनी बिरादरी के लोगों को एकत्रित करके मुकाबले में उतरा। दोनों के बीच घमासान युद्ध हुआ, जिसमें तनु को विजय प्राप्त हुई। उसे शत्रु का बहुत सारा सामान लूट में हाथ लगा।

तनु को बीजासिनी देवी की कृपा से गढ़ा हुआ धन भी प्राप्त हुआ, उसने एक दुर्ग उस देवी के नाम पर सम्वत् 813 अर्थात् 757 ईसवी में निर्मित करवाया, जिसका नाम उस देवी के नाम पर बीजकोट रखा। उसके पांच पुत्र थे जिनका नाम वंशावली में लिखित है। उसके पश्चात् उसका बड़ा बेटा विजय राव विक्रमी सम्वत् 870 मुताबिक 814 ईसवी में गद्दी पर बैठा, उसने गद्दी पर बैठते ही अपने पुराने शत्रुओं अर्थात् बराहा कौम पर आक्रमण किया और उनको नष्ट कर दिया। विक्रमी संवत् 892 में उसके एक पुत्र रानी बोता से उत्पन्न हुआ, उसका नाम देवराज रखा। एक बार बराहा और लंगाहा कौम के राजाओं ने मिलकर राजा भट्टी पर आक्रमण किया परन्तु उनकी हार हुई और वे भाग खड़े हुए। जब इनको यह ज्ञान हो गया कि वे राजा भट्टी से युद्ध में सफल नहीं हो सकते, तो उन्होंने षड्यन्त्र से काम लिया और पुरानी शत्रुता को दूर करने का बहाना बनाकर बराहा के राजा की पुत्री का रिश्ता विजय राव से करने का संदेश भेजा और जब विजयराव बारात लेकर वहां गया तो वह और उसके 800 सगे–सम्बन्धी कत्ल कर दिए गए। देवराज ने भाग कर पुरोहित के यहां शरण ली और शत्रुओं ने तनवत् शहर को घेरकर उसको जीत लिया और जो कोई भी उस शहर में था उसका वध कर डाला।

कुछ समय के लिए भट्टी नाम लुप्त रहा, देवराज लम्बे समय तक बराहा देश में छिपकर रहता रहा। एक दिन हिम्मत करके वहां से निकलकर भसूना नामक स्थान में पहुंचा जो कि उसके पिता का शहर था। वहां अपनी माता को देखकर, जो तनवत् के किले से भागकर वहां सुरक्षित पहुंची थी, अत्यन्त प्रसन्न हुआ तथा उसकी माता भी उसको देखकर प्रसन्न हुई। उसने देवराज के सिर पर नमक वार

कर पानी में डाल दिया और कहा कि तेरे शत्रु इस नमक की तरह गल जाएं। देवराज ने तंग आकर बोता के राजा से एक गांव देने की प्रार्थना की, जो कि मंजूर कर ली गई। परन्तु राजा के सगे--सम्बन्धियों ने राजा को डराया जिस कारण वह अपने वचन से फिर गया और देवराज को जंगल के बीच इतनी भूमि दी जितनी कि वह गाय, भैंस के चमड़े के तसमे से घेर सके। देवराज ने उस पर तुरन्त किले का निर्माण आरम्भ किया और सोमवार, माघ शुदी पंचमी, विक्रमी संवत् 909 में उस किले का नाम अपने नाम पर देवगढ़ या देवरावल रखा। यह किला कीका नामी मैमार ने बनाया था जिसने किला भटनीर भी बनाया था। देवराज ने इस मैमार का बहुत आभार प्रकट किया।

जब बोता के राजा ने सुना कि उसकी पुत्री के पुत्र ने आवास स्थान बनाने के स्थान पर किला बनवाया है, तो उसने कुछ सेना इसको गिराने के लिए भेजी। देवराज ने अपनी माता को किले की चाबी देकर कहला भेजा कि वह किले को अपने कब्जे में कर ले और वह उसकी इज़्जत करेगा, परन्तु वह उसके सरदारों से जो कि संख्या में 130 थे, कुछ विचार–विमर्श करना चाहता है। उसने सरदारों को कहला भेजा कि वे दस–दस की संख्या में किले में आएं। जब वे क़िले में दाखिल हुए तो उसने उनका वध कर डाला और उनकी लाशें किले की दीवारों से बाहर फैंकवा दीं, जिन्हें देखकर सेना भाग गई और फिर उसने किले को बड़ी तसल्ली के साथ बनवाया।

कुछ समय बाद एक जोगी, जिसका नाम बाबा रत्ता था, जिसने देवराज को बराहा से बचाया था, उससे मिलने के लिए वहां आया, उसकी झोली में एक "रसकूप" था जिससे रसायन बनता था, वह देवराज के हाथ लग गया। जोगी ने भी उसको यह रसकूप देने का वादा किया, अगर वह उसका चेला बन जाए। इसी कारण उसने देवरावल किला बनवाया था। देवराज उसका चेला बन गया और उसी दिन से उसने राव का ख़िताब बदल कर रावल का ख़िताब चुन लिया और जोगी से इस रस्म अर्थात् चेला जोगी होने का पीढ़ी–दर–पीढ़ी वचन दिया। जैसलमेर के शासक अब तक रावल कहलाते हैं और उनका कनफटे जोगी द्वारा राजतिलक होता है। देवराज ने बराहा और

लंगाहा कौम से अपना बदला लिया और उनको नष्ट किया। भट्टी और लंगाहा कौमों में लम्बे समय तक युद्ध होते रहे और अन्त में विक्रमी संवत् 1530, तदनुसार 1474 ईसवी में वह युद्ध समाप्त हुआ जो कि राजा जाज़क के शासन काल में आरम्भ हुआ था, जिसके थोड़े समय बाद बाबर ने हिन्दुस्तान को फ़तह किया और मुल्तान को अपने राज्य का एक प्रान्त बनाया।

देवरावल के दक्षिण की ओर लुद्र राजपूत रहते थे। इनकी राजधानी लुद्रावा थी, यह बहुत बड़ा शहर था, जिसके बारह दरवाज़े थे। वहां के परिवार के पुरोहित रुष्ट होकर देवराज के पास आए और उसको सलाह दी कि वह उनके पुराने मालिकों को इस इलाके से खदेड़ दे। देवराज लुद्र के राजा बीरभान की पुत्री से विवाह करने गया और जब वह बारह हज़ार सवारों के साथ शहर में दाखिल हुआ तो उसने वध करने शुरू किए और लुद्र का मालिक बन बैठा। उसने लुद्र के राजा की पुत्री से शादी की और एक दस्ता सैनिकों का वहां छोड़कर स्वयं देवरावल में वापिस आया। अब वह छप्पन हज़ार सवारों और एक लाख ऊंटों का सरदार हो गया। इस समय में देवरावल का एक सौदागर जिसका नाम जसकरण था, धार नगरी को गया। वहां के राजा ब्रजभान पंवार ने उसको बंदी बनाया और धन लेकर छोड़ दिया। उस सौदागर ने कारागार में रहते हुए अपने शरीर पर पड़े ज़ंजीरों के निशान देवराज को दिखलाए। देवराज अत्यन्त क्रोधित हुआ और धार नगरी पर आक्रमण कर ब्रजभान को अपने अधीन किया फिर उसे उसके 800 सैनिकों सहित कत्ल कर अपने शहर लुद्रावा को वापिस आया।

देवराज ने कोहदाल के इलाके में, जिसमें देवरावल था, तालाब बनवाये जिसमें से एक का नाम तनवतसर और दूसरे का नाम अपने नाम पर देवसर रखा। देवराज अपने छब्बीस साथियों के साथ शिकार खेलने गया जहां वह जिह्वा कौम के राजपूतों, जो उसके पुराने शत्रु थे, के हाथों मारा गया। उसने पचपन वर्ष तक राज्य किया, उसके दो पुत्र मौन्द और चैनेदू थे। चैनेदू बराहा वाली रानी से उत्पन्न हुआ था। उससे चंदा परिवार का आरम्भ हुआ और मौन्द राजगद्दी पर बैठा।

पहले उसने अपने पिता का क्रियाकर्म किया। बाद में कनफटे जोगी का चेला बनकर गद्दी पर बैठा। उसने अपने पिता के वध का बदला जिह्वा राजपूतों से ले लिया। उसके एक पुत्र का नाम बज्र था जो अपने पिता की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठा। पहले कनफटे जोगी ने उसको तिलक किया, पीठ पर हाथ फेरा फिर गद्दी पर बिठाया। उसका विवाह बल्वसेन सोलंकी, जो पटन का राजा था, की पुत्री से हुआ।

राजा मौन्द की थोड़े समय के बाद मृत्यु हो गई। उसके पांच पुत्र थे जिनके नाम दोसज, सिंग, पालीराव, आखण्ड और मालसउ थे। इन सबके संतान हुई और हर एक ने अलग–अलग फिरके की बुनियाद डाली। दोसज आषाढ़ मास, सम्वत् 1100 ई0 में गद्दी पर बैठा। उसने किजी कौम के जोद्धा नाम के एक विद्रोही पर, जो ज़िला मारवा के नागोर में रहता था, जो कहतु के निकट है, और जिसने जयसिंह की पुत्री का वध किया था, गंगा स्नान के बहाने आक्रमण किया और उसको उसके सौ साथियों समेत कत्ल किया।

दोसज अपने तीन भतीजों के साथ केहर के इलाके में गया जहां उन्होंने घहलोट के राजा प्रताप सिंह की पुत्रियों से विवाह किये। केहर के इलाके में यादवों ने सोने के ढेर लगा दिये और उसे धनी बना दिया। घहलोट के राजा ने पन्द्रह दियोबांदियां अर्थात् दीये उठाने वाली बांदियां दहेज में दीं। कुछ समय बाद कोहदाल के इलाके में बलोचों ने आक्रमण किया, लड़ाई में पांच सौ बलोच मारे गए, बाकी के भाग गए। वछरा भी मारा गया और राजा हमीरसोदा ने उसके इलाके में लूटमार की और फिर ग्रामीण क्षेत्र में चला गया। दोसज के दो पुत्र ज़ैल और विजय राज थे। बुढ़ापे में इस राजा की रानी रणवात से, जो मेवाड़ परिवार से थी, विजय राय लंगा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसको दोसज की मृत्यु के बाद अधिकारियों ने गद्दी पर बिठाया। उसने गद्दी पर बैठने से पहले बुद्ध राज सोलंकी की पुत्री से विवाह किया। उस रानी से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम भोजदेव रखा गया।

भोजदेव अपने पिता की मृत्यु के बाद पच्चीस वर्ष की आयु में लुद्रावा का मालिक हुआ। विजय राज का विवाह धावल के राय पंवर

की पुत्री से हुआ। उस से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम राहर रखा गया। इसके दो पुत्र तंसी और केकसी हुए। भोजदेव को गद्दी पर बैठे अधिक समय नहीं हुआ था कि उसके फूफा भाई जैसल ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। भोजदेव के साथ पांच सौ सोलंकी राजपूत रहते थे इसलिए उस पर जैसल भारी न पड़ सका। इस पर जैसल अपना मतलब पूरा करने के लिए अपने सगे सम्बंधियों सहित गोर के बादशाह से सहायता लेने के लिये थाट्ट नामक स्थान के लिये रवाना हुआ जहां बादशाह गोर पटन से युद्ध कर रहा था।

वहां से वह बादशाह गोर के साथ अरवा नामक स्थान को गया जो सिन्ध में है। वहां पहुंच कर उसने बादशाह से अपनी इच्छा स्पष्ट की और बादशाह का साथ देने की कसम खाई । इस पर उसको बादशाह गोर की तरफ से अपने भतीजे भोजदेव को गद्दी से उतारने के लिए मदद हासिल हुई । इस सहायता के साथ उसने लुद्रावा का घेराव किया। भोजदेव इस युद्ध में मारा गया। इस प्रकार जैसल को लुद्रावा की गद्दी प्राप्त हुई। यह स्थान सुरक्षित नहीं था इसलिए उसने एक सुरक्षित स्थान की खोज की। लुद्रावा से पांच कोस की दूरी पर उसे पहाड़ की चोटी सुरक्षित स्थान लगा। यहां ब्राह्मसर जलधारा के निकट एक ब्राह्मण आबादी से बाहर अलग रहता था। वह उस ब्राह्मण के पास गया और आदर पूर्वक उसने अपने वहां आने का कारण बताया। दुनिया से बेखबर इस संत ने तरकोटा पहाड़ का वर्णन करते हुए बताया कि त्रेता युग में काग नामक संत महात्मा इस जलधारा के निकट रहता था। जो नदी इस जलधारा से निकलती है वह उसके नाम पर काग नदी कहलाती है। एक समय अर्जुन कृष्ण के साथ इस स्थान पर यज्ञ करने के लिए आया था और श्री कष्ण ने उसे बताया था कि उसकी संतान में से एक व्यक्ति यहां आ कर एक नगर इस नदी के किनारे पर आबाद करेगा और इस तरकोटा पहाड़ पर एक किला बनवायेगा।

जब श्री कृष्ण ने अर्जुन को यह बताया तो उसने कहा कि यहां का पानी दूषित है। इस पर श्री कृष्ण ने उस पहाड़ में सुराख किया और एक मीठे पानी की धारा उससे निकली। इस जलधारा के

पास वह भविष्यवाणी एक कविता के रूप में पत्थर पर खुदी हुई थी जो उस संत ने जिसका नाम ऐसल था, राजा भट्टी को दिखाई। राजा ने उसको पढ़ा। इस कविता का अर्थ था "ऐ राजा यादववंशी इस देश में आ और इस पहाड़ की चोटी पर एक त्रिकोटा दुर्ग यानी तीन कोणों वाला किला बना"। इस ऐसल नामक संत ने जैसल से यह अनुरोध किया था कि जो मैदान इस दुर्ग के पश्चिम की ओर है वह उसके नाम से याद किया जाए। अर्थात् ऐसल का मैदान (टॉड राजस्थान, पेज 285 उर्दू, वॉल्यूम II)।

रविवार श्रावण सुदी द्वादशी, विक्रमी सम्वत् 1212, तदनुसार 1156 ई0 में जैसलमेर की स्थापना की गई (जैसल राजा का नाम है तथा मेर पहाड़ को कहते हैं) और लुद्रावा वासियों ने नगर को छोड़कर अपनी धन दौलत और सामान को लेकर नई जगह आवास इत्यादि बनाने शुरू किये। लुद्रावा के खण्डहर अब भी मौजूद हैं। यह स्थान वर्तमान राजधानी जैसलमेर से उत्तर दक्षिण की ओर 10 मील की दूरी पर स्थित है। जैसल के दो पुत्र, केलन और शालिवाहन थे। जैसल ने अपने अधिकारी वर्ग के लोग सोदल की संतान से जो बहु कौम से थे, नियुक्त कर रखे थे। वे सब शक्तिशाली हुए हैं। चना राजपूतों ने फिर कोहदाल के इलाके पर चढ़ाई की थी जो उन के पुराने शत्रु थे परन्तु चना राजपूतों की पराजय हुई थी।

जैसलमेर का स्थापक जैसल नई राजधानी बनाने के बाद केवल बारह वर्ष तक जीवित रहा। उसके बड़े पुत्र केलन से उसका मंत्री बहुत रुष्ट था। इसलिए उसने केलन के छोटे भाई शालिवाहन को गद्दी पर बैठाया। शालिवाहन जो इतिहास में बड़ा प्रसिद्ध नाम है, वह जैसल का पुत्र था। वह विक्रमी सम्वत् 1224 अर्थात् 1168 ई0 में गद्दी पर बैठा। उसकी पहली विजय काथी जाति पर थी जो कि झालावार और अरावली में रहते थे। ये नगर जगभान राजा के अधीन थे। इस युद्ध में काथी का राव मारा गया था। उसके घोड़े इत्यादि जैसलमेर पहुंचाए गए थे। इस विजय से शालिवाहन और भी प्रसिद्ध हो गया। उसके तीन पुत्र थे जिनके नाम बजर, बानर और हासु थे।

शालिवाहन के पास जैसलमेर में बदरीनाथ से एक पहाड़ के राजा, जो यादववंशी था और जैसलमेर के शालिवाहन प्रथम की संतान से था, का संदेश आया। इसमें कहा गया था कि वहां के राजा का निस्संतान स्वर्गवास हो गया है इस कारण कोई राजा गद्दी पर बैठाने के लिए भेज दिया जाए। हासु को वहां भेजा गया परन्तु वह उस रियासत में पहुंचने से पहले ही मारा गया। उसकी रानी जो उसके साथ थी, गर्भवती थी। रास्ते में उसे पलास (ढाक) के वृक्ष के नीचे एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

इसका नाम पलासिया रखा गया। यही लड़का बदरीनाथ की उस पहाड़ी रियासत का राजा हुआ इसका नाम पलासिया रखा गया। यही लड़का बदरीनाथ की उस पहाड़ी रियासत का राजा हुआ और उसके नाम से उस रियासत के राजाओं के परिवार का नाम पलासिया पड़ गया।

सिरमौर के राजाओं का परिवार पलासिया कहलाता है। इस रियासत के प्रथम पूर्वज का जैसलमेर से आना टॉड साहब ने लिखा है और इस स्थान को बदरीनाथ की पहाड़ियों में बताया है मगर यह स्थान बदरीनाथ में नहीं है बल्कि हिमालय पर्वत की छोटी शृंखलाओं में स्थित है और वह रियासत सिरमौर है क्योंकि बदरीनाथ पर्वत में केवल गढ़वाल की रियासत है जो कि न सूर्य वंशी है और न ही उनका प्रथम पूर्वज जैसलमेर से आया है।

इस कारण यह प्रतीत होता है कि हिमालय पर्वत के स्थान पर गलती से बदरीनाथ पर्वत लिखा गया है। अब हम जैसलमेर के इतिहास की घटनाओं को उस स्थान पर, जबकि राजा हासु को जैसलमेर से सिरमौर की रियासत में राज्य करने के लिए भेजा गया था, छोड़ते हैं और सिरमौर के इतिहास की घटनाओं का सिलसिला शुरू करते हैं।

# तीसरा भाग

## पहला अध्याय

### हिन्दुस्तान के मुस्लिम बादशाहों के शासन काल में रियासत सिरमौर का क्षेत्रफल

मुगल शासन काल में और उससे पूर्व सिरमौर रियासत का क्षेत्रफल बहुत बड़ा था, परन्तु उसकी सम्पूर्ण जानकारी हासिल करना कठिन है क्योंकि रियासत का इतिहास कड़ीवार उपलब्ध नहीं है। परन्तु उन लेखों से, जो प्राचीन काल में सिरमौर के राजाओं ने दिये थे तथा पुराने भवनों और दूसरी घटनाओं से यह पाया जाता है कि रियासत सिरमौर की सीमा उत्तर में हाटकोटी मन्दिर तक, जो अब बुशैहर के इलाका में है और पूर्व में गंगा नदी से देवलमाली मन्दिर तक जो अब रियासत गढ़वाल में है, दक्षिण में वह क्षेत्र जो अब अम्बाला ज़िला के नारायणगढ़ तहसील का दक्षिणी भाग है और पश्चिम में इसकी सीमा सतलुज नदी से गोरखपुर बुर्ज़ तक, जो रियासत नालागढ़ में बदायूं के निकट सरसा नदी के तट पर है, अभी तक कायम है। परन्तु समय के बदलाव से रियासत के क्षेत्रफल में धीरे–धीरे कमी होती गई। रियासत के राजा की दुर्बलता के कारण उसके द्वारा बाहरी इलाकों में नियुक्त अधिकारियों ने अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया।

उदाहरण के तौर पर अम्बाला ज़िले की रामगढ़ रियासत का प्रथम पूर्वज कुशल सिंह बिलासपुरिया, जो कि रियासत सिरमौर में कार्यरत था और रियासत की ओर से उस परगना का सरदार था, गोरखों की लड़ाई में खुद मुख़्तार हो गया जिसको ब्रिटिश सरकार ने बाद में अलग से मुखिया मान लिया। कुशलसिंह की एक बावड़ी और

एक विशेष मन्दिर नाहन शहर में अब तक मौजूद है, जो कि मियां की बावड़ी व मियां के मन्दिर के नाम से मशहूर है। बल्कि एक तालाब तो आज तक कुशल मियां का जौहड़ के नाम से जाना जाता है। यह नाहन से तीन मील की दूरी पर है। इसके अतिरिक्त इसकी पुष्टि उन लेखों और मुआफियात (ग्रांट) इत्यादि से होती है, वे खेत–पुराली, दूधगढ़, रामपुर आदि ग्रामीण इलाके रामगढ़ के ब्राह्मणों के पास आज तक मौजूद हैं, जो कि उनको राजा धर्मप्रकाश ने दी थीं और ज़िला अम्बाला के नारायणगढ़ में भी सिरमौर के महाराजा कीर्त प्रकाश द्वारा बनाया हुआ जगन्नाथ का एक मन्दिर मौजूद है जिसको कि उसी इलाका में महाराजा की तरफ से कुछ गांव और बागान मुआफी के तौर पर दिए हुए थे जिनकी सनदें मन्दिर के महन्त के पास प्राप्त हैं जिनको ब्रिटिश सरकार ने भी माना है।

इसी प्रकार देहरादून के गुरुद्वारा को भी महाराजा सिरमौर की तरफ से कुछ गांव इस क्षेत्र में मुआफ थे, जिनकी सनदें भी देहरा के महन्त के पास पड़ी हैं। गढ़वाल के इलाके में मालीदेवर स्थान पर एक जयस्तम्भ अर्थात् विजय का मीनार युद्ध में विजय की यादगार के तौर पर बनवाया हुआ है। इसी तरह महाराजा वीर प्रकाश ने भी एक विजय मीनार हाटकोटी में बनवाया था जो अब बुशैहर के इलाका में शामिल है। देवी का एक मन्दिर पब्बर नदी के किनारे और पहाड़ी पर एक दुर्ग महाराजा सिरमौर का बनाया हुआ मौजूद है। एक किला जिसका नाम जगतगढ़ है, कालका के निकट पहाड़ पर स्थित है, जो अब पटियाला के इलाका में है। यह महाराजा जगत प्रकाश का बनवाया हुआ है।

एक किला, जिसका नाम मोरनी है, जो इलाका कोटाहा में है, वर्तमान मीर साहिब कोटा के कब्ज़े में है। यह भी महाराजा सिरमौर का बनवाया हुआ है। ज़िला देहरादून के कालसी स्थान में अब तक महाराजा सिरमौर के भवनों के खंडहर पाये जाते हैं। नारायण गढ़ तहसील में देहरादून, जौनसार आदि पहाड़ी इलाकों में और शिमला ज़िला की कई रियासतों और लोगों के पास सिरमौर के महाराजाओं के लिखित आदेश, सनदें, मुआफियां इत्यादि मिलती हैं। इस किताब का अनुपूरक देखें।

मोहियुद्दीन शाह औरंगजेब ने 1090 हिज़री में उत्तम सेवाओं के

बदले राजा बुद्ध प्रकाश को कालसी, जौनसार बावर, विराट और देहरादून के इलाके दिए थे और खलाखेर का इलाका, जिसकी स्थिति का ठीक--ठीक मालूम नहीं है इलाका पिंजौर और कोटाहा सिरमौर के राजाओं को बादशाह शाहजहां ने उत्तम सेवाओं के बदले में दिया था (इस किताब के अनुपूरक में शाही फरमान देखें)।

ये इलाके समय के बदलाव से सिरमौर रियासत के हाथ से निकल गए अथवा सिरमौर का बहुत सा इलाका 1815 ईसवी की गोरखों की लड़ाई में रियासत से जुदा हो गया अर्थात् कालसी, जौनसार बावर तो ब्रिटिश सरकार के क्षेत्र में शामिल हो गए और पहाड़ी क्षेत्र में से गिरी नदी के उत्तर की ओर का इलाका क्योंथल के राजा को दे दिया गया और गढ़ीकोटा के इलाके को कोटा के मुखिया को दिया गया। पिंजौर और उसके आस–पास के इलाके अर्थात् परगना जहदगढ़ रियासत पटियाला को दिया गया और जुब्बल का इलाका राणा जुब्बल को मिला (रियासत सिरमौर की सनद, नं0 88, तिथि 11 सितम्बर, 1815 ईसवी व पटियाला की सनद, नं0 72, व जुब्बल की सनद, जो हचिन्सन के समझौता में दर्ज है, इस पुस्तक के अनुपूरक में देखें)।

# दूसरा अध्याय

## मुस्लिम बादशाहों के शासनकाल में सिरमौर रियासत का प्रभुत्व

इस स्थान पर विस्तार पूर्वक वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है कि मुस्लिम बादशाहों के शासनकाल में इस रियासत का प्रभुत्व कितना था क्योंकि आगे चलकर हम प्रत्येक राजा के शासन काल की घटनाएं और हालात अलग अलग बतलाएंगे जिससे उनके बारे में पाठकों को काफी जानकारी मिल सकेगी। इस स्थान पर हम केवल इस बारे में संक्षिप्त रूप से वर्णन करेंगे।

फारसी की एक दुर्लभ पुस्तक "तबक़ात–ए–नासरी" में लिखा है कि हिजरी 634 तद् अनुसार 1236 ई0 में नाज़ीम–उल–मुल्क मुहम्मद खां, जिसने अलतमश की पुत्री सुल्ताना रज़िया बेगम के विरुद्ध विद्रोह किया था, सिरमौर क्षेत्र के वरदार नामक पहाड़, जिसको अब भहदराज कहते हैं और जो ज़िला देहरादून में मनसूरी के निकट स्थित है, में शरण ली थी (तबक़त–ए–नासरी, पेज 706 व 839)। हिजरी 655, मुताबिक 1257 ई0 में तुग़लक़ खां ने संतूर गढ़ के दुर्ग में, जो उस समय सिरमौर क्षेत्र में था, शरण ली थी। इसके अवशेष अब तक कलसिया रियासत के छछरौली में संदु वन में पाये जाते हैं। मोहम्मद शाह प्रथम ने संतूर गढ़ पर आक्रमण किया। एलग़ा खां महान ने सिरमौर की पहाड़ी रियासत पर आक्रमण करके उसे नष्ट कर दिया, क्योंकि सिरमौर के राजा ने तुगलक़ खां को शरण दी थी।

इसी प्रकार फिरोज़ शाह तुग़लक़ के पुत्र नसीर–उल–दीन ने भी 1385 ई0 में सिरमौर में शरण ली थी (तारीख़–ए–फारीश्ता, वॉल्यूम I, पेज 150)। एलफिंस्टन भी अपने इतिहास में लिखते हैं कि सरोर के राय ने नसीर–उल–दीन की उसके भतीजे के बीच हुए युद्ध में बहुत सहायता की थी (एलफिंस्टन का इतिहास, वॉल्यूम II, पेज 72 व 74)। ऐसा प्रतीत होता है कि गलती से सिरमौर शब्द की जगह सरोर लिखा गया है। इसके अतिरिक्त सुर प्रकाश नामक राजा भी उस काल में सिरमौर का शासक हुआ है। शायद सरोर शब्द उसके नाम से लिया गया हो।

तैमुरशाह ने भी अपनी जीवनी में लिखा है कि उसने ज़मीन पार, शिवालिक की पहाड़ियां में, एक शक्तिशाली राजा रतनसेन का नाम सुना था जिस पर उसने पन्द्रह जमादी–उल–अब्वल, हिजरी 781 में शिवालिक पहाड़ी और कोका के बीच डेरा जमाकर आक्रमण किया। राजा भी अनगिनत सेना लेकर उसके मुकाबले में आया। इस लड़ाई में खून की नदियां बह गई और राजा की हार हुई।

यह भी सम्भव है कि राजा रतनसेन वही हो जिसका नाम सिरमौर के राजाओं की वंशावली में रतनप्रकाश लिखा है, क्योंकि कोका पहाड़ अब तक सिरमौर क्षेत्र में आता है और यह पहाड़ सिरमौर

की पुरानी राजधानी के निकट ही है, इस पहाड़ के उस तरफ शिवालिक शृंखलाएं हैं। कनिंघम भी इस रतनसेन को रतनप्रकाश बतलाता है बल्कि तैमुर ने अपनी जीवनी में स्पष्ट तौर से लिखा है कि "मैंने क्यारदादून पर चढ़ाई की जो सिरमौर रियासत के क्षेत्र में है, इसलिए यह रतनसेन अवश्य ही सिरमौर का राजा रतनप्रकाश था जो गलती से प्रकाश के स्थान पर सेन लिखा गया।

मुस्लिम बादशाहों के शासन काल में सिरमौर के राजाओं का रसूख़ और प्रभुत्व अच्छाखासा था, कई अवसरों पर देहली के बादशाहों ने सिरमौर के राजाओं को युद्ध में सहायता देने के लिए बुलाया था। जैसा कि सिरमौर के राजाओं के नाम शाही आदेशों से साबित होता है कि सिरमौर के राजाओं का देहली के बादशाह बहुत सम्मान किया करते थे। यह बात शाही फरमानों में सिरमौर के राजाओं को दी गई उपाधियों (अलक़ाबों) और सम्मानों से प्रतीत होता है।

देहली के बादशाह गढ़वाल इत्यादि के मुखियाओं को ज़मींदार लिखा करते थे, परन्तु राजा सिरमौर को फरमानों (आदेशों) में जुबदत–उल–इम्साल (खूबियों और अच्छाइयों का निचोड़) व जुलइकरान (निकट सम्बंधी) के खिताबों से सम्बोधित करते थे, जैसा कि वे जोधपुर और जयपुर इत्यादि के राजाओं को किया करते थे। सिरमौर के राजाओं के शाही परिवार से बड़े अच्छे सम्बंध थे। वे शहजादों और शहजादियों से सीधे तौर पर पत्राचार किया करते थे और सिरमौर के राजा की तरफ से भेंट और तोहफे इत्यादि शाही परिवार को भेजे जाते थे जो बड़ी मेहरबानी से मंजूर हुआ करते थे। जैसा कि शाही फरमान में, जो इस पुस्तक के अनुपूरक में दर्ज है, से स्पष्ट है।

# तीसरा अध्याय

## ब्रिटिश शासनकाल में रियासत सिरमौर का क्षेत्रफल और सीमाएं

इस समय रियासत सिरमौर की सीमाएं निम्नलिखित हैं :– इसके उत्तर में रियासत जुब्बल व बलसन है, पूर्व में ब्रिटिश सरकार का देहरादून का इलाका है, जिसकी सीमा जमुना व तोंस नदी तक है, उत्तर पश्चिम में रियासत पटियाला व क्योंथल है और दक्षिण पश्चिम में ब्रिटिश सरकार का इलाका ज़िला अम्बाला व रियासत कलसिया है। यह रियासत हिमालय पर्वत के निचले भाग में स्थित है। मिनट अक्षांश (Latitude) 30 दर्जा 20 मिनट व 31 दर्जा 5 मिनट उत्तर, और रेखांश (Longitude) 75 दर्जा पांच मिनट व 77 दर्जा 55 मिनट पूर्वतर स्थित है।

इसकी उत्तर–दक्षिण में चौड़ाई मौज़ा दमांदर से बराल तक 50 मील और पूर्व पश्चिम में लम्बाई मौज़ा कमल से बारोना तक 43 मील है। यदि इस लम्बाई चौड़ाई में पर्वतों की ऊंचाई और नीचाई को गिनें तो संख्या बहुत बढ़ जाती है। इसका क्षेत्रफल 1108 वर्ग मील है। इसकी जनसंख्या 1901 की जनगणना के अनुसार 1,35,626 है। इस रियासत का अधिकांश भाग, क्यारदादून को छोड़ कर जो कि जमुना के पश्चिम में शिवालिक और हिमालय पर्वत के बीच स्थित है, पर्वतीय है।

# चौथा अध्याय

## रियासत का प्राकृतिक विभाजन

यह रियासत प्राकृतिक तौर से तीन भागों में विभाजित है : (1) उत्तरी भाग, जो गिरी पार के नाम से मशहूर है, जिसकी अन्तिम सीमा गिरी नदी है, (2) मध्य भाग, जो गिरी नदी और मारकण्डा के बीच स्थित है और जिसमें सेन, ढाती और खोल शामिल है, (3) दक्षिण भाग जो मारकण्डा नदी और जमुना के बीच स्थित है और जिसको दूनबजरा कहते हैं। इन तीनों भागों की जलवायु तथा उपज में विभिन्नता है।

उत्तरी भाग अर्थात् गिरी पार की जलवायु अधिक ठण्डी है। यह सेहत के लिए लाभदायक मानी जाती है। शीतकाल के समय इस भाग में काफी बर्फ पड़ती है। यहां खरीफ के मुकाबले रबी में अच्छी उपज होती है, खास कर मक्की और कोदा बहुतायत से पैदा होते हैं। यहां के लोग तगड़े और मेहनती हैं। वे सादे स्वभाव के मगर ज़िद्दी मिज़ाज के होते हैं। मध्य भाग की जलवायु संतुलित है और उपज भी दोनों फसलों की दरम्याना है। दक्षिणी भाग की जलवायु गर्म है और भूमि से उपज अच्छी होती है, खास कर रबी की फसल।

इन तीनों भागों में पर्वत की चार श्रृंखलायें हैं जिनको सिरमौर में धारें कहते हैं। (1) चूड़धार उत्तरी भाग में, (2) धारसैन, (3) धार धारटी मध्य भाग में है, (4) धार लायादेवी दक्षिण भाग में है। यह काला आम से शुरू हो कर जमुना पर समाप्त होती है व शिवालिक पर्वत की श्रृंखला में है। यही वह धार है जिससे चढ़ाई शुरू होती है और चूड़धार पर समाप्त होती है। धार चूड़ रियासत के सारे पर्वतों से ऊंची है। सिरमौर में

आम तौर पर सिरमौर की 3 $^{1}/_{2}$ धारें मशहूर हैं– चूड़, सैन और धारटी पूरी–पूरी और लायादेवी आधी खयाल की जाती है, क्योंकि यह ऊंचाई में सबसे कम है। इस रियासत का स्तर आमतौर से उत्तर से दक्षिण को ढलवानी है और पूर्व–पश्चिम की ओर भी इसका स्तर दोनों ओर से ढलवां है। चूड़धार जो कि उत्तरी भाग में स्थित है, उसकी सागर तल से ऊंचाई 11,982 फुट है। वह स्थान जहां पर गिरी नदी व जमुना मिलती है और जो दक्षिणी भाग में है, समुद्र तल से 1500 फुट ऊंचा है।

# पांचवां अध्याय

## पर्वतों का वर्णन

उत्तरी भाग अर्थात् गिरी पार में सबसे ऊंचा पर्वत चूड़ धार है। इसकी सबसे ऊंची चोटी जिसको लिंग का टिब्बा कहते हैं, 11,982 फुट ऊंचा है। यहां से दक्षिण की ओर दूर–दूर तक गंगा नदी व सतलुज तक मैदानी भाग नज़र आता है। उत्तर की ओर तिब्बत और बदरीनाथ के बर्फानी पर्वत भी नज़र आते हैं तथा शिमला व चकरौता भी। इस पर्वत पर बहुत ठंडी और तेज हवा चलती है। शीतकाल में पहली ही वर्षा में वहां पर बर्फ पड़ जाती है जो अप्रैल मास तक रहती है। इस पर्वत में पत्थर बहुत हैं खासकर लिंग के टिब्बे पर। ये पत्थर बहुत सख्त होते हैं जिनमें चूना और कंकर की मिलावट होती है। ये आवास बनाने के काम के लिए लाभदायक नहीं हैं। इस पर्वत में बान और केलु के वृक्ष होते हैं मगर इस की चोटी पर सिवाय घास के कोई वृक्ष नहीं है। यहां कई किस्म की बूटियां, फूल और झाड़ियां इत्यादि होती हैं जिससे यह पर्वत हराभरा दिखता है, परन्तु यहां पानी नहीं है।

इस पर्वत से पांच–पांच मील की दूरी पर उतराई में, जिस स्थान से पर्वत की चढ़ाई शुरू होती है, गांव आबाद हैं, खास कर मौज़ा

नागली से बहुत चढ़ाई है जो लगभग तीन मील की है। इस स्थान से चूड़ धार की सीमा शुरू होती है। इस चोटी के अन्तिम छोरपर, जिसको लिंग का टिब्बा कहते हैं महादेव की मूर्ति है। इसको चूड़ेश्वर महादेव कहते हैं। पश्चिम की ओर पर्वत की उतराई पर शिरगुल देवता का एक छोटा सा मन्दिर है जो कि पर्वतीय शैली में पत्थर और लकड़ी से बना हुआ है।

मन्दिर के निकट एक छोटी बावड़ी है, जिसका जल ग्रीष्म ऋतु में अति शीतल होता है। इसके निकट ही एक छोटा सा मैदान है जिसमें यात्री मेले के समय ठहरते हैं। यह एक ऐसा स्थान है जो पर्वत की ओट में होने से हवा से सुरक्षित रहता है। जल अति शीतल होने के कारण वहां पर माष की दाल नहीं गलती। यह मेला ग्रीष्म ऋतु में होता है। इसमें निकटवर्तीय क्षेत्रों से पहाड़ी लोग जाते हैं और दिन ही दिन में वहां ठहर कर रात को वापिस हो जाते हैं।

यही पहाड़ी आज कल जुब्बल और सिरमौर रियासत की सीमा है। उत्तर की ओर जुब्बल की सीमा शुरू होती है। इस धार में भारत सरकार ने एक मैट्रोलोजिकल ऑबज़रवेटरी (जलवायु और मौसम विभाग का कार्यालय) स्थापित की हुई है। चूड़धार के पश्चिम की ओर हरिपुर की धार है जो कि इसी पर्वतीय श्रृंखला में है परन्तु ऊंचाई में दूसरे स्थान पर आती है। इसकी ऊंचाई 8,802 फुट है। पहले यहां पर एक दुर्ग था मगर अब एक मकान है जिसमें रियासत का फॉरेस्ट रेंज ऑफिसर रहता है। यहां भी ठंड बहुत रहती है और हवा तेज़ चलती है। यहां जल नहीं है परन्तु यह जगह हरीभरी है और पत्थर भी ज़्यादा नहीं हैं। तीसरी धार चांदपुर की है जो कि चूड़धार से पूर्व की ओर है, इसकी ऊंचाई 8,376 फुट है। यह धार बहुत सुन्दर है और हरी भरी रहती है, इसमें पानी भी है।

इन धारों के अतिरिक्त और भी धारें हैं जैसे कि ठंढु भवानी की धार है, जिसके दक्षिण पूर्व से गिरी नदी निकलती है। इस धार की ऊंचाई 5,700 फुट है। धार सरसु देवी की ऊंचाई 6,299 फुट है। राजगढ़ पर्वत चूड़ से पश्चिम की ओर है और जामों का पर्वत चूड़ धार के दक्षिण पूर्व में है। कांगड़ा जिसकी ऊंचाई सागर तल से 6,600

फुट है गिरी और तौन्स नदी के बीच स्थित है। यहां पर एक पुराने दुर्ग के खण्डहर हैं। मध्य भाग में दो पर्वतीय श्रृंखलाएं हैं, एक का नाम सैन और दूसरी का धारटी है। सैन गिरी व जलाल नदी के बीच स्थित है। इसमें पानी बहुत मात्रा में मिलता है परन्तु धारटी में पानी नहीं है। इस मध्य भाग में सबसे ऊंची भूरसिंह की धार है जो कि चूड़ के दक्षिण में, धारटी श्रृंखला में, तहसील पच्छाद के इलाके में है। इसकी ऊंचाई 6,435 फुट है। इस धार पर बान के कुछ वक्षों के अतिरिक्त और कोई वक्ष नहीं है, केवल घास होती है।

मध्य भाग के निचले हिस्से में चीड़ होती है, परन्तु पानी नहीं है। शीतकाल में यहां हिमपात होता है। यह हिम फरवरी तक रहता है। इसकी चोटी पर भूरसिंह देवता का मन्दिर है जिसके नाम से यह धार मशहूर है। यहां पर हर वर्ष कार्तिक मास में एक मेला होता है। यह एक मैदान है जिसको कुआग कहते हैं। इस धार से दूसरी धार सोमवर नामक है। जिसकी ऊंचाई 5,658 फुट है। यहां धार सैन पर्वत श्रृंखला में स्थित है। इस धार पर घास के अलावा कोई वृक्ष नहीं है परन्तु इस धार के निचले भाग में पानी अधिक मात्रा में मिलता है। तीसरी डाठु की धार है जो कि धारहटी श्रृंखला में नाहन से उत्तर–पूर्व की ओर स्थित है। इसकी ऊंचाई 5,044 फुट है, इसमें पानी नहीं है परन्तु चीड़ के वृक्ष अधिक मात्रा में हैं। एक जेतक नामक पहाड़ी भी है जो कि बहुत ऊंची नहीं है परन्तु यहां एक दुर्ग के खण्डहर हैं जिस कारण यह प्रसिद्ध है। यह नाहन से 4 मील उत्तर पूर्व की ओर है। चौथी लाया की धार है जिसकी ऊंचाई 2,600 फुट है। यह कोह (पर्वत) शिवालिक की श्रृंखला में है जो क्यारदादून के इलाके के दक्षिण से होता हुआ जमुना नदी तक चला गया है। इसमें झाड़ियों के अलावा बहुत कम वृक्ष हैं। यह राजधानी नाहन, डाठु और लाया की धार के मध्य एक अलग पर्वतीय श्रृंखला पर स्थित है। यहां लेखक से कुछ चूक हो गई है जिस कारण ये पंक्तियां स्पष्ट नहीं हैं – अनुवादक। इसकी ऊंचाई 3,057 फुट है और इस पर आने के लिए हर तरफ से चढ़ाई पड़ती है।

# छठा अध्याय

## नदियों का वर्णन

इस रियासत में छोटी बड़ी छः नदियां हैं जो वर्णन के योग्य हैं। (1) जमुना (2) गिरी (3) तौंस (4) जलाल (5) मारकण्डा (6) बाता। इसके अतिरिक्त छोटी–छोटी नदियां बहुत हैं। जमुना नदी यमुनोत्तरी के पर्वत, जो कि हिमालय पर्वत में छब्बीस हज़ार फुट ऊंचा है, से निकली है। यह इलाका गढ़वाल से होती हुई जौनसार के क्षेत्र को सींचती हुई मौज़ा खोडर माजरी के निकट इस रियासत की पूर्वी सीमा में लगभग चौदह मील बहती है – अर्थात् माजरी से कोन्च तक यह सिरमौर रियासत की सीमा से होकर अंग्रेजी सरकार के इलाके में चली जाती है। यही वह नदी है जो कि देहरादून को क्यारदादून से अलग करती है और जो वर्तमान में रियासत सिरमौर और अंग्रेजी सरकार की पूर्वी सीमा है। इस रियासत में इसको पार करने के लिए दो स्थान हैं जहां पर नौका घाट है। एक का नाम रामपुर और दूसरे स्थान का नाम बघानी है। इन दोनों स्थानों से लोग एक छोर से दूसरे छोर तक नौका में जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ लोग दारीया पर, जो कि बैल की खाल का होता है, नदी को पार करते हैं। जो लोग नदी पार करवाते हैं उन्हें मल्लाह कहते हैं। ये कुछ पैसे लेकर यह कार्य करते हैं। जो लोग स्वयं तैरना जानते हैं वह सरनाई, जो कि बकरे की खाल की होती हैं या तूम्बों को इकट्ठा बांध कर जिसको भरला कहते हैं, द्वारा नदी पार करते हैं।

इस रियासत में जमुना नदी की चौड़ाई ज़्यादा से ज़्यादा 300 फुट है और गहराई लगभग 20 फुट। परन्तु वर्षा के मौसम में यह बहुत बढ़ जाती है। ग्रीष्म ऋतु में बर्फ पिघलने के कारण इसका पानी घटता

बढ़ता रहता है। इसी कारण अंग्रेज़ी सरकार ने नहरों के विभाग की ओर से एक पैमाना (नापने का यन्त्र) पौंटा के स्थान पर नदी में लगा रखा है और पानी के उतार–चढ़ाव की सूचना के लिए एक टेलीफोन ऑफिस वहां पर खोला हुआ है जो नदी के पानी के उतार–चढ़ाव की सूचना नहर विभाग को दाउदपुर में देता रहता है। इस नदी का पानी शीतल और स्वच्छ है मगर ग्रीष्म ऋतु में बर्फ के पिघलने के कारण कुछ गंदला हो जाता है। इस नदी को हिन्दू पवित्र नदियों में से एक मानते हैं और इसमें भी धार्मिक पर्वों पर गंगा की भान्ति स्नान करते हैं।

इस रियासत में जमुना के किनारे श्री रामचन्द्र जी का एक मन्दिर रामपुर नामक स्थान पर और दूसरा पौंटा में है। सिक्खों का एक गुरुद्वारा भी पौंटा में है। यह नदी दून के तल से गहराई में बहती है, इसलिए इसका पानी क्यारदादून में खेतीबाड़ी की सिंचाई के काम नहीं आता। रियासत को तौंस और गिरी में पहाड़ों से ढाल में बह कर आने वाली लकड़ी की आधी महसूल चुंगी मिलती है तथा आधी अंग्रेजी सरकार लेती है। इसी प्रकार नौका पर भी आधा महसूल रियासत लेती है और आधा अंग्रेजी सरकार। रामपुर में जो कि रामपुर मण्डी के नाम से जाना जाता है, मल्लाह पहाड़ की लकड़ी पकड़ कर बेड़े बांधते हैं और बहाकर मैदानी इलाकों में ले जाते हैं। रियासत की खोडर माजरी सीमा के स्थान पर तौंस नदी जमुना में आकर मिलती है, गिरी मोहकमपुर नोआदा में और बाता, बाता मण्डी में जमुना से मिलती हैं। इस रियासत में ये सब नदियां जमुना की सहायक नदियां हैं।

क्यारदादून का इलाका जमुना की घाटी में पश्चिम की ओर स्थित है। यह घाटी पूर्व से पश्चिम तक 25 मील लम्बी है। यह इलाका जमुना व गिरी के संगम स्थान से, जो कि 1500 फुट की ऊंचाई पर है, शुरू होकर दर्रा कटासन तक, जो कि 2500 फुट की ऊंचाई पर है, ऊंचा होता हुआ चला गया है और इसकी चौड़ाई 13 मील है, जो नाहन के पूर्वी छोर तक पहुंचते पहुंचते तंग होते हुए 6 मील रह गई है।

**गिरी नदी** :–यह नदी कोटखाई के पहाड़ों से निकल कर जुब्बल और रतेश इत्यादि के पहाड़ों से होती हुई मौज़ा क्योंथल के

निकट इस रियासत की उत्तरी–पश्चिमी सीमा में प्रवेश करती है। यह नदी रियासत सिरमौर और क्योंथल के मध्य 25 मील तक बहती हुई एक दूसरे को अलग करती हुई मौज़ा नंदूपलासा से पूर्व की ओर से दक्षिण की ओर बहती हुई रियासत सिरमौर को दो हिस्सों में बांटती है। यह नदी रियासत की सीमा में 55 मील तक बहकर मोहकमपुर के निकट जमुना में मिल जाती है। यह बहुत तेज़ बहती है और इसमें पत्थर भी बहुत हैं। रियासत में इसकी चौड़ाई ज़्यादा से ज़्यादा 260 फुट और गहराई आम तौर पर लगभग 4 से 5 फुट सदैव रहती है। इस नदी को चल कर पार किया जा सकता है परन्तु वर्षा और शरद ऋतु में बारिश ज़्यादा होने के कारण नदी उफान पर होती है, उस समय इसको पार करना कठिन हो जाता है, तब इसको सरनाई या भरला के माध्यम से पार किया जाता है परन्तु कई बार तो इसे सरनाई या भरला से पार करना भी असम्भव होता है।

इस नदी के तट पर कोई नौका घाट नहीं है क्योंकि यह नदी तिरछी है इस कारण इसमें नौका नहीं चल सकती। इसका पानी आमतौर पर गंदला रहता है, इसमें कई प्रकार की मछलियां पाई जाती हैं, खास कर महासीर मछली इसमें अधिक मिलती है जिसको शिकारी बहुत पसन्द करते हैं। अंग्रेज़ लोग इस नदी में मछली का शिकार किया करते हैं। शिमला में एक फिशिंग क्लब भी है जिसके संरक्षक भारत के वाईसराय हैं। यह क्लब रियासत से मछली पकड़ने के ठेके लेता है जिससे रियासत को अच्छी खासी रकम मिलती है। इस क्लब के जो सदस्य होते हैं वही इस नदी में मछली का शिकार कर सकते हैं। उनकी आज्ञा से दूसरे लोग भी शिकार करते हैं। क्रेगनेनो से सेती बाग तक अंग्रेज़ शिकार करते हुए आते हैं और सेती बाग में रुक कर मछलियां पकड़ते हैं। इस नदी में भाधकड़ी (नदी में बहकर आने वाली लकड़ी) भी होती है। कुछ पहाड़ी स्थानों पर इससे सिंचाई भी की जाती है मगर बाढ़ के दिनों में किनारों पर रहने वाली आबादी और खेतों को बहुत हानि पहुचती है। जलाल नदी ददाहू के स्थान पर सेती बाग के निकट इस नदी में मिलती है।

**तौंस नदी** :–यह नदी जमुनोत्तरी के पहाड़ों से निकल कर

जुब्बल और जौनसार के इलाके में होती हुई मौज़ा कोटी के निकट रियासत सिरमौर की सीमा में प्रवेश करती है। जौनसार के इलाके को जो कि इससे पहले रियासत सिरमौर का एक भाग था रियासत की सीमा से अलग करती हुई, रियासत की पूर्वी सीमा पर लगभग 33 मील बह कर खोडर माजरी के निकट जमुना में मिल जाती है। इस नदी में भी भाध लकड़ी होती है। पानी इसका भी बहुत तेज़ चलता है और इसमें पत्थर भी बहुत हैं। इसकी ज़्यादा से ज़्यादा चौड़ाई 100 फुट के लगभग है परन्तु यह पहाड़ों के बीच बहुत गहराई में बहती है। ग्रीष्म ऋतु में भी इसमें 8 से 10 फुट गहरा पानी रहता है इसलिए इसे पैदल पार नहीं किया जा सकता और तेज़ बहने के कारण इसको भरला से भी पार नहीं कर सकते और न ही नौका इसमें चलती है।

इसको लोग झूले या छींके के माध्यम से पार करते हैं। पहाड़ में झूले की जगह छींके बनाते हैं। एक मज़बूत रस्सा नदी के दोनों किनारों पर बान्धा जाता है और इसमें एक मुड़ी हुई दो शाखी लकड़ी लगाई जाती है, इसमें एक रस्सी बान्धी जाती है जिससे नदी पार करने वाला इस पार से उस पार चला जाता है।

**जलाल नदी** :– यह नदी तहसील पच्छाद के मौज़ा नवी के निकट से निकली है और सैन के इलाके को धारटी के इलाके से अलग करती हुई तहसील रेणुका के ददाहु स्थान पर गिरी में मिल जाती है। यह नदी बड़ी नहीं है और इसकी गहराई भी कम ही है। लोग इसको पैदल पार कर लेते हैं। बाढ़ में इसको पैदल पार करना कठिन होता है परन्तु बाढ़ बहुत देर तक नहीं रहती। मछली भी इसमें मिल जाती है परन्तु ज़्यादा नहीं।

**मारकण्डा नदी** :– यह नदी दर्रा कटासन के पहाड़ से, जहां पर देवी का एक मन्दिर है, निकली है और रियासत के दक्षिण पूर्वी भाग से 15 मील तक रियासत की सीमा में बहकर, बजारा के इलाके को सींचती हुई कालाआम के स्थान पर ब्रिटिश सरकार के इलाके में प्रवेश करती है जहां यह बहुत चौड़ी हो जाती है। भूमि को इससे बहुत हानि पहुंचती है। सलानी नामक नदी देवानी मौज़ा के स्थान पर इसमें आकर मिलती है ।

इस नदी की चौड़ाई भिन्न स्थानों पर भिन्न है। इसका बहाव तेज़ नहीं है और न ही इसकी गहराई ज़्यादा है। फुट दो फुट पानी ग्रीष्म ऋतु में इसमें रहता है परन्तु बाढ़ के समय दो चार घंटे तक यह पार नहीं की जा सकती। इसके किनारों पर रेत बहुत है जिससे से सोना निकलता है। इसमें कई किस्म की मछलियां हैं। रियासत में मछली पकड़ने का ठेका सालाना होता है। इस नदी से बाजारा खोल और काला आम में सिंचाई होती है और कुछ घराट भी चलते रहते हैं।

**बाता नदी** :—यह नदी तहसील नाहन के मौज़ा बागना के सिओड़ी नामक चश्मे से निकल कर, पूर्व की ओर बहती हुई क्यारदादून को दो भागों में बांटती हुई, बाता मण्डी के स्थान पर जमुना में मिल जाती है। इसकी चौड़ाई भिन्न स्थानों पर भिन्न है परन्तु 30—40 फुट से अधिक नहीं है, गहराई भी कम ही है। फुट दो फुट पानी ही रहता है। दून के इलाके में इससे सिंचाई होती है।

# सातवां अध्याय

## झीलों का वर्णन

इस रियासत में केवल एक प्राकृतिक झील है जिसका नाम रेणुका है। यह रियासत के उत्तरी भाग, गिरी पार और तहसील रेणुका में दो पहाड़ों के मध्य स्थित है। यह गिरी नदी के उत्तर की ओर ददाहु से लगभग दो मील की दूरी पर है। इसकी लम्बाई लगभग 1—1/2 मील और चौड़ाई विभिन्न स्थानों पर भिन्न है परन्तु उसकी औसत चौड़ाई 100 फुट के करीब है और गहराई पहाड़ी लोगों और धार्मिक आस्था रखने वालों के विचार में असीमित है। हिन्दुओं की धारणा के अनुसार यह एक तीर्थ स्थान है जहां जमदग्नि ऋषि रहते थे और तपस्या करते थे, परन्तु हमारे विचार में इसकी गहराई जानने के प्रयत्न ही नहीं किये गए हैं। इसका पानी नीले रंग का स्यायी मईल है

जिससे अनुमान लगाया जाता है कि इसकी गहराई बहुत अधिक होगी।

रेणुका झील के निकट दक्षिण की ओर एक छोटी झील और भी है जिसको परशुराम का ताल कहते हैं। इस झील के दक्षिण में परशुराम का मन्दिर है जहां हर वर्ष कार्तिक मास के बाद दिवाली की एकदशी से पूर्णिमा तक मेला होता है। मैदानी इलाकों और निकटवर्ती पहाड़ों से लोग स्नान करने रेणुका जाते हैं, लगभग पांच–छह हज़ार लोगों का समूह हो जाता है।

इस झील में पानी के जानवर जैसे कि नाको और मगरमच्छ इत्यादि बहुत हैं। मछलियां भी इसमें बहुत हैं परन्तु इन्हें पकड़ने की मनाही है इस कारण मछलियां आदमी से डरती नहीं हैं। घाट पर यात्री इनको आटा चावल इत्यादि खिलाते हैं। उस समय मछलियों के झुंड के झुंड दिखाई देते हैं जो एक बड़ा मनमोहक दृश्य मालूम पड़ता है।

इस झील के उत्तर में एक बहुत ऊंचा पहाड़ है जिसको जमदग्नि का टिब्बा कहते हैं। इसकी ऊंचाई लगभग पांच से छः हज़ार फुट तक होगी। इस पहाड़ के बारे में लोगों की धारणा है कि महर्षि जमदग्नि यहां रहते थे और भक्ति करते थे।

इस पहाड़ की चोटी पर एक छोटा सा स्थान आग जलाने (धूना) का भी है जिसके बारे में कहा जाता है कि यह उस समय का है जब यहां पर महर्षि जमदग्नि हवन करते थे क्योंकि उस स्थान से राख जैसी मिट्टी निकलती है, परन्तु ध्यान पूर्वक देखने से मालूम होता है कि इस पहाड़ की मिट्टी मटियाले रंग की है। यह पहाड़ झील से लगभग दो मील की दूरी पर है। इस पर जाने का रास्ता मौज़ा जामूं से होकर जाता है। इस पहाड़ पर केवल घास है, वृक्ष कोई नहीं।

# आठवां अध्याय

## रियासत सिरमौर
## का आर्थिक और राजस्व विभाजन

प्राचीन काल में यह रियासत आर्थिक और सीमाओं के हिसाब से बारह वजीरियों और भोजों में विभाजित थी। हर एक वजीरी में एक गुलदार व एक वजीर होता था। एक भोज का एक नम्बरदार हुआ करता था मगर कभी कभी मल की संख्या कम होने के कारण कुछ भोजों का एक ही नम्बरदार होता था और कई बड़े भोजों में दो दो नम्बरदार भी होते थे। नम्बरदारों पर एक उच्चयों नम्बरदार होता था जिसक चोतरू स्याना कहते थे। नम्बरदार इसके अधीन होते थे। बारह वजीरियां निम्नलिखित हैं (1) कांगड़ा (2) कारली (3) पालवी (4) पच्छाद (5) पाझोता (6) कोनीतन (7) नियोड़ी (8) धारटी (9) सैन (10) दून (11) खोल (12) गिरीपार राजपुर धहकाली।

वर्तमान काल में रियासत सिरमौर चार तहसीलों (1) नाहन (2) पौंटा (3) पच्छाद (4) रेणुका में विभाजित है। हरेक तहसील जैलों और पटवारियों के हलकों में विभाजित है। जैल के अन्तर्गत आने वाले हिस्से भोज कहलाते हैं और भोज में कुछ गांव होते हैं। तहसील में एक तहसीलदार रहता है, जिसको इख्तियार कॉलैक्टर के माली इकतयरत और द्वितीय श्रेणी जुडीशियल मैजिस्ट्रेट की शक्तियां प्राप्त होती हैं।

यह ज़िला कॉलेक्टर के अधीन होता है जो नाहन में रहता है। हरेक तहसील के साथ एक थाना भी है जिसमें थानेदार रहता है। यह थानेदार सुपरिंटैंडेंट के अधीन रहता है जो पुलिस हैड क्वाटर नाहन में रहता है। जैल का एक जैलदार होता है। जैल और भोजों की

संख्या और उन में रहने वाली जनता की संख्या निम्नलिखित है।

रियासत के ज़ैलों, मौजों व जनसंख्या का मानचित्र :

| तहसील | ज़ैल | भोज | पटवारी हलके | मौजा | कुल क्षेत्र0वर्गमीलों | जनसंख्या | पुरुष स्त्री | कुल जोड |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| नाहन | 2 | 20 | 8 | 208 | 158736 बीघा | 10069 | 7806 | 17886 |
| पांवटा | 3 | 11 | 10 | 250 | 150465 | 16925 | 12147 | 29072 |
| पच्छाद | 6. | 49 | 28 | 282 | 94776 | 18789 | 16697 | 35486 |
| रेणुका | 7 | 39 | 27 | 368 | 114638 | 29668 | 23575 | 53243 |
| कुल योग | 18 | 119 | 73 | 973 | 1104 | 7446 | 60226 | 135687 |

रियासत के सारे जंगल दो डिवीज़नों अर्थात् उत्तरी व दक्षिणी डिवीज़न में विभाजित हैं। उत्तरी डिवीजन का हैडक्वाटर राजगढ़ और दक्षिणी डिवीज़न का नाहन है। डिवीज़न में एक डिवीज़नल ऑफिसर रहता है जो कंज़रवेटर के अधीन कार्य करता है। कंज़रवेटर का हैड क्वाटर, जिसके इख्तियारात राजा साहब खुद इस्तेमाल करते हैं, नाहन में स्थित है। इस रियासत के राजस्व से वार्षिक आय जो कि मालगुज़ारी, जंगलात, कारखानों, बागों और मेहसूल चुंगी से प्राप्त होती है लगभग आठ लाख रुपये है।

# नवां अध्याय

## जलवायु

इस रियासत के विभिन्न भागों का जलवायु भिन्न है। नाहन, जो विशेष स्थान है उसका जलवायु संतुलित है, न यहां अधिक गर्मी और न अधिक सर्दी होती है। मई और जून में भी तापमान 98 या 99 डिग्री (फॉरनहाईट) से ज़्यादा नहीं बढ़ता। जिस समय तापमान 99 डिग्री हो जाता है तो सम्भवतः वर्षा हो जाती है। लू इस जगह कभी नहीं चलती और न पंखे की ज़रूरत होती है। शीतकाल में सर्दी ऊंची पहाड़ियों की तुलना में यहां बहुत कम होती है क्योंकि नाहन की समुद्रतल से ऊंचाई केवल 3057 फुट है।

दिसम्बर, जनवरी में भी तापमान 60 या 65 डिग्री से नीचे नहीं उतरता। अक्सर वर्षा यहां पर 15 जून से आरम्भ हो जाती है, बरसात का मौसम यहां अच्छा नहीं होता। क्योंकि यह क्षेत्र दून क्षेत्र के निकट है इसलिए यहां आम तौर पर अगस्त और सितम्बर में मलेरिया बुखार की शिकायत हो जाती है। वर्ष भर में चार महीने यहां बहुत सुहावने होते हैं अर्थात् बसन्त ऋतु में 15 फाल्गुन से 15 बैसाख तक, शरद ऋतु में 15 असौज से 15 मार्गशीर्ष तक यहां पर वायु बहुत तेज़ नहीं चलती, मगर फाल्गुन और चैत्र मास में कुछ दिनों के लिए यह तेज़ चलती है।

इस स्थान का पानी भी कम पाचक है क्योंकि इसमें चूने और लोहे का भाग ज़्यादा है, केवल एक–दो पानी के चश्मे जैसे कि शिवपुरी और जौड़ी बाएं दूसरे चश्मों की तुलना में अच्छी हैं।

इस रियासत का उत्तरी भाग जो कि गिरी पार क्षेत्र के नाम से ज्ञात है, बहुत ठंडा है। शरद ऋतु में वहां कई महीनों तक बर्फ रहती है, पानी भी वहां का ठंडा परन्तु स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छा है। ग्रीष्म ऋतु में यह भाग बहुत सुहावना होता है जो स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक माना जाता है।

रियासत के "सैन" क्षेत्र में जो कि गिरी और ज़लाल के मध्य स्थित है, जलवायु अच्छा है। यहां पर सर्दी गिरी पार क्षेत्र की तुलना में कम होती है, बर्फ पड़ती तो है परन्तु बहुत दिनों तक नहीं ठहरती। ग्रीष्म ऋतु में वहां पर गर्मी संतुलित दर्जे की होती है, वहां पानी बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है जो स्वास्थ्य वर्धक है, परन्तु यह क्षेत्र जनसंख्या की बढ़ौत्तरी के लिहाज़ से गिरीपार के क्षेत्र की तुलना में दूसरे स्थान पर है।

धारटी क्षेत्र का जलवायु भी संतुलित है। शरद ऋतु में वहां दिसम्बर, जनवरी और फरवरी में सर्दी नाहन की तुलना में अधिक होती है और हवा भी तेज़ चलती है, परन्तु ग्रीष्म ऋतु में वहां मौसम बहुत अच्छा होता है। पानी भी यहां का अच्छा है, परन्तु अधिक मात्रा में उपलब्ध नहीं है। इलाका खोल या नाहन के आस–पास के क्षेत्र और दून का जलवायु गर्म है। इन भागों में गर्मी अधिक होती है, परन्तु लू

नहीं चलती। शरद ऋतु में रात के समय सर्दी बहुत ज़्यादा होती है और पाला भी बहुत पड़ता है। सुबह आठ बजे तक घर से सर्दी के कारण बाहर निकलना कठिन होता है, परन्तु हवा तेज़ नहीं चलती। इस जगह का पानी अच्छा नहीं है, यहां बर्फ नहीं पड़ती।

# दसवां अध्याय

## फसलों का वर्णन

**मक्की, चना, तिल, जौ, चौलाई, सरसों, कोदा, उड़द, कुलथ इत्यादि फसलें**

इस रियासत में गेहूं व धान होते हैं। इसके अतिरिक्त हल्दी, अदरक, आलू, अरबी और गन्ना आदि की फसलें भी उपजाई जाती हैं। गिरीपार क्षेत्र में मक्की, चौलाई, कोदा, कुलथ और ओड्डू, अदरक, हल्दी, अफीम की पैदावार अच्छी होती हैं। यद्यपि जौ, गेहूं, धान भी बोए जाते है, परन्तु बहुत कम मात्रा में। गिरीपार के लोग अदरक को सुखाकर सौंठ बनाते हैं जो कि बहुत अच्छी होती है और महंगे भाव बिकती है तथा बाहर की मण्डियों को भी भेजी जाती है। इस इलाके के लोग सरकार को मालगुज़ारी आम तौर पर हल्दी, सौंठ, अफीम की शक्ल में देते हैं और मक्की, कोदा को अपने घरेलू प्रयोग के लिए रखते हैं। ये लोग आम तौर पर अरबी को भी उबाल कर खाते हैं इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों की खुराक ज़्यादातर मक्की, कोदा और अरबी है। शरद ऋतु में कुलथ को भी खाते हैं। अदरक, हल्दी, अरबी नहरी ज़मीन में बोते हैं।

धार सैन में गेहूं, चावल, मक्की, उड़द, चौलाई, अदरक, हल्दी होती है। धान इस इलाके में बहुतायत से बोया जाता है। यहां पानी अधिक मात्रा में उपलब्ध होने के कारण धान बहुत अच्छी किस्म का होता है। अदरक भी इस इलाके में अच्छा होता है, परन्तु सौंठ इस क्षेत्र

की अच्छी नहीं होती। इसलिए यहां के लोग अदरक को बेच देते हैं और विशेषकर धारटी के लोग बीज के लिए इस जगह से अदरक महंगे भाव खरीद करते हैं। यहां के लोग सरकारी मालगुज़ारी धान और गेहूं के रूप में अदा करते हैं।

इलाका धारटी में मक्की, धान, गेहूं, जौ, उड़द, कोदा, कुलथ, अदरक, हल्दी, अरबी बोई जाती है परन्तु मक्की, उड़द, कोदा, कुलथ अच्छी किस्म की होती है। ये लोग भी अदरक की सौंठ बनाते हैं। इस इलाके की सौंठ गिरीपार के इलाके की सौंठ से अच्छी होती है और महंगे भाव से बिकती है। ये लोग आम तौर पर अपनी मालगुज़ारी सौंठ के रूप में देते हैं। इस इलाके की कृषि की उपज अच्छी नहीं होती। पानी के अधिक मात्रा में उपलब्ध न होने से कृषि की उपज भी मध्यम किस्म की होती है।

इलाका दून में गेहूं, धान, चना, जौ, मक्की, उड़द, तिल आदि व दूसरी सारी फसलें जो देश के अन्य भागों में बोई जाती हैं, यहां पर भी काश्त की जाती हैं। गन्ना भी यहां पर अच्छी किस्म का होता है। इस क्षेत्र में गेहूं, चना, जौ, तिल, मक्की, सरसों आदि की अधिक उपज होती है और कुछ भागों में कपास भी बोई जाती है। इस क्षेत्र के लोग मालगुज़ारी गेहूं, चावल, सरसों, तिल और गन्ने के रूप में अदा करते हैं। इस इलाके की भूमि उपजाऊ है। बज़ारा और खोल में गेहूं, जौ, मक्की, धान आदि बोए जाते हैं, परन्तु गेहूं और मक्की यहां पर अच्छी किस्म की होती है। पच्छाद के इलाके में वे सब फसलें बोई जाती हैं जो धारटी में होती हैं, परन्तु आलू इस क्षेत्र में अधिक मात्रा में पैदा होता है और दक्षिणी भाग में गन्ना भी बोया जाता है। ये लोग आलू और गन्ने के माध्यम से मालगुज़ारी देते हैं।

# ग्यारहवां अध्याय

## वनस्पति

वनस्पति को चार भागों में बांटा गया है, अर्थात् ईमारती वृक्ष, फलदार वृक्ष, फूलदार वृक्ष, हरी जड़ी–बूटियां इत्यादि। इनकी पैदावार जलवायु के आधार और उपयुक्त स्थान पर होती है। क्योंकि इस रियासत में विभिन्न इलाकों का जलवायु एक–दूसरे से भिन्न है, इसलिए विभिन्न इलाकों में भिन्न–भिन्न प्रकार की वनस्पति की उपज होती है। गिरीपार क्षेत्र में अक्सर अपने आप उगने वाले ऐसे वक्ष पाए जाते हैं जो ठण्डे देशों में हुआ करते हैं। क्योंकि गिरीपार का क्षेत्र आम तौर पर पांच से छः हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है यहां कई पहाड़ ऐसे भी हैं जहां धौलू घास के सिवाए और कोई वृक्ष नहीं है जैसा कि टिब्बा जमदग्नि और चूड़ इत्यादि। कई पहाड़ों पर केलो, दयार, बान, ब्रास आदि इमारती लकड़ी के वृक्ष होते हैं। अपने आप उगने वाले अखरोट के वृक्ष भी कई जगह पाए जाते हैं। इसी प्रकार फूलदार वृक्ष और भांति–भांति की जड़ी–बूटियां जैसे कि बनफ़शा, गाओज़बान, हंसराज, गुलाब आदि आदि।

जनसाधारण का चूड़धार बारे विचार है कि इस पहाड़ पर भिन्न–भिन्न प्रकार की हरी औषधियां अर्थात् जड़ी–बूटियां उपलब्ध हैं परन्तु इन जड़ी–बूटियों का अभी अनुसंधान नहीं हो पाया है, इसलिए इनका विस्तारपूर्वक वर्णन करना कठिन है। "सैन" के इलाके में जो पहाड़ ऊंचाई पर हैं उनमें सिवाय घास, झाड़ी, करुन्दू, थोहड़ के कोई वृक्ष नहीं होता परन्तु जो पहाड़ निचाई में हैं उनमें अपने आप उगने वाले चीड़ के वृक्ष, तुन, हरड़–बहेड़ा, अखरोट, नींबू इत्यादि होते हैं।

पच्छाद के इलाके में ऊंचे–ऊंचे पहाड़ों पर वृक्ष कम मात्रा में पाए जाते हैं, उन पर आम तौर पर घास उगती है, परन्तु कम ऊंचाई वाले पहाड़ों पर अपने आप उगने वाले बान, ब्रास और चीड़ के वृक्ष होते हैं। केलो इस क्षेत्र में नहीं होती, परन्तु चीड़ अक्सर होती है। यहां अपने आप उगने वाले ज़रदालू (आलूचा), अखरोट, अनार, कायफल आदि के मेवादार वृक्ष होते हैं। इस क्षेत्र में नाशपती और सेब आदि अच्छी किस्म के हो सकते हैं। कई लोगों ने नाशपती, सेब, आलूचा, आड़ू, खुबानी आदि के बाग इस क्षेत्र में लगा रखे हैं जो हरी–भरी स्थिति में हैं। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में बांस की एक जाति, जिसको काख़ कहते हैं, पानी की जगह पर पाया जाता है। यह बहुत मोटा और लम्बा होता है।

धारटी क्षेत्र में अपने आप उगने वाले चीड़, सान्दन, तुन, कचनार, खैर आदि होते हैं, परन्तु अपने आप उगने वाले मेवादार वृक्ष सिवाए गूलर के कोई नहीं होते। मगर लगाने से नींबू, जामुन, केला आदि हो जाता है। नींबू और केले के वृक्ष अधिकतर ज़मींदारों के घरों के आस–पास लगे हुए हैं।

नाहन ख़ास में हर प्रकार के वे वृक्ष, जो कि संतुलित जलवायु में होते हैं, उपलब्ध हैं। अर्थात् अपने आप उगने वाले पीपल, बड़, चीड़, साल, तुन, शीशम और सरस आदि पाए जाते हैं। मेवादार वृक्ष जैसे कि आम, जामुन इत्यादि, जो अपने आप उगे हुए हैं, यहां उपलब्ध हैं। लगाने पर यहां हर प्रकार के फलदार वृक्ष हो सकते हैं। आम, अमरूद, आरू, नींबू, केला, नाशपती, कटहल, बेर, तूत के पुराने वृक्ष बागों में अक्सर पाए जाते हैं, परन्तु संतरा यहां पुराने बागों में नहीं पाया जाता। कुछ समय से संतरा भी इस जगह होने लगा है, जो कि अत्यन्त मीठा होता है परन्तु इसका वृक्ष ज़्यादा समय तक नहीं रहता इसी तरह से लीची, चैस्टनेट इत्यादि के वृक्ष भी अब बागों में लगाए गए हैं जो कि अच्छे फल देते हैं, परन्तु सेब, ज़रदालू आदि शरद देशों के फल इस जगह पर अच्छी तरह नहीं होते। यद्यपि वृक्ष पैदा हो जाते हैं, परन्तु फल नहीं देते। चम्पा, मौलसरी के फूलदार वृक्ष भी हैं और गुलाब, चमेली, मोतिया इत्यादि भी यहां काफी संख्या में होते हैं। दून के

इलाके में साल, शीशम, तुन, सेन, ख़ैर आदि इमारती लकड़ी के अपने आप उगने वाले वृक्ष होते हैं। मेवादार वृक्ष तूत, जामुन और महुवा आदि भी पाए जाते हैं। कुछ जगह जंगलों में आम के वृक्ष भी हैं, परन्तु उनको अपने आप उगा हुआ नहीं समझा जाता। जिस स्थान पर वे वृक्ष हैं, उसके बारे में विचार किया जाता है कि किसी समय वह स्थान आबाद था। इस क्षेत्र में गर्म मुल्कों के इमारती लकड़ी वाले और मेवादार वृक्ष भी हो सकते हैं।

खोल के इलाके में शीशम, कीकर, साल, खैर, तुन इत्यादि के अपने आप उगे हुए इमारती वृक्ष होते हैं और जामुन व आम आदि फलदार वृक्ष भी कई जगह पाए जाते हैं और बांस भी इस इलाके में अपने आप उगे हुए होते हैं। गर्म देशों के पेड़ इस क्षेत्र में भी हो सकते हैं और पहाड़ी क्षेत्रों में अपने आप उगने वाली गुलाब की एक किस्म अत्यन्त सुगंध वाली होती है, जिसको ज़ोन कहते हैं। यहां अपने आप उगने वाली चमेली भी होती है।

# बारहवां अध्याय

## खनिज व धातु पदार्थ

अभी तक इस रियासत में मिलने वाली धातुओं के बारे में छान–बीन नहीं हुई है इसलिए उनका विस्तारपूर्वक वर्णन करना कठिन है। परन्तु जो कुछ सूचना किसी भी माध्यम से प्राप्त हुई है उसके बारे में यहां वर्णन किया गया है। इस रियासत के गिरीपार के चेता नामक स्थान, जो रेणुका तहसील में है, में लोहे की ख़ान है। इस ख़ान से स्वर्गवासी राजा शमशेर प्रकाश के समय में लोहा निकाला गया था और नाहन की फाउंडरी में लाकर भट्ठी में पिघलाया गया था। भारी मात्रा में धन खर्च करके स्वर्गीय राजा साहब ने इस कारखाने में भट्ठी तैयार करवाई थी परन्तु लोहे की ख़ान दूर होने के कारण इस

कारख़ाने का लोहा विलायत से आने वाले लोहे की तुलना में महंगा पड़ता था, इसलिए वह ख़ान बंद कर दी गई।

दूसरी लोहे की ख़ान तहसील पांवटा के बेलीलानी स्थान पर है। एक लोहे की ख़ान तहसील रेणुका के मौज़ा कान्सर में भी है। मौज़ा भटोनी, जो तहसील पांवटा में है, में सिक्के की एक ख़ान है, जो अब बंद हो गई है। तहसील रेणुका के मौज़ा चांदनी में एक तांबे की ख़ान है। मौज़ा नारग में फटकड़ी की और बैहरा की धार पर मौज़ा ज़ोगर में अभ्रक की किस्म की कणदार मिट्टी पाई जाती है। इससे यह विचार किया जाता है कि शायद वहां पर किसी जगह अभ्रक की ख़ान हो। तहसील रेणुका की मौज़ा सियून बहलाड़ा में पत्थर के स्लेट की ख़ानें हैं, जिनसे स्लेट निकाला जाता है जिसे ज़मींदार लोग अपने मकानों पर डालते हैं। संगमरमर की किस्म का पत्थर भी गिरीपार में एक–दो स्थानों पर पाया गया है परन्तु वह सख़्त किस्म का है। इसके अतिरिक्त मारकण्डा व रुण नदियों में रेत से सोने के कण धोकर निकाले जाते हैं, जिसका वार्षिक ठेका रियासत की तरफ से दिया जाता है। सैन के इलाके में और नाहन के आस–पास चूने का पत्थर पाया जाता है, जिससे चूना तैयार होता है।

# तेरहवां अध्याय

## पशु–पक्षी

इस रियासत के दून क्षेत्र के जंगलों में साल और सेन आदि वृक्ष बहुत घने पाए जाते हैं। इन जंगलों में शेर, बघेरा, रीछ, सुअर, कक्कड़, बारहसिंगा, चीतल के अतिरिक्त बटेर, तीतर, मोर, मुर्गे होते हैं। पहले समय में हाथी भी इन जंगलों में रहा करते थे परन्तु अब कुछ समय से बढ़ती जनसंख्या के कारण हाथी कभी–कभी आते हैं। गिरीपार के क्षेत्र में रीछ, बघेरा, घोल, कक्कड़ होते हैं। चूड़धार और

हरिपुर की धार में कस्तूरे भी मिलते हैं, जिनकी नाभि से कस्तूरी निकाली जाती है। यहां एक प्रकार का मुर्गा, जिसको रत्तनाल कहते हैं, भी होता है। यह बहुत सुंदर पक्षी है। खोल, धारटी और सैन में रीछ, बघेरा, सुअर, बारहसिंगा, कक्कड़, मुर्गे, मोर, तीतर, चकोर होते हैं।

## चौदहवां अध्याय

## जनसंख्या और जातियों का वर्णन

1901 की जनगणना के अनुसार इस रियासत की जनसंख्या 135687 है, जिसमें 74461 पुरुष और 61226 स्त्रियां हैं। जिसमें 128478 हिन्दू और 6414 मुसलमान, 688 सिक्ख, 46 क्रिश्चियन और 61 जैनी हैं। इस रियासत में अधिकतर उन हिन्दुओं की आबादी है जो कि आर्य नस्ल के हैं और जो अब हिन्दू कहलाते हैं। इसलिए प्रथम हिन्दू शब्द की व्याख्या करेंगे। हिन्दू शब्द के बारे में पूरे विश्वास से यह नहीं कहा जा सकता कि इसका आविष्कार किस तरह हुआ। परन्तु कुछ इतिहासकारों कि राय है कि यह शब्द शुरू में सिन्धु था, जिससे बदलकर हिन्दू हुआ। जैसा कि मैक्समूलर ने अपनी पुस्तक "इंडिया, व्हट इट कैन टीच अस" के पेज 170 में प्लैनी के हवाले से लिखा है कि अधिकतर नदियों के नाम पर ही शहरों का नाम होता है। इसी प्रकार सिन्धु नदी आर्यों की सीमांत नदी होने के कारण आर्य लोग सिन्धु कहलाते थे। परन्तु दूसरी जातियां जो कि फारस से आईं उन्होंने "स" को "ह" में बदला और इस प्रकार सिन्धु से हिन्दू हुआ।

यह धारणा है कि आर्य जाति शुरू में मध्य एशिया से पूर्व की ओर आकर और हिन्दू कुश पहाड़ को पार करके काबुल होते हुए सिन्धु नदी की घाटी में बस गई जिसके कारण इनके अपने सहदेशवासी या दूसरी जातियां इन को सिन्धु कहने लगीं, परन्तु उन्होंने अपना नाम

नहीं बदला और अपने आप को आर्य, जिसका अर्थ भद्र है, कहलाते रहे और अपने देश को आर्यवर्त अर्थात् आर्यों का स्थान नाम दिया, यद्यपि और जातियों ने इनको दूसरे आर्यों से अलग पहचान के लिए सिन्धु या इन्दु आर्य का नाम दिया। कुछ इतिहासकारों का विचार है कि शब्द हिन्दू "इन्दु" से बना है। इन्दु का अर्थ चन्द्रमा है अर्थात् चन्द्रमा की नस्ल के आर्य। कुछ लोगों का यह भी विचार है कि मुसलमान आक्रमणकारियों ने आर्य जाति का नाम सिन्धु से हिन्दू बदल दिया क्योंकि फारसी भाषा में हिन्दू काफ़िर को कहते हैं। परन्तु इसकी पुष्टि किसी इतिहास की पुस्तक से नहीं होती, इसलिए यह विचार बेबुनियाद है क्योंकि इस्लाम धर्म सन् 600 ई0 से आरम्भ हुआ।

हिन्दू चार वर्ण अर्थात् चार जातियों में बंटे हैं:– (1) ब्राह्मण (2) क्षत्रिय (3) वैश्य (4) शूद्र। यद्यपि वर्ण का अर्थ रंग है, आरम्भ के समय में हिन्दू अपने आप को यहां के मूलवासियों से, जो काले रंग के थे, अलग पहचान बनाये रखने के लिए अपने आप को सवर्ण अर्थात् गोरे रंग वाले कहा करते थे, जो कुछ समय पश्चात् व्यवसाय के अनुसार जाति के अर्थों में प्रयोग होने लगा, जैसा कि आजकल यूरोप के रहने वाले को गोरा और हिन्दुस्तानी को काला आदमी कहा जाता है। बाद में प्रत्येक जाति उसके व्यवसाय के अनुसार वर्ण कहलाई। ब्राह्मणों का कर्तव्य था स्वयं पढना और दूसरों को शिक्षा देना और धार्मिक कर्म–काण्ड स्वयं करना और कराना। क्षत्रिय का कार्य युद्ध करना था और देश की रक्षा करना था। वैश्यों का कर्तव्य वाणिज्य–व्यापार और खेती--बाड़ी करना था। शूद्रों का कर्तव्य तीनों वर्णों की सेवा करना और उनको पेशानुसार वस्तुएं बनाकर उपलब्ध करवाना था। परन्तु अब हिन्दुस्तान में बहुत सी जातियां और सैंकड़ों फिरके हो गए हैं।

सिरमौर रियासत में प्रत्येक वर्ण के आदमी हैं और वर्ण में कई जातियां हैं जिनका वर्णन आगे उपलब्ध है। लेकिन इस स्थान के मूलवासी भाट, कनैत, कोली, डूमना कहे जाते हैं। ऐसा लगता है कि बाकी कौमें दूसरे स्थानों से आकर यहां बस गई हैं। गौड़ ब्राह्मण, सारस्वत, राजपूत, अग्रवाल वैश्य, खत्री, सूद, भाट, कनैत, कायस्थ, मुग़ल, पठान, जाट, गुज्जर, माली, सुनार, लुहार, मेहरा, कहार,

तरखाण या बढ़ई, बन्ज़ारे, साहनी, बाती, बैरागी, जोगी, कोली, डूमना, तेली, जुलाहे, पिन्ज़ा या धुनिये, भण्डेला या सक्लिगर, कसाई, चिनाल, चमार, भंगी आदि यहां बसते हैं। परन्तु अधिकतर कनैत, भाट, कोली, डूमना आबाद हैं।

**ब्राह्मण :–** रियासत में ब्राह्मणों की संख्या 1901 की जनगणना के अनुसार 2669 है, जिसमें से गौड़ और सारस्वत खास नाहन में और कुछ दून के तिलोकपुर कस्बा आदि में आबाद हैं। इनके अतिरिक्त डकौत, गुजराती, चार्ज़ भी बसते हैं। गौड़ ब्राह्मण अपने आप को गौड़ बंगाल से, जहां अब कलकत्ता आबाद है, आए हुए बतलाते हैं। गौड़ बंगाल हिन्दुओं के शासनकाल में एक बड़ा शहर था जिसको ग़्यासुद्दीन बलबन ने नष्ट किया था। परन्तु सिरमौर में ये लोग अम्बाला ज़िला से आए हुए मालूम होते हैं। इसलिए इनके विवाह वगैरह भी इसी जाति में आम तौर से ज़िला अम्बाला में होते हैं। इस फिरके में मांस खाना व शराब पीना वर्जित है।

सारस्वत ब्राह्मण अपने आप को सरस्वती और गंगा के मध्य भाग अर्थात् पंजाब से आया हुआ बतलाते हैं। इनकी संख्या गौड़ ब्राह्मणों की तुलना में कम है। इस फिरके में मांस खाना वर्जित नहीं है, परन्तु वे यहां इसका प्रयोग नहीं करते। इनके विवाह आदि गौड़ों से नहीं होते। शादी–विवाह की रीति इन दोनों की शास्त्रानुसार होती है। बेवा का विवाह इनमें वर्जित है। यह छोटी आयु में विवाह को अच्छा समझते हैं।

नाहन शहर में गौड़, सारस्वत, कनौजिया, डकौत, चार्ज़ ब्राह्मण बसते हैं। गौड़ और सारस्वत ज़िला अम्बाला से आए हुए हैं और कनौजिया कुमाऊं गढ़वाल से आकर बस गए हैं परन्तु इनकी संख्या बहुत कम है। ब्राह्मणों का निर्वाह दान पर निर्भर है। कुछ दूसरा व्यवसाय नौकरी आदि भी करते हैं। सारस्वत, गौड़, कनौजिया ब्राह्मण अच्छा दान लेते हैं और डकौत वगैरह घटिया दर्ज़े का दान लेते हैं। गुजराती और चार्ज मृतकों से सम्बन्धित दान लेते हैं और जो ब्राह्मण संस्कृत पढ़े हुए हैं वे ज्योतिष, पण्डिताई और पुरोहिताई से निर्वाह करते हैं। परन्तु संस्कृत पढ़े–लिखे जिनको पण्डित कहा जाता है,

गिने–चुने ही हैं। प्रत्येक फिरके की शादी उसी फिरके में होती है और हरेक फिरका दूसरे फिरके के लोगों के हाथ का छुआ हुआ नहीं खाता। हल चलाना ये लोग अच्छा नहीं समझते। हरेक फिरके में कई गोत होते हैं, एक गोत के लोग उसी गोत वालों में शादी नहीं करते, बल्कि उनसे अलग उसी फिरके में दूसरे गोत के लोगों के साथ विवाह–सम्बन्ध होते हैं। नाहन में आम तौर पर गौतम गोत्र के और कुछ भारद्वाज इत्यादि गोत के ब्राह्मण हैं।

**भाट** :– भाट भी अपने आप को ब्राह्मण कहते हैं परन्तु अपनी मूल धार्मिक विधियां छोड़ देने और स्त्रियों की दूसरी शादी करने के कारण वे भाट कहलाए। रियासत में इनकी संख्या 1274 है। ये लोग आम तौर पर रियासत के मध्य और उत्तरी भाग में आबाद हैं अर्थात् पहाड़ी इलाके में अधिकतर बसे हुए हैं। इनके रस्मो–रिवाज़ ब्राह्मणों से भिन्न हैं। ये लोग शास्त्रों के बारे में भी ज़्यादा जानकारी नहीं रखते इसलिए शास्त्रोक्त रस्मो–रिवाज़ के बहुत कम पाबन्द हैं। बेवा का विवाह बल्कि क्रेवा की रस्म (स्त्री का दूसरा विवाह) इनमें प्रचलित है। गोत्र का रिवाज़ इनमें कुछ–कुछ अभी तक चला आता है, परन्तु आम तौर पर कबीले का रिवाज़ है। एक कबीले में विवाह नहीं हो सकता, परन्तु गोत्र में शादी कर लेते हैं। भाट का व्यवसाय कृषि है और वह पुरोहिताई का कार्य भी करते हैं। हल चलाना इनमें बुरा नहीं माना जाता, ये लोग बड़े मेहनती होते हैं।

**क्षत्रिय** :– क्षत्रिय शब्द संस्कृत भाषा का है और इसका अर्थ वह मनुष्य है जो कि दूसरों को दुःख तकलीफ से बचाए। ये लोग पिछले समय में तलवार के धनी होते थे और देश का प्रबन्ध इनके हाथों में हुआ करता था। इसी फिरके में से राजे–महाराजे हुआ करते थे। जो आदमी बहादुर और समझदार होता था वह एक कुटुम्ब का सरदार या राजा हुआ करता था और जो अधिक योग्य और बहादुर होता था, जिसके अधीन भूमि का बहुत बड़ा भाग हुआ करता था, वह महाराजा कहलाता था। पिछले समय में जिसको वैदिक काल कहना चाहिए, जात–पात का कोई भेदभाव नहीं था। अगर पिता पढ़ने–पढ़ाने का कार्य करता था तो पुत्र अपनी इच्छानुसार सिपाही का व्यवसाय चुन

सकता था। बल्कि बहुत समय तक कुटुम्ब का सरदार पुरोहित का काम करता था। उस काल में केवल दो जातियां थीं अर्थात् एक आर्य नस्ल की, जो कि विजेयता थी और दूसरी अनार्य, अर्थात् जिस पर विजय प्राप्त की गई थी। उसके पश्चात् जैसे–जैसे उन्होंने धार्मिक, दार्शनिक, कला और विज्ञान आदि में प्रगति प्राप्त की, उसी तरह समाज के नियम आदि भी विकसित होते गए और व्यवसाय की आवश्यकतानुसार उन्होंने अपने आपको चार भागों में बांट लिया जैसा कि हमने इससे पहले वर्णन किया है। क्योंकि एक व्यक्ति कई कार्यों को भली–भान्ति पूरा नहीं कर सकता था और न उनमें आवश्यकतानुसार प्रगति कर सकता था इसलिए यह विभाजन बुद्धिमत्ता पर आधारित था। परन्तु बाद में यह विभाजन पूरी तरह से बिगड़ गया और हिन्दुस्तान में इतना ज़्यादा बढ़ गया कि हिन्दुओं में हज़ारों जातियां और फिरके हो गए जिसके कारण प्रगति के स्थान पर नुकसान होता गया। लेकिन वैदिक काल के बाद भी एक लम्बे समय तक जाति केवल व्यवसाय पर आधारित होती थी और ये तीनों जातियां ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य एक–दूसरे से विवाह करते थे, जैसा कि पुराण इत्यादि पुस्तकों से स्पष्ट होता है। परन्तु जिस तरह समय बदलता गया उसी तरह से ब्राह्मणों ने अपनी उच्च शिक्षा और धार्मिक व्यवसाय के कारण अपने व्यवसाय के लोगों में विवाह करना शुरू किया और क्षत्रियों ने भी जो राजा–महाराजा होते थे अपनी उच्च स्थिति के कारण राजा–महाराजाओं के कुटुम्बों में विवाह को सीमित कर दिया। या यूं कहिए कि प्रत्येक ने अपने ही व्यवसाय के लोगों में विवाह सम्बन्ध बनाने को प्राथमिकता दी। अन्त में यह पाबन्दी स्थाई हो गई और आज तक प्रचलित हैं। परन्तु दिल का आना और बात है और फिरका बन्दी की पाबन्दी और इसलिए एक जाति के आदमी का दूसरी जाति में नीति अनुसार शादी करना तो वर्जित हुआ परन्तु बगैर विवाह के औरतों को घर में डालने का रिवाज़ प्रचलित हो गया। यह इतना बढ़ा कि आर्य नस्ल के आदमी ग़ैर–आर्य नस्ल के फिरके के साथ भी सम्बन्ध पैदा करने लगे और उनसे कोई न कोई नया फिरका पैदा होता गया (दत्त का इतिहास, वॉल्यूम II, पेज़ 84)। यह नया फिरका कई जातियों में

विभाजित होता गया ज़िसके कारण समय के चलते बहुत सी जातियां एक–एक फिरके, अर्थात् वर्ण की हो गईं। लम्बे समय के बाद हिन्दुस्तान में क्षत्रिय शब्द की जगह पर राजपूत शब्द का प्रयोग होने लगा, जिसका अर्थ राजा का बेटा है। इसमें हर व्यक्ति जो कि राजा का बेटा हो चाहे वह किसी वर्ण का भी हो, राजपूत कहला सकता था। जैसा कि बहुत से मुसलमान, जिनके माता–पिता में से कोई एक क्षत्रिय जाति से हुआ होगा वह अपने आपको मुसलमान राजपूत कहता है। वास्तव में शब्द राजपूत ऐसा प्रचलित हो गया कि प्रत्येक व्यक्ति जिसके माता–पिता में से कोई एक किसी समय क्षत्रिय था या किसी क्षत्रिय का सम्बन्ध किसी दूसरे वर्ण की औरत से हो गया और उससे जो सन्तान उत्पन्न हुई वह भी राजपूत कहलाने लगी। इस तरह से इस रियासत में असली नस्ल के क्षत्रिय तो कम हैं मगर दूसरी किस्म के राजपूतों की संख्या जो कि अभी तक राजपूत कहलाते हैं, 3510 है। इसके अतिरिक्त कनैत हैं, जो कि समझते हैं कि राजपूत कहलाने का उनका भी अधिकार है। क्योंकि इनमें क्रेवा और स्त्रियों में दूसरे विवाह का रिवाज प्रचलित है, जो कि दूसरे राजपूतों में वर्जित है, इसलिए वे कनैत कहलाते हैं। परन्तु इन राजपूतों में भी जो कि अभी राजपूत कहलाते हैं, भान्ति–भान्ति के राजपूत हैं। अर्थात् एक हिन्दू राजपूत, जिनकी संख्या 2964 है, दूसरे मुसलमान राजपूत, जिनकी संख्या 536 है, तीसरे सिक्ख राजपूत, जिनकी संख्या 10 है। परन्तु यह भेदभाव और संख्या धर्म के अनुसार है, इसके अतिरिक्त एक धर्म होने के बावजूद भी कई किस्में हैं, जिनका विवाह इत्यादि एक–दूसरे से नहीं होता। पहला मूल रूप से राज परिवार का राजपूत, दूसरा वह राजपूत जो राजा की रखै़ल से उत्पन्न हुआ हो, तीसरा मियां राजपूत, चौथे रांगड़ राजपूत।

इस रियासत के राजपूतों में गोत्र का रिवाज है। 1901 की जनगणना के अनुसार अधिकतर चौहान, पुण्डीर, पंवार, कश्यप और तौनी गोत्र हैं। इन राजपूतों में आम तौर पर प्रत्येक रस्मो–रिवाज हिन्दुओं के शास्त्रों के अनुसार है। इनमें बेवा का विवाह उचित नहीं है और न ही स्त्री के दूसरे विवाह को जिसे क्रेवा कहते हैं, उचित समझा

जाता है। इनमें दूसरी जाति से विवाह करना भी उचित नहीं है। जो व्यक्ति दूसरी कौम में विवाह कर लेता है या दूसरे विवाह की स्त्री से विवाह करता है, उसको जाति से निकाल दिया जाता है अर्थात् उसका सम्बन्ध राजपूतों से नहीं रहता।

इस रियासत में राजा और उसके परिवार का गोत्र अत्रि है और वे यादव नस्ल के चन्द्रवंशी भट्टी राजपूत हैं। इनका परिवार जैसलमेर परिवार के मूल राजपूत परिवार से है, वे यजुर्वेदी हैं और उनकी शाखा माध्यंदिनी और त्रिप्रवर है। इसका वर्णन पहले अध्याय में किया गया है। इनके विवाह के रस्मो-रिवाज शास्त्र विधि के अनुसार हैं। इनके वैवाहिक सम्बन्ध सिरमौर के दूसरे राजपूतों के साथ नहीं होते। इनमें अधिकतर राजपूताना के रस्मो-रिवाज और त्योहार प्रचलित हैं जिनका वर्णन हम आगे चलकर करेंगे। ये लोग खास नाहन शहर, जो सिरमौर की राजधानी है, में आबाद हैं। इनकी संख्या बहुत कम है और वे राजकुमार व कंवर कहलाते हैं। वे लम्बे कद और गोरे रंग के होते हैं, ये स्वभाव के सादा, परन्तु तेज मिजाज़ होते हैं। ये पढ़ाई-लिखाई में कम रुचि रखते हैं और इसी कारण इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति की आर्थिक स्थिति आजकल दो बातों पर निर्भर है, पहली नौकरी, दूसरी वाणिज्य। ये दोनों बिना शिक्षा के प्राप्त करना कठिन है। अच्छी शिक्षा पाने का साधन इनको प्राप्त नहीं है और न इनके पास अधिक मात्रा में धन है। इसलिए इनकी गुजर-बसर केवल उन मामूली जागीरों पर निर्भर है, जो कि इनको रियासत से मिलती है। धीरे-धीरे हर पीढ़ी के समाप्त होने पर, राजा शमशेर प्रकाश द्वारा जारी नियमों के अनुसार ये जागीरें कम होती जा रही हैं। इस कारण ये लोग, या तो इस मामूली सी आमदन में अपना गुज़ारा करते हैं या फिर क्लर्क या सिपाही की नौकरी करके जीवन व्यतीत करते हैं। ये लोग अधिकतर शिव, विष्णु और देवी के उपासक हैं। केवल इन्ही में शिक्षा का अभाव नहीं बल्कि हिन्दुस्तान के सम्पूर्ण राजपूतों में शिक्षा की कमी है।

जैसा कि वेद-पुराणों से स्पष्ट होता है पुराने समय में क्षत्रिय लोग बहुत शिक्षित और विद्वान हुआ करते थे। दत्त ने तो अपनी

इतिहास की पुस्तक, पेज 133.34 में यहां तक लिखा है कि उपनिषद् दर्शन, जो संसार भर में प्रसिद्ध है, के जन्मदाता यही लोग थे। इस सम्बन्ध में ब्राह्मण भी इनसे शिक्षा प्राप्त करते थे। राजा जनक वेदान्त दर्शन के महान विशेषज्ञ थे।

इस रियासत के राजपूतों का विवाह पंजाब की शुद्ध राजपूत जातियों में, साधारणतया ज़िला कांगड़ा और जिला शिमला के शुद्ध राजपूत परिवारों में होता है। ये लोग जाति का बहुत विचार करते हैं, कम नस्ल के राजपूतों से कभी भी रिश्ता नहीं जोड़ते। यद्यपि उच्च नस्ल का अगर निर्धन राजपूत भी हो तो वे प्रसन्नता से रिश्ता स्थापित कर लेते हैं। ये लोग विवाह और खाने–पीने के मामले में बहुत सावधानी बरतते हैं, क्योंकि ब्राह्मण के अतिरिक्त किसी दूसरी जाति के हाथ का बनाया हुआ खाना नहीं खाते। उनमें यह कहावत प्रचलित है कि "जिसकी बेटी, उसकी रोटी"। परन्तु अब कुछ समय से उन्होंने कनैतों के हाथ का बना हुआ खाना खाना भी आरम्भ कर दिया है। क्योंकि वे कनैतों को भी राजपूतों के एक फिरके में गिनते हैं, चाहे कनैतों से विवाह – सम्बन्ध नहीं बनाए जाते। लेकिन अब यह विचार होता जा रहा है कि खाने–पीने की छूत से जाति पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। चाहे यह बात कुछ सीमा तक सही भी है, परन्तु इसमें शक नहीं कि खाने में ऐसे लोगों की छूत और मेल–जोल से, जिनका रहन–सहन साफ–सुथरा न हो, ज़रूर कुछ न कुछ बुरा प्रभाव मन पर पड़ता है। जैसा कि आम कहावत है कि "तुख़्म–ए–तासीर, सोहबत का असर," (बीज और सोहबत अपना प्रभाव अवश्य दिखाते हैं)।

जिस समय आर्य हिन्दुस्तान में आए थे और अनार्यों को पराजित किया था, उस समय उनके लिए अनार्यों से, जो शूद्र कहलाते थे और जिनका रहन–सहन अभिन्न और साफ–सुथरा न था –– जिसको आर्य अच्छा नहीं मानते थे –– परहेज़ करना ज़रूरी था। इसलिए छुआछूत शूद्रों से उस समय भी की जाती थी और अब भी की जाती है। ऐसा ही रिवाज आजकल दूसरी सभ्य जातियों के समाज में भी पाया जाता है और आम तौर से पदवी, परिवार, चाल–चलन, तौर–तरीके और व्यवसाय इत्यादि का लिहाज यूरोप में प्रत्येक फिरका

रखता है। चाहे खाने–पीने में इनमें छुआछूत अब समाप्त हो गई है मगर वे अब तक इस बात को मानते हैं कि छूत से बहुत सी बीमारियां एक–दूसरे को लग जाया करती हैं, (लतीफ, पंजाब का इतिहास, पेज 45)। इसलिए छूत का विचार कुछ सीमा तक सही भी मालूम होता है।

राजपूतों में पर्दे की रस्म भी प्रचलित है, जिसको पूरी तरह पाबन्दी से निभाया जाता है। लेकिन इतनी पाबन्दी भी नहीं है जितनी कि अंग्रेज़ लोग समझते हैं क्योंकि घरों में स्त्रियों को हर प्रकार की सुविधा और स्वतन्त्रता प्राप्त है। (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 634)। पर्दे की रस्म राजपूतों की अपनी नहीं है, क्योंकि पुराण और संस्कृत और दूसरी इतिहास की पुस्तकों से यह स्पष्ट होता है कि स्त्रियों में पहले पर्दा नहीं था, वे शिक्षित होती थीं और प्रतिस्पर्धाओं में भी अपने पतियों के साथ जाया करती थीं। (दत्त का इतिहास, पेज 168)। ऐसा प्रतीत होता है कि पर्दे की रस्म इन लोगों में मुसलमान आक्रमणकारियों की ज़्यादती और सख़्ती के कारण प्रचलित हुई। क्योंकि मुसलमान आक्रमणकारी हिन्दू स्त्रियों पर ज़ुल्म ढाते थे और उनको कैद करके गुलाम बना लिया करते थे। (एलफिन्स्टन का इतिहास, वॉल्यूम I, पेज 509, 511)।

मुसलमानों से पहले के इतिहास में उदाहरण हैं कि राजा जनक की सभा में गार्गी की महर्षि याज्ञवल्क्य के साथ प्रतिस्पर्धा हुई थी और संघ मित्रा, जो कि महाराजा अशोक की पुत्री थी, लंका में धर्म–प्रचार के लिए गई थी और सरस्वती देवी को, जो मण्डन मिश्र की स्त्री थी, शंकर आचार्य और मण्डन मिश्र के बीच हुई प्रतिस्पर्धा में न्यायिक नियुक्त किया गया था। विशेष कर राजपूतों में तो स्त्रियां हमेशा अपने पतियों के साथ ज़रूरत के समय दरबार और युद्ध इत्यादि प्रबन्धन में भाग लिया करती थीं, जैसा कि महारानी कैकेयी, कुन्ती, सीता, गान्धारी, संयुक्ता, पद्मावती, रानी ताराबाई व लक्ष्मीबाई, रानी भवानी व अहिल्याबाई इत्यादि के बारे में धार्मिक और इतिहास की पुस्तकों में वर्णन है। अब्बू ज़ैद 916 ईसवी में लिखता है कि हिन्दुस्तान में रानियां मुंह पर नकाब नहीं डालती थीं और राज्य के प्रबन्धन में मर्दों का साथ देती थीं, बल्कि प्रसिद्ध यूनानी इतिहासकार मैगस्थनीज़ ने

अपनी इतिहास की पुस्तक में लिखा है कि स्त्रियां हर प्रकार के हथियार बांधकर अपने पतियों के साथ घोड़ों और हाथियों पर सवार होकर निकलती थीं। मुसलमानों के आक्रमणों से केवल पर्दे की रस्म ही प्रचलित नहीं हुई, बल्कि छोटी आयु में विवाह का रिवाज़ भी पड़ गया। दत्त ने अपने इतिहास (वॉल्यूम I, पेज 97) में लिखा है कि हिन्दुओं के यहां कन्या का विवाह उसके बालिग होने पर किया जाता था। ये दोनों रिवाज देश और कौम के लिए बहुत ही हानिकारक सिद्ध हुए क्योंकि इन रस्मों की वजह से स्त्रियों की शिक्षा और इच्छानुसार विवाह होने बंद हो गये जिससे आने वाली नस्लों के विकास और कल्याण की बड़ी हानि हुई। जिन लोगों में पर्दे का रिवाज नहीं है या कम है उनमें आम तौर पर इच्छानुसार विवाह होते हैं और स्त्रियां शिक्षित होती हैं और सन्तान भी शक्तिशाली व प्रशिक्षित होती है। परन्तु जब तक हिन्दुस्तान में शिक्षा का विस्तार और अच्छे चरित्र को बढ़ावा नहीं मिलता जैसा कि पिछले समय में पर्याप्त था, तब तक पर्दे के रिवाज को दूर करना सम्भव नहीं है।

राजपूतों में पुरुष का एक से ज्यादा विवाह करना उचित समझा जाता है और यह विवाह उस स्थिति में किया जाता है जब परिवार में किसी पुत्र का जन्म न हुआ हो। क्योंकि हिन्दुओं के शास्त्र के अनुसार शुद्ध नस्ल के पुत्र के बिना मृतक पिता को मोक्ष प्राप्त नहीं होता। (दत्त का इतिहास, पेज 238)। यद्यपि आजकल एक से ज़्यादा विवाह का रिवाज सभ्य जातियों में अच्छी नज़र से नहीं देखा जाता, परन्तु पिछले काल में प्रत्येक कौम और देश में यह रस्मो–रिवाज प्रचलित था। (दत्त का इतिहास, पेज 171)। राजपूतों के रहन–सहन का ढंग हिन्दुस्तान जैसा है। कुछ समय पहले रहन–सहन का यह ढंग पंजाब से मिलता–जुलता था। परन्तु अब पूरी तरह हिन्दुस्तान के तरीके पर है, बल्कि कुछ–कुछ अंग्रेजी पोशाक पहनने का भी रिवाज हो गया है। इनकी बोली हिन्दी है, जिसमें कुछ भाषा और पंजाबी के अक्षर शामिल हैं।

दूसरे राजपूत "ख़्वासज़ादे" (रखैलों के बेटे) हैं, जो कि शुद्ध नस्ल के नहीं हैं, अर्थात् विवाहित स्त्री से नहीं है, बल्कि अविवाहिता,

जो कि रखैल या कनीज़ (बांदी) होती है, की सन्तान है। दुलहन के साथ कनीज़ देने का रिवाज आम तौर से राजाओं और बड़े अमीर लोगों में पुराने समय से जारी था और अब भी प्रचलित है। (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम II, चेप्टर I, पेज 1055)। ऐसे अमीर लोग एक–एक या दो–दो युवा कनीज़ें अपनी पुत्री के साथ विवाह में देते हैं, परन्तु ये कनीज़ें अच्छी जाति की होती हैं, निम्न जाति से नहीं होतीं। इस रियासत में ये कनीज़ें कनैत या भाट जाति से होती हैं। यह रिवाज केवल इस रियासत में ही नहीं है, बल्कि हिन्दुस्तान में राजपूतों के प्रत्येक फिरके में विशेषकर अमीर व्यक्तियों में पाया जाता है। यहां पर ऐसी स्त्रियों को जो कि अविवाहित घर में होती हैं ख़्वास कहते हैं, जिनको राजपूताना में गोली या दासी कहते हैं। इनकी सन्तान को गोला कहते हैं और यहां इनकी सन्तान को सरतेड़ा या ख़्वासज़ादा कहते हैं। इनके रस्मो–रिवाज़ राजपूतों जैसे हैं, मगर इनकी रिश्तेदारी शुद्ध जाति के राजपूतों से नहीं होती और न ये जायज़ उत्तराधिकारी खयाल किए जाते हैं। इनका दर्जा शुद्ध नस्ल की सन्तान के बराबर नहीं होता, लेकिन इनको कुछ वज़ीफा मिलता है और ये भी कंवर कहलाते हैं। इनकी संख्या रियासत में कम है क्योंकि शिक्षा में बढ़ौतरी से यह रिवाज कम होता जा रहा है।

तीसरे वे राजपूत जो मियां कहलाते हैं, जिनके पूर्वज किसी समय ज़िला कांगड़ा और पंजाब के दूसरे ज़िलों से नौकरी करने या किसी और कारणवश रियासत में आकर आबाद हुए होंगे। क्योंकि पंजाब में उच्च कोटि के राजपूत या राजाओं के परिवार मियां कहलाते हैं, मगर यहां पर समय में बदलाव के कारण इनके रिश्ते और रस्मो–रिवाज में फर्क आ गया है इसलिए वे कम दर्जे के राजपूत समझे जाते हैं। कभी–कभी ये लोग कनैतों से भी विवाह कर लेते हैं मगर कनैतों को लड़की नहीं देते। क्रेवा और स्त्री के दूसरे विवाह का रिवाज इनमें नहीं है। ये लोग खास नाहन में और कुछ पहाड़ी इलाके में आबाद हैं। रियासत के शासक के परिवार में इनके विवाह नहीं होते, इन लोगों का व्यवसाय आम तौर पर कृषि है।

चौथे राजपूत रांगड़ हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये लोग ज़िला

अम्बाला और करनाल इत्यादि क्षेत्रों से आकर यहां आबाद हो गए हैं। इनके रस्मो–रिवाज कुछ–कुछ राजपूतों जैसे और कुछ दूसरे फिरकों ब्राह्मण और बनियों जैसे पाए जाते हैं। इस कौम के लोग रियासत में बहुत कम हैं और नाहन से आठ–दस मील की दूरी पर ग्रामीण इलाकों में आबाद हैं, इनका व्यवसाय खेती–बाड़ी है।

मुसलमान राजपूत भी इस रियासत में काफी संख्या में हैं परन्तु ये लोग सिर्फ नाम के राजपूत हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इनके पूर्वज क्षत्रिय कौम से थे। इस्लाम धर्म अरब में 622 ई0 में प्रचलित हुआ। हज़रत मुहम्मद की मृत्यु के बाद अर्थात् 647ई0 में उसमान द्वितीय बम्बई की बड़ौच और थाने नामक बन्दरगाहों में पहुंचा था और 664 ई0 में एक आक्रमण उसने सिन्ध पर किया था मगर वह सफल नहीं हुआ। फिर दूसरा आक्रमण क़ासिम द्वितीय ने 711 ई0 में सिन्ध पर किया और इस पर प्रभुत्त्व स्थापित कर लिया। परन्तु बहादुर राजपूतों ने 750 ई0 में इसको निकाल बाहर किया और स्वयं कब्ज़ा कर लिया। उस समय से इस्लाम धर्म हिन्दुस्तान में आरम्भ हुआ था और तभी से राजपूत भी मुसलमान हुए होंगे (हन्टर, हिन्द का इतिहास, पेज 410)। यद्यपि राजपूतों ने इस्लाम धर्म को कबूल किया परन्तु उनके कुछ रस्मो–रिवाज़ अपने हिन्दू भाइयों के रस्मों रिवाज़ से मिलते–जुलते हैं। कुछ सिक्ख राजपूत भी इस रियासत में हैं उनके रस्मो रिवाज़ इत्यादि दूसरे सिक्खों के अनुसार हैं। खाने–पीने की छुआछूत इनमें नहीं है। चाहे कोई सिक्ख किसी भी फिरके का हो वह एक–दूसरे से छुआछूत नहीं करता।

**कनैत** :– हिन्दू शास्त्रों के अनुसार कनैत कोई जाति नहीं है। उनमें शास्त्रानुसार चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हैं। जात–पात की पाबन्दी के कारण एक वर्ण का व्यक्ति दूसरे वर्ण से सम्बन्ध स्थापित करने से अपने वर्ण से गिर जाता है अथवा अपने धार्मिक रस्मों को निष्ठापूर्वक न निभाने से भी वह अपने वर्ण से गिर जाता है। धार्मिक रस्मों का पाबन्द होना, प्रत्येक व्यक्ति के लिए कठिन है इसलिए किसी व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति के वर्ण से विवाह करने के कारण नये फिरके या जाति पैदा होती चली गई। इस तरह हिन्दुस्तान

में कई जातियां हो गईं जिनका भिन्नता के कारण आपस में सम्बन्ध नहीं हो सकता।

राजपूत या क्षत्रिय अपने धार्मिक रस्मो रिवाज पर पाबन्द न रहने के कारण और शास्त्र के विरुद्ध चलने पर कनैत कहलाए। कनैत शब्द से स्पष्ट होता है कि उन्होंने कोई शास्त्र के विरुद्ध चलने की विधि अपनाई होगी। कनैत दो शब्दों कु और नीत से मिलकर बना है। संस्कृत में कु का अर्थ भ्रष्ट और नीति का अर्थ रस्म है, अर्थात् भ्रष्ट रस्म। उनमें क्रेवा की रस्म और स्त्री के दूसरे विवाह की रीत प्रचलित है जो कि क्षत्रियों में नहीं है। कनैतों में केवल बेवा का विवाह ही नहीं होता, बल्कि स्त्री अपने पति के जीवनकाल में भी दूसरे पति के यहां क्रेवा करके चली जाती है। धीरे–धीरे यह शब्द कुनैत से बिगड़कर कनैत हो गया और फिर समय के चलते इनकी जनसंख्या बढ़ती चली गई, इस तरह कनैत एक खास फिरके का नाम पड़ गया।

मनु महाराज ने जहां वर्णों की गिनती की है, वहां कनैत और ख़श दो जातियों का ज़िक्र किया हैं। कनैत अधिकतर पहाड़ों में आबाद हैं और ख़श भी पहाड़ो में रहते हैं। ख़श के बारे में मनु ने लिखा है कि वे शुरू में क्षत्रिय थे परन्तु बाद में धार्मिक रस्मों की पाबंदी न करने से वे शूद्र हो गए (दत्त का इतिहास, पार्ट II, पेज 86, मनु धर्मशास्त्र, अध्याय 10, श्लोक 43 व 44)। ख़श पहाड़ों में अब तक कनैतों को कहते हैं और ये लोग आम तौर से पहाड़ों पर ही पाये जाते हैं, इसलिए यह विचार है कि वे राजपूतों की नस्ल से हैं, क्योंकि इनमें अब तक कुछ कुछ राजपूतों के तौर तरीके पाये जाते हैं, परन्तु इनमें बेवा का विवाह और क्रेवा की रस्म प्रचलित है। अगर कोई ब्राह्मण कनैत से विवाह कर लेता है तो उसकी सन्तान भी कनैत हो जाती है और वह ब्राह्मण भी कनैत हो जाता है। अगर कोई कनैत किसी ब्राह्मणी से विवाह कर लेता है तो उसकी सन्तान भी कनैत होती है। इस फिरके के लोग आम तौर पर शिवालिक की पहाड़ियों में कश्मीर से गढ़वाल तक फैले हुए हैं, यद्यपि उन के नाम विभिन्न स्थानों में भिन्न हैं।

जम्मू कश्मीर में इनको ठक्कर और गढ़वाल में नेगी कहते हैं। ये चम्बा में राठी के नाम से मशहूर हैं। सिरमौर और शिमला ज़िले में

इनको कनैत कहते हैं। इस सबके रस्मो रिवाज़ एक जैसे हैं। रियासत सिरमौर में इनकी सख्या 40,395 है। कनैत जाति की इस रियासत में दो किस्में हैं। पहली किस्म के कनैत गिरिवार के इलाके, जिसको धारटी, सैन, पच्छाद कहते हैं, में आबाद है। गिरिवार के कनैत गिरिपार के खश कनैतों से रिश्ता करना अच्छा नहीं समझते बल्कि वह एक दूसरे को कम दर्जे का बतलाते हैं। इन दोनों किस्म के कनैतों के रस्मो रिवाज़ भिन्न हैं। पहले किस्म के कनैतों के रस्मो रिवाज़ कुछ कुछ शास्त्रों के अनुसार हैं परन्तु दूसरी किस्म के खश कनैतों के रस्मो रिवाज़ ऐसे नहीं हैं। कनैतों में लड़की का विवाह शास्त्रों के अनुसार होता है और खश कनैतों में विवाह विधिवत् नहीं होता बल्कि वह केवल झाझड़ा की रस्म करके दुल्हन को घर ले आते हैं और यह ही उनका विवाह है। झाझड़ा इस प्रकार होता है कि दूल्हे की तरफ से कुछ लोग दुल्हन के यहां जाते हैं और दुल्हन को दूल्हे के घर ले आते हैं। फिर दूल्हे की तरफ़ से दुल्हन की नाक में नथ डालते हैं और फिर दूल्हा और दुल्हन एक घर में रहते हैं जिसको पहाड़ी बोली में घरआसनी कहते हैं। इसी प्रकार दोनों किस्म के कनैतों में मृत्यु और जन्म इत्यादि कि रस्में भी भिन्न हैं।

गिरिपार के कनैतों में एक और रस्म है कि दो तीन सगे भाइयों की एक ही स्त्री होती है। इस स्त्री से जो सन्तान उत्पन्न होती है उसमें पहली सन्तान बड़े भाई की, दूसरी दूसरे भाई की और तीसरी तीसरे भाई की मानी जाती है। यह रस्म गिरिवार के कनैतों में नहीं है परन्तु रीत की रस्म का कनैत और खश कनैत दोनों में चलन है। इस रस्म के अनुसार पुरुष या स्त्री दोनों को अधिकार होता है कि वे एक दूसरे को छोड़ दें, मगर स्त्री को रीत की राशि देनी होती है जिसको पुरुष या उसके घर वाले विवाह के खर्च के नाम पर लेते हैं लेकिन दूसरे अर्थों में उसको स्त्री का मूल्य कहा जा सकता है क्योंकि बूढ़ी–जवान, सुन्दर–बदसूरत, स्त्री की रीत की राशि उस की स्थिति पर निर्भर करती है, जिसको पति या उसकी मृत्यु की स्थिति में उसका कोई उत्तराधिकारी निश्चित करता है। इस राशि को स्त्री के माता–पिता दूसरे पुरुष, जिसके घर स्त्री जाती है, से लेकर पहले पति

को देते हैं और इस प्रकार क्रेवा की रस्म के बाद यह स्त्री विवाहित मानी जाती है।

अगर स्त्री का चालचलन अच्छा है तो पति को अधिकार नहीं है कि वह स्त्री को निकाल दे। अगर कोई ऐसा करता है और स्त्री जाना नहीं चाहती तो पति को रोटी पानी का खर्च देना पड़ता है। परन्तु स्त्री पति की सहमति के बगैर रीत की राशि देकर दूसरे पति के यहां जा सकती है। छोटी उम्र में विवाह का रिवाज़ भी इन में है, कभी—कभी तो तीन चार साल के बच्चों का विवाह कर दिया जाता है। इस कारण यह रीत की रस्म और एक से अधिक विवाहों का रिवाज़ इन में प्रचलित है। इनके यहां स्त्री के विवाह या क्रेवा के बाद हुई सन्तान में कोई अन्तर नहीं है। दोनों प्रकार की सन्तानें वैध मानी जाती हैं क्योंकि क्रेवा द्वारा किया गया विवाह भी वैध माना जाता है। एक से अधिक विवाह करने का जैसा अधिकार पुरुष को है वैसा ही स्त्री को भी है, परन्तु स्त्री का दूसरे पति के घर जाने पर पहले पति के घर कोई अधिकार नहीं रहता। परन्तु जो सन्तान पहले पति से होती है वह अपने पिता की उत्तराधिकारी होती है और पहला पति अपनी सन्तान को अपने पास रख लेता है।

जो कनैत नाहन शहर में रहते या आबाद हैं और पढ़े—लिखे हैं वे इस अभद्र रस्म को नहीं अपनाते। इनकी रिश्तेदारी इत्यादि इन पहाड़ी कनैतों में, जो धारटी या सैन में रहते हैं, से होती है। मूलरूप से नाहन के कनैत भी धारटी व सैन ही के मूलनिवासी हैं क्योंकि इनकी भाषा पहाड़ी है। इनमें पर्दे का रिवाज नहीं है और आम तौर पर गोत्र के स्थान पर खेल (कबीला) का रिवाज है। कबीले का नाम उस गांव के नाम पर होता है जहां पर एक कबीले या परिवार का कोई पूर्वज निवास करता था या किसी पूर्वज के नाम पर कबीले का नाम होता है। ये लोग एक खेल में विवाह नहीं करते परन्तु एक गोत में कर लेते हैं। अधिकतर लोगों का व्यवसाय कृषि है परन्तु अब वे नौकरियां भी करने लगे हैं। धारटी, सैन इत्यादि इलाकों के वे लोग जो पढ़े लिखे नहीं हैं, सेना में सेवा करते हैं, जो लोग पढ़े लिखे हैं वे सरकारी दफ्तरों में सेवा करना पसन्द करते हैं।

गिरिपार क्षेत्र के कनैत सरकारी नौकरियों में अभी तक कम हैं। उनकी अधिकतर खेती बाड़ी में रुचि है। ज़रूरत पर वं मेहनत मज़दूरी करते हैं और गाय इत्यादि भी पाल लेते हैं। इन लोगों की शक्ल व सूरत राजपूतों जैसी है परन्तु वे राजपूतों के मुकाबले में कम जोशीले हैं। ये लोग मेहनती और परिश्रमी हैं। शिक्षा में इनकी बहुत कम रुचि है। ये लोग आम तौर पर शिवजी और देवी के उपासक हैं। हरेक मौजा या घर में किसी न किसी देवता की मूर्ति होती है बल्कि कुछ स्थानों में वृक्षों की और कुछ में पत्थरों की पूजा करते हैं और इनको बड़ा मान देते हैं। अगर कोई किसी को देवता की सौगन्ध दे दे तो वह उस को भगवान का आदेश समझता है, जिसे वे लोग अपनी बोली में ढल कहते हैं। खास–खास स्थानों पर खास–खास नाम के देवता हैं। शिरगुल देवता की पूजा पहाड़ में रहने वाले लोग करते हैं जिसको शिवजी कहते हैं। इन देवताओं के आगे बकरी और खाड़ू की बलि देते हैं परन्तु जो कनैत नाहन में आबाद हैं वे इस प्रकार इन देवी देवताओं में निष्ठा नहीं रखते।

**कोली** :–जनसंख्या के हिसाब से कोली कनैतों से दूसरे दर्जे पर हैं। इन की जनसंख्या इस रियासत में 28031 है। कोली कनैतों से पैदा हुए माने जाते हैं। हो सकता है कि कनैतों और हिन्दुस्तान के मूल निवासियों की आपस में विवाह शादियों से ये उत्पन्न हुए हों या कोल से, जो हिन्दुस्तान के मूलनिवासी थे, यह जाति कोली उत्पन्न हुई हो। ये लोग आम तौर पर काले रंग के होते हैं नाहन और सैन इत्यादि के कोली सुन्दर और गोरे रंग के होते हैं, परन्तु गिरिपार के कोली काले रंग के हैं। नाहन, सैन, धारटी के कोली गिरिपार के कोलियों से रिश्ते नाते नहीं करते। ये लोग आम तौर पर कनैत लोगों की भूमि जोतते हैं और उन के दूसरे कार्य करते हैं। कोली कनैतों का बड़ा सम्मान करते हैं। इन लोगों में सोना नहीं पहना जाता, केवल चांदी के आभूषणों का प्रयोग करते हैं। कनैत कौम की तरफ से इनको सोना प्रयोग करने की मनाही है। इन लोगों के हाथ का पानी कनैत पी लेते हैं परन्तु नाहन शहर में उन से छुआ–छूत करते हैं। इनके विवाह की रस्में कनैतों की रस्मों जैसी हैं। इनमें क्रेवा की रस्म का रिवाज़ भी है।

ये लोग साधारण स्वभाव के, परिश्रमी और कृषक हैं।

**डूमना** :– इन लोगों की जनसंख्या कोलियों से बहुत कम, सिर्फ 5021 है। ये लोग अधिकतर सैन और गिरिपार के इलाकों में आबाद हैं। ये आम तौर पर काले रंग के हैं और इन का व्यवसाय कृषि है। कोली जाति के लोग इनको अपने से कम दर्जे का खयाल करते हैं और इनके हाथ का पानी नहीं पीते। कनैत भी इनसे छुआछूत करते हैं। पहाड़ में ये लोग कभी कभी मेहतर और चमार का कार्य भी करते हैं। ये लोग बड़े विनम्र परन्तु ज्ञानशून्य होते हैं।

**चमार** :–चनाल और चमार भी पहाड़ी इलाकों में पाये जाते हैं। यद्यपि इनकी जनसंख्या बहुत कम है परन्तु ये लोग भी इसी स्थान के प्राचीन निवासी समझे जाते हैं। ये लोग कृषि और दूसरे व्यवसाय भी करते हैं। ये भी आम तौर पर काले रंग के होते हैं। कनैत इनसे बहुत छुआछूत करते हैं।

**दूसरी कौमें** :– इससे पहले हमने लिखा है कि इस रियासत के पहाड़ी क्षेत्र में तो कनैत, कोली, डुमड़ा, चनाल, चमार आबाद हैं जो कि इस स्थान के मूलनिवासी समझे जाते हैं। इसके अतिरिक्त दूसरी व्यवसायी जातियां लोहार व बढ़ई इत्यादि बहुत ही कम संख्या में पायी जाती हैं। दून के इलाके में, सैनी, लबाना, बंजारा, गुज्जर, तेली, लोहार, शेख, मुसलमान, सिक्ख, जाट इत्यादि की आबादी पायी जाती है। ये लोग पजांब के ज़िलों से आये हुए हैं और आम तौर पर इन सब का व्यवसाय कृषि है। बाहति जाति के लोग भी कुछ वर्षों से दून के इलाके में पंजाब के होशियारपुर ज़िले से आकर आबाद हो गये हैं। नाहन शहर में सब जातियों के लोग रहते हैं अर्थात् राजपूत, कनैत, ब्राह्मण, खत्री, कायस्थ, वैश्य, भाट, सैयद, पठान, सुनार, शैख, सिक्ख, कोली, बढ़ई, लोहार, माली, धोबी, कहार, कुम्हार, नाई, तेली, डूमना, भंडेला, मेहतर, चमार इत्यादि।

**हिन्दुओं के धर्म** :– इस रियासत में हिन्दू, इस्लाम, सिक्ख, ईसाई और जैन धर्मों के लोग आबाद हैं जिनकी संख्या इस प्रकार है। हिन्दू 1,28,478, मुसलमान 6,414, सिख 688, ईसाई 46, जैन 61। यहां हरेक फिरके के हिन्दू मिलते हैं ये हिन्दू यद्यपि प्राचीन काल में केवल

वेद को ही मानते थे और उसी के अनुसार इन का एक ही फिरका था और एक ही धार्मिक पुस्तक वेद थी। परन्तु जैसे–जैसे समय बदलता गया वैसे–वैसे धार्मिक पुस्तकें भी लिखी जाती रहीं अर्थात् धीरे–धीरे वेद के पश्चात् ब्राह्मण, फिर उपनिषद् फिर स्मृति और पुराण इत्यादि शास्त्र लिखे गए और इसी तरह इनकी मान्यता होती गई। बाद में हिन्दू तीन बड़े फिरकों वैष्णव, शैव और शाक्त में बंट गए। यद्यपि ये फिरके वेद के खिलाफ नहीं हैं और उनको ही मानते हैं मगर इनमें एक दूसरे के बीच कुछ बातों की भिन्नता है। इस लिए हम हिन्दू धर्म और इसके फिरकों की जानकारी पाठकों को दे रहे हैं।

इससे पहले हम बता चुके हैं कि प्राचीन और वर्तमान काल के इतिहासकारों के विचार के अनुसार हिन्दू मध्य एशिया में आबाद थे। मगर इस विचार पर मतभेद है और यह अधिक विचार विमर्श योग्य है, इसलिए हम हिन्दुओं के धर्म के बारे में उस समय से जब वे सिन्ध में आबाद हुए थे, वर्णन करते हैं। यह सही–सही मालूम नहीं है कि वे मध्य एशिया में किस धर्म को मानते थे परन्तु ऐसा खयाल किया जाता है कि वे वेद को ही मानते थे क्योंकि वेद ही सबसे प्राचीन धार्मिक पुस्तक है और इसमें इनके बारे में आरम्भिक सूचना मिलती है। वैदिक इण्डिया नामक पुस्तक के दूसरे पन्ने में लिखा है कि जब आर्य हिन्दुस्तान में आये तो अपना वैदिक धर्म अपने साथ लाये। वेद निःसन्देह आर्य कौमों के परिवार की प्राचीन धार्मिक पुस्तक है। मैक्समूलर लिखता है कि वेद से पहले कोई प्राचीन पुस्तक नहीं है। इसमें वह धर्म और दर्शनशास्त्र है जो किसी और जगह नहीं है। इसकी आरम्भिक तिथि निश्चित नहीं की जा सकती। हिन्दुओं की यह भी मान्यता है कि जब यह सृष्टि रची गई तब पहले पहल ज्ञान ब्रह्मा जी को हुआ और उनसे दूसरे ऋषियों तक पहुंचा जिन्होंने इसको क्रम से रखा। (मैक्समूलर की पुस्तक इण्डिया, व्हट कैन इट टीच अस का पन्ना 118)...... ब्रह्मा का एक दिन एक हज़ार चतुर्युगी ही होता है जिसको कल्प कहते हैं और एक महायुग अर्थात् सतयुग त्रेता, द्वापर और कलियुग का होता है। सतयुग 4,800 और त्रेता 3,600, द्वापर

2,400 और कलियुग 1,200 देवसाल के होते हैं। एक देवसाल हमारे 360 साल का होता है।

इस हिसाब से सतयुग 17,28000, त्रेता 2,96000, द्वापर 8,84,000 और कलियुग 4,32000 साधारण सालों के होते हैं। या यह कहा कि एक चतुर्युगी महायुग 43,20000 साल का होता है। इस तरह से ब्रह्मा का एक दिन 43,20000,000 = हमारे 4320000000 सालों का होता है। ब्रह्मा जी के एक दिन में चौदह मनु होते हैं और एक मन्वन्तर 71 महायुग का होता है, मन्वन्तर गोया

एक मन्वन्तर 4320000 X 71 = 306720000 साधारण सालों का होता है। आज तक छः मनु हो चुके हैं। सातवां मनु, वैवस्वत आज कल चल रहा है। वर्तमान कलियुग 28 वें चतुर्युगी का है। इस हिसाब से सृष्टि के आरम्भ से सम्वत् 1967 विक्रमी तक संकल्प के अनुसार, जो कि हिन्दुओं में प्रत्येक पूजन और दानपुण्य के अवसर पर समय को गिनने के लिए पढ़ा जाता है, निम्नलिखित हिसाब से 1960853010 साल होते हैं:—

बीत चुके छः मनुओं का काल 1840320000 साल

सातवां मनु जो आज कल चल रहा है के 27 वें चतुर्युगी का काल 116640000 साल सातवां मनु जो आज कल चल रहा है के 28 वें चतुर्युगी के तीन युगों का काल 3888000 साल सातवां मनु जो आज कल चल रहा है के कलियुग का जो सम्वत् 1967 विक्रमी में बीत गया, का काल 5010 साल योग 1960853010

अब वह काल जो हिन्दुओं के अनुसार इस दुनिया की समाप्ति तक बाकी बीतने को रहता है वह निम्नलिखित 2333226990 है :—

बाकी बचे सात मनुओं का काल 2147040000 साल सातवां मनु जो आज कल चल रहा है के 43वें चतुर्युगी का काल 185760000 साल वर्तमान कलियुग का बाकी बचा काल जिसमें कुल साल शामिल हैं 426990 साल योग 2333226990 साल।

ब्रह्मा के एक दिन तक यह दुनिया चलती रहेगी फिर नष्ट हो जाएगी, जिसको प्रलय कहते हैं और पूरी उम्र 100 साल बीतने पर महा प्रलय होगी)। वेद वास्तव में मूल रूप से एक ही था जिसको ऋग्वेद

कहते हैं। आरम्भ में वह क्रमपूर्वक नहीं था और लम्बे समय तक इसकी शिक्षा मौखिक होती रही। बाद में ऋषियों ने इसे क्रमबद्ध किया (दत्त का इतिहास, पेज 32, 33)। ऋग्वेद संहिता के 1028 मंत्र बिना वर्णन किए हुए हैं (वैदिक इंडिया, पेज 114)। इसमें 100622 ऋचाएं हैं। ऋग्वेद 10 मण्डलों में विभाजित किया गया और प्रत्येक मण्डल को विभिन्न ऋषियों ने तरतीब दिया है। पहला मण्डल चन्द्र ऋषियों ने, दूसरा मण्डल गृत्समद ने, तीसरा विश्वामित्र ने, चौथा वामदेव ने, पांचवां अत्रि ने, छठा भारद्वाज ने, सातवां वसिष्ठ ने, आठवां कण्व ने, नौवां अंगिरा ने और दसवां भी विभिन्न ऋषियों ने लिपिबद्ध किया है। ऋग्वेद के ऋषियों का वर्णन अत्रि आरण्यक में किया गया है, जिन्होंने वेद के मण्डलों को तरतीब दिया था। बाद में धार्मिक रस्मों, अर्थात् यज्ञ इत्यादि के लिए ऋग्वेद का वह भाग जो यज्ञ से सम्बन्धित था, अलग करके एक स्थान पर इकट्ठा किया गया, जो कि बाद में यजुर्वेद के नाम से जाना गया। यजुर्वेद को दो भागों, कृष्ण और शुक्ल यजुर्वेद में बांटा गया।

शुक्ल यजुर्वेद में केवल मंत्र ही हैं और कृष्ण यजुर्वेद में मंत्र और उनका वर्णन किया गया है। इस प्रकार से ऋग्वेद के वे मंत्र, जो धार्मिक रस्मों को निभाने के समय, अर्थात् यज्ञ इत्यादि में स्वर से पढ़े जाते हैं, अलग किये गये और उसका नाम सामवेद हुआ। एक समय तक यह ऋक्, यजुर, सामवेद, जो कि मूल रूप से एक ही ऋग्वेद था, त्रिवेद कहलाता रहा अर्थात् इसके तीन भाग हो गए। फिर बहुत समय व्यतीत होने के बाद चौथे वेद, अथर्ववेद का संकलन किया गया। अथर्ववेद में कई मंत्र व विचार इत्यादि तो ऋग्वेद से लिये गये हैं और कुछ बहुत से इसमें अलग से जोड़ दिये गये हैं। इसमें विशेषकर देवताओं के क्रोध, बीमारी और खतरनाक जानवरों और दुश्मनों से हानि से बचने के मंत्र और विधियां भी लिखी हुई हैं, जो ऋग्वेद संहिता से भिन्न हैं (वैदिक इंडिया, पेज 117)।

ऋग्वेद में सूर्य और अग्नि की पूजा अथर्ववेद में दूसरे देवी–देवताओं की पूजा की गई है, जिससे प्रतीत होता है कि शायद हिन्दुस्तान के मूलवासी द्रविड़ों ने, इसको अपने स्वार्थ के लिए कुछ

ऋग्वेद से और कुछ और प्रकार से अपने ज्ञान और विचार के अनुसार बाद में संकलित किया हो (वैदिक इंडिया, पेज 118)। इस विचार से कि वेद में, जो आकाश से उतरी हुई पुस्तक है, कोई त्रुटि न हो जाए, इसके मंत्र, "ऋचा", शब्द तक गिने गए थे और इसको शूद्रों अर्थात् अनार्यों (द्रविड़ों), मंगोलियन इत्यादि कौमों से छिपा कर रखा जाता था, जैसा कि हम पहले बता चुके हैं। परन्तु इस छिपाने से यह परिणाम निकला कि इसका पढ़ना और समझना बहुत कम हो गया और एक समय ऐसा आया कि इसकी ऋचाओं और मंत्रों के अर्थ को समझना कठिन हो गया।

परिणामस्वरूप ऋषियों ने इनका वर्णन और व्याख्या की, जिसका नाम ब्राह्मण रखा। ऋग्वेद के दो ब्राह्मण, एक ऐतरेय और दूसरा कौशीतकी हैं। ऐतरेय ब्राह्मण का संकलन करने वाला ऋषि महीदास अत्रि, महर्षि अत्रि का बेटा था और कौशीतकी ब्राह्मण ऋषि कौशीतक का संकलित किया हुआ है। सामवेद के चार ब्राह्मण निम्नलिखित हैं : (1) पंचविंशा ब्राह्मण, (2) षड्विंशा ब्राह्मण, (3) मंत्र ब्राह्मण और (4) छांदोग्य ब्राह्मण। कृष्ण यजुर्वे वेद का तैत्तिरीय ब्राह्मण है और शुक्ल यजुर का शतपथ ब्राह्मण है, अथर्व वेद का गोपथ ब्राह्मण हैं (दत्त का इतिहास, पेज़ 117 व 119)। फिर ब्राह्मण का आरण्यक भाग बनाया गया, जिसके अनुसार ऋषि लोग वनों में यज्ञ आदि करते थे क्योंकि अरण्य संस्कृत में वन को कहते हैं। ब्राह्मण में जो मंत्र हैं वे यज्ञ के समय गृहस्थ लोगों में पढ़े जाते थे। ऋग्वेद के कौशीतकी व अत्रि आरण्यक हैं और यजुर्वेद के तैत्तिरीय और शतपथ आरण्यक हैं, सामवेद व अथर्ववेद का कोई आरण्यक नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक वेद के अलग–2 उपनिशद् हैं।

ऋग्वेद के उपनिषद् कौशीतकी और अत्रि हैं। सामवेद के उपनिषद् छांदोग्य व काण्व हैं। शुक्ल यजुर के ईश व वृहदारण्यक और कृष्ण यजुर के तैत्तिरीय व कठ और श्वेताश्वतर उपनिषद् हैं। अथर्ववेद के मुंडक, प्रश्न और माण्डुक्य उपनिषद् हैं। यही वे 12 उपनिषद् हैं, जिनका वर्णन स्वामी शंकराचार्य ने वेदान्त शास्त्र में किया है और जो प्राचीन समझे जाते हैं। यद्यपि इनके बाद और बहुत से उपनिषद् लिखे

गए और इनकी संख्या 200 तक पहुंच गई। ब्राह्मण, उपनिषद् इत्यादि के अतिरिक्त वेद के छः अंग हैं, जिससे वह समझा जा सकता है (1) शिक्षा, (2) छंद, (3) व्याकरण, (4) निरुक्त, (5) ज्योतिष और (6) कल्प।

हिन्दू चारों वेदों, ब्राह्मणों और उपनिषदों को आकाश से उतरी पुस्तक मानते हैं और इसको श्रुति कहते हैं (वैदिक इंडिया, पेज 153)। श्रुति का अर्थ है जो सुना गया हो, परन्तु ब्राह्मणों में केवल वेद ही के मंत्रों का अनुवाद या व्याख्या नहीं है बल्कि इसमें ऋषियों ने इसके अतिरिक्त जो कुछ व्याख्या के लिए जरूरी समझा, उसका वर्णन कर दिया। जैसा कि स्वयं उन्होंने लिखा है कि हमने इसमें यह--यह व्याख्या जोड़ दी है और यह ऋचा पुरानी और वह ऋचा नई है। इसलिए यह कहना उचित होगा कि ब्राह्मण भाग आसमान से उतरी पुस्तक वेद का भाग नहीं है बल्कि व्याख्या है। इसके बाद अपनी सुविधा के लिए उन्होंने लेख को छोटा बनाकर उसका नाम सूत्र रख दिया। सूत्र दो प्रकार के होते हैं : एक श्रौत सूत्र, जो वैदिक पुस्तक से सम्बन्धित हैं, दूसरे स्मार्त सूत्र, जो कि स्मृति अर्थात् धर्मशास्त्र इत्यादि पुस्तकों से सम्बन्धित हैं।

वेद के बारे में डाक्टर मैक्समूलर का विचार है कि वेद से हमको दर्शन शास्त्र व दूसरी किस्मों के ज्ञान और कलाओं की शिक्षा मिलती है, जो कि किसी दूसरे स्थान से प्राप्त नहीं हो सकती (मैक्समूलर का "इंडिया व्हट कैन इट टीच अस", पेज 97)। वह तो यहां तक कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए, जिसको अपने पूर्वजों या अपने इतिहास से कुछ भी लगाव है और जिसको अपनी बुद्धि और ज्ञान बढ़ाने में रुचि है, उसके लिए वेद का पढ़ना अनिवार्य है (इंडिया व्हट कैन इट टीच अस, पेज 112)। वह लिखते हैं कि वेद हमको उन बातों के बारे में बतलाता है जो कि दूसरा नहीं बता सकता अर्थात् वेद हमारी भाषा और हमारे विचारों की शुरुआत ही नही, बल्कि वह तमाम सभ्य बातों की सच्ची और प्राचीन शिक्षा और ज्ञान देता है, जिसको हम हिन्दू, पारसी, यूनानी और रोमन इत्यादि सभ्यता कहते हैं (इंडिया व्हट कैन इट टीच अस, पेज 97)। इससे यह प्रतीत होता है कि आर्य कौम

जिसमें हम सब हिन्दुस्तानी, यूनानी, ईरानी, यूरोपियन और रोमन इत्यादि कौमें शामिल हैं, इन सबकी आरम्भ में वेद ही एक धार्मिक पुस्तक थी जो कि लम्बे समय तक मौखिक रूप से एक–दूसरे को पढ़ाई जाती रही।

मैक्समूलर अपनी पुस्तक के पेज 214 में इस बात का प्रमाण देते हैं कि इन्होंने इस काल में हिन्दुस्तान में ऐसे ब्राह्मण देखे हैं कि जिनको चारों वेदों की एक लाख ऋचाएं मौखिक याद थीं और इसके अतिरिक्त चार वेदों के चार उपवेद, जो एक–एक वेद से सम्बन्धित हैं अर्थात् ऋग्वेद का उप आयुर्वेद, यजुर्वेद का उप धनुर्वेद, सामवेद का उप गन्धर्व वेद और अथर्ववेद का उप शल्य विद्या है, का भी पूर्ण ज्ञान था। अब हम संक्षेप में यहां यह बताएंगे कि शुरू में वेदों के अनुसार किस की पूजा की जाती थी और बाद में किस तरह से दूसरी प्रकार की पूजा प्रचलित हुई। हमें विश्वास है कि यह पाठकों को काफी रुचिकर लगेगा।

वेद के आरम्भ काल में केवल एक परमेश्वर की पूजा की जाती थी। वे लोग पहले आकाश की तरफ मुंह उठाकर पूजा करते थे और आकाश को वरुण के नाम से पुकारते थे। वेद में वरुण ही सबसे प्रथम देवता था जिसकी प्रार्थनाएं ऋचा ऋग्वेद में मिलती हैं। इसी प्रकार सूर्य, अग्नि, जल, वायु, धरती अर्थात् इन तत्त्वों को परमेश्वर की शक्ति मानकर इनको देवता मानने लगे, बल्कि वेद में यह भी वर्णन है कि यह तत्त्व कोई अलग वस्तु नहीं है, बल्कि उसी परमात्मा की विभिन्न शक्लें हैं और यह दृश्य उसी का है (दत्त का इतिहास, पेज 75)। आकाश को आर्यों ने हिन्दुस्तान में विभिन्न नाम दिए हैं (दत्त का इतिहास, पेज 83)। सबसे पहला नाम था द्यु, जिसका अर्थ चमकने वाला है और जिसकी लातिनी भाषा में डेविस, यूनानी भाषा में ज़ियस, रोमन में जुपिटर और जर्मनी में ज़ियू के नाम से पूजा की जाती थी। बाद में वरुण के नाम से। अलग पहचान के लिए चमकदार आकाश को मित्र, जिसको ईरानियों ने मत्तरा लिखा है और अन्धेरे आकाश को हिन्दुस्तान के आर्य वरुण कहते थे।

डाक्टर रॉथ की राय है कि इससे पहले जबकि ईरानी आर्य

और हिन्द के आर्य अलग हुए, वरुण उनमें बड़ा देवता माना जाता था, जिसको बाद में अहुरमज़्द अर्थात् बड़ा देवता लिखा है। इसके पश्चात् आकाश की इन्द्र के नाम से पूजा होने लगी। इसलिए द्यु, वरुण, मित्र, इन्द्र ये सब नाम आकाश के विभिन्न स्वरूपों के हैं। फिर खास–खास स्वरूप के अलग–अलग नाम होते गए। उजाले की शक्ति एक स्थान पर विचार करके उसका अलग नाम आदित्य अर्थात् उजाला रख दिया। आदित्य और सावित्री सूर्य को कहते हैं और सूर्य को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है अर्थात् विष्णु व पूषा इत्यादि। बारह महीनों के बारह सूर्य विभिन्न नामों धर्म, सत्त, वम, तप, अमातरस्तर, बजीया, तीक्षा, अनुसुईया, जाग, बरण, धातृ और जग पुकारे जाते रहे। इन्द्र के बाद सावित्री (सूर्य) की पूजा होने लगी, इसके बाद अग्नि की पूजा शुरू हुई। हिन्दुस्तान में ही नहीं बल्कि आर्यों की दूसरी कौमें भी सूर्य और अग्नि को पूजते थे (दत्त का इतिहास, पेज 85)। बाद में वायु या मरुत् की पूजा होने लगी।

इस प्रकार तत्त्वों की विभिन्न शक्तियों को भिन्न–भिन्न नाम देकर उनकी पूजा होने लगी। क्योंकि इन लोगों का विचार था कि भगवान की शक्ति जिस स्थान पर जैसी हो उसको उसी स्थान पर पूजना चाहिए। या यह कहा जाए कि भगवान को सर्वव्यापी समझकर उसकी पूजा की जाती थी। उस काल में मन्दिर इत्यादि नहीं थे (दत्त का इतिहास, पेज 93)। वरुण, इन्द्र, अग्नि, सावित्री के अतिरिक्त विष्णु जो कि सूर्य का एक नाम था और रुद्र जो एक प्रकार की तेज़ आग को कहते हैं तथा यम अर्थात् डूबता हुआ सूर्य और बृहस्पति जिसको ऋचा का स्वामी माना जाता है, सब देवता माने गए। ये देवता वेद में घटिया दर्जे के माने जाते हैं, मगर बाद में यही बहुत बड़े देवता माने जाने लगे जैसा कि पुराणों में विष्णु, शिव और ब्रह्मा बड़े देवता माने जाते हैं। ये त्रिदेव के नाम से प्रसिद्ध हैं।

ब्रह्मा को उत्पन्न करने वाला, विष्णु को पालने वाला और रुद्र अर्थात् शिव को मारने वाला बताया गया है। वेद में ब्रह्मा से मन्त्र या ऋचा और विष्णु से सूर्य तथा रुद्र से गरजने वाला बादल मुराद है। (दत्त का इतिहास, पेज 95)। इसके बाद दो देवियों उषा और सरस्वती

का वर्णन है। उषा की तरफ बहुत सी ऋचाएं वेद में दर्ज हैं। इन देवताओं की केवल हिन्दुस्तान में ही पूजा नहीं होती थी बल्कि यूनान और यूरोप इत्यादि में भी इनको पूजा जाता था। इस लिए इन के नाम हिन्दुस्तान के आर्यों के नामों से मिलते हैं, जैसा की वेद में वरुण और यूनान में यूरेनस कहते हैं। लातीनी में अग्नि को इगनिष कहते हैं। उसी प्रकार से उषा को यूनान वाले यूष और लातीनी भाषा में ओरूरा कहते हैं (वैदिक इंडिया, पेज 182)। इसी तरह वैदिक धर्म के बहुत से नाम यूनान और जर्मनी इत्यादि की धार्मिक पुस्तकों में पाये जाते हैं। बहुत से किस्से कहानियां एक दूसरे से मिलते हैं। (दत्त का इतिहास, वाल्यूम I, पेज 84--91) जिससे साबित होता है कि आरम्भ में इन सब आर्यों का एक ही धर्म था और ये सब वेद के ही मानने वाले थे। जैसे जैसे ये एक दूसरे से अलग हुए, इनके धर्म और विचारों में भिन्नता होती गई। इस अवसर पर यह बताना उचित है, जैसा कि इतिहास की पुस्तकों से ज्ञात है, कि इन देवी–देवताओं की पूजा के लिए, जो कि "वास्तव में प्रकृति के विभिन्न रूप या तत्त्व थे" कोई अलग से मन्दिर नहीं होता था। केवल घरों में ही प्रार्थना की जाती थी। अग्नि घर में सदैव जलती रहती थी जिसकी ये लोग पूजा करते थे। प्रत्येक पूर्वज़ अपने अपने घर का पुरोहित होता था। ब्राह्मण और क्षत्रिय के बीच कोई भेद--भाव नहीं था। जिन ऋषियों ने वेद के मंडल संकलित किये हैं वे किसी खास जाति के नहीं थे और न उन का कोई विशेष व्यवसाय था बल्कि वह आवश्यकता अनुसार वाणिज्य और कृषि दोनों कर लिया करते थे। निःसन्देह जिस व्यक्ति की जिस कार्य में रुचि होती थी वह उसी कार्य का विशेषज्ञ कहलाता था। धीरे धीरे ये लोग पढ़ने पढ़ाने और यज्ञ करने के विशेष व्यवसाय को चुन कर ब्रह्म कहलाने लगे। वायु पुराण और विष्णु पुराण के अनुसार सतयुग में जातियां नहीं थीं ये बाद में हुई (दत्त का इतिहास, वाल्यूम I, पेज 154)।

शुरू–शुरू में आर्य लोगों में तत्त्वों की पूजा प्रचलित हुई और बाद में सूर्य और अग्नि की पूजा करना अधिक प्रचलित हुआ। इनको वे भगवान का सबसे प्रत्यक्ष रूप मनाते थे। सूर्य की स्तुति के लिए गायत्री मन्त्र का जाप होता था जिसमें प्रार्थना की जाती थी कि हमको

सद्बुद्धि दो । अग्नि को घर में हमेशा प्रज्वलित रख उसकी पूजा करते थे और उस में हवन भी करते थे जिसे यज्ञ कहते थे। इसी प्रकार यज्ञ करने की विधि बनाई गई। यज्ञ में अग्नि प्रज्वलित की जाती थी और उस के माध्यम से वरुण, मित्र इत्यादि देवताओं के लिए दूध, चावल, जौ और मेवे इत्यादि से हवन होते थे बल्कि कुछ समय तक आदमियों की बलि भी दी जाती थी। परन्तु यह बिल्कुल गलत है। दत्त अपने इतिहास की पुस्तक में 182 पृष्ठ पर इसका खण्डन करते हुए लिखते हैं कि ऋक् वेद, यजुर्वेद, सामवेद या उस काल के ब्राह्मण ग्रंथों में कहीं भी आदमी की बलि का ज़िक्र नहीं आया है। केवल शतपथ ब्राह्मण में कुछ वर्णन है जिससे प्रतीत होता है कि शायद हिन्दुस्तान के मूलवासी भील और संथाल जाति ने यह जुड़वा दिया होगा क्योंकि अगर प्राचीन काल में आदमियों की बलि दी जाती होती तो ऋग्वेद में भी इसका वर्णन अवश्य होता।

यद्यपि यज्ञ बहुत तरह के हैं परन्तु विशेष कर निम्नलिखित ही ज़्यादा प्रचलित थे। वर्ष पूर्णमास-अर्थात् पूर्णमासी और दूज के दिन जो देवताओं के वास्ते पूर्णमासी और दूज को होता था क्योंकि हिन्दू इन दोनों दिनों को अब तक पवित्र मानते हैं। पिंड पितृ यज्ञ अर्थात् मृतक पूर्वजों के वास्ते चौदस व अमावस के दिन यज्ञ किया जाता था जिसे अब श्राद्ध कहते हैं। इसमें अपने मष्तक पूर्वज़ो की स्मृति में हर साल अपने भाई–बन्धुओं और ब्राह्मणों को खाना खिलाया जाता था। एक वह श्राद्ध जो मृत्यु के समय किया जाता है, दूसरा वह जिसको एकोदिष्ट कहते हैं जो हर साल मष्त्यु की तिथि पर किया जाता है, तीसरा पार्वण श्राद्ध जो किसी पर्व पर किया जाता है जैसा कि कनागत। एक वह जो विवाह के समय किया जाता है जिसको नान्दिमुख श्राद्ध कहते हैं। यह रस्म केवल हिन्दुस्तान में ही नहीं थी बल्कि यूनान और फारस में भी होती थी (मैक्समूलर, व्हट इंडिया टीच अस, पेज 22)।

एक अग्निहोत्र यज्ञ है जो प्रत्येक प्रातः और सायं काल घर की पवित्र अग्नि में किया जाता है। एक चतुर्मास यज्ञ जो कि हर चौथे महीने किया जाता है अर्थात् हर ऋतु के आरम्भ में। एक अग्निष्टोमयज्ञ

जो पाप से मुक्ति के लिए किया जाता है। एक राजस्व यज्ञ जो कि राजा महाराजा युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए करते थे। एक अश्वमेध यज्ञ जो कि विजय प्राप्ति के बाद चक्रवर्ती राजा करता था और जिसमें घोड़े की बलि दी जाती थी। एक अग्निवाहन यज्ञ जो कि पवित्र अग्नि प्रज्वलित करने के समय या विवाह होने पर पूर्णमासी या दूज को किया जाता है।

इन यज्ञों के अतिरिक्त द्विज अर्थात् ब्रह्मण और वैश्य को हर दिन पांच महायज्ञ करने अनिवार्य थे (मनु, अध्याय तीन, श्लोक 69)। परन्तु कम से कम वेद का वह उत्तम मंत्र जिसको गायत्री कहते हैं और ओम् का उच्चारण आवश्यक था जिसके करने से उसके वे पाप जो उसने अनजाने में किए हों दूर हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त पांच महायज्ञ और भी किये जाते थे जिनका वर्णन निम्नलिखित है :– (1) ब्रह्म यज्ञ जिसको अहुत भी कहते हैं। इसका मतलब है वेद मंत्र गायत्री का जाप करना। (2) पितृयज्ञ जिसको होत भी कहते हैं। इसमें पितरों को पानी दिया जाता है जिसको तर्पण कहते हैं। (3) देवयज्ञ जिसको परहोत भी कहते हैं इसमें देवताओं के लिए हवन किया जाता है। (4) भोतयज्ञ जिसको ब्रह्म होत भी कहते हैं। इसमें पशुओं को भोजन दिया जाता है जिसको बशुदेव कहते हैं (5) मनुष्ययज्ञ जिसको प्राषियत भी कहते हैं। इसमें अतिथियों को आदर पूर्वक भोजन खिलाया जाता है जिसको अतिथिपूजन कहते हैं। ऊपर लिखे गए पांचों यज्ञ भोजन करने से पूर्व प्रातः करने अनिवार्य होते हैं।

जनेऊ जिसे यज्ञोपवीत कहते हैं। इसमें दो गिरहें होती हैं। ये गले में कंधे पर डाला जाता है ताकि आदमी भूल न जाये और उसे दो कर्तव्य, देव यज्ञ और पितृ यज्ञ प्रति दिन करने हैं। इन यज्ञों का नितनियम से करना आवश्यक माना गया है। इनके लिए विशेष समय निर्धारित होता है और समय को सही करने के लिए ज्योतिष ज्ञान की आवश्यकता हुई जिसके कारण इसमें बहुत विकास हुआ। इसके पश्चात् जब हिन्दू आर्यों की यज्ञ इत्यादि से अधिक संतुष्टि नहीं हुई तो उन्होंने फिर धार्मिक समस्याओं पर विचार करना शुरू किया। उन्होंने चार बातों को विचार के काबिल समझा और इन्हें हल करने के

प्रत्यन किये । प्रथम परमात्मा, द्वितीय सृष्टि, तष्तीय आवागमन और चौथा मोक्ष। इन चारों को जानने और समझने के लिए उपनिषद् का संकलन हुआ।

**प्रथम** उपनिषदों में यह स्पष्ट किया गया कि इस सारी सृष्टि में परमात्मा ही व्यापक है, अर्थात् इस विचार का खण्डन किया गया जिसमें रचयिता और रचना को एक दूसरे से अलग व्यक्त किया गया था। बहुत से उदाहरण दे कर यह साबित किया गया कि जीव, आत्मा और परमात्मा एक ही हैं। छांदोग्य और केन उपनिषदों में इसका विस्तार पूर्वक वर्णन है, जैसा कि नीचे दिये गए उदाहरण से स्पष्ट किया गया है कि अगर पानी में नमक डाला जाए तो पानी के प्रत्येक भाग में नमक ही नमक होता है, यद्यपि वह दिखाई नहीं देता, परन्तु वह पानी में मौजूद होता है। इसी प्रकार से परमात्मा भी हर स्थान और हर वस्तु में व्याप्त है। सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन करने में बहुत सोच विचार से काम लिया गया परन्तु यह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण विषय है इसलिए इसके बारे में विभिन्न विचार हैं। एक उपनिषद् में लिखा है कि परमात्मा ने आरम्भ में पानी की फिर आग की और बाद में धरती और सृष्टि की रचना की। आवागमन के बारे में बताया गया कि मृत्यु के बाद जीवात्मा एक देह को छोड़कर तुरन्त दूसरी देह में चली जाती है, उस कीड़े की भान्ति जो पहले अपना मुंह दूसरी जगह रख कर पिछला हिस्सा उठाता है। आवागमन की पुष्टि में जीवन में होने वाले दुःख और सुख को पिछले जन्म का कर्म बताया गया है। मोक्ष का अर्थ है जीवात्मा की अन्तिम स्वतन्त्रता, जिसके बाद जीवात्मा किसी देह में प्रवेश नहीं करेगी। इसके बारे में बताया गया है कि यदि मनुष्य अपनी इच्छाओं, वासनाओं और भावनाओं का त्याग करके परमात्मा का ध्यान करे तो उस को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

इससे पहले हम बता चुके हैं कि ब्राह्मण और उपनिषदों इत्यादि पुस्तकों की भाषा को सूत्रों में संक्षेप में वर्णित किया गया ताकि ये तुरन्त मौखिक याद किये जा सकें। ये सूत्र तीन प्रकार के होते हैं, श्रौत सूत्र, धर्म सूत्र और गृह्य सूत्र। ये कल्प सूत्र के नाम से विख्यात हैं और इनकी संख्या आरम्भ में निम्नलिखित थी, ऋग्वेद के

पांच, कृष्णयजुर्वेद के सत्ताईस, शुक्ल, सामवेद के बारह और अथर्ववेद के नौ सूत्र थे, जिनको चरण व्यूह कहा जाता था। परन्तु अब इनकी संख्या निम्नलिखित है :– ऋग्वेद के दो अर्थात् आश्वलायन, शांखायन हैं। तीन सामवेद के सम्बंध में हैं :– मासका, लतीउयान और द्राह्यायण। कृष्ण यजुर्वेद के चार हैं :– बौधायन, भारद्वाज, आपस्तंब और हिरण्यकेशि। शुक्ल यजुर्वेद का एक अर्थात् कात्यायन। धर्म सूत्र चार हैं। ये दैनिक कार्यों यानी चरित्र व दूसरे नियमों से सम्बधित हैं ऋग्वेद का वशिष्ट,साम वेद का गौतम और कृष्णयजुर्ववेद का बौद्धायन और आप स्तम्भ है

तीसरे गृह्य सूत्र घरेलु रस्मो रिवाज से सम्बंधित हैं। ऋग्वेद के गृह्य सूत्र शांखायन और आश्वलायन हैं। शुक्ल यजुर्वेद के गृह्य सूत्र पारस्कर है

उपनिषदों के कुछ समय बाद हिन्दुओं के दिल में बहुत से दार्शनिक विचार उत्पन्न हुए और उन्होंने सृष्टि की उत्पत्ति, आत्मा और प्रकृति के जीवन और मृत्यु के बारे में विचार करना आरम्भ किया तथा तर्क देकर इनको साबित करने के कोशिश की। इस सम्बन्ध में छः शास्त्र संकलित किये गए, जो इस प्रकार से हैं : सांख्यशास्त्र, जिसको कपिल मुनि ने बनाया, योग शास्त्र जिसको पतंजलि मुनि ने, न्याय शास्त्र जिसको गौतम मुनि ने, वैशेषिक शास्त्र जिसे कणाद मुनि ने, पूर्व मीमांसा को जैमिनी ने और उत्तर मीमांसा जिसको बादरायण व्यास जी ने बनाया।

अब हम इन शास्त्रों के मूल सिद्धांतों के सम्बंध में संक्षिप्त रूप से व्याख्या करेंगे। कपिल मुनि का सांख्यशास्त्र आत्मा का आवागमन उपनिषदों की भांति ही मानता है और इसका विचार है कि आत्मा कर्मों के अनुसार जन्म लेती है। इसका उद्देश्य मनुष्य को शारीरिक, मानसिक, आत्मिक दुःखों से बचाकर मुक्ति प्राप्त करवाना है। इसके अनुसार सोच–विचार और ज्ञान मुक्ति का माध्यम है। महात्मा बुद्ध भी इसी धर्म का अनुयायी हुआ है जो कि लगभग कपिल मुनि से सौ वर्ष बाद उत्पन्न हुआ था। उसके अनुसार यज्ञ इत्यादि से मुक्ति पाना असम्भव है। सांख्य सूत्र कपिल मुनि के बनाए हुए हैं। सांख्यसार

प्रवचन और सांख्यकारिका में कपिल मुनि के दर्शनशास्त्र और मूल सिद्धान्तों का वर्णन है। कपिल मुनि का विचार है कि जीव और प्रकृति सदा रहने वाले हैं और सारी चीज़ें प्रकृति से उत्पन्न हुई हैं, उसके विचार में जीव अनादि हैं और इनकी संख्या अनगिनत है।

पतंजलि मुनि ने अपने दर्शन शास्त्र की योग सूत्रों में व्याख्या की है। योग शास्त्र को 194 विधियों में विभाजित किया है जिनके चार भाग बनाए गए हैं। पहला भाग समाधि पाद कहलाता है और इसमें 51 विधियां हैं, जिनमें ध्यान करने की प्रणालियां बतलाई गईं हैं। दूसरे भाग में 55 विधियां हैं, इसको साधना पाद कहते हैं और इसमें अभ्यास और ध्यान लगाने का तरीका बतलाया गया है। तीसरा भाग विभूति पाद कहलाता है, इसमें भी 55 विधियां हैं जिनका प्रयोग अद्‌भुत चमत्कार और शक्ति प्राप्त करने के लिए होता है। चौथा भाग कैवल्य पाद कहलाता है जिसमें 33 विधियां हैं, इसमें आत्मा को सांसारिक सम्बन्धों से अलग करने के तरीके बतलाए गए हैं। योगशास्त्र मुक्ति को प्राप्त करने का आभ्यासिक तरीका बतलाता है। इसके अनुसार इच्छाओं को हटाकर परमात्मा में दिन–प्रतिदिन ध्यान लगाने से सारे दुःख, कष्ट दूर हो जाते हैं और अंत में मुक्ति प्राप्त होती है। इसके दूसरे मूल सिद्धान्त सांख्यशास्त्र के अनुसार ही हैं।

न्याय शास्त्र को संकलित करने वाला गौतम मुनि है, न्याय सूत्र इसी मुनि के बनाए हुए हैं। न्याय शास्त्र की पांच पुस्तकें हैं जो कि एक–एक, दो–दो भागों में विभाजित हैं और वे भाग अध्यायों में बांटे गए हैं। न्याय शास्त्र में जानने के योग्य व प्रमाण करने के योग्य आत्मा, शरीर और इन्द्रियां, जो महसूस करती हैं। मन, बुद्धि उत्पत्ति, पापं, आवागमन, अजर, दुःख, मोक्ष को चार तरह के प्रमाणों से प्रमाणित किया जा सकता है, अर्थात् प्रत्यक्ष प्रमाण, अनुमान प्रमाण, उपमान प्रमाण और शब्द प्रमाण। तर्क–वितर्क के लिए न्याय शास्त्र में 16 पदार्थ अर्थात् "प्रमाण, प्रमेह, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धान्त, अव्यूह, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेतुभास, छल, जाति और निग्रह" जानने आवश्यक बतलाए गए हैं। आत्मा के बारे में न्याय शास्त्र कहता है कि आत्मा प्रत्येक शरीर में भिन्न है। शरीर और इन्द्रियां भी अलग अलग

हैं परन्तु ज्ञान आत्मा में है और प्रत्येक आत्मा सदा रहने वाली और असीमित है, वह अपने अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार दूसरे स्थान पर जाती है। यहां तक तो गौतम भी कपिल के सांख्य शास्त्र के साथ सहमति रखते हैं परन्तु न्याय शास्त्र कहता है कि परमात्मा केवल एक ही है और वही सदैव ज्ञान का स्थान है तथा वह सारी वस्तुओं का बनाने वाला है। शरीर निष्प्राण वस्तु है और पांचों इन्द्रियां भी निष्प्राण हैं। मन इन्द्रियों का एक हिस्सा है। इन्द्रियों को सुगन्ध, स्वाद, रंग, छूने और ध्वनि से अनुभूति होती है। आवागमन का अर्थ है आत्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करना। कष्ट पूर्व में की गई बुराई का परिणाम है और वह बुराई 21 प्रकार की होती है जिससे ये कष्ट होते हैं। आत्मा ज्ञान से न कि कर्मों से मोक्ष प्राप्त कर सकती है। हिन्दुओं के यहां वादविवाद पांच विधियों से प्रमाणित किया जाता है : प्रतिज्ञा, हेतु (दलील), उदाहरण, उपन्याय, और निगमन (नतीजा)।

कणाद ऋषि ने वैशेषिक शास्त्र बनाया है। इसके और न्याय के मूल सिद्धांतों में केवल थोड़ा ही अन्तर है। यह लगभग न्याय शास्त्र का पूरक है। कणाद ऋषि के अनुसार सम्पूर्ण प्रकृति कणों का संगठन है। वह कणों को सदैव रहने वाला मानता है। जब कणों का संगठित रूप नष्ट होता है तो ये कण एक दूसरे से अलग हो जाते हैं, वे कण जो सूर्य में दिखते हैं, कणों का छोटे से छोटा भाग होते हैं। परन्तु यह छोटा कण भी कई कणों का संगठन है। सम्पूर्ण मूलकण में कोई दूसरा कण सम्मिलित नहीं होता। पहले दो कण मिलते हैं, फिर दूसरे में तीसरा कण मिलता है। सूर्य की किरणो में जो कण दिखाई देते हैं उसमें से प्रत्येक कण में छः कण होते हैं। इस प्रकार कणों के एक–दूसरे में सम्मिलित होने से बड़े बड़े कण बन जाते हैं और अन्ततः धरती बन जाती है। इसलिए धरती, धरती के कणों से जल, जल के कणों से अग्नि, अग्नि के कणों से वायु आकाश बना हुआ है।

कणाद ऋषि ने पदार्थ के सात रूप कहे हैं। पहला द्रव्य, दूसरा गुण, तीसरा कर्म, चौथा समूह, पांचवां नशीश (विशेषता), छठा मिलाप और सातवां अभाव। इस ऋषि के अनुसार द्रव्य की संख्या नौ है धरती, जल, प्रकाश, वायु, आकाश, समय, सिम्त (दिशा), आत्मा और

मन। यह सारे द्रव्य कणों के रूप में सदैव रहते हैं, परन्तु चलने वाले हैं। जब ये द्रव्य इकट्ठे होते हैं, तब उस समय ये नष्ट होने के योग्य हो जाते हैं। आकाश जो ध्वनि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाता है इसके कण नहीं होते। लेकिन यह असीमित और हमेशा रहने वाला है। समय, सिम्त और दूरी द्रव्य नहीं है, इसलिए वे कणों का समूह नहीं है, परन्तु वह भी असीमित और हमेशा रहने वाला हैं। आत्मा और मन भी हमेशा रहने वाले है। कणाद ऊपर लिखित नौ द्रव्यों की 17 विशेषताएं बतलाता है अर्थात् रंग, स्वाद इत्यादि। इनके वैशेषिक शास्त्र को दर्शन ज्ञान नहीं समझना चाहिए, बल्कि इसको प्राकृतिक विज्ञान कहना चाहिए। क्योंकि इसमें प्रकृति और इसकी शक्तियों इत्यादि के संगठित और अलग होने के सिद्धान्त और विधियां बतलाई गईं हैं।

पूर्व मीमांसा के सूत्र जैमिनि के बनाये हुए हैं। वे बारह भागों में बांटे हुए हैं और साठ अध्यायों में विभाजित किये गए हैं। पूर्व मीमांसा यज्ञ और रस्मों को करने की विधि बतलाता है। इन सूत्रों पर सरस्वती भट्ट और कुमारिल भट्ट ने व्याख्या लिखी है। पहले भाग में कर्तव्यों का वर्णन किया गया है। दूसरे, तीसरे और चौथे भाग में रस्मों का वर्णन है, और पांचवें में इनको अदा करने की विधि बतलाई गई है। छठे हिस्से में इन रस्मों की किस्में, जो किस के मुताबिक हों बतलाई गई हैं। सातवें और आठवें भाग में नसीहतें हैं और नौवें में उदाहरण। दसवें में वे–वे चीज़ें हैं जिससे व्यक्ति को अलग रहना चाहिए। ग्यारहवें में इन रस्मों के फल या परिणाम के बारे में बताया गया है। बारहवें भाग में अद्भुत शक्ति और उसके फल का वर्णन है। पूर्व मीमांसा में वेद के दर्शनशास्त्र का वर्णन किया गया है। इनका वही नियम है जैसा कि पुराने ज़माने में यज्ञ इत्यादि करने से मोक्ष प्राप्त करने का था। पूर्व मीमांसा को रस्मों और मंत्रों तक ही सीमित रखा गया है। इसमें परमात्मा का ज़िक्र नहीं है केवल मंत्र ही को देवता माना है।

उत्तर मीमांसा के सूत्र बादरायण व्यास जी के बनाये हुए हैं। इसको ब्रह्म सूत्र कहते हैं। इसका दर्शनशास्त्र उपनिषदों के दर्शनशास्त्र के अनुसार है और इसी की यह पुष्टि करता है। यह चार भागों में बांटा

हुआ है और हर भाग को चार भागों में विभाजित किया गया है। आरम्भ में वह सृष्टि की माया (प्रकृति) का वर्णन करता है परन्तु सृष्टि का असली रचयिता ब्रह्म अर्थात् भगवान को बताता है, क्योंकि प्रकृति भी उसके द्वारा उत्पन्न हुई है। इसीलिए वह कहता है कि भगवान का ध्यान करना चाहिए ताकि मोक्ष प्राप्त हो।

**दूसरे भाग** में सांख्य योग वैशेषिक के दर्शनशास्त्र पर तर्क वितर्क किया गया है। सम्पूर्ण सृष्टि को ब्रह्म बतलाया है क्योंकि वह उसी से बनी है और परमात्मा ही इस सृष्टि और प्रकृति का रचयिता है। वह कहता है रचना और रचयिता में अन्तर नहीं किया जा सकता। वह उदाहरण देता है कि सागर एक ही है अर्थात् सब पानी ही पानी है चाहे वह लहर हो या झाग या बूंद इत्यादि यद्यपि वह अलग अलग रूप रखते हैं। एक उदाहरण वह और देता है। वह कहता है कि दूध से दही और घी बनते हैं परन्तु मूल रूप में वह दूध ही है। पानी से बर्फ बनती है परन्तु वह भी पानी ही है। इसी प्रकार सृष्टि भी ब्रह्म से उत्पन्न हुई है, इसलिए वह भी ब्रह्म (भगवान) है। वह कहता है कि आत्मा स्वतन्त्र है न कि पराधीन। आत्मा की विचलता अस्थाई है जैसा कि बढ़ई के हाथ में उसका यंत्र। वह परिश्रम करता है और दुःख पाता है। परन्तु जब वह अपने यंत्रों को रख देता है तो आराम से रहता है। इसी तरह आत्मा भी इन्द्रियों और अंगों के साथ रहने से विचलित होती है।

इन्द्रियो और अंगों से अलग हो जाने से अचल हो जाती है और आराम पाती है। आत्मा उसी ब्रह्म का अंश मात्र है जैसा कि एक छोटी चिंगारी एक बहुत बड़ी अग्नि का अंश होती है। जिस प्रकार सूर्य की छाया हिलते हुए पानी पर गिरने से हिलती हुई दिखाई देती है और दूसरे की छाया नहीं हिलती। इसी प्रकार एक मनुष्य का दुःख दूसरे को ज्ञात नहीं होता और न ही ब्रह्म को होता है।

**तीसरे भाग** में आत्मा के आवागमन, ज्ञान और मोक्ष प्राप्त करने अथवा परमात्मा की व्याख्या है। आत्मा मृत्यु के बाद सूक्ष्म शरीर के साथ एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करती है। मृत्यु के समय आत्मा को अपने अच्छे बुरे कर्म सब याद आ जाते हैं, उन कर्मों के

अनुसार आत्मा अच्छा या बुरा नया शरीर प्राप्त करती है। परन्तु परमात्मा पर सृष्टि के बंधनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, अर्थात् एक निर्मल शीशा किसी रंगदार वस्तु के निकट होने से रंगदार प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में उसमें उस रंग का कुछ प्रभाव नहीं होता इसी प्रकार ब्रह्म निर्मल रहता है जैसा कि सूर्य किसी छोटी बड़ी चमकदार वस्तु पर छोटा बड़ा प्रतीत होता है। परन्तु सूर्य के वास्तविक आकार में कोई बदलाव नहीं होता। इसी प्रकार ब्रह्म में भी कोई बदलाव नहीं आता।

**चौथे भाग** में पवित्रता और ज्ञान के फल का वर्णन है। ज्ञानी को अपने अच्छे बुरे कर्मों का फल नहीं भोगना पड़ता। आत्मा को जब अपने अच्छे–बुरे कर्मों के फल से मोक्ष मिल जाता है तो मृत्यु के बाद आत्मा ब्रह्म में लीन हो जाती है जिसको मोक्ष कहते हैं। मोक्ष की दो और किस्में भी बतलाई गई हैं। एक तो यह कि आत्मा ब्रह्म के निकट आ जाती है दूसरी जीवन मुक्त अर्थात् जीवित रहते हुए मोक्ष की प्राप्ति। यह मोक्ष की प्राप्ति योगी को होती है। ब्रह्म को वेदांत शास्त्र में सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सम्पूर्ण सृष्टि का रचयिता बताया गया है। वह एक ही है, असीम और कभी न बदलने वाला है। वह कोई गलती नहीं करता, उसका कोई भाग नहीं होता। वही सत्य, बुद्धि और प्रसन्नता है। वेदों के नियमों को प्रत्येक हिन्दू मानता है क्योंकि इसके वही नियम हैं जो कि वेद उपनिषदों में लिखित है। यह दर्शनशास्त्र उत्तम प्रकार का माना जाता है। अथवा विदेशों के लोग भी इसको उत्तम श्रेणी का मानते हैं।

डा0 मैक्समूलर अपनी पुस्तक "इण्डिया" के 254 वें पन्ने पर लिखते हैं कि इस दर्शनशास्त्र का जानना हर दर्शनशास्त्र के छात्र के लिये अनिवार्य है। डॉ0 शोपिनहॉर ने भी उपनिषदों के बारे में लिखा है "In the whole world there is no study beneficial as that of Upanisads. It has been the solace of my life and it will be solace of my death." अर्थात् सम्पूर्ण संसार में कोई ज्ञान ऐसा लाभदायक और ऊंचाई पर पहुंचाने वाला नहीं है जैसा कि उपनिषदों का अध्ययन। यह मेरे जीवन में मेरी शांति का कारण हुआ है और मृत्यु पर भी इससे शांति मिलेगी।

उस युग में जब कि हिन्दुओं का ध्यान यज्ञों की ओर से घट रहा था और वे आत्मा व परमात्मा के बीच सम्बंधों अथवा मृत्यु और आवागमन के बारे में विचार कर रहे थे और इस परिणाम पर पहुंचे थे कि तमाम वस्तुएं इसी एक परमेश्वर से उत्पन्न हुई हैं। उसी परमात्मा के ज्ञान से सब दुःख दूर हो सकते हैं। परन्तु यह विचार दार्शनिक और साधारण लोगों की समझ से बाहर था अथवा उस समय यज्ञ इत्यादि करने से लोगों का मोक्ष प्राप्त करने का विचार कम हो गया था और एक साधारण धर्म प्रणाली की आवश्यकता महसूस हो रही थी, तो उस समय कपिलवस्तु स्थान पर कपिल मुनि से एक शताब्दी पश्चात् और ईसा मसीह से 557 वर्ष पूर्व गौतम, जो कि बाद में बुद्ध के नाम से विख्यात हुए, ने राजा शुद्धोदन के घर में जन्म लिया। यह राजा शाक्य वंश के मुख्य थे। गौतम ने कपिल मुनि के दर्शनशास्त्र की पुष्टि की और अपने पिता के घर से निकल कर शाक्य मुनि या बुद्ध के शीर्षक से साधारण जनता में, जो दुःखी थे और मोक्ष प्राप्त करना चाहते थे, चाहे वे धनी थे या निर्धन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र थे, बिना जाति पाति के भेदभाव के उन सब को अपने नये धर्म का उपदेश दिया। उसका धर्म केवल सम्पूर्ण हिन्दुस्तान में ही नहीं बल्कि दूर दूर के देशों में फैल गया था। उसका प्रथम नियम था कि अपने चालचलन को ठीक करके अपने आपको इच्छाओं से रोकना चाहिए, क्योंकि इसी के माध्यम से दुःख से निर्वाण प्राप्त हो सकता है। गौतम ने चार असली दुःखों का वर्णन करके धार्मिक नियमों के आठ मार्ग बतलाये हैं। ये निम्नलिखित हैं :—

जन्म का दुःख, वृद्ध अवस्था, मृत्यु और जिस वस्तु की इच्छा हो वह न मिले, जिसकी चाहना न हो वह उपस्थित हो तो यह भी एक प्रकार का दुःख है क्योंकि इस की उपस्थिति दुःख का कारण बनती है। जीवन की इच्छा करना, आराम की इच्छा करना और लाभप्राप्त करने की इच्छा दुःखों का कारण होते हैं।

दुःख इन इच्छाओं को दूर करने और भावों को रोकने से दूर हो सकता है।

वे मार्ग जिससे यह दुःख दूर हो आठ प्रकार के हैं। पहला

सही विश्वास रखना, दूसरा नेक विचार रखना, तीसरा सच बोलना, चौथा नेक चालचलन रखना, पांचवां रोज़ी रोटी का सही मार्ग अपनाना, छठा सही परिश्रम करना, सातवां सतर्क रहना, आठवां सही सोच विचार करना।

ऊपर लिखे गए सच्चे और सही मार्गों से गौतम बुद्ध का उद्देश्य यह है कि जीवन स्वयं ही दुःख है और जीवन की इच्छा करना दुःख का कारण है। गौतम के अनुसार जीवन की इच्छा न होना ही दुःख के न होने का माध्यम है और यह माध्यम पवित्र जीवन निर्वाह करने से प्राप्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त बुद्ध के सात परामर्श भी हैं जो उसने मृत्यु के समय अपने शिष्यों को दिये थे और जिन पर वह अनुपालन ज़रूरी समझते थे। उन के अनुसार अवलोकन चार भांति के होते हैं – पाप के विरुद्ध चार प्रकार के प्रयत्न होते हैं, पवित्रता और साफ सुथरा जीवन रखने के चार मार्ग हैं। नैतिक शक्तियां पांच प्रकार की हैं, इन्द्रियां पांच हैं, बुद्धिमत्ता सात प्रकार की है और सच्चाई के मार्ग आठ हैं।

दत्त अपनी इतिहास की पुस्तक के 344वें पन्ने पर इनकी व्याख्या इस प्रकार करता है –

चार भांति के अवलोकनों से अर्थ है शरीर, महसूस करने की शक्ति, विचार और तर्क पर विचार करना।

पाप के विरुद्ध चार भांति के प्रयत्न से मतलब है पाप से रोकना और उस कारण को रोकना जिससे कि पाप होता है, नेक होना और नेक काम बढ़ाने का प्रयत्न करना।

पवित्र जीवन व्यतीत करने के मार्गों से अर्थ है – इच्छा, परिश्रम, तैयारी और छानबीन जिनसे दिल शरीर पर भारी पड़ सकता है।

पांच नैतिक शक्तियों और पांच इन्द्रियों का अर्थ है – विश्वास, ईमान, विचार, ध्यान, सतर्कता और बुद्धि। सात भांति का अर्थ है – होशियारी, विचार, क्षमा, छानबीन, प्रसन्नता, आराम, चुप्पी। आठ प्रकार के मार्गों का वर्णन पहले ही हो चुका है। बुद्ध का कहना है कि ऊपर

लिखे गए परामर्शों का पालन करने का ढंग अपनाने से मनुष्य सब दुःखों से छूट जाता है और उसको निर्वाण प्राप्त होता है।

बुद्ध द्वारा बताया गया निर्वाण मृत्यु के बाद प्राप्त नहीं होता बल्कि इसकी प्राप्ति दिल में बसे पापों के समाप्त हो जाने से, जीवन और उसके मनोरंजन की इच्छा न होने से जीवन में ही हो सकती है क्योंकि दिल में पाप न होना और कोई इच्छा और भाव न होना सम्पूर्ण शांति, भलाई और बुद्धि प्राप्त करने में सहायक होते हैं। बुद्ध के अनुसार अतीत में स्वर्ग और शांति की प्राप्ति, भलाई का जीवन व्यतीत करने के सिवाय कुछ नहीं है। वह आत्मा और परमात्मा के बारे में कुछ नहीं कहते परन्तु दोबारा जन्म होने में विश्वास रखते हैं। वह जाति को व्यवसाय के अनुसार मानते हैं।

बुद्ध धर्म की पुस्तकों के बारे में यद्यपि ठीक–ठीक ज्ञात नहीं है कि कौन सी पुस्तक असली है परन्तु जैसा कि हम को इतिहास की पुस्तकों से मालूम हुआ है वह 'त्रिपिटक' के नाम से प्रसिद्ध हैं – सूत्र पिटक व विनय पिटक, अभिधम्म पिटक। सूत्र पिटक में बुद्ध के नियम और कार्यवाही बल्कि उनके स्वयं लिखित नियम हैं और विनय पिटक में साधारण कारोबार की फकीराना विधियां बतलाई गई हैं। अभिधम्म पिटक में मनुष्य की विशेषताएं और विभिन्न स्थानों में जीवन के नियम व तत्त्वों का वर्णन किया गया है। जैसा कि पहले वर्णन हो चुका है कि युग के आरम्भ में पहले तत्त्वों की पूजा वरुण, इन्द्र, अग्नि, सूर्य, मरुत् और अश्विनी इत्यादि नामों से होती थी और बाद में यज्ञ इत्यादि की विधियां आरम्भ हुई। इसके बाद उपनिषदों व शास्त्रों के युग में एक परमेश्वर की पूजा होती थी परन्तु यज्ञ इत्यादि का सिलसिला जारी रहा।

इसी समय के बीच बुद्ध धर्म हिन्दुस्तान में व्यावहारिक रूप में प्रचलित हुआ जिसने बलि और यज्ञ इत्यादि का सिलसिला छोड़ कर अपना नया धर्म चलाया और जीव को मारना बहुत बुरा माना। इसके पश्चात् पुराण धर्म प्रचलित हुआ। यद्यपि वह वेद के विरुद्ध नहीं है परन्तु उन्होंने प्राकृतिक तत्त्वशक्तियों को शरीर रखने वाले देवी देवता मान कर उनकी मूर्तियां और बुत बनाकर मन्दिर बनाने आरम्भ किये।

यह रस्म उन्होंने बुद्ध धर्म से प्राप्त की और इन देवताओं को छोटे दर्जे का माना अथवा परमेश्वर को, जैसा कि उपनिषदों में वर्णन किया गया है, सबसे बड़ा मानकर इसकी तीन शक्तियों ब्रह्मा, विष्णु और शिव अर्थात् ब्रह्मा पैदा करने वाला, विष्णु पालने वाला और शिव मारने वाला नाम रखे और इनकी मूर्तियां बनाकर पूजा आरम्भ कर दी। यद्यपि ये तीनों नाम पुराने ही हैं और वेद में इनका वर्णन है, जैसा कि वेद में ब्रह्म सावर्णि को ऋचा का मालिक बतलाया गया है।

उपनिषदों में ब्रह्म से परमात्मा ही अर्थ लिया गया है इसलिए पुराण वालों ने ब्रह्मा को उत्पन्न करने वाला कहा है। वेद में विष्णु सूर्य को कहते हैं जो हर वस्तु का रक्षक है और जिसके कारण हरेक वस्तु में जीवात्मा है, विष्णु को पुराण वालों ने पालनहार कहा है। वेद में पुराण वालों ने इसका नाम शिव अर्थात् मारने वाला रखा है।

वे देवियां जिनका वर्णन वेद में आया है उन को पुराण वालों ने इन तीन बड़े देवताओं की शक्ति (स्त्री) बताया है। वेद में प्रार्थना का मालिक बताया है। वेद में विष्णु को सूर्य यानी पालनहार देवता कहा है और सीता जिसको वेद में कृषि की मालिक बताया है उसको पुराण वालों ने लक्ष्मी का नाम दे कर विष्णु की शक्ति बताया है। शिव की शक्ति को उमा कहा है जो कि काली कराली इत्यादि सात अग्नियां मुंडक उपनिषद् में स्पष्ट की गई हैं। पुराण में रुद्र (शिव) को गर्जने वाला बादल अर्थात् बिजली कहा गया है। पुराण में इसलिए उमा, अम्बिका, काली, दुर्गा को शिव की शक्ति बताया गया है। पुराण में कहा गया है कि इन्हीं तीन बड़े देवताओं ने, समय की आवश्यकता के अनुसार मनुष्य और पशुओं के रूप में अवतार धारण किया है जिनका विवरण निम्नलिखित है :—

मत्स्य अवतार, कच्छप अवतार, वराह अवतार, वामनजी, नृसिंह जी, परशुराम जी, श्री राम चन्द्र जी, श्री कष्ष्ण चन्द्र, बुद्ध। परन्तु इन सब में अधिकतर कृष्ण अवतार और राम अवतार की आजतक हिन्दुस्तान में पूजा होती है। इसी प्रकार शिव, ब्रह्मा और विष्णु की पूजा भी होती है। इसके अतिरिक्त इनकी स्त्रियों की भी, जिनको शक्ति कहा जाता है विभिन्न नामों से पूजा की जाती है। इन सब की पूजा

के लिए हिन्दुस्तान में बहुत से मन्दिर पाये जाते हैं।

संख्या में पुराण 18 हैं। इन में देवी देवताओं की उत्पत्ति और पूजा का वर्णन इत्यादि किया गया है। यद्यपि इनमें बहुत कुछ बाद में जोड़ दिया गया प्रतीत होता है। पुराण तीन बड़े भागों में बंटे हुए हैं अर्थात् ब्रह्म, विष्णु और शिव। विष्णु से सम्बंधित पुराण निम्नलिखित हैं :– विष्णु पुराण, नारद पुराण, भागवत पुराण, गरुड पुराण, पद्म पुराण, वराह पुराण। शिव से सम्बंधित पुराणों का नाम ब्रह्माण्ड पुराण, ब्रह्म वैवर्त पुराण, मत्स्य पुराण, कूर्म पुराण, लिंग पुराण, वायु पुराण, स्कंद पुराण और अग्नि पुराण। ब्रह्म से सम्बंधित मार्कंडेय पुराण, भविष्य पुराण, वामन पुराण और ब्रह्म पुराण हैं।

यद्यपि पुराणों में बहुत कुछ वर्णन दुनियां की उत्पत्ति और इन के नष्ट होने का है परन्तु इसमें ऐतिहासिक घटनाएं और सूर्य वंश और चन्द्र वंश के पारिवारिक वृक्षों की सूचनाएं दर्ज हैं जिनका सम्पूर्ण वर्णन करना यहां आवश्यक नहीं परन्तु पाठकों के लिए कुछ जानकारी निम्नलिखित है :–

विष्णु पुराण में 23000 श्लोक हैं और ये 6 भागों में बांटे हुए हैं। पहले भाग में लक्ष्मी और विष्णु की उत्पत्ति और ध्रुव और प्रह्लाद भक्त की कथाएं हैं। दूसरे भाग में पृथ्वी के हालात और उसके सात द्वीपों, सात सागरों तथा हिन्दुस्तान व पाताल देश (अमेरिका) और सूर्य, चांद, सितारों का वर्णन किया गया है। तीसरे भाग में वेद का वर्णन और द्वापर युग में वेद के चार भाग कृष्ण द्वैपायन व्यास द्वारा करने का ज़िक्र है। इस के अतिरिक्त इस भाग में अठारह पुराणों के नाम और चार जातियों के कार्य और उन के देवताओं और घरेलू रस्में इत्यादि तथा बुद्ध और जैन मत की व्याख्या है। चौथे भाग में सूर्य और चंद्र वंशी परिवारों का हाल और मगध देश के राजाओं के बारे में लिखा गया है। पांचवें भाग में कृष्ण जी, जिन को हिन्दु अवतार मानते हैं, का ज़िक्र है। छठे भाग में विष्णु की पूजा और अंत में उनके माध्यम से मोक्ष प्राप्त करने का वर्णन है।

नारद पुराण में पच्चीस हज़ार श्लोक हैं। इस में विष्णु की पूजा और हरि, जो विष्णु का दूसरा नाम है, का वर्णन है।

भागवत पुराण में अठारह हज़ार श्लोक हैं, इस को श्रीमद् भागवत भी कहते हैं। यह सब पुराणों में बड़ा माना गया है। इस में संसार और ब्रह्म की उत्पत्ति तथा वराह और कल्कि अवतार के हालात व सूर्य और चंद्र वंशी परिवारों से सम्बन्धित सूचना, विशेषकर श्री कृष्ण जी के उत्पन्न होने और उनके महत्त्वपूर्ण कार्यों का वर्णन है।

गरुड़ पुराण में उन्नीस हज़ार श्लोक हैं। इस में सृष्टि की उत्पत्ति, धार्मिक पाबंदियां व रस्मों का ज़िक्र है। इस के अतिरिक्त इस में ज्योतिष और खगोल विद्या, वैद्यकी तथा मृत्यु पश्चात् रस्मों का वर्णन है।

पद्म पुराण में पचपन हज़ार श्लोक हैं और यह पांच भागों में बंटा हुआ है। पहले भाग में सृष्टि की उत्पत्ति, दूसरे में पृथ्वी का हाल, तीसरे में स्वर्ग का हाल, चौथे में पाताल अर्थात् पृथ्वी के नीचे वाले भाग का वर्णन है। पांचवें भाग में विष्णु की पूजा का ज़िक्र है।

वराह पुराण में 24000 श्लोक हैं। उसमें विष्णु की पूजा का वर्णन उदाहरणों सहित दिया गया है।

मत्स्य पुराण में 14000 श्लोक हैं। इसमें विष्णु के मछली के रूप में अवतार लेने का वर्णन है। इसके अतिरिक्त विष्णु का मछली के रूप में मनु और तमाम सृष्टि के बीज को प्रलय से बचाने का हाल भी दर्ज है। इसमें संसार की उत्पत्ति और विभिन्न फिरकों और जातियों और शिव का उमा से विवाह होने का ज़िक्र तथा चाल चलन को अच्छा रखने वाले बहुत से परामर्श भी हैं।

कूर्म पुराण में 17000 श्लोक हैं और इसमें विष्णु का कछुए के रूप में अवतार लेने का ज़िक्र है। इस में शिव व दुर्गा की पूजा का वर्णन और मन्वन्तरों का हाल भी लिखा गया है।

लिंग पुराण में 11000 श्लोक हैं और इस में सृष्टि की उत्पत्ति और शिव को उस का उत्पन्न करने वाला बताया गया है। इस में शिव के चौबीस अवतार होने का वर्णन भी है।

वायु पुराण जिस को शिव पुराण भी कहते हैं, इस में 24000 श्लोक हैं और यह चार भागों में बंटा हुआ है। पहले भाग में सृष्टि की उत्पत्ति का ज़िक्र है, दूसरे भाग में कल्पों की व्याख्या और पितरों के परिवार वृक्षों और मन्वंतरों का ज़िक्र है। तीसरे भाग में सृष्टि के विभिन्न

रूपों तथा चौथे भाग में योग के प्रभाव और शिव की आराधना की उत्तमता का वर्णन है।

स्कन्द पुराण में 81100 श्लोक हैं और उसके कांशी कांड में काशी के मन्दिरों का वर्णन है तथा अधिकाल कांड में जगन्नाथ के मन्दिर, जो कि उड़ीसा में है, का ज़िक्र दर्ज है। इसके अतिरिक्त उसमें शिव और विष्णु की आराधना की कथाएं भी हैं। यद्यपि इसके अब सारे भाग नहीं मिलते।

अग्नि पुराण में 15400 श्लोक हैं। इसमें विष्णु के अवतार का और धार्मिक रस्मों, विशेष कर तांत्रिक विधियों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसमें शिव आराधना और राजाओं के युद्धों इत्यादि और वैद्यकी का वर्णन है।

ब्रह्माण्ड पुराण में बारह हज़ार श्लोक हैं परन्तु अब यह नहीं मिलता। अध्यात्म रामायण को इसका एक भाग कहा जाता है।

ब्रह्म दैवत पुराण में 18000 श्लोक हैं। इसके चार भाग हैं। पहले भाग में ब्रह्म का, दूसरे भाग में देवकी का, तीसरे भाग में गणेश का वर्णन और चौथे भाग में कृष्ण की व्याख्या है। इसमें अधिकतर कृष्ण लीला और वृन्दावन का वर्णन है।

मार्कण्डेय पुराण में 9000 श्लोक हैं। इसमें विभिन्न ऐतिहासिक कथाएं हैं जैसे कि हरिश्चन्द्र, बाणासुर, बलदेव, वशिष्ठ और विश्वामित्र की कथा।

इसके अतिरिक्त इसमें उत्पत्ति और मृत्यु, भूत और भविष्य में होने वाली घटनाएं और मन्वंतरों, विशेषकर दुर्गा का ज़िक्र भी है जिसका एक भाग चण्डी पाठ है।

भविष्य पुराण में 14500 श्लोक हैं और उसमें सृष्टि की उत्पत्ति और विभिन्न जातियों के भिन्न–भिन्न कार्य और सूर्य की आराधना का ज़िक्र है।

वामन पुराण में 10000 श्लोक हैं। विष्णु के 52 अवतार और नृसिंह जी की पूजा और पवित्र स्थानों के बारे में इसमें वर्णन है।

ब्रह्म पुराण में 10000 श्लोक हैं। इसमें संसार की उत्पत्ति, सूर्य वंशी व चंद्र वंशी परिवारों का हाल तथा सूर्य, विष्णु और जगन्नाथ

व शिव के मन्दिरों की व्याख्या की गई है। ऊपर बताए गए पुराणों के अतिरिक्त और भी पुराण हैं जैसे कि कालिका पुराण और देवी भागवत इत्यादि जिसकी संख्या 64 है। इसमें शिव की शक्ति और दुर्गा की आराधना की कई विधियां बताई गई हैं। इसमें हिन्दुओं के पतन के समय के दृश्य और उस समय की बुद्धि के नमूने को दर्शाने को प्राथमिकता दी गई है। इसको वाम मार्ग कहा जाता है। इसमें विभिन्न प्रकार की कथाओं में दुर्गा की उत्तमता दिखाई गई है। तन्त्र की कई विधियां भी बताई गई हैं। कुछ विधियां तो ऐसी घिनौनी और बेहूदा हैं कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। आज कल हिन्दुस्तान में ऐसे देवी देवताओं के बहुत से मन्दिर पाये जाते हैं जहां हर वर्ष हज़ारों लोग हिन्दुस्तान के विभिन्न स्थानों से हज़ारों रुपया खर्च करके जाते हैं और वहां इसे पुण्य का कार्य समझते हैं जिससे हिन्दुस्तान की गिरी हुई हालत का अन्दाज़ा हो सकता है कि इसके वासियों की कैसी स्थिति है। कहां तो हिन्दुस्तान में वे लोग होते थे जिन्होंने उपनिषदों और शास्त्रों में ऐसे गहरे विचार दिये हैं जिनकी आज तक संसार कद्र कर रहा है और कहां इस समय के लोग जो कि केवल मन्दिर में या किसी नदी पर जाना ही पुण्य का कार्य समझते हैं और वह खयाल करते हैं कि इससे सारे पापों से मुक्ति मिल जाएगी।

पुराणों के अतिरिक्त 18 धर्म शास्त्र हैं जिनको स्मृति कहते हैं। इनके नाम निम्नलिखित है :–

गौतम, वसिष्ठ, बौधायन, आपस्तम्ब, मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत, याज्ञवल्क्य, औशनस, आंगिरस, यम, संवर्त, कात्यायन, बृहस्पति, पाराशर, व्यास, शंखलिखित। इसमें से गौतम व वसिष्ठ, बौधायन और आपस्तम्ब तो आरम्भ काल अर्थात् वैदिक काल के हैं और मनुस्मृति बौद्धकालीन है। बाकी पुराण काल के हैं।

रियसात सिरमौर में बुद्ध धर्म के लोग नहीं है परन्तु जैन धर्म के लोगों की संख्या इस रियासत में 61 है। ये लोग नाहन नगरी में आबाद हैं। ये यहां के मूल वासी नहीं हैं। जैनमत उस समय से कुछ पूर्व उत्पन्न हुआ जब बुद्ध धर्म हिन्दुस्तान में आरम्भ हुआ। जैन धर्म की नींव पारसनाथ ने डाली थी जिसका हाल ठीक–ठीक ज्ञात नहीं हुआ

कि वह कहां पैदा हुआ था। कुछ इतिहासकारों का विचार है कि जैनमत बुद्ध धर्म की ही एक शाखा है परन्तु यह गलत है क्योंकि बुद्ध ने अपनी पुस्तक में एक निरग्रथ फिरके का वर्णन किया है। इस मत में बाद में बुद्ध धर्म के बहुत से नियम और हालात भी सम्मिलित हो गए हैं तथा बुद्ध और जैन धर्मों के बहुत से नियम मिलते हैं। इस धर्म को फैलाने वाला महावीर कोंडग्राम के एक क्षत्रिय के घर पैदा हुआ था। महावीर का पहला नाम वर्धमान या जाजी पुत्र था और वह 28 साल की आयु में घर से निकला और 12 वर्ष तपस्या करने के बाद जैन हुआ जिसको तीर्थंकर या महावीर भी कहते हैं। इसका नाम महावीर वर्धमान अर्थात् विकास करने वाला महावीर हुआ। यह 30 वर्ष तक अपने धर्म को फैलाता रहा। अन्त में इसकी पापा में मृत्यु हो गई। बुद्ध ने अपनी पुस्तकों में इनको निरग्रथ कहा है। बाद में इनमें दो फिरके हो गए, श्वेताम्बर (सफेद कपड़ों वाले)। दूसरे दिगम्बर (बगैर कपड़ों के)। श्वेताम्बर की इलहमी (आकाश से उतरी) पुस्तक का नाम अगम है और इसके 11 अंग हैं। दिगम्बरों की इलहमी पुस्तक के अंग नहीं हैं। अगम के सात भाग हैं और 11 अंग हैं। इनके 24 तीर्थंकर हुए हैं जिनमें से महावीर और पारसनाथ को उत्तमता दी गई है। जैनमत वाले बुद्ध धर्म की तरह वेद को नहीं मानते परन्तु वह आत्मा के आवागमन को मानते हैं। वे अपने कर्मों के अनुसार दुःख सुख और जन्म का लेना बताते हैं। इस धर्म में जीवों को दुःख पहुंचाने या इनको मारने की मनाही है। इनका विचार है कि प्रत्येक वस्तु, वनस्पति और पशुपक्षी ही नहीं बल्कि प्रत्येक पदार्थ जैसे कि हवा पानी इत्यादि, सब में जीव है।

# पंद्रहवां अध्याय

## मुसलमान

इस रियासत में मुसलमानों की संख्या 6414 है, जिसमें सुन्नी फिरके के लोग अधिक हैं। ये अधिकतर नाहन खास व तहसील नाहन और पौंटा में आबाद हैं। यद्यपि ये लोग इस रियासत के मूलवासी नहीं हैं परन्तु लम्बे समय से आसपास के क्षेत्रों जैसे कि अम्बाला और पंजाब से आकर यहां बस गए हैं। इसलाम धर्म का आरम्भ अरब देश में उस समय हुआ जब कि हिन्दुस्तान में बुद्ध धर्म फैल रहा था। इसके चलाने वाले हज़रत मुहम्मद साहिब अरब में 570 ई0 में पैदा हुए थे। उनकी मृत्यु मदीना में 632 ई0 में हुई। मुहम्मद साहिब की मृत्यु के बाद इस्लाम धर्म में बहुत उन्नति हुई थी। मुहम्मद की मृत्यु के सौ साल बाद उनके अनुयायियों ने अफ्रीका, मिस्र, स्पेन और फ्रांस के कई भागों को जीत लिया। एशिया में सबसे पहले फारस देश पर विजय प्राप्त करने के बाद वहां के निवासियों को मुसलमान बनाया और जिन लोगों ने इसलाम धर्म को कबूल नहीं किया उन्हें देश निकाला दिया गया। पारसी जाति के लोग उसी समय से बम्बई में आये हुए हैं। अरब वालों का फारस के सभी क्षेत्रों पर कब्ज़ा हो गया।

650 ई0 में अरबों के राज्यों की सीमा हिन्दूकुश पर्वत तक स्थापित हो गई। 664 ई0 में अरबों ने काबुल और उसके अनेक क्षेत्रों पर आक्रमण कर उन्हें जीत लिया और वहां के निवासियों को मुसलमान बनाया। तीन शताब्दियों तक मुसलमानों का राज्य और धर्म काबुल तक सीमित रहा। अरबों की आंख हिन्दुस्तान की उपजाऊ भूमि पर सदैव लगी रही और वे कभी–कभी इस पर आक्रमण करते रहे परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। अन्ततः 711 ई0 में अरबों ने खलीफा

वालिद के शासन काल में कासिम की अगवाई में, जो कि वालिद का भतीजा था, हिन्दुस्तान पर सिन्ध के रास्ते आक्रमण किया और सिन्ध घाटी को अपने अधीन कर वहां बस गए। हिन्दुस्तान में इसलाम धर्म के स्थापित होने की यही पहली घटना थी। यद्यपि हिन्दुओं ने कुछ समय बाद मुसलमानों को हिन्दुस्तान से निकाल दिया परन्तु इसलाम धर्म की थोड़ी बहुत नींव तो पड़ ही गई। हिन्दुस्तान के कुछ निवासियों ने इसलाम धर्म स्वीकार कर लिया था और बहुत से अरब आक्रमणकारी यहां बस गए थे। जैसे–जैसे इसलाम का शासन हिन्दुस्तान की सीमा में फैलता गया वैसे–वैसे मुसलमानों की संख्या यहां बढ़ती गई। अब मुसलमानों की संख्या हिन्दुस्तान में एक चौथाई है। इसलिए पाठकों की जानकारी के लिए इसलाम धर्म के नियम व उसको स्थापित करने वालों के हालात यहां दर्ज किये जा रहे हैं जो कि पाठकों की रुचि का कारण होंगे। हिन्दुस्तान में धर्म के लिहाज से दो ही बड़े फिरके रहते है अर्थात् हिन्दू और मुसलमान।

इसलाम धर्म को मुहम्मद साहिब ने, जिनको इसलाम वाले पैगम्बर मानते हैं, अरब देश में जो कि एशिया और अफ्रीका के मध्य स्थित है, छठी शताब्दी ईसवी में चलाया। अरब जो उस समय एक वीरान देश था वहां पर आम तौर पर वहशी लोग आबाद थे जिन में बुरी आदतें थीं। ये लोग कई बुरी रस्मों को मानते थे जैसे कि मनुष्य –बलि, पैदा होते ही लड़कियों को जीवित धरती में दबा देना, जूआ खेलना, शराब पीना इत्यादि। ये लोग आमतौर पर चोरी –डाका और लूटमार करते थे। इनमें सदैव दंगा–फसाद और खूनखराबा होता रहता था। ये लोग पशुओं, वृक्षों और झरनों इत्यादि की पूजा करते थे और हरेक परिवार का एक भिन्न देवता होता था जिसकी वे मूर्ति बना कर किसी सुरक्षित स्थान पर रखते थे और इसे पवित्र मानते थे। ऐसे पवित्र स्थान से कोई व्यक्ति वृक्ष नहीं काट सकता था।

मक्का में उस समय का एक कुआं है जिसका नाम चाह–ए–ज़मज़म है जो पवित्र माना जाता है। इस कुएं के पानी को हाजी लोग पवित्र मान कर घरों को ले जाते हैं। वहां एक काला पत्थर है जिसको संग–ए–असवद कहते हैं। इसको भी पवित्र मानते हुए

इसकी पूजा की जाती है। वहां पर खजूर का एक वृक्ष है जिसे भी पवित्र माना जाता है और इसको प्रतिवर्ष वस्त्रों से सजाया जाता है।

क़ाबा में मुहम्मद साहिब से पूर्व इब्राहिम और इसमाइल की मूर्तियां थीं जिन्हें अल्लाह की सन्तान माना जाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि शब्द अल्लाह की इजाद बेबिलोन शब्द ई–एल से हुई है। आल–लिला का अर्थ है "वो जो छुपा हुआ या सुरक्षित हो" (बेटनी की तशरीह इस्लाम अर्थात् इस्लाम की व्याख्या, पेज न0 60)। बटेनि साहब अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि हजाज़ और यमन में बहुत सी बस्तियां यहूदियों की थीं, खुदा के एक होने का विचार मुहम्मद साहिब को उन्हीं से मिला। इसलाम धर्म में अदम, नुहः, इब्राहिम, मूसा, ईसा, यूसुफ, जुब और मुहम्मद को पैगम्बर बतलाया गया है। इनमें ईसा और मुहम्मद के सिवाय बाकी सब यहूदी थे। मुसलमान यह खयाल करते हैं कि इन पैगम्बरों पर कोई न कोई पुस्तक आकाश से उतरी है। इन पैगम्बरों को पवित्र माना जाता है।

मक्का अरब वालों के बड़े–बड़े पूजा घरों में से एक था जहां कुरैश था। मुहम्मद साहिब का दादा अब्दाल मुतलिब कुरैश परिवार का मुख्य था। उसका छोटा बेटा अब्दुल्ला था जिसकी शादी वाहब की बेटी अमीना से हुई थी। इस विवाह से मुहम्मद साहिब 570 ईसवी में उत्पन्न हुए थे परन्तु अब्दुल्ला की मृत्यु मुहम्मद साहिब के बचपन के दिनों में ही हो गई थी। जब मुहम्मद साहिब (मुहम्मद का अर्थ है प्रशंसा किया हुआ) पांच वर्ष के हुए तो उन की माता का भी देहांत हो गया। जब उनके दादा की भी मृत्यु हो गई तो वह अपने चाचा अबु तलिब के पास रहने लगे।

जब मुहम्मद पच्चीस वर्ष के हुए तो उनके चाचा ने उनको एक काफिले के साथ, जो कि कुरेश परिवार की एक धनी बेवा स्त्री ख़दीजा का था, भेजा था। जब वे वापस सफलता के साथ लौटे तो ख़दीजा ने उनसे विवाह करने की इच्छा प्रकट की और फिर विवाह कर लिया। ख़दीजा के दो लड़के और चार लड़कियां उत्पन्न हुईं। इन में से फातिमा प्रसिद्ध थी। मुहम्मद साहिब एक बुद्धिजीवी व्यक्ति थे। उनको अरब देश से बाहर जाने और दूसरे धर्मों के बारे में जानने का अवसर

मिला था। वह अरब में प्रचलित रस्मो रिवाज़ को बुरा खयाल करने लगे और लोगों को इन रस्मों को छोड़कर नेक कामों की तरफ ध्यान देने का परामर्श देने लगे। यद्यपि वह अनपढ़ थे परन्तु उनको खुदा की ओर से बुद्धि मिली थी। वह अच्छे बुरे में अन्तर जान सकते थे। इसी कारण लोग उनको अच्छा मानते थे। एक बार मक्का का पवित्र पत्थर बाढ़ से असुरक्षित हो गया और यह सलाह हुई कि इसको इफाज़त के साथ दीवार में रखा जाये तो सबने विचार विमर्श के बाद यह निर्णय लिया कि मुहम्मद साहिब इसको उठायें। मुहम्मद साहिब ने अपना कपड़ा उतार कर पत्थर को उठा कर उस पर रखा और चार धर्मों के लागों से, जो वहां हाज़िर थे, कहा कि तुम में से एक–एक व्यक्ति कपड़े के चारों कोनों को पकड़ो और फिर मुहम्मद साहिब ने पत्थर को मुकर्रर की गई जगह पर रखा। इससे मुहम्मद साहिब और प्रसिद्ध हो गए।

इस घटना के बाद मुहम्मद साहिब मक्का के उत्तर की ओर जो हीरा नामक पहाड़ है, उस पर चले गए। वहां जाकर एकान्त में धर्म के नियमों पर सोच विचार करने लगे। विचार करते–करते उन को यह ज़रूरत महसूस हुई कि अरब देश में एक सुधारक की आवश्यकता है। मुहम्मद साहिब इस मामले पर इतना गहन विचार करते थे कि वह इसी में लीन रहते थे और कभी–कभी बेहोश भी हो जाते थे। इसके पश्चात् मुहम्मद साहिब ने एक नया धर्म निकाला जिसका नाम इसलाम रखा। उन्होंने अपने मित्रों और अपनी स्त्री व चचेरे भाई अली, गहरे मित्र अबु बकर, जो एक धनी सौदागर थे, उस्मान और उमर को अपने नये धर्म में शामिल किया। इन सबका एक फिरका बन गया।

कुछ समय पश्चात् मुहम्मद साहिब के चाचा हमज़ा और उमर ने यह नया धर्म स्वीकार किया परन्तु कुरैश परिवार ने, जो मक्का में रहता था, मुहम्मद साहिब के नये धर्म की ओर कोई ध्यान नहीं दिया बल्कि वह इस नये धर्म व सारे हाशमी परिवार के विरुद्ध हो गए मगर मुहम्मद साहिब ने इनकी कुछ परवाह नहीं की। वह अपने नये धर्म के नियमों को उन लागों को, जो क़ाबा में हर वर्ष यात्रा के लिए आते थे, बताते थे व खुदा के एक होने और मूर्ति पूजा के विरुद्ध उपदेश देते रहे। फिर बारह लोगों ने, जो कि मदीना से क़ाबा आये थे, यह नया

धर्म स्वीकार किया और इस को फैलाने का वादा करके मदीना को वापस गये। मुहम्मद साहिब ने अपने धर्म की शिक्षा देने के लिए हाशिम के पोते मुसाब को मदीना भेजा। मदीना में 72 आदमियों ने इसलाम धर्म स्वीकार किया और मुहम्मद साहिब से मदीना आने की इच्छा प्रकट की। मुहम्मद साहिब कुरैश परिवार के डर से अप्रैल 622 ईसवी में मक्का से मदीना को रवाना हुए। पहले मुहम्मद साहब और अबूबकर मक्का से कोहेतूर (तूर के पहाड़) पर गए फिर मदीना को चले गए जहां वह जून 622 ईसवी को पहुंचे। इस प्रकार उन की हिजरत (मक्का से मदीना को जाना) पूरी हुई। उसी समय से मुसलमानों का हिजरी सन् आरम्भ हुआ।

मदीना पहुंच कर मुहम्मद साहिब ने अनेक बादशाहों को इसलाम को स्वीकार करने और फैलाने के लिए पत्र लिखें। जब मदीना में मुहम्मद साहिब के अनुयायियों की संख्या बढ़ गई तो उन्होंने एक दो बार उन मक्का वालों पर, जो इनके विरुद्ध थे, आक्रमण किया। उन्होंने एक इलहाम (आकाशवाणी) प्रकट किया कि उन तमाम लोगों के साथ जो उनके धर्म के विरुद्ध हैं युद्ध करना उचित है (बेटनी की तशरीह इस्लाम, पेज 82)। उसी समय से मुस्लिमों मेंधर्म युद्ध जिसको जेहाद कहते हैं, प्रचलित हुआ। मुहम्मद साहिब और कुरैश परिवार, जो उनके विरुद्ध था, के बीच बहुत से धर्म युद्ध हुए। बहुत खून खराबे और युद्ध के बाद अरब देश में इसलाम धर्म फैलना आरम्भ हुआ। वे लोग जो मुहम्मद साहिब के अधीन हो गए, इसलाम धर्म स्वीकार करते गए। अन्ततः अरब देश के तमाम निवासियों ने धीरे–धीरे मुहम्मद साहिब को अपना मुखिया और रसूल (उपदेशक) स्वीकार किया। मुहम्मद साहिब ने अपने धर्म को बढ़ाने में बढ़–चढ़ कर कार्य किया।

मुहम्मद साहिब ने सीरिया अर्थात् श्याम देश के विरुद्ध आक्रमण करने का फैसला किया परन्तु वह इसी बीच बीमार हो गए और 28 जून 632 ईसवी को मदीना में उनका देहांत हो गया। अबूबकर, अली, ज़ैद, उस्मान और उमर मुहम्मद साहिब के साथी थे जिनको अस्हाब कहते हैं। मुहम्मद साहिब ने अपने बाद अबूबकर को

खलीफा बनाने के आदेश दिये थे। ख़दीजा सोदा, अबूबक़र की बेटी आईशा और मैरी इत्यादि मुहम्मद साहिब की स्त्रियां थीं। मैरी से इब्राहिम नाम का लड़का पैदा हुआ जिसका पांच वर्ष की आयु में देहांत हो गया था।

कुरान का अर्थ (कुर–आन) पढ़ना है। यह मुहम्मद साहिब के जीवन में कड़ीवार, जैसा कि अब उपलब्ध है, नहीं लिखा गया था। मुहम्मद साहिब की मृत्यु के बीस वर्ष पश्चात् इसे लिखित रूप में पूरा किया गया था। उस समय अरब देश में कागज़ इत्यादि उपलब्ध नहीं थे। जो कुछ मुहम्मद साहिब कहते थे उसको उनके साथी, विशेषकर अब्दुल्ला और ज़ैद, खजूर के पत्तों और चमड़े इत्यादि पर लिखते थे। कुरान का अधिकतर भाग मुहम्मद साहिब के जीवन में ही लोगों को मौखिक याद हो गया था परन्तु मुहम्मद साहिब की मृत्यु के बाद जब वे लोग, जिनको कुरान मौखिक याद था, युद्धों में मारे गए तो उमर को यह विचार आया कि ऐसा न हो कि सम्पूर्ण कुरान लोगों को भूल जाए। इसलिए उसने अबूबकर को, जो उस समय खलीफा था, परामर्श दिया कि वह सारी आयतों को एक जगह एकत्र करके पुस्तक रूप में संकलित करें।

अबूबकर ने ज़ैद को इस कार्य के लिए नियुक्त किया। उसने इन सब आयतों को, जो कि खलीफाओं के समय में संकलित की गई थी, एक जगह इकट्ठा किया परन्तु इनके सही होने में सन्देह हो गया। इस लिए 650 ईसवी में उस्मान ने फिर ज़ैद को एक सही कुरान की पुस्तक को संकलित करने के आदेश दिये। ज़ैद ने इनको दोबारा संकलित किया और जिस भाग पर सन्देह था उसको जला कर नष्ट कर दिया। ज़ैद ने कुरान की चार प्रतिलिपियां तैयार की थीं। इनमें से एक मदीना में रखी गई, एक दमिश्क में, एक प्रतिलिपि बसरा और एक कुफा को भेजी गई। ये उस समय मुसलमानों के बड़े नगर थे।

कुरान को मुसलमान बड़े सम्मान के साथ पढ़ते हैं। बिना हाथ धोये इसको छूते भी नहीं। इसको ऊंचे स्थान पर किसी ताक इत्यादि में रखते हैं और गले में भी लटकाते हैं। मुस्लिमों की प्रार्थना करने की विधि वैसे ही है जैसी कि यहूदियों और ईसाइयों की। वे खुदा को

रहीम (दयालु), मेहरबान और दोनों जहानों का मालिक और इंसाफ का मालिक इत्यादि गुणों से याद करके प्रार्थना करते हैं कि ऐ खुदा! तू हमको ठीक रास्ता दिखला और बता तू क्या पसन्द करता है ताकि हम वही करें। हमें वह भी बता जो तुझे नापसन्द है ताकि हम वह न करें। वे खुदा को असीम, अजर और अविभाजित मानते हैं और उसको उसी प्रकार से 99 नामों से याद करते हैं, उदाहरण के तौर पर रहीम, मेहरबान, पाक (पवित्र), वफादार, पैदा करने वाला, श्रम करने वाला, देने वाला, जानने वाला, न्याय करने वाला, बुद्धिमान, प्यार करने वाला, जीवित, प्रथम और अन्तिम इत्यादि–इत्यादि। वे इन नामों को बार–बार लेना अच्छा मानते हैं। आमतौर पर खुदा को मानने वाले लोग सुबह शाम इन नामों को लिया करते हैं जिनको वो "बज़िफा" कहते हैं।

मुसलमान खुदा को हर जगह हाज़िर नाज़िर (सर्वव्यापक), हमादां (सब कुछ जानने वाला), क़ादिर, मुतलिक़ (सर्वशक्तिमान) मानते हैं। वे कहते हैं कि खुदा ऐसा सूक्ष्म है कि उसको कोई देख नहीं सकता परन्तु वह सब को देख सकता है। उसने सबको पैदा किया लेकिन उसका कोई बेटा नहीं क्योंकि उसकी कोई स्त्री नहीं। उनका विचार है कि अच्छे–बुरे लोग खुदा ने बनाये हैं। जिनको वह बुराई में डालना चाहता है उनको वह मार्ग से भटका देता है और जिनको वह अच्छा जानता है उनको अच्छे रास्ते पर डालता है। मुसलमानों के प्रार्थना करने के पांच समय निश्चित हैं अर्थात् भोर, पूर्वाह्न, अपराह्न, सांयकाल, और रात।

प्रार्थना, जिसको मुसलमान नमाज़ कहते हैं, पहले योरुशलम यानी उत्तर पश्चिम की ओर मुंह करके पढ़ी जाती थी परन्तु बाद में मुहम्मद साहिब ने क़ाबा की ओर अर्थात् दक्षिण पश्चिम की ओर मुंह करके नमाज़ पढ़ना जारी किया परन्तु कुरान में पूर्व या पश्चिम की ओर मुंह करके नमाज़ पढ़ना ज़रूरी नहीं है बल्कि खुदा को सर्वव्यापक जानकर और खुदा और रसूल व कलाम मजीद (कुरान) पर निश्चय रखकर हरेक दिशा में नमाज़ पढ़ी जा सकती है। मगर अब मस्जिद में, जिसको खुदा का घरं कहते हैं, पश्चिम की ओर मुंह करके नमाज़ पढ़ते हैं।

कुरान में मुसलमानों के लिए बहुत से धार्मिक नियम बताये गये हैं अर्थात् खुदा को एक जानना, मुहम्मद को खुदा का रसूल (दूत) मानना, प्रतिदिन नमाज़ पढ़ना, उचित दान देना। रमज़ान के महीने में रोज़े (व्रत) रखना, जीवन में एक बार मक्का जाना। रमज़ान महीने में, जो मुस्लिमों के वर्ष का नौवां महीना है, चांद की पहली तिथि से एक महीने के लिए रोज़े रखे जाते हैं। रात के अन्त में सूर्य निकलने से पहले सेहरी (सर्गी) खाना उचित समझा गया है। रोज़ा रखने का सब के लिए आदेश है परन्तु बीमार, यात्री, बच्चा, गर्भवती स्त्री, दूध पिलाने वाली स्त्री के लिए रोज़ा आवश्यक नहीं है। रात्रि को नमाज़ के बाद उपासना में घुटने के बल बैठने का आदेश है।

मुहम्मद साहिब ने कहा है कि रमज़ान के मास में स्वर्ग के दरवाज़े खुले रहते हैं और नरक के दरवाज़े बंद हो जाते हैं। इसी महीने की 27वीं तिथि की रात को कुरान का अलहाम (आकाशवाणी) और एक प्रतिलिपि में आकाश से उतरना बताया गया है जहां से जबराईल फरिश्ते ने कुरान का एक भाग मुहम्मद साहिब को भेजा था। यह रात बड़ी अच्छी और पवित्र मानी जाती है और कहा गया है कि फरिश्ते और आत्माएं इस रात को खुदा की अनुमति से नीचे आते हैं।

रमज़ान के रोज़ों के बारे में बताया गया है कि वे लोग जो केवल रोज़ा रखते हैं और झूठ इत्यादि से परहेज नहीं करते तथा दान दक्षिणा नहीं देते, वे लोग बेकार ही भूखे प्यासे मरते हैं और अकारत में रात को उठकर प्रार्थना करते हैं क्योंकि इनको इसका कुछ फल प्राप्त नहीं होता। दान कई प्रकार के बताये गए हैं। एक तो ज़कात होती है जिसका अर्थ पवित्रता है। इसमें विभिन्न वस्तुओं से एक विशेष हिस्सा अलग करके दान में दिया जाता है। गुलाम (दास), भूमि व दूसरी वस्तुएं ज़कात में दी जा सकती हैं। ज़कात विशेष व्यक्ति या अलग–अलग तौर पर निर्धनों को खुदा की सेवा करने के लिए दी जाती है। दूसरी ख़ैरात जिसको सदक़ा कहते हैं। उसमें निर्धनों को खाना, कपड़े या नकद धन खैरात में दिया जाता है। कुरान में कहा गया है कि इन तमाम नियमों का पालन करने से स्वर्ग और न करने से नरक की प्राप्ति होती है।

स्वर्ग और नरक का वर्णन कुरान में इस प्रकार किया गया है कि स्वर्ग आठ हैं अर्थात् बाग–ए–जावीदानी (सदैव रहने वाला बाग़), रिहायश–ए–अमन (शांति से रहना), रिहायश–ए–आराम (आराम का रहन–सहन), बाग़–ए–अदन (स्वर्ग का बाग़)बाग–ए–पनाह (शरण लेने के लिए बना बाग़), बाग–ए–बहिश्त (स्वर्ग का बाग़)। बहिश्त में जाने वालों के लिए पहनने के लिए रेशमी वस्त्र और सोने के लिए आराम दायक पलंग। उनको खाने के लिए अच्छी किस्म के मेवे और चांदी के बर्तन तथा सुन्दर युवा कुमारी परियां मिलेंगी। वहां पर दूध, शहद और निर्मल पानी की नदियां होंगी। मौसम भी वहां पर मध्यम होगा। न अधिक गर्म और न अधिक सर्द। मनोरंजन और आराम की सभी सुविधाएं स्वर्ग में उपलब्ध होंगी।

नरक को कुरान में आग या जहन्नुम बताया गया है जिसके सात दरवाज़े या भाग हैं। जहन्ना, लाज़ा अर्थात् अग्निशिखा, हुतमा अर्थात् टुकड़े–टुकड़े करने वाली आग, सय़र अर्थात् उबालती हुई आग, सागर अर्थात् भूनने वाली आग, जहन्नुम अर्थात् रक्त पीने वाली आग, हबीया अर्थात् जहां पर गुफाएं हैं। दोज़ख (नरक) की आग ऐसी तेज़ होगी जिसमें कोई वस्तु न ठहर सकती है न बच सकती है। शरीर को यह आग काला कर देगी। पापियों को वहां न तो कोई ठण्डक मिलेगी न पानी प्राप्त होगा। दोज़ख का एक फरिश्ता होगा जो पापी को उसके पापों के अनुसार दोज़ख में डालेगा।

जीवन में एक बार हज करना हर मुसलमान के लिए अनिवार्य बताया गया है। यह मुसलमानों के 12वें महीने ज़ीलहज्जा में होता है यद्यपि साधारण यात्रा के वास्ते कोई विशेष समय निश्चित नहीं है। मक्का में जाकर यात्री पहले स्नान कर कुरान के दो रकू पढ़ कर एहराम, (जो कि दो चादरें होती हैं) से एक चादर को कंधों पर और दूसरी को कमर से बांध कर मक्का की मस्जिद में प्रवेश करते हैं और काबा के संग–ए–असवद (काले पत्थर) को चूमते हैं। इसके बाद काबा के गिर्द सात फेरे लगाकर सफा और मरवाह की पहाड़ियों के बीच सात बार दौड़कर उन पर चढ़ते हैं। फिर मीना नामक स्थान को जाते हैं और अराफात नामक पहाड़ पर चढ़ते हैं। वहां यात्री लब्बैक

(मैं हाज़िर हूँ) कहते हैं। इसके बाद मुज़दलीफा की मस्जिद का, जो अराफात और मीना के मध्य स्थित है, चक्कर काटते हैं तथा मीना व काबा के मीनारों की तरफ पत्थर फेंकते हैं। इसके पश्चात् मीना में भेड़ों और ऊँटों की बलि दी जाती है और इन का मांस निर्धनों और ज़रूरतमंदों में बांटा जाता है। इसलाह इत्यादि करा कर मक्का की यात्रा करते हैं और काबा का चुम्बन लेते हैं, जिसके बाद हज सम्पन्न होता है।

मक्के की मस्जिद अत्यन्त पवित्र मानी जाती है। यह 250 पग लम्बी और 100 पग चौड़ी है। क़ाबा का भवन 18 पग लम्बा और 14 पग चौड़ा है। यह 30 से 40 फुट तक ऊंचा है। अनुमान है कि इस भवन का निर्माण 1627 ई० में किया गया था। इसमें केवल एक दरवाज़ा है जो कि वर्ष में केवल दो या तीन बार खोला जाता है। क़ाबा का प्रसिद्ध पत्थर जो कि रंग में काला और अण्डे के आकार का है, इसका व्यास सात इंच है, इसकी ऊपरी परत समतल नहीं है, जिसमें लगभग दस बारह विभिन्न नाप और रूप के पत्थर मसाले से जोड़कर चांदी में मढ़े हुए हैं। इसकी रंगत गहरी लाल परन्तु स्याही की ओर झुकाव वाली है। यह प्रसिद्ध स्याह पत्थर क़ाबा के भवन के उत्तर पूर्व वाले कोने में धरती से चार या पांच फुट की ऊंचाई में एक छोटे से ताक या तीरे में रखा हुआ है। क़ाबा के उत्तर की ओर निचले स्तर की धरती है, जहां पर संगमरमर का फर्श है। ऐसा समझा जाता है कि इब्राहिम और इसमाइल ने क़ाबा के भवन के लिए गारा और चूना बनाया था।

इस स्थान पर नमाज़ पढ़ने को अच्छा माना जाता है। क़ाबा के भवन पर एक काले रेशमी कपड़े का गिलाफ चढ़ा हुआ है। कहते हैं कि यह क़ाबा को बुरी नज़र से बचाता है। प्रत्येक वर्ष यह गिलाफ मुसलमानों के पहले महीने में नया चढ़ाया जाता है। इस मस्जिद के साथ ही एक कुआं है जिसको ज़मज़म कहते हैं। कहते हैं कि यह कुआं ख़िज्र को मिला था। इस कुएं से हाजी लोग पानी लेते हैं और हाथ–मुंह धोकर इसका प्रयोग करते हैं। इस पानी के पीने को पवित्र माना गया है। कुछ मुसलमान इसको अपने घर लाते हैं और घर में

किसी की मृत्यु हो जाने पर इसका प्रयोग करते हैं। मस्ज़िद के निकट एक छोटा सा स्थान है जहां पर एक पत्थर है, इस पर एक पैर का निशान है। कहते हैं कि वह हज़रत इब्राहीम के पैर का चिह्न है। उन्होंने इस पत्थर पर खड़े होकर क़ाबा बनाया था। यह पत्थर सदैव ढका रहता है। यही एक मस्ज़िद है जिसको मुसलमान अति पवित्र मानते हैं और नमाज़ के समय इसकी ओर मुंह करके नमाज़ पढ़ते हैं। इस स्थान में आकर चाहे किसी ओर भी मुंह करके नमाज़ पढ़ें वह जायज़ माना जाता है।

आम तौर पर मुसलमान मक्का की यात्रा के बाद, सिवाय वाहबी फिरका के लोगों के जो मदीना की यात्रा को मूर्ति पूजा मानते हैं, मदीना जाते हैं। मदीना में मुहम्मद साहिब की मस्ज़िद एक बहुत बड़ा भवन है। यह 500 फुट लम्बी और 300 फुट चौड़ी है, इसका दरवाज़ा बहुत बड़ा और सुन्दर बना हुआ है। इसके किनारे पर एक भवन है जिसमें दरवाज़ा नहीं है। इसमें मुहम्मद साहिब, अबूबकर और उम्र की कब्रें हैं। इसके निकट ही एक और भवन है जिसमें फातिमा की कब्र है, यहां पर जाकर मुसलमान नमाज़ पढ़ते हैं।

कुरान में, जो कि, हज़रत मुहम्मद पर मदीना में नाज़िल (उतरी) थी, यह आदेश है कि इस्लाम धर्म को जेहाद (धर्मयुद्ध) के माध्यम से फैलाया जाए (बेटनी की इस्लाम की व्याख्या, पेज 157)। इसलिए मुहम्मद साहिब की मृत्यु के बाद भी अरब देश में एक बहुत बड़ा धर्मयुद्ध "खिलाफत" (खलीफो का शासन) के लिए हुआ। इसी प्रकार के धर्मयुद्ध इसलाम धर्म को फैलाने के लिए बाद में भी होते रहे, जिसके माध्यम से इसलाम धर्म सीरिया (स्याम), ईरान और मिस्त्र में फैल गया था। मुहम्मद साहिब के बाद पहले खलीफा अबूबकर थे जो 632 ई0 से 634 ई0 तक रहे। इनके बाद उम्र आये जो 634 ई0 से 644 ई0 तक रहे। उस्मान 644 ई0 से 656 ई तक खलीफा रहे। उनके बाद अली 656 ई0 से 661 ई0 तक खलीफा रहे। इसके पश्चात् कुरैश परिवार के एक ओमियाद नामक व्यक्ति ने इस परिवार में ख़िलाफत की नींव डाली। इस खानदान में 661 ई0 से 750 ई0, मीरवान की मृत्यु तक, खिलाफत स्थापित रही।

कुरैश और अली के परिवार वालों में बहुत युद्ध हुए। ओमियाद परिवार वालों ने मदीना को लूटा, मक्का को अपने अधीन किया और क़ाबा को जला दिया। हुसैन, जो कि अली का पुत्र था, का मोहर्रम मास अर्थात् अक्तूबर, 680 ईसवी को करबला के स्थान पर वध कर दिया गया। मुसलमान इस युद्ध को धर्म युद्ध मानते हैं तथा हसन व हुसैन को शहीद बताते हैं। उनकी स्मृति में मुसलमान, विशेष रूप से शीया, मोहर्रम मनाते हैं। वे दस दिन तक शोक मनाते हैं और ताज़िया निकालते हैं।

उमियाद परिवार ने इसलाम धर्म को हब्श (इथोपिया) की सामाओं तक, अफ्रीका और स्पेन के कुछ भागों में फैला दिया, परन्तु 720 ईसवी में अब्बास ने, जो मुहम्मद साहिब का मामा था ख़िलाफ़त का दावा किया। वह अली के पुत्र हुसैन की मृत्यु के पश्चात् मुहम्मद साहिब का एक निकट का रिश्तेदार था। उमियाद परिवार के खलीफा ने अब्श के साथ बहुत बुरा व्यवहार किया। यहां तक कि उन्होंने अब्श को अलग करने के प्रयत्न किये और यह ज़ाहिर कर दिया कि अली ने अब्श परिवार में से एक व्यक्ति अबू शाहिद को ख़िलाफ़त के लिए कहा हुआ है। परिणामस्वरूप एक बहुत बड़े युद्ध के बाद अब्ल–ए–अब्श कुफा के स्थान में खलीफा बना। इस युद्ध में लगभग 6 लाख लोगों की हानि हुई। इसके बाद शफ़दर खलीफा बना जिसने बग़दाद को अपनी राजधानी बनाया। इसके बाद हारूं रशीद 786 ईसवी से 809 ईसवी तक खलीफा रहे। इनके बाद इनका दूसरा बेटा मैमन खलीफा बना। मैमन के बाद934 ईसवी से 940 तक राज़ी खलीफा बने जो इस परिवार के अन्तिम खलीफा थे।

इसके बाद फातिमा के परिवार से एक व्यक्ति अब्दुल्ला ने, जिसको मेंहदी कहते हैं, 910 ईसवी में मिस्त्र में खिलाफत स्थापित की। यह मिस्त्र और अफ्रीका में 1171 ईसवी तक रही। एक अनुमान के मुताबिक उमियाद परिवार वालों की खिलाफत स्पेन में 775 ईसवी से 1236 ईसवी तंक रही। 1238 से 1292 तक सुलतान ग्रैंडे की खिलाफत रही। इस प्रकार कई स्थानों पर खिलाफतें रहीं। चंगेज़खां हुलगा जो मुगल बादशाहों में से था, ने बगदाद को 1458 ईसवी में अपने अधीन

कर लिया और अपनी खिलाफत स्थापित की और खलीफा बन गया। इसके पश्चात् उस्मान तुर्की ने रोम में अपना राज्य स्थापित किया और खिलाफत की नींव डाली। रोम का सुल्तान आज तक इसलाम धर्म का खलीफा है।

मुसलमानों में दो बड़े फिरके शिया और सुन्नी हैं जिनमें आपस में धर्म के बारे में मतभेद है। शिया का अर्थ है पीछे चलने वाला अर्थात् अली के आदेशों पर चलने वाला। सुन्नी उनको कहते हैं जो कि सन (पथ) को मानते हैं। ये मुहम्मद साहिब के बाद आने वाले चार खलीफ़ाओं को जायज़ खलीफा मानते हैं। ये 6 धर्म विधि पुस्तकों, जिन में कुरान भी सम्मिलित है, को धार्मिक पुस्तकें मानते हैं।

शिया लोग मुहम्मद साहिब के बाद केवल अली को जायज़ खलीफा मानते हैं क्योंकि वही मुहम्मद साहिब का रिश्तेदार था। वे दूसरों को जायज़ खलीफा नहीं मानते। वे अली की धर्म विधि की किताब को मानते हैं। अली को ही पहला इमाम भी कहते हैं। उनके विचार में वही एक इमाम थे। इसलिए शिया लागों को इमामिया भी कहते हैं। वे दूसरे ख़लीफ़ाओं की विधि की किताबों को नहीं मानते। वे कहते हैं कि इमाम को सही जानना ही इसलाम का उसूल है। वे यह भी कहते हैं कि फातिमा को, जो कि अली कि बीवी और मुहम्मद साहिब की बेटी थी, आकाशवाणी हुई थी। वे मिस्त्र के अन्तिम खलीफ़ा मेहंदी को जायज़ खलीफ़ा मानते हैं। वे सब के सब 12 खलीफ़ाओं को मानते हैं, जिन में अली और उसके पुत्र हसन और हुसैन तथा अली हुसैन के बेटे और उनके सात उत्तराधिकारी, जिनमें अन्तिम मुहम्मद अबू कासिम–जिन्हें मेहंदी भी कहते हैं – शामिल है। वे मेहंदी को अभी भी जीवित मानते हैं, यद्यपि वह दृष्टि से ओझल है परन्तु मुहम्मद साहिब की भविष्यवाणी के अनुसार अन्त में प्रकट होगा। इन बड़े सम्प्रदायों के अतिरिक्त मुसलमानों में कई और सम्प्रदाय भी हैं।

मुसलमानों के विश्वास के बारे में पहले व्याख्या की गई है कि वे खुदा को सर्वव्यापक मानते हैं और तमाम शक्तियों को, जो संसार में है, खुदा से जोड़ते हैं। उन के अनुसार तमाम पाप भी खुदा के ही उत्पन्न किये हुए हैं। वे कहते हैं कि जो व्यक्ति किसी वस्तु को अपने

साथ जोड़ता है उस को खुदा दंड देता है, उन के अनुसार खुदा ईनाम देने के मुकाबले में दंड बहुत देता है। उनका विचार है कि जो कुछ संसार में घटित होता है उसका करने वाला खुदा ही है तथा सम्पूर्ण सृष्टि उसके अधीन है।

पाप दो प्रकार के बताये गए हैं। गुनाह–ए–कबीरा (बड़े पाप) और गुनाह–ए–सग़ीरा (छोटे पाप)। गुनाह–ए–सग़ीरा वह है जो व्यक्ति के साथ पैदा हुए हैं। गुनाह–ए–कबीरा वो पाप हैं जो बहुत बड़े हैं। इनकी संख्या 17 बताई गई, जो निम्नलिखित हैं :– 1. बेईमानी, 2. खुदा के रहम से निराश होना, 3. खुदा के गुस्से से अपने आप को सुरक्षित समझना, 4. झूठी गवाही, 5. सदैव छोटे पाप करना, 6. किसी को जारकर्म की तोहमत लगाना, 7. झूठी सौगन्ध खाना, 8. मदिरापान करना, 9. जादू करना, 10. यतीमों का माल धोखे से लेना, 11. लूटना, 12. जारकर्म करना, 13. गुदा–मैथुन, 14. चोरी, 15. वध, 16. धर्मयुद्ध में कायरता दिखाना, 17. बुजुर्गों का आदेश न मानना। इन पापों के लिए नरक का दंड बताया गया है। इसलाम धर्म में नशीले पदार्थों का प्रयोग भी पाप बताया गया।

मुसलमानों में निम्नलिखित रस्में प्रचलित हैं। (1) मुसलमानों में जब बच्चे की आयु पांच वर्ष की होती है तो उसका ख़तना किया जाता है। खतना करने की अन्तिम आयु 12 वर्ष तक होनी चाहिए। यद्यपि कुरान में इसके लिए कोई आदेश नहीं है और न ही इसके बारे में कहीं ज़िक्र कि मुहम्मद साहिब का खतने के लिए आदेश था कि नहीं। 2. मुसलमानों में विवाह में बहुत ही कम रस्में होती हैं, यह आदेश है कि जब कोई विवाह करना चाहे तो पुरुष को स्त्री और स्त्री को पुरुष देख लेना चाहिए। स्त्री जवान हो तो उसकी इच्छा पूछनी चाहिए कि वह विवाह के लिए सहमत है कि नहीं। अगर वह अपनी असहमति प्रकट करे तो विवाह न किया जाये। कुरान में निकट के सम्बंधियों से जैसे कि चचेरे भाइयों, दूध के रिश्तों, सौतेले सम्बंधियों और साली इत्यादि से विवाह करना वर्जित है।

विवाह दुलहन के घर होता है। विवाह के समय कुरान का पहला भाग पढ़ा जाता है जिसको काज़ी पढ़ता है। इसके पश्चात्

दूल्हा को कुरान के पहले चार अध्याय पढ़ाये जाते हैं। मेहर जो कि आम तौर पर 28 रुपये का होता है और जो तलाक के समय स्त्री को मिलता है, निश्चित होता है। फिर दूल्हा विवाह करने पर अपनी सहमति ज़ाहिर करता है। इसके बाद काज़ी प्रार्थना करता है कि दूल्हा–दुलहन में सदैव प्यार रहे जैसा कि आदम और हव्वा में, इब्राहिम और सौदा में, यूसुफ और जुलेख़ा में, मूसा और सारा में, मुहम्मद और आईशा में तथा अली और फातिमा में रहा है। मुसलमानों में चार विवाह करने की धर्म अनुमति देता है, परन्तु ख्वासें (रखेलें) जितनी चाहे रख सकता है। औरत को उसके बुरे चालचलन पर या बगैर किसी कारण उससे नफरत करने पर तलाक दिया जा सकता है। पति–पत्नी को कहता है कि तुझको तलाक है। फिर तीन मास तक प्रतीक्षा की जाती है और पत्नी को बड़ी मेहरबानी के साथ रखा जाता है। औरत भी विशेष हालतों में तलाक प्राप्त कर सकती है। बिना तलाक दूसरे की स्त्री के साथ विवाह करना इसलाम में जायज़ नहीं है।

कुरान के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु का समय निश्चित है, परन्तु मृत्यु की इच्छा करना या उस के लिए साधन जुटाना पाप है। जब व्यक्ति मर जाता है तो उस समय कोई कुरान पढ़ा हुआ व्यक्ति बुलाया जाता है, जो कुरान का 36वां अध्याय आत्मा को शांति (सुअव) पहुंचाने के लिए पढ़ता है। इस समय कलमा भी पढ़ा जाता है। कुरान में यह आदेश है कि मृतक शरीर को जितना जल्दी दफ्न कर दिया जाए उतनी ही जल्दी मरने वाले को स्वर्ग की प्राप्ति होगी। मृतक शरीर को कब्र में चित्त लिटाया जाता है, उसका सिर उत्तर की दिशा में और मुंह मक्का की तरफ किया जाता है। उस समय कहा जाता है कि हम तुझ को खुदा के नाम और रसूल के धर्म पर धरती में दाखिल करते हैं। तब आत्मा की मुक्ति के लिए नमाज़ पढ़ी जाती है। उस समय वह व्यक्ति, जिसका सम्बंधी मर जाता है, कहता है कि मैं खुदा की मर्ज़ी पर रज़ामन्द हूँ। तीसरे दिन सम्बन्धी कब्र पर जाते हैं और कुरान से कुछ पढ़ते हैं। चालीस दिन के बाद चेहलम (चालीसवां) किया जाता है। कहते हैं कि मृत्यु के समय सफेद मुख वाला फरिश्ता

नेक व्यक्तियों की आत्मा को लेने के लिए आता है। वह अलग बैठ जाता है।

इसके पश्चात् मौत का फरिश्ता इस नेक आत्मा को खुदा की आज्ञा में रहने के लिए कहता है। जब शरीर से आत्मा निकल जाती है तो वह उसको ले जाता है, परन्तु दूसरे फरिश्ते उसको सम्भाल लेते हैं और स्वर्ग की तरफ ले जाते हैं। तब खुदा उसको लेता है तथा उसका नाम अच्छे मुसलमानों की किताब में लिखा जाता है। इसके पश्चात् आत्मा इसी शरीर में प्रलय के दिन तक आराम से रहने के लिए वापिस कर दी जाती है। इसी प्रकार बेईमान व्यक्ति के लिए काले मुंह वाला फरिश्ता आता है। इसके बाद जब मौत का फरिश्ता आत्मा को शरीर से बाहर आने के लिए कहता है और आत्मा को आकाश पर खुदा के पास ले जाता है, तब खुदा उसको धरती पर भेजने का आदेश देता है और वह उसी शरीर में दुःख और मुसीबतें सहन करने के लिए ज़ोर से धरती पर फेंका जाता है। वह प्रार्थना करता है कि प्रलय का दिन न आये क्योंकि प्रलय के दिन तमाम आत्माएं कब्र से उठेंगी और खुदा के प्रत्यक्ष में प्रस्तुत होंगी, जहां सबका न्याय होगा। आत्माओं को उन उसी शरीर के बारे में बताया जाएगा। जिनके कर्म नेक होंगे, उनको स्वर्ग और जिनके कर्म बुरे होंगे, उनको नरक मिलेगा।

मुसलमानों के विश्वास के अनुसार भविष्य का जीवन, दुःख और सुखदण्ड और सम्मान का मिलना सही माना जाता है और यह भी कहा जाता है कि जो खुदा चाहता है, वही मनुष्यों से करवाता है। इस विश्वास के अनुसार खुदा ने संसार को छः दिनों में, कुछेक के विचार में दो दिनों में उत्पन्न किया था। प्रथम उसने आदम को मिट्टी से बनाया और फरिश्तों को उसकी बंदगी करने के लिए आदेश दिया था, जिसको उन्होंने पूरा किया। परन्तु अबलीस (शैतान) ने आदम की बंदगी करने से इनकार किया। खुदा ने नाराज़ होकर शैतान को स्वर्ग से गिरा दिया था। खुदा ने फरिश्तों को आग से उत्पन्न किया, जो कि पवित्र हैं और खाने–पीने की कोई इच्छा नहीं रखते। वे सदैव खुदा के पास रहते हैं और बंदों की खुदा से सिफारिश करते रहते हैं।

व्यक्ति के दोनों कंधों पर एक-एक फरिश्ता सदैव प्रस्तुत रहता है। इनमें से एक मनुष्य के अच्छे कर्मों और दूसरा बुरे कर्मों का लेखा-जोखा रखता है। इनके अतिरिक्त एक फरिश्ता जिसका नाम रहरवां है, वह स्वर्ग में और दूसरा जिसका नाम मलिक है, वह नरक में रहता है। इनके अतिरिक्त दो और फरिश्ते जो बताए गए हैं वे मृतक के भूमि में दबाए जाने के तुरन्त बाद उसकी परीक्षा लेते हैं। जो खुदा और मुहम्मद रसूल को मानता है उसको आराम से वहीं सोने देते हैं यद्यपि उसको मारते हैं और हर प्रकार का दुःख देते हैं। ऊपर बताए गए इन फरिश्तों के अतिरिक्त दूसरे बड़े दर्जे के फरिश्ते भी माने गए हैं, अर्थात् जबराईल, मैकाईल, इजराईल, और असराफील। इन चार फरिश्तों के बारे में विचार किया जाता है कि खुदा की इन पर बड़ी मेहरबानी है। जबराईल फरिश्ते के द्वारा मुहम्मद साहिब के पास आकाशवाणी आती थी। मैकाईल फरिश्ते के पास सारी सृष्टि की देखभाल का ज़िम्मा है। इज़राईल मृत्यु का फरिश्ता है। असराफील फरिश्ता प्रलय के दिन बिगुल बजाएगा।

इन फरिश्तों के अतिरिक्त बहुत सी आत्माओं को घूमने वाली माना गया है, जिन्हें जिन्न कहते हैं। मुसलमान आम तौर पर उन फकीरों को जो कि मुझतहीद होते हैं, वली कहते हैं। इनका विचार है कि इन वलियों में कोई न कोई चमत्कार ज़रूर होता है, वे उनको बहुत सम्मान देते हैं। जब वे मर जाते हैं तो कब्रें बनाकर उनकी इबादत (पूजा) की जाती है, जिनको मक़बरा कहते हैं। मिस्र में अली के बेटे हुसैन की एक बहुत बड़ी कब्र बनी हुई है। इसमें हुसैन का सिर दफन किया हुआ बतलाया जाता है और वहां पर लोग यात्रा करने जाते हैं और चढ़ावा आदि चढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त मिस्र के प्रत्येक गांव में किसी न किसी वली का मकबरा है जिसकी किसी विशेष दिन यात्रा करते हैं। हिन्दुस्तान में भी बहुत स्थानों पर ऐसे मकबरे मौजूद हैं। हिन्दुओं के मुकाबले में मुसलमानों में त्योहार बहुत कम हैं परन्तु जो भी हैं, उनको बड़ा धार्मिक माना जाता है। एक त्योहार तैरम होता है, जो मिस्र और रोम में मनाया जाता है। यह मुसलमानों के अन्तिम माह में, जो चांद के हिसाब से होते हैं, दसवीं तिथि को होता है। यह मक्का

की यात्रा समाप्त होने पर किया जाता है और इसे बड़े उल्लासपूर्वक और प्रसन्नता से मनाया जाता है। उस दिन कोई मैदान नमाज़ के लिए चुन लिया जाता है और वहां ईमाम नमाज़ पढ़ाता है और बलि देने के लिए आदेश दिए जाते हैं। बलि हर कोई अपनी हैसियत के अनुसार देता है। कोई बकरा, कोई भेड़ और कोई ऊंट इत्यादि की बलि देता है, उस जीव का वध करने के बाद उसके मांस का एक भाग अपने परिवार के लिये रखा जाता है और एक भाग निकट सम्बन्धियों को बांट दिया जाता है। एक भाग फकीरों और निर्धनों में बांटा जाता है, इसको हिन्दुस्तान में ईद–उल–अज़हा कहते हैं। एक अन्य त्योहार रमज़ान मास के रोज़ों के बाद होता है, जो कि नया चांद देखने के दूसरे रोज़ मनाया जाता है, इसको ईदुलफितर कहते हैं। इसमें शहर से बाहर जाकर नमाज़ पढ़ते हैं और दान इत्यादि भी देते हैं और अपने लिए अच्छी दुआएं मांगते हैं तथा यार–दोस्तों को खाना देते हैं।

मिस्र में अधिकतर लोग अपने पूर्वजों की कब्रों पर जाते हैं और वहां ताड़ के पत्ते चढ़ाते हैं। मिस्र में एक त्योहार और मनाया जाता है जिसको कसूहा कहते हैं। उस दिन हुसैन की मस्ज़िद पर फरनूस चढ़ाया जाता है। एक और त्योहार इनके आठवें महीने शआबान की पन्द्रहवीं तिथि को मनाया जाता है। ऐसा विचार है कि उस दिन खुदा मनुष्यों के कर्मों और अगले साल होने वाले तमाम जन्मों और मृत्यु का हाल दर्ज़ करता है। पहले–पहले इस दिन रोज़ा रखा जाता था, परन्तु आजकल रोज़ा नहीं रखते। इस दिन रात को आतिशबाजी छोड़ी जाती है और हलवा इत्यादि बनाया जाता है। इस त्योहार को शब–ए–बरात भी कहते हैं। ईरान में नए साल की पहली तिथि को त्योहार माना गया है। वहां सिफर मास के अन्तिम बुधवार को भी त्योहार के तौर पर मनाते हैं क्योंकि उस दिन मुहम्मद साहिब की बीमारी को कम करने के लिए प्रार्थना की गई थी। उस रोज़ भोज आदि का भी प्रबन्ध होता है। रोम और मिस्र में मुसलमानों के तीसरे मास की 12 वीं तिथि को मुहम्मद साहिब की सालगिरह का त्योहार मनाया जाता है। हिन्दुस्तान में भी कुछ स्थानों में उस रोज़ दान आदि दिया जाता है। इनका पहला मास मुहर्रम है, जिसके पहले 10 रोज़

हसन–हुसैन के शोक की याद में मनाए जाते हैं। इसे अधिकतर शिया लोग मनाते हैं। सुन्नी केवल दसवें रोज़ रोज़ा रखते हैं। मुसलमानों के विवाह और त्योहार चांद के महीनों के हिसाब के अनुसार होते हैं। महीने का आरम्भ चांद के निकलने से होता है। मुसलमानी महीनों के नाम निम्नलिखित होते हैं। मुहर्रम–उल–हराम, सफ़र, रबी–उल–अव्वल, रबी–उल–सानी, जमादी–उल–अव्वल, जमादी–उल–सानी, रज़ब, शआबान, रमज़ान, शव्वाल, जीक़अद, और ज़िल–हज्जा।

# सोलहवां अध्याय

## सिक्ख धर्म

सिक्ख धर्म पंजाब में 15 वीं शताब्दी में शुरू हुआ था। इस धर्म के 688 व्यक्ति रियासत सिरमौर में आबाद रहे। इन लोगों का आम तौर से व्यवसाय कृषि है। ये नाहन और पांवटा तहसील में आबाद हैं और पंजाब के इलाके से आए हुए हैं। इस धर्म के संस्थापक गुरु नानक साहब थे, जो मौज़ा तलवंडी तहसील शकरपुर, ज़िला लाहौर में कालू नामक दुकानदार के घर सम्वत् 1526 विक्रमी तदनुसार 1469 ई0 में पैदा हुए थे। उस समय हिन्दुस्तान का शासक बहलोल लोधी था, जिसके शासनकाल में हिन्दू और मुसलमानों में आपसी संघर्ष चरम सीमा पर था। नानक साहब अपने बचपन के दिनों से ही सूफी तबीयत और आज़ाद प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। इस वास्ते वह बहुत थोड़ा बोलते और अकेले में रहना पसंद करते थे। उनका झुकाव अधिकतर दर्शनशास्त्र की ओर था और वह सदैव इसी की सोच में डूबे रहते थे। उनको नागरी, भाषा और फारसी की अच्छी जानकारी थी, परन्तु सांसारिक कारोबार की तरफ उनकी बिल्कुल रुचि नहीं थी।

जैसा कि जन्म साखी से प्रतीत होता है कि उनके पिता ने

उनको सांसारिक कारोबार की तरफ लगाने के अत्यन्त प्रयास किए, उनका विवाह भी कर दिया और उनके दो पुत्र श्रीचन्द और लक्खमी दास हुए। परन्तु ये सब उनकी रुचि को सांसारिक कार्यों में लगाने में असफल रहे। नानक साहब ने सांसारिक सम्बंधों को छोड़कर फकीरी इख्तियार की और उपदेश देना शुरू किया। इनका उद्देश्य था कि हिन्दू और इसलाम दोनों धर्मों की त्रुटियों और कट्टरपंथता को निकालकर आपस में मिला दिया जाए, जो कि वास्तव में बहुत अच्छा विचार था। इसके लिए उन्होंने बहुत प्रयत्न किए और दुर्गम क्षेत्रों की यात्रा भी की अर्थात् वह अफगानिस्तान, रोम और मक्का वगैरह भी गए। परन्तु इन सब धर्मों के विचारों को एक कर देना अत्यन्त कठिन ही नहीं असम्भव था। इसलिए इसमें वह सफल नहीं हो पाए।

नानक साहिब का धार्मिक नियम यह था कि वह खुदा को सब कुछ जानने वाला, सर्वशक्तिमान तथा सर्वव्यापक मानते थे। वह आत्मा और परमात्मा को एक बतलाते थे, अर्थात् वह वेदान्त के मसले के हामी थे। जाति–पाति में वह कोई भेदभाव नहीं मानते थे, आवागमन के मसले की भी हिमायत करते थे। इनके धार्मिक नियम ग्रन्थ साहिब, जिसको उन्होंने स्वयं संयोजित किया था, जिसे आदि ग्रन्थ कहते हैं, में लिखित हैं। यह सिक्खों की धार्मिक पुस्तक है। सिक्ख शब्द का अर्थ है शिष्य अर्थात् जो नानक साहिब के चेले हैं। नानक साहिब शान्ति और भाईचारे में विश्वास रखते थे। अपने धर्म का उपदेश देते हुए जालन्धर ज़िले के करतारपुर कस्बे में, जो उन्होंने स्वयं आबाद किया था, 71 वर्ष की आयु में 1538 ई0 में उनका स्वर्गवास हो गया। करतारपुर में अब तक उनकी समाधि मौजूद है। सिक्ख धर्म के अनुयायी यहां हर वर्ष यात्रा के लिए जाते हैं।

नानक साहिब के दो पुत्रों में से बड़े श्रीचन्द ने संन्यास ले लिया और उदासी संन्यासियों के फिरके की स्थापना की। दूसरा पुत्र लक्खमी दास गृहस्थी वाला हुआ। गुरु नानक साहब की मृत्यु के बाद अंगद गुरु हुए जिनको गुरु नानक साहिब ने अपने जीवनकाल में ही गुरु नियुक्त किया था। वह नानक साहिब के शिष्य थे। उनके बाद रामदास जो कि अमरदास के दामाद थे, गुरु हुए। उनको अकबर

बादशाह ने लाहौर के आस–पास जागीर दी थी, जहां पर उन्होंने तालाब बनाया, जिसका नाम अमृतसर रखा। उन्होंने वहां एक मन्दिर भी बनाया, जिसका नाम हरमन्दिर रखा गया। उस स्थान का नाम आज भी अमष्तसर प्रसिद्ध है। गुरु रामदास के तीन पुत्र थे, जिनमें से बड़ा पुत्र अर्जुनमल गुरु अर्जुनदास के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने ग्रन्थ साहिब को क्रमबद्ध विधि से पूरा किया तथा अमृतसर तालाब के भवन को भी सम्पूर्ण किया। उन्होंने एक और तालाब ज़िला अमृतसर में बनवाया, जिसका नाम तरण–तारण रखा। उनको शाहजहां ने बंदी बना लिया था और बहुत दुःख दिए थे, जिस कारण उनकी मृत्यु हो गई।

उनके बाद उनके पुत्र हरगोबिन्द गुरु हुए। उस समय सिक्ख मुसलमानों के जुल्मों से तंग आ गए थे और उनमें जोश की लहर दौड़ रही थी। वह संन्यास छोड़कर सिपाही बन गए और मुसलमानों से बदला लेने के लिए उतारू हो गए। गुरु हरगोबिन्द को जहांगीर बादशाह ने एक बार बंदी बना लिया था, परन्तु बाद में उनको छोड़ दिया। जहांगीर की मृत्यु के बाद हर गोबिन्द और जहांगीर का दूसरा पुत्र दारा शिकोह आपस में गहरे मित्र बन गए, क्योंकि दारा शिकोह भी संत–सूफी तबीयत का व्यक्ति था। हरगोबिन्द के पांच पुत्र थे, जिनमें बड़ा गुरु बना, जिसका पिता के रहते ही स्वर्गवास हो गया था। उसका एक पुत्र हर राय नामक था, जिससे हरगोबिन्द बहुत प्यार करते थे। इसलिए उसको अपने बाद गुरु नियुक्त किया। परन्तु नानकी, जो कि हर गोबिन्द की दूसरी पत्नी थी, जिससे दूसरा पुत्र तेग बहादुर उत्पन्न हुआ था, अप्रसन्न हुई। इसलिए हरगोबिन्द ने उसे अपने हथियार देकर तसल्ली दी और कहा कि अंत में तेगबहादुर ही गुरु होगा।

हरगोबिन्द के बाद हरराय गुरु हुआ और उसके दो पुत्र रामराय और हरकिशन थे परन्तु हरराय अपने पुत्र राम राय से अप्रसन्न था। इसलिए हरकिशन को अपने बाद गुरु बनाने का प्रस्ताव रखा। हरगोबिन्द की मृत्यु के बाद दोनों भाइयों में गद्दी के लिए झगड़ा हुआ, अन्त में हरकिशन गद्दी पर बैठा। हरकिशन का बचपन में ही

स्वर्गवास हो गया, इसलिए हर गोबिन्द के पुत्र तेग बहादुर को हर किशन ने अपने बाद गुरु नियुक्त किया और राम राय ने अपना अलग सम्प्रदाय बनाया, जिसका गुरुद्वारा देहरादून में है। हरकिशन के बाद तेग बहादुर गुरु हुआ। आरम्भ में तेग बहादुर सूफी–संत विचारों का व्यक्ति था, परन्तु बाद में उसकी रुचि युद्ध कार्यों की तरफ झुक गई। जिस कारण औरंगज़ेब ने उस पर विद्रोह का आरोप लगाकर बंदी बनाया और उसका वध करवा दिया। उसके वध से सिक्खों में और भी अधिक जोश पैदा हो गया।

तेग बहादुर के बाद उसका पुत्र गोबिन्द सिंह गुरु हुआ, जिसने अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने की ठान ली। परन्तु उसको इस कठिनाई का सामना करना पड़ा कि एक तरफ तो मुसलमान उसके शत्रु थे और दूसरी तरफ रामराय सिक्खों का फिरका उसके विरुद्ध था। इसलिए अपने आपको सुरक्षित करने के लिए (पंजाब का इतिहास, पेज 261) और अपने इरादे को पूरा करने के लिए वह पांवटा में गया जो कि जमुना के तट पर पहाड़ों से घिरा हुआ था। यह स्थान रियासत सिरमौर की तहसील पांवटा में है। गोबिन्द सिंह ने वहां पर तीर चलाने का खूब अभ्यास किया और शिकार खेलने में उत्तीर्ण हुआ। उसने हिन्दुस्तान के पुराने इतिहास का, जो फारसी भाषा में लिखित था, अध्ययन भी किया। अपने धर्म के पुराने नियमों को बदला अर्थात् प्रत्येक कौम और फिरके के व्यक्ति को सिक्ख बनाना शुरू किया और जात–पात में भेदभाव को समाप्त किया। उसने सिक्खों के फिरके को एक लड़ाकू फिरका बनाया। उसने शब्द सिक्ख के स्थान पर अपने फिरके के लोगों को सिंह (शेर) का नाम दिया (पंजाब का इतिहास, पेज 263), जो कि इससे पहले राजपूतों का शीर्षक था।

गुरु गोबिन्द सिंह ने अपने फिरके के प्रत्येक व्यक्ति को आदेश दिया कि वह सशस्त्र हो जाए, नीले कपड़े पहने, केश बढ़ाए और आपस में मिलते समय शिष्टाचार के तौर पर, "वाहे गुरु की फतह, वाहे गुरु का खालसा", कहना शुरू करे। गुरु गोबिन्द सिंह में कवि के साथ–साथ सैनिक के भी गुण थे। उसने मुसलमानों को सिक्ख बनने का प्रस्ताव भी रखा। कुछ मुसलमान लोगों को सिक्ख भी बनाया

मुसलमान चार प्रकार के सिक्ख होते हैं, अर्थात् सैय्यद सिक्ख, शेख़ सिक्ख, मोल सिक्ख़ और पठान सिक्ख। गोबिन्द सिंह सिक्खों का दसवां और आखिरी गुरु हुआ। उसके बाद गुरु गोबिन्द सिंह के लड़के का सरहिन्द के गवर्नर फौज़दार ख़ान ने वध करवा दिया था, जिसका बदला बंदा ने, जो कि गुरु गोबिन्द सिंह का मित्र था, लिया। उसने फौज़दार खां, उसकी पत्नी और बच्चों का वध किया तथा सरहिन्द और सहारनपुर को अपने अधीन किया। कुछ समय बाद बंदा को मुसलमानों ने पकड़ लिया और उसके पुत्र को अत्यन्त यातनाएं देकर मार डाला।

गुरु गोबिन्द सिंह के गुरुद्वारे विभिन्न शहरों में हैं। एक बड़ा गुरुद्वारा पटना में है और एक खास नाहन में है। एक और इस रियासत में तहसील पांवटा में है। गुरु गोबिन्द सिंह ने अपने बाद गुरु नियुक्त करने से इनकार किया। उसने कहा कि ग्रन्थ साहिब सबका गुरु है और जहां पर पांच सिक्ख इकट्ठे होकर ग्रंथ पढ़ेंगे, वहां गुरु उपस्थित रहेगा। उनकी मृत्यु 48वर्ष की आयु में नान्देड़ में, जो गोदावरी के तट पर स्थित है, 1765 विक्रमी, तदनुसार 1708 ई0 में हुई।

ग्रंथ साहिब में बहुत से परामर्श दिये गए हैं तथा इसमें खुदा और गुरुओं की प्रशन्सा लिखी हुई है। ग्रंथ साहिब के एक भाग को गुरु गोबिन्द सिंह ने संकलित किया है। इसको दसवें पातशाह का ग्रंथ कहते हैं। सिक्खों में मूर्ति पूजा की मनाही है परन्तु वह ग्रंथ साहिब को बुद्ध की मूर्ति की भांति पूजते हैं। सिक्ख हिन्दुओं के शास्त्रों और कुरान आदि को नही मानते। सिक्खों में तम्बाकू का प्रयोग, लाल कपड़े पहनना तथा शरीर के किसी भी भाग के बाल मुंडवाना वर्जित है परन्तु शराब पीने की मनाही नहीं है। **हरेक सिक्ख को पांच क या कके रखना अनिवार्य है।** इनमें से कम से कम एक तो ज़रूरी चाहिए अर्थात् केस, करू (करपांण या तलवार), कड़ा (लोहे की चूड़ी), कच्छा (जांघिया) और कंघा। भोजन का ये लोग बड़ा सम्मान करते हैं। चाहे वह मोटे से मोटा भोजन क्यों न हो उसको प्रसाद कहते हैं।

सिक्खों के धार्मिक रीति रिवाज लगभग हिन्दुओं जैसे हैं परन्तु कुछ सिक्ख तो विवाह और मृत्यु की रस्में हिन्दुओं की विधि अनुसार

करते हैं और कुछ नहीं करते। कुछ सिक्ख विवाह में फेरे लेते हैं और कुछ की शादी बगैर फेरों के ही हो जाती है जिसको आनन्द कारज या चादर अंदाज़ी (चादर डालना) कहते हैं। वे मृत्यु और क्रिया कर्म हिन्दुओं की भांति नहीं करते। मृतक के शरीर को जलाने के बाद वे केवल कड़ा (हलवा) प्रसाद देते हैं तथा हिन्दुओं की भांति तीर्थ यात्रा, मन्दिर इत्यादि में भी जाते हैं। गुरु गोबिन्द सिंह ने हरेक कौम और फिरके के लोगों को सिक्ख धर्म में शामिल करने के लिए पाहल की विधि चलाई थी। पानी में बताशा या गुड़ इत्यादि डाल कर उसको कृपाण या तलवार से मिलाकर पांच दोहरे पढ़कर यह शरबत सब उपस्थित लोगों को पिलाया जाता है और उसके पश्चात् उस आदमी को यह शरबत पिलाया जाता है जिसको सिक्ख बनाया जाता है। इस शरबत को अमृत कहते हैं। सिक्ख बनाने की यह विधि अब तक प्रचलित है। सिक्ख धर्म में हरेक कौम या धर्म के लोग शामिल हो सकते हैं। पाहल लेने के बाद हरेक जाति का आदमी आपस में बैठ कर खाना खा सकता है।

गुरु गोबिन्द सिंह से पहले जो गुरु हुए हैं उनके शिष्य सिक्ख कहलाते थे। गुरु गोबिन्द सिंह ने सिक्ख शब्द की बजाए खालसा या सिंह शब्द का प्रयोग किया जिसका अर्थ शेर है। सिक्खों में अमृतधारी और सहजधारी सिक्ख वे हैं जो पाहल नहीं लेते। अमृतधारी सिक्खों में निम्नलिखित फिरके हैं (1) ग्रंथी जो ग्रंथ पढ़ते हैं, वे खांडे की पाहल लेते हैं (2) निहंग जिनको अकाली भी कहते हैं। ये तोड़ा और चक्र सिर पर रखते हैं और शस्त्र भी बांधते हैं। (3) रामरमैया जो गुरु रामराय के अनुयायी हैं और सर पर कुल्ला (टोपी) रखते हैं। सिक्खों में संत फकीरों के और भी फिरके हैं अर्थात् उदासी जो सर पर बाल रखते हैं और फकीरी वस्त्रों में रहते हैं। दूसरे निर्मले जो फकीरी वस्त्र पहनते हैं और पाहल लेते हैं परन्तु जटा नहीं रखते। तीसरे सुथरे फकीर होते हैं जो बाल नहीं रखते परन्तु गुरु नानक को मानते हैं।

# सतरहवां अध्याय
## भाषा

सिरमौर रियासत के बाशिंदों की भाषा आम तौर पर उन क्षेत्रों से सम्बंधित है जहां वे आबाद हैं अर्थात् तीन भांति की भाषा बोली जाती है। मिली–जुली उर्दू–हिन्दी, पहाड़ी जिसको सिरमौरी कहना चाहिए। उर्दू खास नाहन शहर में पढ़े लिखे सभ्य लोग बोलते हैं। यही भाषा नाहन की अदालती भाषा भी है। दूसरे साधारण निवासी नाहन में मिली जुली उर्दू हिन्दी बोलते हैं परन्तु बाहर के लोग आपस में और अपने घरों में अपनी मातृ भाषा बोलते हैं, जैसे कि पंजाबी या पूर्वी इत्यादि। पहाड़ी भाषा पहाड़ी क्षेत्र में बोली जाती है परन्तु इसमें भी थोड़ा बहुत फर्क है। भिन्न पहाड़ी क्षेत्रों में भिन्न पहाड़ी बोली जाती है जैसे कि धारटी क्षेत्र में धारटी पहाड़ी, गिरी पार में गिरीपार की पहाड़ी। इसी प्रकार हरेक क्षेत्र की भाषा उस क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है और यह ही उनकी मातृ भाषा है। पहाड़ी भाषा में हिन्दी और कुछ कुछ संस्कृत के शब्द शामिल हुए प्रतीत होते हैं। खोल क्षेत्र में मिलीजुली पहाड़ी और हिन्दी बोली जाती है। दून क्षेत्र में मिलीजुली हिन्दी पंजाबी बोलते हैं क्योंकि इस क्षेत्र में आम तौर पर पंजाबी और जमना पार के लोग आबाद हैं।

# अठारहवां अध्याय

## त्योहार

पुराने समय में हिन्दुओं के यहां निम्नलिखित रस्में, जिनको त्योहार कहा जाता है, होती थीं। प्रथम, पितरों का मासिक श्राद्ध, जिसमें ब्राह्मणों को भोजन करवाया जाता था। ये ब्राह्मण शिक्षित और सम्मान योग्य होते थे। दूसरा पारूण अर्थात् हरेक दूज और पूर्णमासी को देवताओं के लिए यज्ञ किया जाता था और व्रत रखा जाता था। तीसरा, श्रावणी जिसमें श्रावण मास की पूर्णमासी के दिन नाग देवता की पूजा की जाती थी। अब इसके स्थान पर हिन्दुस्तान में सलोनो का त्यौहार मनाया जाता है। चौथा असूयोगी, यह असूज मास की पूर्णमासी के दिन होता था। इसमें चावल, दूध और दही इत्यादि से इन्द्र व सीताशक्ति इन्द्र की पूजा की जाती थी (वर्षा के लिए)। पांचवां अगरमानी, यह त्योहार मंगर मास की पूर्णमासी को होता था। इसमें सम्वत् अर्थात् वर्ष के शांतिपूर्वक समाप्त होने के लिए पूजा की जाती थी। छठा अष्टक, जो कि फाल्गुन मास की अष्टमी को होता था। इसमें अग्नि व प्रजापति देवताओं की साल के शांतिपूर्वक समाप्त होने के लिए सब्जी, मांस व चावल इत्यादि से पूजा की जाती थी। सातवां चैत्री त्योहार, यह चैत मास की पूर्णमासी के दिन वर्ष का अन्तिम त्योहार होता था। यह अग्नि और रुद्र (महादेव) व इन्द्र इत्यादि देवताओं के लिए किया जाता था।

परन्तु अब हिन्दुस्तान में, हिन्दुओं में ऊपर लिखे गए त्योहारों के स्थान पर कुछ बदलाव लाकर चार बड़े त्योहार मनाए जाते हैं। प्रथम सलोनो, जो सावन मास की पूर्णमासी के रोज़ मनाया जाता है।

उस दिन सब ब्राह्मण, राजपूत व वैश्य लोग देवताओं और पितरों को पानी चढ़ाते हैं और अपना जनेऊ बदलते हैं। ब्राह्मण अपने यजमानों के जीवन की रक्षा के लिए रक्षा सूत्र बांधते हैं। यजमान ब्राह्मणों को दान–दक्षिणा देते हैं। यह त्योहार ब्राह्मणों का बताया जाता है। दूसरा त्योहार दशहरा, जो राजपूतों का कहा जाता है। यह असूज की दसवीं तिथि को होता है, उस दिन ब्राह्मण अपनी पुस्तकों का और क्षत्रिय अपने शस्त्रों व सवारी जैसे कि घोड़ा या हाथी और वैश्य लोग अपने बहीखातों, तराजू और कलम–दवात इत्यादि का पूजन करते हैं। तीसरा त्योहार दीवाली का, यह कार्तिक मास के मध्य में अमावस वाले दिन होता है। यह त्योहार वैश्यों का माना जाता है। उस रोज़ लक्ष्मी का पूजन होता है। चौथा त्योहार होली का, यह फाल्गुन पूर्णमासी व प्रतिपदा को होता है। यह त्योहार शूद्रों का कहा जाता है। इस दिन रंग और गुलाल बनाते हैं और एक–दूसरे पर डालते हैं तथा धूल–मिट्टी भी उड़ाते हैं। यह त्योहार हिरण्यकश्यप की बहन होलिका के मारे जाने की खुशी में मनाया जाता है।

रियासत सिरमौर में भी सलोनों, दशहरा, दीवाली और होली के त्योहार हिन्दुओं के प्रत्येक फिरके में मनाए जाते हैं, अर्थात् नाहन शहर में तो ये सब त्योहार मनाए जाते हैं परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों धारटी, सेन और खोल में दशहरा व दीवाली, गिरीपार में केवल दीवाली तथा दून क्षेत्र में केवल होली मनाई जाती है। इन त्योहारों के अतिरिक्त नाहन शहर में तीज, करवा चौथ, बड़शांत और माघ की संक्रान्ति अर्थात् लोहड़ी भी मनाए जाते हैं परन्तु यह त्योहार विशेषकर औरतों द्वारा मनाए जाते हैं। पिछले समय में एक त्योहार कराला (करयाला) भी भादो मास में हुआ करता था, इसमें लोग दो भागों में बंटकर एक–दूसरे की ओर फलों का निशाना लगाया करते थे। गिरीपार क्षेत्र में बैसाख महीने में बीशू होता है। दूसरा, माघ में होता है। श्लोनों के दिन सगे–सम्बन्धी आपस में मिलजुल कर सेवियां, मीठे चावल आदि की दावतें करते हैं और ब्राह्मणों के अतिरिक्त बहनें और लड़कियां भी राखी (रक्षा–बन्धन जो ब्राह्मण बांधते हैं) देती हैं। इनको पिता और भाई भेंट के तौर पर रुपया पैसा और कपड़े इत्यादि देते हैं। पहाड़ी क्षेत्रों

में उस दिन सेवियां और पुटाण्डे (तवे पर गेहूँ के बहुत पतले आटे को कागज़ की भांति बारीक लगाकर पकाया जाता है) पकाते हैं और एक–दूसरे के यहां अतिथि बनकर जाते हैं।

दीवाली के पर्व पर रात को लक्ष्मी का पूजन होता है। कुछ लोग व्रत भी रखते हैं तथा अपने घरों में अपने सगे–सम्बन्धियों और मित्रों के साथ अश्कली (चावल के आटे को पानी में घोलकर पत्थर के तवे पर, जिसमें छोटे–छोटे गोल खाने बनाए हुए होते हैं और जो आग पर रखा हुआ होता है, उसमें पतला आटा इन खानों में डाला जाता है, जब वह पक जाता है तो उसको खानों में से निकाल लेते हैं, ये कचौरी की तरह गोल होते हैं) पकाकर खाते हैं। इन्हें अपने रिश्तेदारों में भी बांटा जाता है। इस त्योहार में दो दिन तक जुआ खेलने की भी अनुमति होती है, जिसको हिन्दू लोग उस रोज़ ज़रूरी मानते हैं। धारटी, सेन और गिरीपार क्षेत्रों में ऊंचे पहाड़ों पर आग जलाते हैं, जिसको बलराज कहते हैं। गांव के सब लोग वहां एकत्रित होकर जलती हुई लकड़ियों को रस्सी से बांधकर घुमाते हैं, जिनको हुशू कहते हैं और अश्कली की दावतें करते हैं। यह त्योहार पहाड़ी क्षेत्र में बहुत मनाया जाता है। वहां लोग चार–पांच रोज़ तक कोई काम नहीं करते। इन त्योहारों में लोग चावल खाते हैं, रोटी नहीं खाते। चावलों को छाछ में पकाकर जमाते हैं, उसको कांजन कहते हैं।

दीवाली के बाद भैया दूज का त्योहार भी नाहन शहर में मनाया जाता है। उस दिन बहनें अपने भाइयों को खाना खिलाती हैं और टीका लगाती हैं, खुशी मनाती हैं। वे अपने भाइयों को भेंट के तौर पर कपड़े, मिठाई इत्यादि देती हैं, जैसा कि भाई अपनी बहनों से तीज के त्योहार के अवसर पर बर्ताव करते हैं। दशहरा अशौज मास की दसवीं तिथि को मनाया जाता है, उस रोज़ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य अपने–अपने व्यवसायों से सम्बन्धित वस्तुओं की पूजा करते हैं, जैसा कि पहले भी इसकी व्याख्या की जा चुकी है। यहां यह स्पष्ट किया जाता है कि धनी और ऊंचे लोग अपने घोड़े और हाथी इत्यादि को सजाकर उन पर सवार होकर शहर से बाहर घूमने–फिरने तथा गरुड़ पक्षी (नीलकंठ) को देखने जाते हैं । वे अपने हाथियों के महावत और

घोड़ों के साईस इत्यादि को ईनाम देते हैं। खास नाहन शहर में यह त्योहार बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है, अर्थात् पहले दिन पहले नवरात्रे को राजा साहिब मुहूर्त के साथ जो कि कभी–कभी प्रातःकाल का निकलता है, कालीस्थान को जाते हैं, जो नाहन में काली देवी का एक प्राचीन मन्दिर है। वे वहां पर पूजा इत्यादि कर, जिसमें लगभग तीन–चार घंटे का समय लगता है, खांडे (दोधारी तलवार) को म्यान से निकालकर सीधा एक लकड़ी के फ्रेम में खड़ा करते हैं और उसके पास जौ बोते और दीपक प्रज्वलित करते हैं, जो नौ दिन तक बराबर जलता रहता है। नौ रोज़ तक वहां हवन होता रहता है और ब्राह्मण देवी का पाठ करते हैं।

नवमी के दिन राजा साहिब अपने सगे–सम्बन्धियों तथा अहलकारों सहित वहां जाते हैं और पूजन इत्यादि करके मुहूर्त के अनुसार खांडे को उठाते हैं और म्यान में डाल लेते हैं। इसके बाद नाच–गाने का जश्न आरम्भ हो जाता है, जिसमें नाथ जी, कालीस्थान के महन्त तथा राजा साहिब व दूसरे लोग शामिल होते हैं। इसके बाद नाथ जी, जिनको राजगुरु कहा जाता है, एक–एक नादी, जो कि काली लकड़ी की होती है और फकीरों द्वारा बजाई जाने वाली असली नाद की नकल होती है राजा साहिब व तमाम उपस्थित लोगों को देते हैं। राजा साहिब व दूसरे लोग राजगुरु को उपहार देते हैं, फिर बकरों, खाडू और भैंसे का बलिदान होता है। भैंसे को यहां पर चमारों के सिवा और कोई नहीं खाता है। इसके बाद जलसा समाप्त हो जाता है और महाराजा साहिब अपने सगे सम्बन्धियों और अहलकारों सहित हाथियों पर सवार होकर अपने महल में आते हैं। शाम के समय वहां उनको चौगान में घोड़ों के करतब और नेज़ाबाज़ी दिखाते हैं।

दशहरा के ये सभी रीति रिवाज बहुत पुराने हैं। ये जैसलमेर के महारावल साहिब के परिवार में मनाये जाते हैं। नाहन का राज परिवार भी उसी स्थान से आया हुआ है इस लिए यहां पर भी ये रीति रिवाज़ किये जाते हैं। दूसरे दिन दसवीं को दशहरा होता है। इस दिन अस्त्र–शस्त्र इत्यादि की पूजा की जाती है। शाम के समय जगन्नाथ जी के मन्दिर में, जो इस रियासत में एक प्राचीन मन्दिर है, महाराजा

साहिब अपने सगे सम्बंधियों और अहलकारों सहित हाथियों पर सवार हो कर जाते हैं और ठाकुर जी के दर्शन करने के बाद मन्दिर के महन्त साहिब को अपने साथ हाथी पर बिठाकर रामकंडी में महन्तों की समाधियों पर नीलकण्ठ (गरुड़) को देखने जाते हैं। इसके बाद चौगाना में फौज की परेड होती है और मार्च पास्ट दिखलाया जाता है। महाराजा साहिब को सलामी देकर बन्दूकें और तोपें चलाई जाती हैं, जिसके देखने के लिए शहर और आसपास के क्षेत्रों से बहुत से तमाशाई आकर जमा हो जाते हैं।

इसी दिन दोपहर को खास दरबार होता है। सब अहलकार नज़राने भेंट करते हैं और नाच होता है। दशहरा के पर्व के सम्बंध में दो तीन दिन तक बराबर जश्न और नाच तमाशे होते रहते हैं। यह रस्म राजपूताना की है जो कि यहां पर उसी तरह से होती है जैसी कि वहां (टोड का इतिहास, पेज 610 वॉल्यूम 1)। होली का त्योहार फाल्गुन मास की पूर्णमासी को होता है। इस त्योहार में चावल के आटे में रंग मिलाकर गुलाल बनाते हैं और लाख के लट्टू बनाकर उनमें हर किस्म का गुलाल भरा जाता है। महाराजा साहब उस दिन नाच गाने की महफिल रचाते हैं जिसमें सगे सम्बंधी और अहलकार सम्मिलित होते हैं। भिन्न भिन्न प्रकार के रंग बोतलों में भरकर छिड़के जाते हैं जिससे सफेद रंग के वस्त्र रंग बिरंगे होने से बहुत खूबसूरत दिखाई देते हैं। इसके बाद सूखा रंग और गुलाल एक दूसरे की तरफ फेंकते हैं।

शहर में आम जनता एक दूसरे पर रंग डालती है परन्तु अजनबियों पर नहीं। पिछले समय में यह त्योहार यहां बड़े हर्ष उल्लास से होता था क्योंकि रंग के अतिरिक्त मिट्टी धूल भी एक दूसरे पर फेंकते थे। राजा शमशेर साहिब ने इस में तबदीली की थी और इस त्योहार को साफ सुथरे ढंग से मनाया जाता था। यह त्योहार तीन चार दिन तक चलता है अर्थात् द्वादशी से पूर्णमासी तक। होली से एक मास पहले वसन्त का त्योहार साधारण ढंग से मनाया जाता है। दून और खोल क्षेत्र में भी कृषक होली मनाते हैं और मामूली रंग और धूल मिट्टी इसमें उड़ाते हैं और नाचते गाते हैं। हरियाली का त्योहार स्त्रियों में

सावन मास की पहली तिथि को मनाया जाता है। उस दिन पटंडे इत्यादि आपस में बांटे जाते हैं। तीज का त्योहार सावन की तीसरी तिथि को होता है। उस दिन स्त्रियां आपस में मिलकर गाती बजाती हैं और एक दूसरे को न्यौता देती हैं और खुशियां मनाती हैं।

बड़े बड़े लोगों के घरों में यहां बहुत सी स्त्रियां एकत्रित होकर गाना–बजाना करती हैं। महाराजा साहिब के स्त्रीगष्ह में भी उस रोज़ बड़ा जश्न होता है। शहर की हरेक स्त्री को स्त्रीगृह में जाने और तमाशे में शामिल होने की आज्ञा होती है। इस त्योहार में स्त्रियां घेवर जो एक भांति की मिठाई घी और मैदा से गोल रोटी की तरह बनाई जाती है, बांटती हैं। बड़शान्त का त्योहार भादों–असौज में और करवा चौथ का त्यौहार कार्तिक में दीवाली से बारह दिन पहले होता है। इनमें स्त्रियां व्रत रखकर देवी की पूजा करती हैं। वे एक दूसरे को रिश्तेदारी में मिठाई इत्यादि भेजती हैं। नाहन के मुसलमान केवल ईद–उल–अज़हा, ईद–उल–फितर और शब–ए–बरात मनाते हैं। ईद–उल–अज़हा के बकरे व खाडु की बलि दी जाती है और ईद–उल–फितर को सेवईयां और मीठे चावल बनाये जाते हैं। शब–ए–बरात को हलवा इत्यादि बना कर बांटा जाता है।

गिरी पार क्षेत्र में सबसे बड़ा त्योहार माघी का होता है जो प्रथम माघ से लेकर अन्तिम माघ तक मनाया जाता है। संक्रान्ति के दिन खाडु बकरे काटे जाते हैं जिनका मांस मित्रों और सगे सम्बंधियों में बांटा जाता है। इस मास बकरे काटे जाने की रीति है। शराब जिसको वहां लोग स्वयं बना लेते हैं और जिसे वे सूर कहते हैं, आपस में मिल बैठकर पीते पिलाते हैं। पूरे मास नाच गाना होता रहता है और लोग खाने खिलाने में व्यस्त रहते हैं क्योंकि पहाड़ों में उस समय हिमपात होता है और ठण्ड भी अधिक रहती है। इसके अतिरिक्त उस समय खेती बाड़ी का काम भी अधिक नहीं होता और लोगों को फुरसत ही फुरसत होती है, इसलिए वहां इस मास को मनोरंजन में व्यतीत करते हैं।

दूसरा त्योहार बिशु वैशाख मास में, जिसको मैदानी क्षेत्र में वैशाखी कहते हैं, मनाया जाता है। यह त्योहार वैशाख की पहली तिथि

को होता है। इसमें भी बकरे काटते हैं और असकली बनाते हैं। हरियाली के त्योहार के दिन, जोकि सावन की पहली तिथि को होता है, पटाण्डे व खीर बनाई जाती है। लोग उस दिन एक दूसरे के यहां खाना खाते हैं। इसके अतिरिक्त गिरी पार क्षेत्र में दो दीवालियां मनाई जाती हैं, एक छोटी दूसरी बड़ी। छोटी दिवाली से एक मास पश्चात् बड़ी दीवाली होती है। गिरी पार के लोग त्योहारों में नाचने गाने बजाने के बहुत शौकीन हैं। स्त्री–पुरुष एक होकर घेरा बना कर नाचते हैं जिसको स्थानीय बोली में गी कहते हैं। उस समय नगाड़े, शहनाई इत्यादि बाजे खूब बजाये जाते हैं।

# उन्नीसवां अध्याय

## मेले

रियासत सिरमौर के पहाड़ी क्षेत्र में किसी न किसी देवता या देवी के नाम से समय–समय पर साधारण मेले होते रहते हैं। आम तौर पर कोई न कोई मेला पांच सात गांवों के समूह में किसी न किसी गांव में होता रहता है। एक या दो परिवारों के लोग, जो कि एक ही कुनबे से होते हैं, वर्ष में एक दो बार देवता की पूजा के लिए एकत्रित होते हैं और वही मेला हो जाता है। ऐसे देवता या देवी को कुलजा अर्थात् पारिवारिक देवी कहते हैं। केवल दो ही बड़े मेले होते हैं जिन में लोग भारी संख्या में एकत्रित होते हैं। एक मेला तो कार्तिक मास में रेणुका जी का है, यह मेला तहसील रेणुका में झील के किनारे होता है। यह झील नाहन से लगभग पन्द्रह मील की दूरी पर स्थित है। इस झील को परशुराम की माता रेणुका का अवतार माना जाता है। वहां एक मन्दिर परशुराम देवता का भी है। यहां एक ऊंचा पहाड़ है जो

जमदग्नि ऋषि के पहाड़ के नाम से प्रसिद्ध है। जमदग्नि ऋषि परशुराम का पिता था।

यह मेला हर वर्ष होता है। पहाड़ी और मैदानी क्षेत्रों के लोग वहां पर जमा होते हैं और देवता की पीतल की मूर्ति को मौज़ा जम्बु से, जहां पर वह सदैव रहती है, चांदी की पालकी में बिठाकर रेणुका मन्दिर के सामने लाते हैं। पालकी के साथ नगाड़े, शहनाई इत्यादि बाजे बजते आते हैं और देवता की सवारी बड़ी धूमधाम से आती है। इस मन्दिर में देवता केवल तीन दिन तक रहता है अर्थात् वह कार्तिक की दसवीं तिथि को आता है और द्वादशी को वापस चला जाता है। पहाड़ी लोग रात के समय देवता के पुजारी से, जब उसको खेल आती है, अपने अपने प्रश्न पूछते हैं जिनका वह उत्तर देता है कि देवता के लिए सवा रुपया या सवा आन्ना या कुछ और देना, तेरी इच्छा पूरी हो जाएगी। पूछने वाले को इसी उत्तर से तसल्ली हो जाती है।

द्वादशी के दिन मेले में आने वाले लोग रेणुका में स्नान करके दान–दक्षिणा इत्यादि देते हैं। इस मेले में लगभग छः सात हज़ार व्यक्ति इकट्ठे होते हैं। पहाड़ी कृषक अखरोट, अदरक, हल्दी, घी, आड़ू, इत्यादि वास्तुएं मेले में बेचने के लिए लाते हैं। मैदानी क्षेत्र से गुड़ शक्कर इत्यादि मैदानी वस्तुएं बिकने के लिए आती हैं और खूब बिकती हैं।

दूसरा मेला त्रिलोकपुर के स्थान पर देवी का होता है। यह साल में दो बार अर्थात् चैत्र मास व असौज की अष्टमी और चौदस को होता है। त्रिलोकपुर नाहन से आठ मील पश्चिम की ओर स्थित है। यह एक छोटा सा कस्बा है और यहां देवी का एक भव्य मन्दिर बना हुआ है। इस स्थान पर हर छठे महीने अर्थात् चैत्र और अजौस के नवरात्रों को राजा साहिब या टिक्का साहिब देवी की पूजा करने जाते हैं। वह वहां भैंसे और बकरों का बलिदान देते हैं। इस मेले में मैदानी क्षेत्र अर्थात् सहारनपुर, अम्बाला, करनाल इत्यादि से बहुत से आदमी जमा होते हैं। यह मेला अष्टमी को आरम्भ होता है। यात्री अष्टमी से चौदस तक आते रहते हैं परन्तु लोगों की अधिक संख्या अष्टमी और चौदस को ही आती है। चैत्र मास में होने वाला मेला असौज मास के

मेले से ज़्यादा रौनकदार होता है यद्यपि अब प्लेग के कारण कुछ समय से लोग कम आते हैं।

तीसरा मेला पौंटा साहिब में, जो नाहन से छब्बीस मील पूर्व की ओर है, होली और वैशाखी के त्योहार पर गुरुद्वारा गुरु गोविंद सिंह में होता है। इस मेले में बाहर से बहुत कम लोग आते हैं। चौथा मेला नाहन में गुरु जवाहर सिंह का होता है। यह मेला दशहरा व होली के अवसर पर असौज, फाल्गुन और वैशाख में वैशाखी पर होता है। इसमें केवल पहाड़ी लोग आते हैं।

# बीसवां अध्याय

## रीति–रिवाज

पैदा होने के समय की रस्म....... सिरमौर रियासत के राजपूतों में रीति रिवाज आम तौर पर मनु महाराज के धर्मशास्त्र के अनुसार हैं। यद्यपि वे सारे रीति रिवाज उसी विधि से और उसी संख्या में प्रचलित नहीं हैं, परन्तु थोड़े बहुत आज भी जारी हैं।

क्योंकि एक लम्बा समय व्यतीत हो जाने के कारण बहुत से रीति रिवाजों में बदलाव आ गया है और बहुत से छोड़ दिये गए हैं। नाहन खास में वहां बड़ी–बड़ी रस्में जिन का किया जाना ज़रूरी है,सभ्य लोगों में अब तक उसी तरह जारी हैं। पाठकों की जानकारी के लिए जो रस्में अब जारी हैं और जिन रस्मों को धर्म शास्त्र में लिखा गया है और जो प्राचीन समय में की जाती थीं, उनका यहां वर्णन करते हैं।

(1) गर्भाधान, (2) पुंसवन (पुत्र के पैदा होने के लिए), (3) सीमन्तोन्नयन (गर्भवती स्त्री के बाल ठीक करना), (4) जातकर्म (बच्चा पैदा होने के समय की रस्म), (5) नामकरण, (6) अन्न प्राशन (बच्चे को

पहली बार अन्न खिलाना), (7) चूड़ा कर्म (बच्चे के बाल मूंडना), (8) उपनयनकर्म (बच्चे को जनेऊ पहनाकर गुरुकुल में शिक्षा के लिए भेजना), (9) वेद की शिक्षा प्राप्त कर वापस आना, (10) विवाह।

नाहन के राजपूतों और ब्राह्मणों में केवल जातकर्म, नामकरण, अन्न प्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन और विवाह ही धर्म शास्त्र के अनुसार किये जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में विवाह के इलावा कोई कर्म नहीं किया जाता। परन्तु एक रस्म बच्चा पैदा होने के दस दिन बाद की जाती है जिसको दसोठन कहते हैं। यह रस्म सारे सिरमौर में हिन्दुओं की हरेक जाति में मनाई जाती है। उस दिन पहले हवन करते हैं फिर ब्राह्मणों को खाना खिलाते हैं। उसी दिन नामकरण भी कर देते हैं।

**विवाह की रस्म :–** रियासत सिरमौर में विवाह की रस्म मनु के धर्मशास्त्र के अनुसार होती है, जैसा कि सम्पूर्ण हिन्दुस्तान में रिवाज़ है। परन्तु यह रस्म हिन्दुस्तान के दूसरे भागों की तरह यहां पर भी केवल दिखावे के तौर पर पूरी की जाती है। रस्म के वास्तविक नियमों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया जाता। माता–पिता अपनी इच्छा के अनुसार अपने बच्चों के लिए किसी जगह पर, जिसको पसन्द करें, अपनी ही जाति में रिश्ता–नाता ढूंढते हैं। सबसे पहले परिवार की आर्थिक स्थिति और उनके सम्मान आदि को देखते हैं। यदि लड़का–लड़की के माता–पिता एक राय हो जाएं तो लड़का या लड़की को पूछे बगैर उनकी आयु, स्वभाव और रंग–रूप पर विचार किए बिना शादी का प्रस्ताव रख देते हैं और फिर जन्म–पत्री का मिलाना ज़रूरी ख़याल किया जाता है। जन्म–पत्री आम तौर पर फर्जी होती है, क्योंकि ब्राह्मणों की कम समझी के कारण सही तैयार नहीं होती। इसके अलावा जन्म पत्री का मिलना या न मिलना अधिकतर ज्योतिषियों के हाथ में होता है। वे आजकल जैसा मौका देखते हैं वैसे ही कार्य करते हैं।

आरम्भकाल में लड़का–लड़की एक–दूसरे को देख लेते थे। उसके बाद लड़का–लडकी की आयु, रूप–रंग और स्वभाव की जानकारी ली जाती थी, ताकि उन दोनों का मेल–जोल हमेशा आपस में बना रहे और वे आराम से जीवन व्यतीत कर सकें। परन्तु आजकल

आवश्यक मामलों को छोड़ दिया जाता है और केवल जन्मपत्री को प्राथमिकता दी जाती है। लड़का–लड़की की शारीरिक, दिमागी स्थिति और उसकी शैक्षणिक योग्यता, आयु, रूप–रंग और स्वभाव के मिलान का बहुत कम खयाल रखा जाता है तथा न ही इन सबके बारे में पूछताछ की जाती है। मनु महाराज ने तीसरे अध्याय में विवाह के समय जिन बातों की पूछताछ की जानी चाहिए उनके बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा है कि घटिया दर्जे के परिवार में चाहे वह धनी और इज़्ज़त वाला ही क्यों न हो, विवाह नहीं करना चाहिए। उन्होंने यह भी लिखा है कि उन त्रुटियों वाली कन्या से जिसका वर्णन तीसरे अध्याय के श्लोक सात से सोलह तक किया गया है और सपिण्डों (सात पुश्तें) की कन्या से किसी भी स्थिति में विवाह न किया जाए।

परन्तु आजकल ज़्यादा समझ–बूझ न रखने वाले लोग बाहरी इज़्ज़त ही को ध्यान में रखकर और दूसरी ज़रूरी बातों को भुलाकर कार्य करते हैं। एक बड़ी गलती यह की जाती है कि जिनका विवाह होना होता है, उनसे इस बारे में कुछ पूछा नहीं जाता, परिणामस्वरूप जीवनभर बुरे–भले का दण्ड भुगतना पड़ता है। कई बार तो इतनी छोटी आयु में विवाह कर दिया जाता है कि दूल्हा–दुलहन को इसका कुछ पता ही नहीं होता। वे बेचारे इसको एक खेल समझते हैं परन्तु यह विधि हिन्दुस्तान में कुछ शताब्दियों से प्रचलित प्रतीत होती है। क्योंकि प्राचीन समय की इतिहास की पुस्तकों से यह स्पष्ट होता है कि विवाह आमतौर पर सम्पूर्ण शिक्षा को ग्रहण करने के बाद बालिग होने पर किया जाता था। वेद के मंत्रों से, जो विवाह के समय पढ़े जाते थे, ऐसा ही स्पष्ट होता है। स्वयंवर का तरीका भी उस समय में सामान्य रूप से प्रचलित था। उस समय हिन्दुस्तान में पर्दे का रिवाज नहीं था।

स्वयंवर में लड़की, जो कि बालिग व शिक्षित होती थी, दूल्हे को उसके गुणों और स्वभाव को ज्ञात करके और रंग–रूप देखकर पसंद करती थी। यदि किसी कारण स्वयंवर नहीं होता तब भी लड़की के माता–पिता, लड़की की इच्छा जानकर उसका विवाह किया करते

थे, क्योंकि लड़की शिक्षित और बालिग होने के कारण अपनी राय देने में सक्षम हुआ करती थी। यद्यपि माता–पिता किसी कारणवश लड़की की इच्छा पूछे बगैर उसका विवाह करने का प्रस्ताव करते और वह उसको पसंद न होता तो वह स्पष्ट शब्दों में इनकार कर देती थी, जैसा कि रानी रुक्मिणी और संयोगिता आदि के बारे में इतिहास की पुस्तकों से स्पष्ट होता है और जिनका वर्णन टॉड साहिब ने अपने राजस्थान का इतिहास नामक पुस्तक में (वॉल्यूम 1, पेज 656) किया है।

मनु महाराज ने तो यहां तक लिखा है कि अगर लड़की के लिए योग्य और शिक्षित पति न मिले तो लड़की का विवाह उसके बालिग होने के बावजूद भी न किया जाए और उसको आजीवन बिना विवाह घर में रहने दिया जाए (मनु अध्याय श्लोक 9 पृ0 89)। परन्तु आजकल तो माता–पिता सिवाय अन्य दूसरी बात के केवल विवाह कर देना अपना सबसे बड़ा कर्तव्य समझते हैं। उनके आगामी जीवन के सुख और भलाई का कुछ विचार नहीं करते। विवाह के बाद चाहे कैसी भी स्थितियां उत्पन्न हों और चाहे वह किसी भी मुसीबत में फंस जाए। इस तरह के विवाह से मर्दों को कम हानि पहुंचती है, क्योंकि उनको तो धर्मशास्त्र के अनुसार दूसरा, तीसरा या चौथा विवाह करने की आज्ञा है परन्तु बेचारी लड़की के लिए कोई रास्ता नहीं है। उसका अगर किसी कारण पति से मेल–मिलाप न रहे तो सम्पूर्ण जीवन मुसीबत में फंसकर ज्यों–त्यों करके जीवन व्यतीत करना पड़ता है और मृत्यु के सिवाए उसको मुक्ति नहीं मिलती है।

यह बड़े ही दुःख की बात है कि इन बुराइयों को दूर करने के लिए कोई प्रयत्न नहीं किए जाते । प्राचीन काल में हिन्दुओं में आठ भांति के विवाह हुआ करते थे जिससे स्पष्ट होता है कि उस काल में जन्म कुण्डली इत्यादि की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता था बल्कि विवाह की एक अच्छी स्वतन्त्र विधि प्रचलित थी। पाठकों की जानकारी के लिए, विवाह की उन विधियों का, जो प्राचीन काल में प्रचलित थीं, हम नीचे वर्णन कर रहे हैं :–

(1) ब्राह्म विवाह (2) दैव विवाह (3) आर्ष विवाह (4) प्राजापत्य विवाह (5) असुर विवाह (6) गान्धर्व विवाह (7) राक्षस विवाह

(8) पैशाच विवाह।

(1) ब्राह्म विवाहः– ब्राह्म विवाह में लड़की का बाप लड़की को कपड़े लत्ते और आभूषण देकर दूल्हे को देता था।

(2) दैव विवाहः– दैव विवाह में लड़की का बाप यज्ञ में दूल्हे को अपनी लड़की दिया करता था।

(3) आर्ष विवाहः– आर्ष विवाह में लड़की का बाप दूल्हे से बैल या गाय लेकर लड़की को दूल्हे को सौंपता था।

(4) प्राजापत्य विवाह :– प्राजापत्य विवाह में दुलहन का बाप दूल्हे की जांच परख कर लड़की को उसे देता था।

(5) असुर विवाहः– असुर विवाह में दूल्हा लड़की के माता–पिता को धन दौलत देकर उसे उसके बाप से खरीदता था।

(6) गान्धर्व विवाहः– गान्धर्व विवाह में लड़का लड़की अपनी पसन्द के अनुसार स्वेच्छा से विवाह कर लिया करते थे।

(7) राक्षस विवाह :– राक्षस विवाह में दूल्हा जोर जबरदस्ती से दुलहन को ले जाता था। यदि लड़की के सगे संबंधी इसका विरोध करते थे तो उनसे मारपीट करता था।

(8) पैशाच विवाहः– पैशाच विवाह में पुरुष जबरदस्ती से या नशे इत्यादि की स्थिति में दुलहन को ले जाता था।

आपस्तम्ब ऋषि ने इन सब विवाहों में से तीन को अर्थात् ब्राह्म विवाह, दैव विवाह और आर्ष विवाह को अच्छा माना है। गौतम और बौधायन ऋषि ब्राह्म, देव, आर्ष और प्राजापत्य विवाहों को अच्छा मानते हैं परन्तु मनु सिवाय पैशाच और असुर विवाह के सब विवाहों को अच्छा मानता है। गान्धर्व और राक्षस विवाह क्षत्रियों के लिए स्वीकार्य थे परन्तु आजकल हिन्दुस्तान में केवल ब्राह्म विवाह ही प्रचलित हैं, दूसरी भांति के विवाहों का अब प्रचलन नहीं है।

इसी प्रकार रियासत सिरमौर में भी, गिरीपार क्षेत्र को छोड़कर, ब्राह्म विवाह की विधि से ही विवाह होता है। दूसरी जाति और सपिण्डों (सात पीढ़ियों तक) में आपस में विवाह नहीं होता । इसी प्रकार पहाड़ में भी अपने कुल या गोत्र में विवाह नहीं करते। गोत्र या कुल गांव के नाम से भी प्रचलित था। विवाह की रस्म पहले सगाई से आरम्भ होती

है । यह रस्म हिन्दुओं की हर जाति में की जाती है । विवाह से पहले एक दो साल पूर्व या कुछ महीने या कुछ दिन पूर्व ही और कभी–कभी तो यह रस्म विवाह के समय ही की जाती है, इसको मंगनी भी कहते हैं। इस रस्म के बाद विवाह के प्रस्ताव को सुनिश्चित मान लिया जाता है परन्तु कभी–कभी इस रस्म के पूरा हो जाने के बाद भी विवाह का प्रस्ताव टूट जाता है।

मंगनी की रस्म में दुलहन के माता–पिता कुछ कपड़े, आभूषण और नकदी इत्यादि दूल्हे के लिए भेजते हैं और इसके पश्चात् दूल्हे की तरफ से दुलहन के लिए भी आभूषण इत्यादि भेजे जाते हैं जिसको चढ़ावा कहते हैं। ये रस्में परिवार के किसी व्यक्ति द्वारा पूरी की जाती हैं या परिवार का पुरोहित पूरी करता है। इसके बाद विवाह की जो तिथि निश्चित होती है उससे एक–दो दिन पहले दूल्हे के सिर पर सेहरा बांधते हैं। सेहरे की रस्म पूरी हो जाने पर दूल्हा अपने सारे निकट सम्बन्धियों व मित्रों इत्यादि के साथ बारात लेकर दुलहन के घर जाता है। वहां निश्चित समय पर दूल्हा–दुलहन के हाथ मिलाये जाते हैं।

लड़की का बाप अपनी लड़की का हाथ दूल्हे को पकड़ा देता है और कहता है कि मैंने अपनी लड़की तुझको विवाह में दी है और तुझको दूल्हा मान लिया है। इसके बाद दुलहन का बाप दुलहन को आदेश देता है कि तू उसकी (अपने पति की) आज्ञा में रहना।

इसके बाद गवाही के तौर पर अग्नि जो कि हिन्दुओं में एक बड़ा देवता माना जाता है, जलाई जाती है। जिसमें पहले हवन किया जाता है, बाद में दूल्हा दुलहन उसके फेरे लगाते हैं जिसको सप्तपदी कहते हैं। साधारण लोग इसको फेरे कहते हैं। आजकल साधारण लोग फेरे की रस्म को विवाह समझते हैं परन्तु मूलरूप से दूल्हा व दुलहन का हाथ मिलाना जिसको शास्त्र में पाणिग्रहण या करग्रहण कहते हैं विवाह कहलाता है और इसी के लिए मुहूर्त देखा जाता है। फेरों का कोई मुहूर्त नहीं देखा जाता। इस रस्म के पूरा हो जाने पर दुलहन का पिता सब बारातियों को अपनी हैसियत अनुसार, एक दो दिन अपने यहां ठहराता है और उनको न्यौता देता है। इसके बाद

दहेज सहित अपनी लड़की को विदा करता है। दूल्हा दुलहन के साथ अपने घर वापिस आता है।

ब्राह्मणों, वैश्यों और दूसरी जातियों में दुलहन चार–पांच रोज़ दूल्हे के घर अर्थात् ससुराल में ठहर कर अपने माता–पिता के घर चली जाती है। वहां से अगर दूल्हा–दुलहन युवा हों तो सप्ताह या दस दिनों बाद या कभी–कभी कुछ महीनों बाद तथा दूल्हा–दुलहन के छोटी आयु के होने की स्थिति में कई साल के बाद अर्थात् एक या तीन साल के बाद जैसी स्थिति हो दुलहन दूल्हे के घर (ससुराल) भेजी जाती है। इस मौके पर दूल्हा दुलहन को लेने के लिए उसके घर पर जाता है। इस रस्म को मुकलावा या गौना कहते हैं, जिसको शास्त्र में द्विरागमन (दूसरी बार आना) लिखा है। कनैत जाति में, जो पहाड़ में बसती है मुकलावा की रस्म को घेरनु–फेरनु कहते हैं। विवाह के चार पांच रोज़ बाद दुलहन दूल्हे के घर से अपने माता पिता के घर वापिस जाती है। वहां चार–पांच रोज़ ठहर कर फिर दूल्हा दुलहन के घर जाता है और दुलहन अपने दूल्हे के साथ उसके घर आ जाती है।

धारटी, सैन, खोल और दून इत्यादि में भी हिन्दुओं की रस्मों के अनुसार विवाह होता है। यद्यपि कुछ रस्में ब्राह्मणों की अज्ञानता के कारण घट गई हैं परन्तु गिरिपार के क्षेत्र में झाझड़ा रस्म से विवाह होता है। इस रस्म में कर ग्रहण और फेरे इत्यादि कुछ नहीं होते।

झाझड़ा की रस्म इस तरह होती है कि लड़के का पिता या उसका कोई निकट संबंधी पुरोहित और एक दो दूसरे व्यक्तियों को साथ लेकर लड़की के घर जाते हैं और दुलहन के वास्ते आभूषण, नथ और पहनने के कपड़े अपनी हैसियत के अनुसार ले जाते हैं। पण्डित शुभ घड़ी देखकर कुछ पढ़कर दुलहन के नाक में नथ पहना देता है। इसके बाद गुड़ शक्कर बांटा जाता है। नथ लगाना अर्थात् नथ पहनाना ही विवाह का मुहूर्त होता है।

कनैत व भाट जाति के लोग सोने की नथ लगाते हैं और कोली व डुमणा जाति के लोग चांदी की नथ लगाते हैं। नथ पहनाने के बाद दुलहन को लाल जोड़ा पहनाया जाता है। दुलहन के दो–चार निकट के सगे संबंधी दुलहन के साथ चलते हैं और पति के घर ले

जाते हैं। पति के घर दुलहन और उसके सगे संबंधी मुहूर्त के अनुसार प्रवेश करते हैं।

हिन्दुस्तान में एक से अधिक विवाह करने का रिवाज़ है जो कि अधिकतर छोटी उम्र के विवाह का परिणाम है। कभी–कभी सन्तान न होने के कारण भी ऐसा किया जाता है क्योंकि लोगों का विचार है कि पुत्र के बगैर मां–बाप की मुक्ति नहीं होती, जैसा कि पुत्र शब्द से स्पष्ट होता है। यह पुत्र शब्द दो शब्दों अर्थात् पुत और तर से बना है।

पुत का अर्थ है नरक और तर का अर्थ है मुक्ति देने वाला (मनु अध्याय–9, श्लोक 138)। इस रियासत में भी यह रिवाज जारी है मगर शिक्षित लोगों की इसमें रुचि, विशेष कर नाहन शहर में, कम होती जा रही है परन्तु पहाड़ी क्षेत्र में यह रस्म अब भी प्रचलित है जहां रीत रस्म द्वारा विवाह एक आम बात है। कनैत लोग भाटों की स्त्री और भाट कनैतों की स्त्री ले आते हैं परन्तु इस तरह किए गए विवाह से उत्पन्न सन्तान की जाति मर्द की जाति पर ही होती है। गिरीपार के कुछ भागों में कई–कई सगे भाइयों की एक ही स्त्री होती है और वह सब भाइयों की सांझा स्त्री कहलाती है। उनकी सन्तान भी सांझा होती है। बड़ा बच्चा बड़े भाई का और उससे छोटा–छोटे भाई का माना जाता है। यह तरीका सगे भाइयों में होता है जोकि अब इकट्ठा रहते हैं, अगर भाई अलग–अलग रहते हों तो उनमें यह रिवाज नहीं है।

**मृत्यु की रस्म :–** हिन्दुओं में मृत्यु की रस्में मनु के धर्मशास्त्र के अनुसार की जाती हैं। जिस समय कोई मृत्यु के निकट होता है तो उसको बिस्तर, चरपाई से नीचे भूमि पर लिटा देते हैं। अन्तिम समय उसके सगे संबंधी, विशेष कर लड़का या पत्नी, गंगाजल, पंचरत्न, जिसमें सोना, चांदी, मूंगा, मोती इत्यादि पांच रत्न होते हैं, उसके मुंह में डालते हैं। जब उसकी सांस निकल जाती है तो उसका बड़ा पुत्र और कभी–कभी उसके जितने भी बालिग पुत्र होते हैं सब भद्र होते हैं अर्थात् सिर , मूंछ, दाढ़ी के बाल मुंडवाते हैं, फिर मृतक को स्नान कराकर कफन लपेटते हैं। उसका लड़का मृतक के पास, जहां पर कि वह पड़ा होता है, जौ के आटे का पिंड उसके नाम पर देता है । इसके बाद धनी लोग सन्दूक में और दरम्याने दर्जे के और गरीब लोग मृतक

को बांस की अर्थी पर रखकर उस पर अपनी हैसियत के अनुसार दोशाला या कोई और कपड़ा डालकर श्मशान भूमि ले जाते हैं।

अर्थी के साथ सब सगे संबंधी और मित्र आधे रास्ते में जाकर मृतक की अर्थी को भूमि पर रख देते हैं और वहां दूसरा पिंड देते हैं। अन्त में श्मशान भूमि में जाकर लाश के नीचे ऊपर लकड़ियां लगाकर अर्थात् चिता बनाकर घी डालकर हवन करते हैं और पिंड देते हैं। चिता में आग लगा दी जाती है। जब चिता जल उठती है तो चिता के साथ आए लोग वापिस आ जाते हैं और सगे संबंधी जिनको सपिण्डी कहते हैं, दस दिन तक शोक मनाते हैं। जलाने के तीसरे दिन मरघट में जाकर जले हुए मुर्दे की राख और हड्डियों को उठाते हैं जिनको हरिद्वार में गंगाजी में प्रवाहित करने के लिए भेजा जाता है। कुछ धनी लोग अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इन हड्डियों और राख को पालकी इत्यादि में रखकर दूसरे सामान के साथ जैसे कि वस्त्र, आभूषण, बर्तन, हाथी, घोड़े इत्यादि हरिद्वार भेजते हैं।

मध्यम वर्ग के लोग रेशमी या सूती कपड़े की थैली में इन अस्तुओं को डालकर किसी व्यक्ति के माध्यम से और कुछ निर्धन लोग स्वयं ले जाकर गंगा जी में प्रवाहित करते हैं। दस दिन तक सब निकट सम्बंधी हजामत नहीं बनवाते, न मांस आदि खाते हैं। जो व्यक्ति मृतक का क्रिया कर्म करता है वह ब्रह्मचर्य का पालन कर सबसे अलग रहता है, किसी को छूता नहीं, भूमि पर सोता है और साधारण खाना दिन में एक समय खाता है। दसवें दिन के बाद सब सगे सम्बन्धी तथा क्रिया कर्म करने वाला, तालाब या दूसरी किसी पानी वाली जगह जाते हैं। एक दादा के परिवार के लोग हजामत करवाकर सफेद कपड़े पहनते हैं।

ब्राह्मणों में ग्यारहवें दिन, क्षत्रियों में बारहवें दिन और वैश्य लोगों में तेरहवें दिन क्रिया होती है। इसके पश्चात् शोक समाप्त हो जाता है। क्रिया के दिन मृतक के लिए शय्या (चारपाई, वस्त्र, भांति–भांति की मिठाई, बर्तन तथा आभूषण) इत्यादि चार्ज को दिए जाते हैं। बारहवें दिन ब्राह्मणों को कलश दान करके दिए जाते हैं और तेरहवें दिन ब्राह्मण भोजन कराया जाता है, जो संख्या में आम तौर पर

तेरह होते हैं। धनी लोग, अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार, अधिक संख्या में ब्राह्मणों को भोजन करवाते हैं।

एक वर्ष तक प्रत्येक महीने मृतक के नाम पर अनाज इत्यादि ब्राह्मणों को दान देते हैं। एक वर्ष के बाद पिंड दिए जाते हैं और अपनी स्थिति के अनुसार वस्त्र और आभूषण आदि सामान दिया जाता है, जिसको बरसैनी कहते हैं। चार वर्ष बाद फिर आभूषण, वस्त्र आदि सामान दिया जाता है, जिसको चौबरसी कहते हैं।

इसके पश्चात् हर वर्ष उस तिथि को जिस दिन कि उस व्यक्ति का स्वर्गवास हुआ था, उसके नाम पर श्राद्ध होता है, जिसको एकोदिष्ट श्राद्ध कहा जाता है। इसके अतिरिक्त एक श्राद्ध असौज मास के कनागतों में मृतक की मृत्यु तिथि के दिन किया जाता है, जिसको पार्वण श्राद्ध कहते हैं।

मृतक का क्रिया कर्म उसका बड़ा पुत्र करता है और उसकी अनुपस्थिति में भाई। भाई की अनुपस्थिति में कोई सगा सम्बन्धी श्राद्ध करता है। मृतक की स्त्री अपने पूरे आभूषण उतार देती है और सफेद वस्त्र पहनती है। ब्राह्मण भोजन के दिन पगड़ी की रस्म होती है, अर्थात् सगे सम्बन्धी और जान–पहचान वाले लोग तथा मित्र वस्त्र, कम से कम एक पगड़ी के साथ कुछ पैसे अपनी आर्थिक स्थिति अनुसार देते हैं। इसमें से एक पगड़ी क्रिया कर्म करने वाले के सर पर बांधी जाती है अर्थात् वह मृतक का पदभार सम्भाल लेता है।

धारटी, खोल व सैन के क्षेत्रों में मृत्यु से सम्बन्धित रस्में लगभग इसी प्रकार की जाती हैं, जिस तरह कि नाहन शहर में होती हैं। परन्तु पूरी विधि मालूम न होने के कारण यह पूर्ण रूप से नहीं निभाई जातीं। तेरहवें दिन ब्राह्मणों को खाना खिलाकर और शोक जताने आए सगे सम्बन्धियों, जिनकी संख्या कभी–कभी सैंकड़ों तक पहुंच जाती है, को भी चावल और शक्कर खिलाते हैं, जिसको वे लोग कान कहते हैं। सगे सम्बन्धी गुड़ या घी अपने साथ लाते हैं। कभी–कभी एक रुपया पगड़ी की रस्म के तौर पर शोक व्यक्त करने के समय देते हैं। गिरीपार क्षेत्र में मृतक को नदी या खड्ड के किनारे ले जा कर जलाया जाता है। राख और हड्डियां पानी में प्रवाहित कर

दी जाती हैं। यदि पानी न हो तो बरसात के मौसम में वे खुद बह जाती हैं। तेरह दिन के बाद ब्राह्मणों को भोजन खिलाया जाता है और सगे सम्बंधियों को भी खाना देते हैं जिसको कान कहते हैं। इस रस्म के अतिरिक्त और कोई रस्म नहीं की जाती।

# इक्कीसवां अध्याय

## रहन–सहन

रियासत सिरमौर में लोगों के भवनों की बनावट और रहने–सहने का ढंग विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न है। नाहन शहर में लोगों के भवन आम तौर पर, उनकी आर्थिक स्थिति अनुसार, पत्थर–गारे के या पत्थर–चूना की चिनाई वाले होते हैं। परन्तु कुछ समय से पक्की ईंट के भवन बनाने का भी रिवाज हो गया है। धनी लोगों के भवन पक्की ईंट या पत्थर की चिनाई और चूना प्लास्टर के बने होते हैं। साधारणतया ये भवन कोठरी और बरामदे वाले होते हैं, जिसे पौड़ा कहते हैं। बीच में एक चौकोर आंगन होता है, चारों तरफ भवन होते हैं। अन्दर के भाग में स्त्रियां रहती हैं, जिसमें साधारणतया एक दालान, एक–दो कोठरी, एक रसोई और एक शौचालय होता है। बाहरी भाग में एक तरफ मर्दाना भवन होता है, जिसको बैठक कहते हैं। एक तरफ ड्योढ़ी या दहलीज होती है। भवनों के अन्दर चूना या गारे की लिपाई की जाती है। इसी प्रकार से कुछ भवनों के आंगन पक्के और कुछ के कच्चे होते हैं।

धनी लोगों के दो मंज़िला भवन भी होते हैं। ऊपर के हिस्से को चौबारा बोलते हैं, जो कि आम तौर पर ईंट की चिनाई के होते हैं। भवनों की छतें समतल होती हैं, कड़ीतूर, तख्ता इत्यादि छत में प्रयोग किए जाते हैं और उन पर मिट्टी या कंकरी डाली जाती है। आम तौर पर भवन आयताकार होते हैं, अर्थात् आठ नौ फुट चौड़ा और बारह

पन्द्रह फुट लम्बा तथा ऊंचाई आठ नौ फुट होती है। निर्धन लोगों के मकान एक दालान और एक कोठरी वाले होते हैं, इसकी चिनाई पत्थरों की होती है। रसोई घास के छत वाली होती है, जिसको स्वराछप्पर कहते हैं, परन्तु अब घास और लकड़ी की कमी के कारण टीन की चादरें डालने का रिवाज होता जा रहा है। निर्धन लोग आम तौर पर शौच के लिए जंगलों में जाते हैं, परन्तु अब म्यूनिसिपल कमेटी के आदेश से लोग घरों में शौचालय बनाने लगे हैं। कमेटी की ओर से उसकी हदों में शौचालय बनाये गये हैं।

दहलीज का आम तौर पर गौशाला के रूप में उपयोग किया जाता है। परन्तु अब कमेटी से इसकी भी मनाही हो गई है। भवनों की सफाई प्रत्येक वर्ष दीवाली के समय की जाती है। अन्दर की सफाई गोबर मिट्टी से और बाहर की चूने से करते हैं। शहर में आम तौर पर दो मंज़िला भवन हैं। तीन मंज़िला भवन केवल गिने–चुने ही हैं। अब नाहन शहर में भवन अंग्रेज़ी ढंग के भी बनने लगे हैं। भवनों में बरामदे बनाए जा रहे हैं। अच्छी ऊंचाई और कॉरनेस इत्यादि बनाने का भी रिवाज़ होता जा रहा है। रियासत के पुराने भवन पुरानी बनावट के हैं, अर्थात् चार दिवारी से घिरे हुए और दालान तथा कोठरी के रंग रूप वाले परन्तु अब भवनों में आम तौर पर अंग्रेज़ी नमूना अपनाया जा रहा है।

धारटी क्षेत्र के भवन पत्थर गारा की चिनाई के और समतल छतों वाले हैं। इन पर मिट्टी डाली जाती है। एक परिवार के लिए एक दालान, एक–दो कोठरी और एक ओबरा पशुओं के लिए होता है और रसोई भी होती है। शौच के लिए ये लोग जंगल में जाते हैं। भवनों की ऊंचाई छः या सात फुट होती है। कमरों की लम्बाई चौड़ाई से अधिक होती है। कुछ स्थानों में गौशाला, जिनको पहाड़ी भाषा में ओबरा कहते हैं, निचली मंज़िल में होते हैं और ऊपर की मंज़िल को रहने–सहने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। भवनों को अधिकतर गोबर–मिट्टी से लीपते हैं। गोबर की लिपाई सप्ताह में एक बार की जाती है, इस क्षेत्र के भवन अच्छी बनावट के नहीं होते और न ही ये लोग अच्छी सफाई रखते हैं।

सैन के क्षेत्र के भवन भी पत्थर गारा की चिनाई के होते हैं, भवनों का रूप वैसा ही होता है, जैसा कि धारटी क्षेत्र का है। परन्तु

भदनों की बनावट धारटी क्षेत्र के भवनों से अच्छी होती है। इस क्षेत्र के लोग भवनों को चूना आदि की लिपाई से साफ–सुथरा रखते हैं। लिपाई हर वर्ष दीवाली के समय की जाती है। गिरीपार क्षेत्र के भवन छोटे–छोटे पत्थरों की सूखी चिनाई वाले होते हैं और पांच–चार रदों के बाद कैल की लकड़ी को लम्बाई में रख दिया जाता है। इस लकड़ी को च्यूल कहते हैं, इससे पत्थर नहीं खिसकते और बनावट मज़बूत रहती है। यह लकड़ी पानी में नहीं सड़ती। दीवारों की ऊंचाई पांच या छः फुट के लगभग होती है। भवनों की छतें आम तौर पर कैल की लकड़ी की सलामीदार होती हैं और इन पर स्लेट के पत्थर, जो गिरीपार क्षेत्र में निकलते हैं, डाले जाते हैं। स्लेटों को मेख से जड़ दिया जाता है।

गिरीपार क्षेत्र में अधिकतर भवन दो मंज़िला होते हैं। निचली मंज़िल की ऊंचाई चार फुट के लगभग होती है। इसमें पशु रखे जाते हैं और ऊपर की मंज़िल में पहाड़ी लोग खुद रहते हैं। भवनों की एक तरफ लम्बाई में बरामदा भी होता है, जिसको तुंग कहते हैं। तुंग की लम्बाई भवन की लम्बाई के बराबर होती है। फर्श, बरामदा और भवन लकड़ी का बना होता है। नीचे की मंज़िल का फर्श मिट्टी का होता है। इन लोगों के भवनों में आम तौर पर एक या दो दालान और एक गौशाला होती है, जो कि कभी–कभी उसी भवन के नीचे की मंज़िल होती है और कभी अलग, जिसको ओबरा कहते हैं। साधारण कृषकों का भवन केवल एक दालान और एक ओबरे वाला होता है। कुछ भवन तीन मंज़िला भी होते हैं मगर तीसरी मंज़िल में प्रायः देवता रखा जाता है। भवनों के दरवाज़े बहुत छोटे होते हैं, अर्थात् तीन चार फुट ऊंचे और दो ढाई फुट चौड़े। दून और खोल के क्षेत्रों के भवन आम तौर पर घास से छाए होते हैं, जिसको छप्पर कहते हैं। पत्थर के भवन बहुत कम होते हैं। कुछ छप्परों की दीवारें भी घास की और कुछ की मिट्टी की होती हैं। चारदीवारी बनाने का रिवाज़ गांव में नहीं हैं क्योंकि वहां पर पर्दे का दस्तूर नहीं है।

नाहन शहर में धनी और मध्यम वर्ग के लोगों के भवन, बैठकें और सोने के कमरे अलग–अलग होते हैं परन्तु साधारण व्यक्तियों के

भवन, बैठकें और सोने का एक ही कमरा होता है। मगर रसोईखाना अलग होता है। धनी लोगों के भवनों में लैम्प, गालीचे, दरी, मेज, कुर्सी, सोफा आदि अंग्रेज़ी ढंग के होते हैं। मध्यम वर्ग के लोगों के यहां केवल एक–दो कुर्सियां, एक मेज़, टाट, लैम्प या दीवारगीर, उनकी आर्थिक स्थिति के अनुसार होता है। साधारण लोगों के यहां चारपाई और चटाई इत्यादि देसी किस्म का मामूली सामान होता है। लैम्प के स्थान पर मिट्टी का दिया या मामूली छोटा लैम्प होता है। परन्तु अब हर विशेष और साधारण व्यक्ति के घरों में मिट्टी के तेल का आम रिवाज़ हो गया है।

नाहन शहर में पर्दे का आम रिवाज़ है। मामूली आर्थिक स्थिति वाले लोगों में इस रिवाज़ की अधिक पाबन्दी नहीं रखी जाती, विशेषकर माली, धोबी, कहार इत्यादि व्यावसायिक जातियों में इसका बहुत कम रिवाज़ है। क्योंकि इन जाति के लोगों को आम तौर पर शहर में काम करने के लिए जाना पड़ता है। फिर भी औरतों में गैर मर्दों से मुंह छिपाने अर्थात् घूंघट रखने का आम रिवाज़ है। धनी आदमियों में मर्दों की बैठकें और औरतों के रहने के अलग–अलग भवन होते हैं। गांव में पुरुष और स्त्रियों के लिए एक ही भवन होता है, क्योंकि वहां पर पर्दे की रस्म बहुत ही कम है। वहां की स्त्रियां अधिक से अधिक अनजाने लोगों से घूंघट निकाल लेती हैं। गांव में कोई मेज़, कुर्सी इत्यादि फर्नीचर नहीं होता है। ज़्यादा से ज़्यादा चारपाई और चटाई होती है। यहां अधिकतर भूमि पर सोने का रिवाज़ है और घरों में दिये जलाए जाते हैं। विशेषकर गिरीपार के क्षेत्र में चारपाई का कदापि रिवाज़ नहीं है। वहां लोग एक किस्म की चटाई पर, जिसे मान्द्री कहते हैं, सोते हैं। उजाले के लिए मिट्टी के दिये जलाते हैं और वे मिट्टी के तेल का प्रयोग नहीं करते हैं।

परन्तु अब सैन, धारटी, खोल और दून क्षेत्रों में चारपाई और मिट्टी के तेल का रिवाज़ होता जा रहा है। बहुत से गांवों में चारपाइयां आ गई हैं। नाहन के पुरुषों के वस्त्र भी प्राचीनकाल में रंगदार हुआ करते थे। वे चुस्त पजामा, छोटा कुर्ता और सिर पर पगड़ी या दो पलड़ी टोपी पहनते थे और हिन्दुस्तानी ढंग की वास्केट, जिसको

मिर्ज़ाई या सदरी कहते थे, अच्छे मौकों पर जामावार, जो टखनों तक लम्बा होता था, पहनते थे। वहां मर्द गले में कण्ठा, सिर पर कलगी और हाथ में कड़े पहनते थे। बाद में सिरबन्द दुपट्टा, खुले आस्तीन का कुर्ता, चुस्त पजामा और रेबदार अंगरखा और लम्बे कोट (चोगा) का रिवाज़ हुआ। इसके पश्चात् चिपकन चोगा इत्यादि का रिवाज़ भी हुआ। आजकल कुर्ते के स्थान पर कमीज़ या तंग आस्तीन का कुर्ता और ढीला पजामा और अंगरखे के स्थान पर कोट का रिवाज़ हो गया है। लोग अब अंग्रेज़ी ढंग की वास्केट पहनने लगे हैं। कुछ लोग तो कुर्ते पजामे की जगह पर पतलून कोट भी पहनने लगे हैं, परन्तु इनका रिवाज़ अभी तक बहुत कम है। नाहन में पुरुषों का आम पहरावा कमीज़, पजामा, वास्केट और कोट है।

ब्राह्मण और महाजनों में धोती, कुर्ता व टोपी का रिवाज़ है। धनी व्यक्तियों में चिपकन, शेरवानी, कमीज़, पजामा, कोट और अंग्रेज़ी वास्कट का रिवाज है। कभी–कभी अंग्रेज़ी कोट, पतलून भी पहने जाते हैं। टोपी को छोड़कर सारे के सारे वस्त्र अंग्रेज़ी ढंग के ही प्रयोग में लाए जाते हैं। परन्तु अंग्रेज़ी वस्त्र घर से बाहर जाने के लिए पहने जाते हैं, घरों में तो वही देसी वस्त्र चलते हैं। धूप और बारिश में अंग्रेजी टोपी का रिवाज भी अब शुरू हो गया है क्योंकि छतरी उठाने के बजाए अंग्रेज़ी टोपी के प्रयोग को प्राथमिकता दी जाती है। अंग्रेज़ी बूट भी बाहर जाने के लिए पहने जाते हैं परन्तु घरों में अंग्रेज़ी ढंग के पम्प या हिन्दुस्तानी जूते का रिवाज़ आम है।

नाहन में स्त्रियों के वस्त्र प्राचीनकाल से रंगदार कुर्ता पजामा व दुपट्टा था और अब भी कुर्ता, पजामा और वास्कट का रिवाज़ है। बाहर जाने के लिए मध्यम वर्ग के लोगों में तो स्त्रियां लहंगा, जिसको नाहन में घघरा कहते हैं, जो कि आम तौर पर रंगे हुए कपड़े का होता है, पहनती हैं परन्तु अब बुर्के का रिवाज़ भी हो गया है। धनी व्यक्तियों की पत्नियां पालकी या डोली इत्यादि में आती–जाती हैं। आभूषण यहां पर हिन्दुस्तानी बनावट के पहने जाते हैं परन्तु अब कानों और पैरों में ज्यादा आभूषण पहनने का रिवाज़ कम होता जा रहा है। कानों में आम तौर पर लुर्का इत्यादि पहने जाते हैं। नत्थ या बुलाक का रिवाज़, जो

कि पहले अधिक था, अब घटता जा रहा है। इनके स्थान पर नाक में सुनहरी तिल्ली या लौंग डालते हैं।

धारटी और सैन क्षेत्रों में पुरुषों का पहरावा छोटी धोती, जिसको साफा कहते हैं और कुर्ता–टोपी है। खेती–बाड़ी का कार्य करते समय ये लोग लंगोट बांधते हैं। खोल और दून में भी कुर्ता, टोपी व छोटी धोती और लंगोट का रिवाज है। विवाह आदि के समय कुर्ता पजामा या बड़ी धोती, वास्कट और पगड़ी बांधते हैं। धारटी, सैन, खोल और दून में स्त्रियों का पहरावा कुर्ता–पजामा और दुपट्टा है। गिरीपार क्षेत्र में पुरुषों का पहरावा सफेद लोईया, जो कि ऊन का बना हुआ होता है, लंगोट और सिर के लिए ऊनी या साधारण वस्त्र की टोपी होती है। शीतकाल में कुछ लोग ऊन का काले रंग का पजामा भी पहनते हैं। दुपट्टा और सरबन्द (पगड़ी) ये नहीं पहनते। कुछ नम्बरदार आदि कुर्ता, पजामा और कोट पहनने लगे हैं और पगड़ी भी बांधते हैं। गिरीपार क्षेत्र की स्त्रियां छींट का गोटेदार लहंगा, जो टखनों से ऊपर होता है और सिर पर सफेद रूमाल बांध लेती हैं, जिसके धाटू बोलते हैं। स्त्रियां पजामा नहीं पहनतीं।

नाहन शहर में आम तौर पर लोग दो समय खाना खाते हैं, अर्थात् एक बार दोपहर में और एक बार रात को। दोपहर का खाना दाल, चावल और फुल्का होता है और रात को फुल्का खाते हैं। बहुत से लोग चावल खाना पसन्द करते हैं। शादी, विवाह और दूसरे त्योहारों के समय चावल और मांस बनाया जाता है। मांस आम तौर पर बकरी का होता है, जो नाहन में कसाइयों के पास मिलता है। बहुत से हिन्दू, मुसलमानी ढंग (हलाल) से काटे गए मांस को नहीं खाते। परन्तु अब स्वतन्त्र विचार होने के कारण और झटका किया गया मांस न मिलने के कारण हलाल खाने लगे हैं। जिन लोगों की आर्थिक स्थिति अच्छी है वे सदैव सब्जी और मांस, चावल, रोटी इत्यादि का प्रयोग करते हैं, नहीं तो आम तौर पर दाल–रोटी का रिवाज़ है। चावल विशेष अवसरों पर प्रयोग किए जाते हैं। धनी लोगों में सुबह के समय चाय पीने का रिवाज हो गया है, वे तीसरे पहर भी चाय, नाश्ता और फल इत्यादि प्रयोग करते हैं।

पिछले समय में राजपूत ब्राह्मणों के सिवाय किसी दूसरी जाति के व्यक्ति के हाथ का बना हुआ खाना नहीं खाते थे और कपड़े उतार कर बनाया गया कच्चा खाना खाते थे। पक्का खाना (पूरी कचौरी इत्यादि) कपड़े पहने हुए भी खा लेते थे, परन्तु राजा शमशेर प्रकाश साहिब के समय से, कनैतों के हाथ का, जो कि एक प्रकार के राजपूत ही हैं, खा लेते हैं। अब कपड़े उतार कर बनाए गए खाने का रिवाज़ भी नहीं रहा है। ब्राह्मण और वैश्य लोग अब भी ब्राह्मण के हाथ का कपड़े उतार कर बनाया हुआ कच्चा खाना खाते हैं। धनी लोग लकड़ी या पीतल की गोल या चौकोर चौकियों पर ज़मीन पर आसन लगाकर या गलीचा बिछाकर खाना खाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग–अलग चौकी व आसन होता है। खाना खाने के बर्तन चांदी व कांसे के होते हैं, परन्तु अब चीनी मिट्टी और कांच के बर्तनों का रिवाज़ ही हो चला है। मध्यम वर्ग के लोग कांसे, पीतल के बर्तनों में अलग–अलग खाते हैं। खाना मालझन, ताम्बूल (पान) और ढाक इत्यादि के पत्तों पर भी खाया जाता है। इन्हीं पत्तों के डोने या कटोरे बनाए जाते हैं।

साधारण व्यक्ति जो धनी नहीं है, पत्तों पर या पीतल के बर्तनों में खाना खाते हैं। एक बर्तन में खाना खाने का रिवाज़ हिन्दुओं में नहीं है परन्तु मुसलमान लोग एक बर्तन में जो कि मिट्टी या कलई किया हुआ ताम्बे का होता है, खाना खाते हैं। धारटी, गिरीपार, सैन और खोल के ग्रामीण क्षेत्रों में लोग सुबह के समय, दोपहर और रात को खाना खाते हैं। सुबह के खाने को निरना कहते हैं। उस समय आम तौर पर रात की पकी बासी रोटी, दही या छाछ के साथ खाते हैं परन्तु उस समय खाना खाने वाले आम तौर पर बच्चे होते हैं। दोपहर के खाने को चेली कहते हैं, उस समय सत्तू, जो कि भूनी या उबाली हुई मक्की के पीसे हुए होते हैं, छाछ के साथ खाते हैं। रात के खाने को ब्यालू कहते हैं और उस समय दाल रोटी खाई जाती है।

ग्रामीण लोग आम तौर पर मोटे अनाज अर्थात् मक्की, कोदा इत्यादि अधिक अपने प्रयोग में लाते हैं। वे अपने अच्छे अनाज को बेचकर मालगुज़ारी (लगान) देते हैं। इनको मालगुज़ारी देने का बहुत ख़याल रहता है, इस कारण वह अपना निर्वाह मोटे अनाज व माश की

दाल खाकर करते हैं। वे कुल्थी भी खाते हैं। पहाड़ी लोग चावल खाना अधिक पसन्द करते हैं, जो शादी, विवाह और त्योहारों के अवसर पर बड़े शौक से खाया जाता है। पहाड़ में लोग मांस खाने का भी शौक रखते हैं। इसी प्रकार गिरीपार के लोग भी तीन समय भोजन करते हैं। वे लोग सुबह के समय उबाली हुई गागटी (अरबी), जिसको कुंदड़े की गागटी कहते हैं, खाते हैं। दोपहर को सत्तू या मक्की की रोटी और रात को मक्की, कोदा और चौलाई की रोटी, माष या कुल्थी की दाल खाते हैं। वे चावल और गेहूं शादी, त्योहारों के अवसरों पर प्रयोग करते हैं। मांस के ये लोग भी बहुत शौकीन हैं, परन्तु अधिकारियों द्वारा शिकार खेलने पर लगाई गई पाबन्दी के कारण गांव के सब लोग मांस से वंचित रहते हैं। फिर भी गिरीपार के लोग शादी–विवाह और त्योहारों के अवसरों पर आम तौर पर बकरे काटते हैं और सूर व शराब पीते हैं।

दून के क्षेत्र में भी कृषक लोग तीन समय खाना खाते हैं। सुबह के समय दाल माश और रोटी, दोपहर के समय छाछ के साथ रोटी और रात को भी दाल–रोटी खाते हैं। ये लोग भी मोटा अनाज खाते हैं। आम तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में खाना खाने के बर्तन तांबा, पीतल या लोहे के बने होते हैं। कांसे के बर्तन बहुत कम होते हैं। पहाड़ी क्षेत्र में त्योहार के अवसर पर पटाण्डे, जो कि गेहूं के पतले आटे को तवे पर फैलाकर बनाए जाते हैं तथा असकली, जो कि चावल के आटे की होती है, आटा पतला करके एक पत्थर में, जिसमें छोटे–छोटे खाने खुदे होते हैं और जिसको आग पर तेज़ गर्म कर लिया जाता है, बनाते हैं। कभी–कभी चावलों को छाछ में पकाकर, जमा लेते हैं, फिर उसके टुकड़े काटकर, शक्कर, चीनी या शहद के साथ खाते हैं, जिसको कांजन कहते हैं। पुटाण्डे को खीर, मिठाई और घी के साथ खाया जाता है तथा असकली को दाल के साथ खाया जाता है।

रियासत सिरमौर के निवासियों में अफीम की आदत नहीं है, पहले शराब पीने की आदत भी ज़्यादा नहीं थी, परन्तु अब बढ़ती जा रही है। इन लोगों में तम्बाकू पीने की आम आदत है। नाहन शहर में चुरुट पीने का रिवाज़ भी हो गया है, यह रिवाज़ इतना बढ़ चुका है कि रियासत को विक्रमी सम्वत् 1964 में हुक्का, सिगरेट और चुरुट

पीने के बारे में एक आदेश निकालना पड़ा था जिसके अन्तर्गत कोई भी लड़का, जिसकी आयु 18 वर्ष से कम थी, इस आदेश का उल्लंघन करने पर दण्डित किया जाता था।

# बाईसवां अध्याय

## पुराने भवन

### पवित्र स्थान, ाचीन भवन तथा मानव कल्याण इत्यादि

भिन्न–भिन्न समय में सिरमौर रियासत की राजधानी भिन्न–भिन्न स्थानों पर रही है, जिसके किलों के अवशेष और आबादी के निशान इत्यादि रियासत के विभिन्न भागों में पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त सिरमौर की रियासत के कुछ भाग अब रियासत से बाहर हैं और उनके अवशेष भी मिलते हैं। आरम्भकाल में इस रियासत की राजधानी तहसील पांवटा के सिरमौर नामक स्थान पर थी। उसके बाद इसी स्थान के निकट राजवन में बनी। राजधानी सिरमौर की पुरानी आबादी और मन्दिरों के अवशेष अब तक मिलते हैं। इसके अतिरिक्त वहां एक झील क अवशेष, जो कि गिरी नदी में बाढ़ आने के कारण नष्ट हो गई थी और जिसने राजधानी को बर्बाद कर दिया था, अब भी मिलते हैं। कुछ समय तक इस झील में पानी रहता था, परन्तु अब यह पूरी तरह से सूखी पड़ी है और कृषक लोग इसमें खेती–बाड़ी करते हैं।

राजवन में पुराने भवनों के अवशेष, पत्थरों से बने हुए पक्के फर्शों के निशान और पुराना कुआं अब तक मौजूद हैं। इसी प्रकार क्यारदादून के सारे क्षेत्र में भिन्न–भिन्न स्थानों पर पुरानी आबादियों के अवशेष, भवनों और मन्दिरों इत्यादि के खण्डहर अब भी पाए जाते हैं। गरीबनाथ के पहाड़ पर, जो कि सिरमौर नामक स्थान से बहुत

नज़दीक है, मन्दिर के अवशेष मिलते हैं। इसके निकटवर्ती क्षेत्र में कुछ कुएं उसी काल के मौजूद हैं, जो पंचकुईं के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन कुंओं के बारे में आम लोगों का विश्वास है कि अगर कोई बांझ स्त्री या जिस स्त्री के बच्चे छोटी आयु में मर जाते हों, इस कुएं के पानी से नहाए तो वह मां बन जाती है और उसके बच्चे भी नष्ट नहीं होते।

मौज़ा क्यारदा, जो कि इस पुस्तक के संयोजक की मलकीयत है, में एक पहाड़ी पर चबूतरे के अवशेष हैं, जिसमें घड़े हुए पत्थर लगे हैं। इस चबूतरे को लोग थानादार का चबूतरा कहते हैं। इस पहाड़ी के आस–पास भवनों के अवशेष भी हैं जिससे प्रतीत होता है कि उस काल में उस स्थान पर कोई सरकारी भवन रहा होगा। क्योंकि यह स्थान अधिक ऊंचाई पर स्थित है और इसी मौज़ा के नाम से यह क्षेत्र क्यारदादून के नाम से विख्यात है। मौज़ा व्यास में जो कि माज़रा से उत्तर की ओर है, एक पुराना शिव मन्दिर है। वहां पत्थर से बना हुआ एक कुआं भी है। एक अन्य पुराना मन्दिर मौजा रामपुरमाजरी में है, जिसको लोग देवी का मन्दिर कहते हैं। इन पर तख्ती इत्यादि नहीं लगी है, जिससे इनके निर्माण का समय ज्ञात हो सके। परन्तु इसमें कोई शक नहीं है कि वे उसी पुराने काल में निर्मित हुए हैं क्योंकि उनकी बनावट से यह साफ पता चलता है।

सिरमौर और राजवन, सिरमौर के पांच राजाओं के शासनकाल में राजधानी रहे। इसके बाद कालसी में, जो कि गिरी नदी के पार है, राजधानी हुई। यह क्षेत्र कुछ समय से ब्रिटिश सरकार के ज़िला देहरादून में मिला दिया गया है। कालसी में भी सिरमौर के राजाओं के भवनों के अवशेष मौजूद हैं, जिनको लोग अब तक राजा साहब के भण्डार और महलों के अवशेष बतलाते हैं। एक ठाकुरद्वारा भी वहां मौजूद है जिसमें नाहन के महन्त जगन्नाथ जी का उप–महन्त रहता है। एक काली मन्दिर वहां पर अभी तक मौजूद है। इसके अतिरिक्त रियासत सिरमौर की राजधानी हाटकोटी और कहरजड़ी में, जो अब रियासत रतेश और जुनगा के क्षेत्र हैं, रही है। हाटकोटी में अब भी एक दुर्ग के अवशेष मिलते हैं। कुछ समय तक तहसील पच्छाद का देवथल नामक स्थान भी सिरमौर की राजधानी रहा है। यहां पर भी

किले के अवशेष और पुरानी आबादी के खण्डहर मिलते हैं।

मानगढ़, जो देवथल के निकट एक गांव है वहां पर एक पुराना मन्दिर है, जिसको लोग पाण्डवों का मन्दिर कहते हैं परन्तु विचार किया जाता है कि यह भी उसी काल का होगा जब देवथल में राजधानी थी। नाहन के निकट पैड़ीवाला स्थान पर, जहां सिरमौर के राजाओं और उनके परिवारों के लोगों की समाधियां हैं पत्थर का बना हुआ एक पुराना शिव मन्दिर भी मौजूद है। इसके आस–पास आबादी के अवशेष भी देखे जाते हैं। इससे दो–तीन मील की दूरी पर पश्चिम की ओर एक पहाड़ है, जिसको राजा रसालू का पहाड़ कहते हैं। इस पहाड़ पर थोड़े–बहुत आबादी के अवशेष प्रतीत होते हैं। सुना जाता है कि कुछ समय पूर्व कुछ व्यक्तियों को इस पहाड़ पर कुछ दबाया हुआ धन इत्यादि प्राप्त हुआ था। लोगों का विचार है कि राजा रसालू के शासन काल में, जो कि सिरमौर के राजपरिवार से एक राजा हुआ है, इस स्थान पर आबादी होगी। इसीलिए यह पहाड़ राजा रसालू के नाम से विख्यात है। इसके अतिरिक्त ऊंचे–ऊंचे पहाड़ों पर पुराने दुर्गों के अवशेष और चिन्ह पाए जाते हैं।

तहसील पांवटा के कांगड़ा नामक पहाड़ पर एक किला है, जहां महाराजा कर्मप्रकाश, रियाया के विद्रोह के समय, नाहन से आकर रहे थे। गातों के पहाड़ पर, जो तहसील पांवटा में है, एक किले के चिन्ह पाए जाते हैं, जिसको कुम्भीगढ़ का किला कहते हैं। तहसील पच्छाद के पुनूवाला स्थान पर एक किले के अवशेष हैं, जो कि बाग्गरवाला के नाम से विख्यात है। एक किला पच्छाद तहसील के राजगढ़ में था, जिसमें अब वन खण्ड अधिकारी का कार्यालय है। एक अन्य किला रेणुका तहसील के हरीपुर नामक स्थान पर था, जिसमें अब वन रक्षक की चौकी है। एक और पुराने किले के चिन्ह मोरनी पहाड़ पर मिलते हैं, जिसको सिरमौर की रियासत से काटकर, ब्रिटिश सरकार ने कोटा के मीर साहिब (हाकिम) को दे दिया था। एक अन्य किला जगतगढ़ नाम का है, जिसको ब्रिटिश सरकार ने सिरमौर के क्षेत्र से निकाल कर पटियाला के राजा को दे दिया था।

**पवित्र स्थान** :– जिस प्रकार भारत के दूसरे स्थानों, प्रत्येक गांव व कस्बे में प्रत्येक फिरके के लोगों का अलग–अलग देवस्थान है, इसी प्रकार इस रियासत में भी प्रत्येक फिरके का प्रत्येक गांव में कोई न कोई पूजा का स्थान अवश्य है, जहां इन गांवों के निवासी किसी बड़े वृक्ष, पीपल और बड़ इत्यादि के नीचे या कोई छोटा सा भवन बनाकर किसी देवी या देवता की पत्थर की मूर्तियां स्थापित कर पूजा करते हैं। पहाड़ी क्षेत्र में तो आम तौर पर भवन बनाए जाते हैं। विशेषकर गिरी पार के क्षेत्र में तो देवता के लिए दो–दो, तीन–तीन मंज़िलों के भवन अवश्य होते हैं। दूसरे क्षेत्रों में वृक्षों के नीचे मूर्तियों को रख लेते हैं। यद्यपि इन ग्राम वासियों की इन धारणाओं को आजकल निरर्थक माना जाता है परन्तु ध्यान पूर्वक देखा जाए तो वह किसी न किसी नाम या देवता के रूप में भगवान की पूजा करते हैं। वैसे तो ये भी भली–भांति जानते हैं कि एक पत्थर, जिसको कि उन्होंने स्वयं बनाकर रखा है, उनके लिए कुछ नहीं कर सकता परन्तु ये लोग उस पर सम्पूर्ण विश्वास रख कर अपनी विचार शक्ति को एकत्रित कर यह समझते हुए कि भगवान सर्वव्यापक है, उसकी पूजा करते हैं। उनके लिए उनका यह विश्वास प्रभावशाली साबित होता है। जैसा कि गीता में लिखा है :

**न विद्यते काष्ठे देवो न पाषाणे न मृण्मये।**
**भावो हि विद्यते देवो तस्माद् भावो हि कारणम्।।**

जिसका अर्थ यह है कि भगवान पत्थर, मिट्टी, लकड़ी, सोना में नहीं है, केवल वह विश्वास में ही होता है। एक कवि ने भी कहा है :

**न गौहर में है वो न है संग में।**
**भले वह चमकता है हर रंग में।।**

अर्थात् भगवान न हीरे में है, न पत्थर में है। परन्तु वह हर रंग में चमकता है।

उन सब पवित्र स्थानों व तीर्थों का वर्णन करना जो इस रियासत में स्थित हैं, इस पुस्तक को बहुत बड़ा बना देगा। इसलिए हम उन विशेष स्थानों का, जो कि बहुत प्रसिद्ध हैं, क्षेत्रवार वर्णन करते हैं।

तहसील नाहन और दून के क्षेत्रों में देवी की बहुत अधिक पूजा की जाती है। उसके बाद परशुराम देवता को पूजा जाता है। देवी बाला सुन्दरी का मन्दिर तहसील नाहन में त्रिलोकपुर के स्थान पर है, जो नाहन शहर से पश्चिम की ओर आठ मील की दूरी पर स्थित है। त्रिलोकपुर एक छोटा सा कस्बा है, जिसकी जनसंख्या लगभग पांच–छः सौ है। यहां पर इसी देवी का एक बड़ा मन्दिर है, जिसको आरम्भ में महाराजा प्रदीप प्रकाश साहिब़ ने सम्वत् 1630 विक्रमी में बनवाया था। महाराजा फतह प्रकाश साहिब ने इस मन्दिर का नवीकरण कर इसे और बड़ा बना दिया। फिर राजा रघुबीर प्रकाश साहिब ने उसके ड्योढ़ी आदि को नए सिरे से बनवाया था।

इस मन्दिर के निर्माण के बारे में एक दन्तकथा, जो बहुत प्रसिद्ध है, इस प्रकार है कि जिस स्थान पर यह मन्दिर है, वहां पर एक महाजन की दुकान थी और उस दुकान में नमक का भण्डार था। महाजन ने वह नमक किसी दूसरे के हाथ बेच दिया और जब वह इस नमक को तोलने लगा तो वह समाप्त होने में न आए। तोलते–तोलते शाम हो गई। महाजन के मन में अदभुत् विचार पैदा हुआ। रात्रि के समय देवी ने सपने में कहा कि इस स्थान पर मेरा मन्दिर बना दिया जाए। महाजन ने राज़ा प्रदीप प्रकाश से इस बात का वर्णन किया। उन्होंने यह मन्दिर बनवा दिया और देवी ने इसके बदले में पूजा में चढ़ाई जाने वाली चढ़त राजा साहिब को दे दी। महाजन देवी का भक्त बन गया। अब तक चढ़ावे की आमदनी रियासत के सरकारी खजाने में जमा होती है, जो कि जनता के कल्याण के कामों में प्रयोग की जाती है तथा मन्दिर पर होने वाले व्यय के वास्ते ज़िला बोर्ड को भी दी जाती है। उस महाजन के परिवार के लोग अब तक देवी के भक्त होते चले आए हैं। इनको भी आमदनी का कुछ भाग मिलता है। इस देवी की पूजा न केवल सिरमौर के सब निवासी करते हैं और इस पर एक जैसा विश्वास रखते हैं बल्कि अम्बाला, करनाल, सहारनपुर, दिल्ली के ज़िलों और पटियाला की रियासत इत्यादि से यात्री लोग हर वर्ष यहां आते हैं। वर्ष में दो बार मेला होता है, अर्थात् चैत्र व असौज के नवरात्रों में चांदनी अष्टमी और चौदस को। राजा साहिब या उनके

उत्तराधिकारी चैत्र तथा असौज के नवरात्रों में अष्टमी के दिन इस मन्दिर में पूजा करते हैं और भैंसे व बकरे की बलि दी जाती है। भैंसे के मांस का प्रयोग केवल चमार ही करते हैं, दूसरे लोग नहीं करते।

एक मन्दिर देवी कुटासन का है, जो कि नाहन तहसील में मौज़ा बड़ाबन में स्थित है। यह स्थान नाहन शहर से 10–11 मील पूर्व की ओर है। यह मन्दिर राजा जगत् प्रकाश ने उस लड़ाई की जीत की यादगार के रूप में बनवाया था, जो उनके और गुलाम कादिर रोहिला के बीच इस स्थान पर हुई थी। यह एक छोटा सा मन्दिर है, जो चूना और ईंट से बनाया गया है। यहां पर हर वर्ष असौज मास के नवरात्रों में मेला होता है। नाहन के राजा या उनके उत्तराधिकारी असौज मास की छठी सुदी (प्रविष्टे) को यहां आते हैं और बकरे की बलि देते हैं। दूसरी श्रेणी की देवी यहां त्रिभवनी देवी है, जिसकी पूजा विशेषकर कृषक लोग अपने पशुओं की रक्षा के लिए करते हैं। जिस समय गाय या भैंस के बछड़ा होता है तो पहले सप्ताह का दूध और घी इस देवी पर जाकर चढ़ाते हैं। लोगों का विचार है कि त्रिभवनी के पूजन से पशु सुख और शान्ति से रहते हैं तथा उन्हें कोई रोग नहीं होता, वह दूध भी अच्छा देते हैं। इस देवी का प्रसिद्ध मन्दिर तहसील नाहन के मौजा भड्डू में है और इसके अतिरिक्त एक मन्दिर, जो खण्डित अवस्था में है, लाया देवी का है, जो लाया के पहाड़ पर स्थित है। यह पहाड़ नाहन शहर से पश्चिम की ओर चार मील की दूरी पर है। इसकी पूजा भी कृषक लोग करते हैं। एक और मन्दिर तहसील नाहन के मौज़ाजमटा में है, जो नाहन से चार मील उत्तर की ओर है। एक अन्य मन्दिर, जो खण्डित है, वह तहसील पच्छाद के पुनूवाला स्थान में है। यह नैना देवी का मन्दिर है। इसी प्रकार इस रियासत के ऊंचे स्थानों पर किसी न किसी देवी या देवता का मन्दिर होता है।

तहसील पच्छाद में शोहड़ और शिरगुल तथा तहसील रेणुका में परशुराम, महासू व शिरगुल की पूजा होती है। इनके अतिरिक्त एक देवी, जिसको भगाईन कहते हैं, गिरीपार क्षेत्र में है। इस देवी से पहाड़ी लोग बहुत भयभीत होते हैं। अगर किसी व्यक्ति की किसी दूसरे व्यक्ति से कुछ शत्रुता हो तो वह अपने विचार के अनुसार, अपने शत्रु

को इस देवी का दोष लगा देता है। जिस से शत्रु के जान और माल की हानि होती है, तब वे शत्रु किसी पण्डित से पूछकर बकरा इत्यादि भेंट देकर इस दोष का निवारण करते हैं।

दूसरी श्रेणी में परशुराम देवता की पूजा होती है। इस देवता में सिरमौर की आम जनता की आस्था और विश्वास है। विशेषकर पहाड़ी क्षेत्र के लोग इस देवता में बहुत आस्था रखते हैं। परशुराम का मन्दिर रेणुका तहसील में रेणुका नामक स्थान में स्थित है, जो कि नाहन से उत्तर की ओर बीस मील की दूरी पर है। वहां पर एक झील है, जिसकी लम्बाई लगभग एक मील और चौड़ाई आधा मील है। यह झील बहुत गहरी है और दो पहाड़ों के बीच स्थित है। इसका घेरा लगभग तीन मील है और इसका पानी बहुत स्वादिष्ट और निर्मल है। इसमें मछलियां और कछुए बहुत अधिक संख्या में हैं, इसमें नाकू भी मिलते हैं। इस झील में से पश्चिम की ओर पानी का बहाव है और यह चारों तरफ पहाड़ों से घिरी है, जिन पर वृक्ष लगे हैं। इस झील को परशुराम की माता रेणुका से जोड़ा जाता है। इस झील के उत्तर की ओर दो–तीन मील की दूरी पर एक ऊंचा पहाड़ है, जिसको जम्दग्नि ऋषि, जो रेणुका का पति था, से जोड़ते हैं। कहा जाता है कि जम्दग्नि ऋषि इस पहाड़ पर रहते थे और तप किया करते थे। यह पहाड़ मौज़ाजामू के ऊपर है। इसकी ऊंचाई बहुत अधिक है, जिस पर एक गड्ढा है, जो कि एक फुट लम्बा और एक फुट चौड़ा बना हुआ है, जिसको जमदग्नि ऋषि की धूणी बतलाते हैं।

पुराणों में इसकी कथा को इस प्रकार वर्णित किया गया है कि रेणुका की एक बहन राजा सहस्त्रबाहू के घर में थी। जमदग्नि ऋषि ने एक बार राजा सहस्त्रबाहू को न्योता दिया। ऋषि बहुत चमत्कारी थे, इसलिए राजा इन्द्र से कामधेनु गाय मांग कर लाये। इस गाय में यह विशेषता थी कि वह संसार की सब अच्छी वस्तुएं उपलब्ध करवा देती थी। जमदग्नि ऋषि की आव–भगत और खातिरदारी देखकर सहस्त्रबाहू बड़ा चकित हुआ और पूछा कि जमदग्नि ने किस प्रकार इतनी सामग्री उपलब्ध करवाई है। पता चला कि उसके पास कामधेनु गाय है, तब सहस्त्रबाहू ने जमदग्नि से वह गाय मांगी। ऋषि ने इनकार किया कि

यह मेरी नहीं है, इन्द्र से लाया हूं। इस पर सहस्त्रबाहू ने जमदग्नि ऋषि का वध कर दिया। तब रेणुका ने दुःखी होकर अपनी जान दे दी। यह झील रेणुका झील के नाम से प्रसिद्ध है।

परशुराम ने, जो वहां पर थे, यह दुःखद समाचार सुनकर सहस्त्रबाहू को मार डाला। जिस स्थान पर सहस्त्रबाहू का वध हुआ था वहां पर पहाड़ से पानी की धारा निकलती है, जिसको सहस्त्रबाहू की धार कहते हैं। इस स्थान पर नींबू जाति के वृक्ष अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। रेणुका झील से पश्चिम की ओर एक तालाब है, जिसको परशुराम का ताल कहते हैं। यह ताल भी प्राकृतिक तौर पर बना हुआ है। इसके किनारों पर परशुराम का एक पुराना मन्दिर जिसकी छत स्लेट की है और एक गुम्बदवाला मन्दिर, मां रेणुका जी का बना हुआ है। इसके अतिरिक्त तालाब की दूसरी ओर एक नया मंदिर एक टीले पर राजा शमशेर प्रकाश ने ज़िला बोर्ड द्वारा निर्मित करवाया था।

परशुराम देवता की मूर्तियां मौज़ा जामू में रहती हैं, क्योंकि जामू के निवासी कनैत जाति के हैं, जो इसके पुजारी हैं। हर वर्ष दीवाली के बाद चांदनी दशमी के अवसर पर रेणुका मेले के समय इस देवता को चांदी की पालकी में बिठाकर बाजा बजाते हुए लाया जाता है और रेणुका झील में इसको स्नान करवाकर नए मन्दिर में रखा जाता है। यह चांदी की पालकी कंवर सूर्जन सिंह और बीर सिंह ने, जो महाराजा शमशेर प्रकाश के सगे चाचा थे, बनवाई थी। रेणुका झील पर भी एक मर्दाना घाट और एक जनाना घाट इन दोनों ने बनवाया था। इसके अतिरिक्त इन्होंने घाट के निकट ही एक धर्मशाला भी बनवाई थी। इस स्थान पर दशमी से द्वादशी तक मेला होता है। इस मेले में पहाड़ी लोग नाहन के निवासी और अम्बाला, करनाल और सहारनपुर इत्यादि ज़िलों से देसी यात्री आते हैं। देसी लोग तो आम तौर पर रेणुका में स्नान करने के लिए आते हैं और पहाड़ी लोग देवता के दर्शन करने।

पहाड़ के निवासी देवां से, जो कि एक भाट ब्राह्मण है और जिस पर उन्हें विश्वास है, उसे खेल आती है, अपने दुःख इत्यादि के सम्बन्ध में प्रश्न पूछते हैं। द्वादशी के दिन लोग रेणुका में स्नान करते

हैं। देवता का चढ़ावा ज़िला बोर्ड में जमा होता है और देवां को, ज़ो मन्दिर का पुजारी है, बोर्ड से वेतन मिलता है। पहले समय में जबकि यह क्षेत्र कंवर वीरसिंह की जागीर में था, यह चढ़ावा जामू और फागड़ के निवासियों को, जो कि कनैत जाति के हैं, मिलता था और इसमें से एक भाग देवां को दिया जाता था, परन्तु उसे वेतन नहीं मिलता था। पूर्णमासी को फिर देवता मौज़ा जामू को लौट जाता है। जामू में भी स्लेट की छत का दो मंज़िला मन्दिर बना हुआ है। देवता सदैव वहां रहता है। वहां सुबह–शाम दोनों समय नगाड़े और शहनाइयां बजती हैं तथा देवां पूजा करता है।

परशुराम के अतिरिक्त पहाड़ी क्षेत्र के लोगों का शिरगुल देवता, महासू और बीजट देवताओं में भी विश्वास है। शिरगुल वास्तव में श्रीगुल था और महासू वास्तव में महाशिव था, जो बिगड़ कर शिरगुल और महासू हो गए। यद्यपि इन देवताओं के मन्दिर पहाड़ी इलाकों में बहुत से गांवों में हैं परन्तु निम्नलिखित मन्दिर अधिक प्रसिद्ध हैं : शिरगुल का छोटा सा प्राचीन मन्दिर चूड़धार पर है, यहां पर आषाढ़ के पहले रविवार को मेला होता है। देवता की मूर्ति शिवलिंग के आकार की है, इसको चूड़ेश्वर महादेव भी कहते हैं। शिरगुल का वास्तविक स्थान यही है। एक अन्य मन्दिर मानल देवता का और एक बांदल देवता का जामना भोजमस्त में हैं। इसके अतिरिक्त और कई छोटे–छोटे मन्दिर विभिन्न स्थानों में हैं। महाशिव का एक मन्दिर रेणुका तहसील की सैन धार में है और वही इसका वास्तविक स्थान भी है। महाशिव देवता की मूर्ति भी लिंग के आकार की है। बीजट देवता की मूर्ति मनुष्य के आकार की है और इसका मन्दिर तहसील पच्छाद के मौज़ा शाया में है। इन मन्दिरों में भी, परशुराम मन्दिर की भांति, हर दो वक्त सुबह और शाम नगारे बजते हैं और देवां पूजा करता है।

तहसील पच्छाद में भूरसिंह की धार पर भूरसिंह देवता का एक मन्दिर है। वहां पर हर वर्ष कार्तिक मास में मेला होता है। एक मन्दिर शूहड़ देवता का पुनूवाला में है, जहां हर वर्ष आषाढ़ के महीने में स्त्रियां एकत्रित होती हैं और वे ढोल के बजने के साथ ही खेलना शुरू कर

देती हैं। इन देवी–देवताओं के मन्दिरों के अतिरिक्त एक मन्दिर गरीबनाथ के पहाड़ पर पांवटा तहसील में है और एक छोटा सा मन्दिर बराह जी का है, जहां पानी की दो बौड़ियां बनी हुई हैं, इसको बराहछेतर कहते हैं। यह तहसील पांवटा की मौज़ा कोटका में स्थित है। एक अन्य मन्दिर, जिसको सहस्रधारा कहते हैं, तहसील पांवटा में गिरी नदी से उत्तर की ओर है। बराहछेतर और सहस्रधारा में मन्दिर नहीं हैं, केवल चिन्ह हैं और ये सिरमौर की पुरानी राजधानी, जिसे सिरमौर ही कहते हैं, के बिल्कुल पास हैं, जिससे प्रतीत होता है कि ये मन्दिर उसी समय के हैं।

सिक्खों के गुरुद्वारों की पूजा भी इस रियासत के निवासी करते हैं इस लिए इस रियासत में चार गुरुद्वारे हैं। गुरुद्वारा उस स्थान को कहते हैं जहां ग्रन्थ साहिब रखा जाए जहां गुरु साहिब ठहरे हों। इसका रूप भी मन्दिर की भांति होता है, कहीं–कहीं साधारण मकान होता है और कहीं केवल चबूतरा ही। तहसील नाहन के मौज़ा टोका में जो नाहन शहर से बारह तेरह मील पश्चिम की ओर है वहां पर एक चबूतरा, एक झण्डा और एक कुआं हैं। यह गुरुद्वारा दसवें गुरु, गुरुगोबिन्द सिंह की स्मृति में बनाया गया था। गुरुगोबिन्द सिंह साहिब जिस समय रियासत बिलासपुर से नाराज़ हो कर नाहन आए थे और राजा साहिब मेदनी प्रकाश ने इनको आमंत्रित किया था तो वह पहले पहल इस रियसात में मौज़ा टोका की सीमा में ठहरे थे और उनके ठहरने का दूसरा स्थान नाहन शहर था जहां पर दूसरा गुरुद्वारा है। यहां पर भी एक पक्का चबूतरा और एक धर्मशाला बनी हुई है। इस स्थान पर हर वर्ष राजा साहिब के उत्तराधिकारी झण्डा चढ़ाते हैं। तीसरा गुरुद्वारा तहसील पांवटा में, पांवटा नगर में है जो नाहन शहर से छब्बीस मील पूर्व की ओर है। यहां पर गुरुगोबिन्द सिंह दुर्ग बना कर रहे थे। यहां पर अब दुर्ग के अवशेष तो नहीं हैं, परन्तु चार दिवारी की नींव और चिन्ह मौजूद हैं। इसके अतिरिक्त यहां एक और गुम्बददार गुरुद्वारा है, जो गुरु साहिब की स्मृति में बनाया गया था। यह गुरुद्वारा ईंट और चूने का बना हुआ है। इसको विक्रमी सम्वत् 1882 में सरदार बसावा सिंह सिन्धावालिया ने बनवाया था। यह

एक चौड़े मैदान में जमुना नदी के किनारे स्थित है। यहां पर होली की पूर्णमासी को मेला होता है और पहाड़ के लोग इकट्ठा होते हैं।

चौथा गुरुद्वारा तहसील पांवटा में मौज़ा भंगानी में है जो पांवटा से आठ मील उत्तर की ओर गिरी पार है। यह गुरुद्वारा गुरुगोबिन्द सिंह की विजय की यादगार में बनाया गया था, जो उनको बिलासपुर कहलूर के राजा भीमचन्द व हरिचन्द और गढ़वाल के राजा फतेहशाह के साथ लड़ाई में प्राप्त हुई थी। इस लड़ाई का कारण यह बतलाया जाता है कि गुरुगोबिन्द सिंह पहले राजा बिलासपुर के क्षेत्र में रहते थे और किसी कारण नाराज़ होकर वहां से चले आये थे और राजा बिलासपुर ने आते वक्त उनकी सम्पत्ति इत्यादि लूट ली थी, तब गुरु साहिब पांवटा में रहे। जिस समय बिलासपुर कहलूर का राजा हरिचन्द विवाह करने गढ़वाल जा रहा था तो गुरु साहिब ने कहा कि तुम हमसे लड़ कर जाना। इस पर राजा दूसरे रास्ते से गढ़वाल पहुंचा और गढ़वाल के राजा फतेहशाह से कहा कि मैं विवाह तब करुंगा जब आप मेरे साथ चल कर गुरु साहिब से लड़ेंगे। वह मजबूरन तैयार हो गया। दोनों राजा मिलकर गुरु साहिब से लड़ने को आये। मौज़ा भंगानी में घमासान युद्ध के बाद गुरु साहिब को विजय प्राप्त हुई और दोनों राजा मर गए तथा उनकी रानियां इत्यादि भंगानी में सती हो गईं। सतियों के मन्दिर के अवशेष अब भी वहां मौजूद हैं।

### नाहन में पवित्र और जनकल्याण के स्थान

नाहन का शहर सागर तल से 3500 फुट की ऊंचाई पर एक पहाड़ी पर आबाद है। यह अम्बाला से लगभग चालीस मील उत्तर पश्चिम की ओर है। इस शहर को महाराजा कर्मप्रकाश साहिब ने, जो सिरमौर के राजाओं के परिवार के प्रथम पूर्वज से इक्कीसवीं पीढ़ी में हुए, विक्रमी सम्वत् 1678, तदनुसार ईसवी 1621 में आबाद किया और इसी शहर को सिरमौर रियासत की राजधानी बनाया था। इसके बारे में यह दन्तकथा प्रसिद्ध है कि महाराजा कर्मप्रकाश एक समय इस स्थान पर शिकार खेलने आये थे। उस समय इस स्थान पर, जहां अब महल है बाबा बनवारीदास जी, जो कि बैरागी साधू थे, रहते थे। इस स्थान पर उस समय बड़ा घना जंगल था। महाराजा साधू के पास

दर्शन करने को गये और यह स्थान राजधानी के लिए पसन्द किया और अपनी पसन्द का ज़िक्र साधू से किया। इस पर साधू ने कहा कि अगर तुम इस स्थान पर राजधानी बनवाओगे तो बहुत अच्छा होगा क्योंकि यह स्थान ऊंचाई पर है, इसका जलवायु भी अच्छा है और यह स्थान पूरी रियासत के बीच में स्थित है।

महाराजा साहिब साधू की बातों से खुश हुए और विक्रमी सम्वत् 1679 में नाहन शहर की नींव रखी। रियासत की राजधानी को कालसी से नाहन स्थानान्तरित किया। राजा साहिब ने साधू के आदेश पर इस स्थान का नाम नाहन रखा अर्थात् जिस स्थान पर विजय न पाई जा सके। क्योंकि संस्कृत में न का अर्थ है नहीं और हन का अर्थ है मारना, अर्थात् जिसको अपने अधीन न किया जा सके या कोई फतह न कर सके। कुछ लोगों का विचार है कि नाहन अक्षर इस कारण बना कि साधू के पास दो शेर रहते थे और शेर को नाहर कहते हैं। इस लिए इन के नाम पर इस शहर का नाम नाहर रखा गया, जो कि बाद में बिगड़कर नाहन हो गया। जहां यह साधू रहता था उस स्थान पर महल बनवाये गए जो अब तक वहीं मौजूद हैं। महलों की जगह सारे शहर से ऊंची है। बाबा बनवारीदास जी ने अपना डेरा महलों के निकट पहाड़ की ओट में, जहां पर अब जगन्नाथ जी का मन्दिर है, स्थापित किया। इस शहर में जैसे--जैसे भवनों इत्यादि का निर्माण होता रहा उसी तरतीब से हम भवनों की व्याख्या करेंगे।

जिस स्थान पर बाबा बनवारीदास रहते थे, वहां सबसे पहले जगन्नाथ जी का मन्दिर महाराजा महीप्रकाश ने विक्रमी संवत् 1738 में बनवाया। इस में राजा ने जगन्नाथ जी की वह मूर्ति स्थापित की जिस के बारे में उनको स्वप्न आया था कि मूर्ति सिरमौर की पहली राजधानी सिरमौर ताल में उत्तर की ओर पीपल के वृक्ष के नीचे दबी हुई है। इस मूर्ति को उन्होंने वहां से निकलवाया। अब वह मूर्ति एक चांदी के सिंहासन पर रखी हुई है। इस से पहले बाबा बनवारीदास नरसिंह जी की पूजा करते थे। वह रियासत जयपुर से विक्रमी संवत् 1673 में इस स्थान पर आकर ठहरे थे। 61 वर्ष तक वह इस मन्दिर की गद्दी पर रहे। उन का स्वर्गवास वैशाख सुदी एकादशी, विक्रमी

संवत् 1733 में हुआ। क्योंकि यह मन्दिर नाहन शहर के आबाद होने के समय का है और इस के महन्त एक के बाद दूसरे उसी काल से इस मन्दिर की गद्दी पर बैठते चले आ रहे हैं इस लिए उन महन्तों का संक्षिप्त वर्णन यहां कर देना उचित होगा। इस लिए इन का कड़ीवार ज़िक्र यहां किया जाता है:–

पहले महन्त बाबा बनवारी दास जी विक्रमी संवत् 1678 में हुए। इन की मृत्यु के बाद उनका चेला संगी रिखी दास विक्रमी संवत् 1733 अर्थात् असौज, सुदी दशमी (दशहरा) में महन्त हुए। वह 24 साल 6 मास गद्दी पर रहे। उन का स्वर्गवास फाल्गुन सुदी तीज, विक्रमी संवत् 1757 में हुआ। उन के बाद उनके चेले नारायण दास जी जेठ सुदी एकादशी, विक्रमी संवत् 1757 शुक्रवार के दिन गद्दी पर बैठे। वह 65 साल 6 मास तक गद्दी पर रहे। उनका स्वर्गवास माघ सुदी चौथ, विक्रमी संवत् 1822 में हुआ। महन्त नारायण दास के बाद उन के चेले कांशी दास माघ सुदी बसन्त पंचमी, विक्रमी संवत् 1822 में गद्दी पर बैठे और 13 साल गद्दी पर रह कर चैत्र सुदी नवमी, विक्रमी संवत् 1835 को उनका स्वर्गवास हुआ।

महन्त कांशी दास के बाद उनके चेले राम कृष्णदास ज्येष्ठ सुदी दूज, विक्रमी संवत् 1836 में गद्दी पर बैठे। वह केवल 4 वर्ष और 6 मास तक गद्दी पर रहे। उनका स्वर्गवास वैशाख सुदी तीज वक्रमी संवत् 1840 में हुआ। इन महन्त जी के बाद इन के चेले माधव दास जी भादो बदी कृष्ण जन्म अष्टमी, विक्रमी संवत् 1840 में गद्दी पर बैठे। वह 60 साल गद्दी पर रह कर कार्तिक बदी छठी, विक्रमी संवत् 1900 में स्वर्गवासी हुए। उन के बाद उन के चेले मोहन दास मार्गशीर्ष सुदी पंचमी, विक्रमी संवत् 1900 में गद्दी पर विराजमान हुए। वह 53 साल 6 मास गद्दी पर रह कर ज्येष्ठ सुदी द्वादशी, विक्रमी संवत् 1953 में स्वर्गवास हुए। उनके बाद उनका चेला लक्ष्मण दास दिमागी खराबी के कारण गद्दी पर नहीं बैठा। 4 साल 6 मास तक बीमार रह कर विक्रमी संवत् 1957 में उसका स्वर्गवास हुआ। उस का चेला परसराम दास असौज सुदी दशमी विक्रमी संवत् 1957 में गद्दी पर बैठा जो कि अब भी गद्दी पर विराजमान है।

इस मन्दिर के नाम पर रियासत से जागीर मुकर्रर है। नरायणगढ़ के इलाके में भी एक मन्दिर जगन्नाथ जी का है, जिसे महाराजा कीर्त प्रकाश ने बनवाया था। इसी इलाके में मन्दिर को जागीर दी थी जो कि अब तक सरकार की ओर कायम है। हर वर्ष दशहरे के अवसर पर महाराजा दर्शन करने और चढ़ावा चढ़ाने के लिए मन्दिर में जाते हैं। इस के बाद राजा साहब महन्तों की समाधियों के दर्शन करने जाते हैं जो रामकुण्डी पर हैं। नाग देवता का मन्दिर, जिसे नाग नानूना कहते हैं, जिससे नाहन शहर आबाद हुआ है, कच्चे तालाब पर स्थित है। इस स्थान पर राजा साहब के परिवार के बच्चों का चूडा कर्म अर्थात् मुण्डन होता है, इस मन्दिर को भी रियासत से जागीर मिली हुई है।

लक्ष्मी नारायण जी का मन्दिर राजा भूप प्रकाश ने विक्रमी संवत् 1765 में बनवाया था। यह मन्दिर महलों से उत्तर की ओर एक पहाड़ी पर है। लक्ष्मी नारायण जी की मूर्ति वर्ष में एक बार अन्कोट के अवसर पर अर्थात् गोवर्धन त्योहार के दिन राज महल में लाई जाती है। इस मन्दिर के लिए भी रियासत की ओर से कुछ गांव जागीर के रूप में मिले हुए हैं। काली का मन्दिर महलों से उत्तर पूर्व की ओर है। इसको राजा विजय प्रकाश ने विक्रमी संवत् 1887 में बनवाया था। यद्यपि राजपूतों में काली की पूजा हर जगह की जाती है, क्योंकि ये लोग काली को युद्ध की देवी मानते हैं, परन्तु रियासत सिरमौर में काली की मूर्ति कुमाऊं वाली रानी साहिबा, जो कि राजा विजय प्रकाश की रानी थी, कुमाऊं से अपने साथ लाई थी इस लिए राजा साहब ने यह मन्दिर इस स्थान पर बनवाया था। मन्दिर में पूजा के लिए जोगी नाथ महन्त उसी समय से, एक के बाद दूसरे गद्दी पर बैठते चले आए हैं।

काली जी के मन्दिर के निकट एक मन्दिर 24 भुजा देवी का भी है, जिस को राजा फतह प्रकाश ने बनवाया था। इस मन्दिर का पहला महन्त बाबा भृङ्ग नाथ कनफटा योगी था। उसके बाद आम नाथ हुआ फिर तोप नाथ महन्त बना, इस के बाद ज्वाला नाथ हुआ। फिर वीर नाथ। वीर नाथ के बाद देवी नाथ और फिर जगन्नाथ इस मन्दिर का महन्त हुआ। जगन्नाथ की मृत्यु के बाद इनका चेला निमा

नाथ कार्यवाहक महन्त का काम करता रहा, मगर उसके चिड़चिड़ेपन और अनुचित व्यवहार के कारण राजा साहब ने इस को महन्त नियुक्त नहीं किया। राजा साहब ने उन शक्तियों, जो कि उनको महन्त की नियुक्ति के लिए प्राप्त थीं, का प्रयोग करके मोती नाथ नामक साधू को, जो संस्कृत भाषा का ज्ञान भी रखता था और कनफटा जोगी था, इस मन्दिर का विक्रमी संवत् 1965 में महन्त नियुक्त किया। वह विधिवत् विक्रमी संवत् 1966 में गद्दी पर बैठा।

नाहन शहर के बाहर तीन मील की दूरी पर मारकंडा नदी के तट पर शिव जी का एक मन्दिर है। इसमें महादेव जी का एक बड़ा लिंग स्थापित है। यह बहुत प्राचीन प्रतीत होता है परन्तु इसमें कोई पट्टिका नहीं है। यह स्थान पैड़ी वाले के नाम से प्रसिद्ध है। यहां पर राजा फतेह प्रकाश की समाधि भी है। इसमें स्वर्गीय राजा के शरीर की राख का कुछ भाग दबाया गया है। शिवपुरी में, जो कि शहर से लगभग दो मील उत्तर की ओर है, दो मन्दिर हैं जिनको कुमाऊं वाली रानी साहिबा, जो राजा विजय प्रकाश की रानी थी, ने बनवाया था। ये मन्दिर मठ के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनमें अब कोई मूर्ति नहीं है। एक ठाकुरद्वारा नोनी के स्थान में है जो नाहन से एक मील दक्षिण की ओर है। यह भी कुमाऊं वाली रानी साहिबा ने बनवाया था। इसके अतिरिक्त इन रानी साहिबा ने एक बावड़ी यहां पर बनवाई थी जो अब तक मौजूद है। इस मन्दिर के लिए भी रियासत से जागीर मिली हुई है। नोनी में भी एक महन्त रहता था परन्तु कुछ वर्ष हुए महन्त के कोई चेला न होने के कारण यह स्थान खाली है। विक्रमी सम्वत् 1962 से इसका सम्बन्ध जगन्नाथ जी के मन्दिर से कर दिया गया है।

एक मन्दिर राम कुंडी पर है जिसको राजा कीर्तप्रकाश की रानी ने विक्रमी सम्वत् 1824 में बनवाया था और इसका चढ़ावा जगन्नाथ जी के मन्दिर को दिया था। यह मन्दिर भी अब तक मौजूद है और जगन्नाथ जी के मन्दिर से सम्बंधित है। यहां पर जगन्नाथ जी के महन्तों की समाधियां हैं। जो महन्त स्वर्गवासी होता है उसको यहां भूमिगत कर दिया जाता है। कच्चे तालाब पर भी दो प्राचीन ठाकुरद्वारे हैं। एक छोटा सा मन्दिर शहर के मध्य में एक टीले पर है जो अब भी

मौजूद है। इसको मियां का मन्दिर कहते हैं। यह मन्दिर मलदेव और कुशला मियां बिलासपुरीया ने, जो इस रियासत में कार्यरत थे, बनवाया था। यह मन्दिर भी अब जगन्नाथ जी के मन्दिर के अधीन है। नाहन से एक मील पर एक शिवालय और एक बावड़ी राजा फतेह प्रकाश की कहलूरी रानी साहिबा ने विक्रमी सम्वत् 1893 में बनवाए थे जो जोड़ी बाई के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये अब भी मौजूद हैं। यह स्थान एकान्त वास के लिए बहुत अच्छा है।

एक शिवालय और धर्मशाला पक्के तालाब पर है जिनको विक्रमी सम्वत् 1923 में राजा फतेह प्रकाश के पुत्र कुंवर सुर्जनसिंह ने बनवाया था। यह मन्दिर शहर के मध्य में स्थित है। तालाब के निकट होने के कारण यहां पर बहुत रौनक रहती है और यह दिल को बहुत प्रसन्न करता है। एक शिवालय रानीताल पर है जिसको राजा शमशेर प्रकाश साहिब ने अपनी रानी साहिबा कुटलानी की स्मृति में विक्रमी सम्वत् 1944, तदनुसार 1889 ईसवी में निर्मित करवाया था। इस स्थान पर एक कच्चा तालाब और एक बाग भी है जिसमें एक कुआं है जो बहुत चौड़ा और गहरा है। यह कुमाऊं वाली रानी साहिबा का बनवाया हुआ है जो कि मन्दिर के बहुत निकट है। इस मन्दिर के चारों तरफ़ एक बाग है जिस से शहर का दृश्य बहुत लुभावना हो गया है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त दो पुराने मन्दिर म्यूनिसिपल बोर्ड के निकट पक्के तालाब के ऊपर हैं जिनको कुमाऊं वाली रानी साहिबा का बनवाया हुआ कहा जाता है। इसी प्रकार दो मन्दिर हरिपुर मोहल्ले में थे जो राजा साहिब के महलों से लगभग एक चौथाई मील उत्तर की ओर हैं। इनके बारे में पता नहीं चलता कि किसने बनवाये थे परन्तु इन गैर आबाद मन्दिरों को नाहन म्यूनिसिपल कमेटी ने बेच कर एक बड़ी भारी नासमझी का प्रमाण दिया है। ये प्राचीन मन्दिर थोड़ी सी आय के लिए गिरा दिये गये। ऐसे प्राचीन भवनों का नष्ट किया जाना बड़े ही दुःख की बात है। पक्का तालाब जो नाहन शहर में एक बहुत बड़ा तालाब है, कुमाऊं वाली रानी साहिबा ने बनवाया था। इस तालाब से सारे शहर को पानी मिलता है। एक तालाब कच्चा भी है जो कि नाहन शहर के बसने से पहले एक छोटा सा जोहड़ था। यह बीड़ा नामी रंगड़ का

था जो एक लुटेरा था। वह इस स्थान पर रहता था जहां पर अब लक्ष्मीनारायण का मन्दिर है। यह जोहड़ उसके भैंसों की जोहड़ी (तलाई) थी। अब यह बहुत बड़ा तालाब है। एक मीनार दर कब्र उन मारे गए अंग्रेज़ फौजी अफसरों की है जो गोरखों को सिरमौर के क्षेत्र से खदेड़ने के लिए ईसवी सम्वत् 1814 में नाहन आये थे और जैतक के स्थान पर मारे गए थे। यह मीनार पक्के तालाब के तट पर है। इसको ईसवी सम्वत् 1815 में बाकी बचे अंग्रेज़ अफसरों ने बनवाया था। इसके पास ही एक खनका साखी सरवर सुल्तान, जो कि लालां वाले के नाम से प्रसिद्ध था, की है। इसको राजा फतेह प्रकाश की कहलूरी रानी ने अपने पुत्र कुंवर सुर्जन सिंह के स्वास्थ्य लाभ पर अपनी खुशी से बनवाया था। उनके पुत्र की टांग घोड़े से गिरकर टूट गई थी।

एक धर्मशाला कच्चे तालाब के निकट है जो कि राजा फतेहप्रकाश के पुत्र कुंवर वीर सिंह ने विक्रमी सम्वत् 1925 में जनकल्याण के लिए बनवाई थी। यह एक सुविधाजनक स्थान पर स्थित है। मुसलमानों ने इस धर्मशाला के निकट एक मस्जिद कुछ समय पहले ही तैयार की है। एक शिवालय और तालाब मौज़ा बोगरिया में है। ये भी कुंवर वीर सिंह ने विक्रमी सम्वत् 1918 में, जब कि नाहन से देश (मैदानी क्षेत्र) को जाने वाली सड़क इस स्थान से होकर जाती थी, बनवाए थे। एक धर्मशाला जो अब सराय कहलाती है, काला आम में है। यह स्थान नाहन से 11 मील की दूरी पर दक्षिण पश्चिम की ओर है। इसको राजा फतेहप्रकाश के पुत्र कुवर सुर्जनसिंह ने विक्रमी सम्वत् 1929 में जनकल्याण के लिए बनवाया था। यह रियासत की सीमा के अन्तिम छोर पर बनवायी गई थी जो कि उस समय तक यात्रियों के नाहन से देश को आने–जाने के लिए बहुत सुविधाजनक थी क्योंकि इस स्थान से नाहन शहर की चढ़ाई शुरू होती है। यात्री रात को यहां ठहरकर आते–जाते हैं।

एक पक्का तालाब त्रिलोकपुर में है जिसको कुंवर सुर्जनसिंह ने विक्रमी सम्वत् 1924 में बनवाया था। कुछ सतियों के भवन जो कि गुम्बददार मन्दिरों की शक्ल में बनाये गए हैं, तहसील पांवटा के क्यारदादून में जमुना नदी के तट पर हैं। ये सिरमौर के राजाओं की रानियों तथा खवासों (रखैलों) के हैं। यद्यपि इन पर कोई पट्टिका नहीं

है परन्तु राजा फतेहप्रकाश के हालात से प्रतीत होता है कि यह मठ राजा विजय प्रकाश, राजा प्रीति प्रकाश, राजा कीर्त प्रकाश व राजा धर्मप्रकाश तथा राजा प्रीति प्रकाश के पुत्रों कुंवर ईशरी सिंह व कुंवर मौकम सिंह की रानियों के हैं जो कि सती हुई थीं। ये मठ समय–समय पर बनावाये जाते रहे हैं। क्योंकि यह स्थान जमुना जी के तट पर होने के कारण पवित्र माना जाता है इस लिए इसी स्थान पर गए समय में राजाओं का दाह संस्कार किया जाता था। इन मठों की मुरम्मत इत्यादि विक्रमी सम्वत् 1891 में कराकर राजा फतेहप्रकाश ने इन की विधिवत् प्रतिष्ठा की थी। एक सती का मठ तहसील रेणुका में सती बाग नामक स्थान पर है जो गिरी नदी के किनारे पर है। इसका कुछ पता नहीं चलता कि यह किस सती का मठ है और इसको किसने बनवाया था। इसके अतिरिक्त सतियों के दो मठ तहसील पांवटा के सती भंगनी स्थान पर हैं। कहा जाता है कि ये राजा कहलूर इत्यादि की रानियों के हैं। ये मठ राजा कहलूर ने उस युद्ध की स्मृति में बनवाये थे जो गुरु गोविन्द सिंह के साथ उस स्थान पर हुआ था।

नाहन में आने के लिए एक रास्ता अम्बाला से तहसील नारायणगढ़ के सहजदपुर से होकर है। अम्बाला से नाहन लगभग 40 मील है जहां गाड़ी के लिए कच्ची सड़क है। दूसरा रास्ता एन.डब्ल्यू. आर. के बराड़ा रेलवे स्टेशन से है जो कि ज़िला अम्बाला के सडोरा नामक स्थान से होकर है। बराड़ा से नाहन 38 मील है। गाड़ी की पक्की सड़क काला आम तक है। ये सब रास्ते देश की ओर से होकर काला आम, जो रियासत की सीमा पर है, मिलते हैं। पूर्व की ओर से एक रास्ता देहरादून से क्यारदादून होता हुआ नाहन पहुंचता है। देहरादून से नाहन लगभग 60 मील है। देहरा से फतेहपुर तक सड़क पक्की है उसके पश्चात् कच्ची। उत्तर की ओर से एक रास्ता डगशाई से पटियाला रियासत के पहाड़ी क्षेत्र से होता हुआ नाहन पहुंचता है। डगशाई से नाहन 47 मील है। सिरमौर के क्षेत्र में सड़क चौड़ी है जिस पर ख़च्चर घोड़ा आसानी से चल सकते हैं। डगशाई से पहला पड़ाव नैनाटिक्कर, दूसरा सरहान (पच्छाद), तहसील पच्छाद और तीसरा अनेटी, तहसील नाहन और चौथा खास नाहन है। हरेक पड़ाव पर डाकबंगले हैं।

# चौथा भाग

## पहला अध्याय

हम इस पुस्तक के पहले भाग में पूरी तरह बता चुके हैं कि सिरमौर के राजाओं की कड़ी जैसलमेर वंश से शुरू हुई है। इसलिए जैसलमेर के रावलों के वंशवृक्ष का आरम्भ से रावल हासु तक, जो कि जैसलमेर के रावल, शालिवाहन द्वितीय का तीसरा पुत्र था, ज़िक्र हो चुका है। अब हम यहां हासु से लेकर, जिसको शालिवाहन द्वितीय ने सिरमौर की जनता के अनुरोध पर जो कि ह्रोशनाक भाट के माध्यम से किया गया था, रियासत सिरमौर की खाली गद्दी पर बैठने के लिए भेजा था। अगले राजाओं का ज़िक्र करेंगे। यह गद्दी सिरमौर के राजा, जो जैसलमेर के रावल शालिवाहन प्रथम के वंश से था, के अपने परिवार व राजधानी सहित गिरी नदी में बाढ़ के कारण नष्ट हो जाने से ,खाली हो गई थी। (टॉड का राजस्थान वॉल्यूम दो, भाग तीन–जैसलमेर, पेज 1085 अंग्रेज़ी)।

कुछ लोगों के अनुसार सिरमौर के राजाओं के वंश की नींव जैसलमेर के रावल उग्रसेन ने डाली थी। वे लिखते हैं कि उग्रसेन शिकार खेलने इस ओर आया था। कुछ एक ने लिखा है कि वह गंगा स्नान के लिए आया था और उस ने सिरमौर की गद्दी को खाली पाकर सन् 1095 में रियासत पर कब्ज़ा कर लिया था। परन्तु उनका यह लिखना गलत है क्योंकि उग्रसेन नामक कोई रावल जैसलमेर में नहीं हुआ। दूसरे टॉड के इतिहास के अनुसार शालिवाहन द्वितीय का पुत्र हासु सिरमौर में भेजा गया था। इसके अलावा सन् ईसवी 1095 में जैसलमेर के रावल का सिरमौर में आना सच्चाई से दूर है क्योंकि सन् ईसवी 1168 में शालिवाहन द्वितीय, जिसका पुत्र सिरमौर में आया था, स्वयं गद्दी पर बैठा था। इसलिए उन लोगों का यह लिखना सही नहीं है।

सच्चाई यह है कि जब जैसलमेर के रावल शालिवाहन द्वितीय को सिरमौर के राजा और उसके परिवार के गिरी नदी में नष्ट हो जाने की सूचना मिली तो उसने अपने तीसरे पुत्र राजकुमार हासु को सिरमौर जाने का आदेश दिया। हासु अपने पिता की आज्ञा पर अपनी रानी को लेकर सिरमौर के लिए चल पड़ा। परन्तु ईश्वर की मर्ज़ी कि वह सिरमौर पहुंचने से पहले ही रास्ते में सरहिन्द के निकट स्वर्ग सिधार गया। उसकी रानी गर्भवती थी। जब राजकुमार के स्वर्ग सिधार जाने के बाद वह अपने साथियों के साथ सिरमौर के निकट पहुंची तो उसको प्रसवपीड़ा शुरू हुई और उसने पलास (ढाक) के वृक्ष के नीचे भाग्यशाली पुत्र को जन्म दिया जिसका इस अवसर की याद के तौर पर नाम पलासु रखा गया। इस लिए उसके नाम से सिरमौर के राजाओं के वर्तमान परिवार को अब तक पलासीयां कहते हैं। यद्यपि वह भट्टी यादव राजपूत चन्द्रवंशी यजुर्वेदी है। उसकी शाखा माध्यन्दिनी और तृतीय परिवार है परन्तु साधारण व्यक्ति उसको इस ओर पलासीयां कहते हैं।

सिरमौर निवासियों ने रानी को यहां ही रखा। जब उसका पुत्र युवा हो गया, तो गद्दी पर बैठने के समय उसका नाम शुभवंशप्रकाश अर्थात् अच्छे परिवार का नाम रोशन करने वाला रखा गया। यही सिरमौर के राजाओं के वंश का प्रथम पूर्वज है। इससे पहले कि हम सिरमौर के राजाओं का वर्णन अलग–अलग लिखें, पहले इन राजाओं के वंश वृक्ष के बारे में लिखते हैं। सिरमौर के राजाओं के वंश वृक्ष का लेखा रियासत में कई जगह पर मिलता है परन्तु वह एक दूसरे से मेल नहीं खाता। किसी में कई अतिरिक्त नाम दर्ज हैं और किसी में कम। कुछ में तो कोई नाम पहले और दूसरे में वही नाम पीछे दर्ज है। इसी तरह विक्रमी सम्वत् वर्ष में भी फर्क पाया जाता है। इसलिए हम ने इन सबको एक दूसरे से मिलाकर और छानबीन करके वंश वृक्ष तैयार किया है जो कि पुस्तक के साथ संलग्न है। सिरमौर गज़ेटियर में जो वंश वृक्ष दिया गया है वह सही नहीं है क्योंकि वह भी इसी तरह जिस तरह साधारण लोग बताते हैं दर्ज़ किया गया है।

नोट :— गज़ेटियर में शुभवंशप्रकाश का गद्दी ग्रहण करने का समय सम्वत् 1152 विक्रमी दर्ज किया गया है जैसा कि आम तौर पर लोग बताते हैं। परन्तु छानबीन से साबित हुआ है कि असल में सम्वत् 1252 विक्रमी है क्योंकि सम्वत् 1224 विक्रमी में तो जैसलमेर का रावल शालिवाहन द्वितीय गद्दी पर बैठा था। इसलिए यह सम्भव नहीं कि इस सम्वत् से पहले उसने अपने पुत्र हासु को सिरमौर को भेजा हो क्योंकि इसमें एक शताब्दी का अन्तर है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में रायभट्ट, जिनके पास वंशावली इत्यादि रखने का कार्य होता था, घटना को अतिप्राचीन बताने का प्रयत्न करते थे जैसा कि टॉड ने अपनी राजस्थान का इतिहास नामक पुस्तक के दूसरी वॉल्यूम में पेज 1313 के फुटनोट में लिखा है। वह कहते हैं कि ये लोग असल घटना के वर्ष को एक सौ साल पहले का सम्वत् बताते हैं। इसी प्रकार यहां पर भी यही बात प्रतीत होती है।

**1. प्रथम पूर्वज राजा शुभवंशप्रकाश का वर्णन**

यह राजा सम्वत् 1252 ई0 में राजवन के स्थान पर गद्दी पर बैठा और चार साल तक राज्य करके सम्वत् 1256 विक्रमी में स्वर्ग सिधारा।

**2. राजा मलेह प्रकाश**

यह राजा अपने पिता शुभवंश प्रकाश की मृत्यु के बाद राजवन के स्थान पर गद्दी पर बैठा। वह बड़ा बहादुर और योद्धा था। उसने आक्रमण करके उन तमाम क्षेत्रों को, जिन पर लोगों ने पहले राजा की मृत्यु हो जाने पर कब्ज़ा कर लिया था, छुड़ा कर अपने राज्य में सम्मिलित किया।

इसके पश्चात् उसने अपनी राजधानी को बढ़ाने की ओर ध्यान दिया। उसने राजा गढ़वाल की राजधानी श्रीनगर पर आक्रमण किया और गढ़वाल क्षेत्र को भागीरथी नदी तक, जो कि श्रीनगर से 25 कोस अर्थात् 37—1/2 मील की दूरी पर है, मलदा दुर्ग सहित अपने अधीन कर लिया। उसने वहां नदी के किनारे इस जीत की याद में लक्ष्मी नारायण का एक मन्दिर बनवाया और दुर्ग का नाम अपने नाम पर माली देवल रखा। यह राजा दानी भी था। इसने रियासत को नये सिरे

से विकसित किया और रियासत की सीमा को बढ़ाया। यह 18 साल तक राज्य करके सम्वत् 1274 विक्रमी में मृत्यु को प्राप्त हुआ।

### 3. राजा उदित प्रकाश

यह राजा अपने पिता राजा मलेहप्रकाश कि मृत्यु के बाद विक्रमी सम्वत् 1274 में गद्दी पर बैठा। उसने जलवायु के अनुकूल न होने के कारण राजवंश की राजधानी कालसी में बदल दी। वह दो साल राजवन और आठ वर्ष कालसी में राज्य कर सम्वत् 1284 विक्रमी में राजपाठ अपने पुत्र कवाल प्रकाश को देकर तीर्थ यात्रा को चला गया।

### 4. राजा कवाल प्रकाश

यह राजा सम्वत् 1284 विक्रमी में गद्दी पर बैठा और राजा मलेह प्रकाश की तरह अपनी रियासत की सीमाओं को बढ़ाने और सुदृढ़ करने में व्यस्त रहा। उसने जुब्बल, थरोच और बलसन इत्यादि पर आक्रमण करके इन रियासतों के मुख्यों को अपने अधीन किया और बाज लेकर वापिस आया। वह 12 साल राज्य करके सम्वत् 1296 में मृत्यु को प्राप्त हुआ।

### 5. राजा सुमेर प्रकाश

यह राजा अपने पिता कवल प्रकाश की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठा। इस राजा ने रतेश रियासत को जो ज़िला शिमला में है, लूटमार कर इस पर कब्ज़ा कर लिया था। उसने 9 साल तक राज्य किया और विक्रमी सम्वत् 1305 में उसका स्वर्गवास हो गया।

### 6. राजा सूरज प्रकाश

यह राजा अपने पिता सुमेर प्रकाश की मृत्यु के बाद सम्वत् 1305 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। जब वह रतेश में था तो उसको कालसी से समाचार प्राप्त हुआ कि उसकी प्रजा ने विद्रोह करके राजधानी कालसी को लूट लिया है और रानियों के महल पर भी आक्रमण किया है। कहते हैं कि उस समय राजा की पुत्री, जो वहां उपस्थित थी, ने विद्रोही का मुकाबला करके उनको हरा दिया। राजा भी तुरन्त वहां पहुंचा और विद्रोहियों को अधीन करके उनको दण्डित किया और शांति स्थापित की। इसके पश्चात् वह पहाड़ के लिए चल पड़ा और

जुब्बल, बलसन, कुमारसेन, घूंड, ठियोग, शयारी और रावीं पर आक्रमण किया और इनको अधीन करके कालसी को लौट गया। उसने अपने एक भरोसे के आदमी को पहाड़ी इलाकों का शासक नियुक्त किया और उसे रतेश में छोड़ा। इस राजा ने 11 साल शासन किया और सम्वत् 1316 में इसका स्वर्गवास हुआ।

**7. राजा पदम प्रकाश**

यह राजा अपने पिता की मृत्यु पर सम्वत् 1316 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 12 साल कालसी में राज्य किया। उसकी मृत्यु सम्वत् विक्रमी 1328 में हुई।

**8. राजा कर्ण प्रकाश**

यह राजा अपने पिता पदमप्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1328 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 15 साल तक कालसी में राज्य किया। उसका स्वर्गवास सम्वत् 1343 विक्रमी में हुआ।

**9. राजा अखण्ड प्रकाश**

यह राजा अपने पिता कर्ण प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1343 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 11 साल कालसी में राज्य किया और सम्वत् 1354 विक्रमी में मृत्यु को प्राप्त हुआ।

**10. राजा बुद्धि प्रकाश**

यह राजा अपने पिता अखण्ड प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1354 में गद्दी पर बैठा। उसने 23 साल तक कालसी में राज्य किया। उसका स्वर्गवास सम्वत् 1377 विक्रमी में हुआ।

**11. राजा अचल प्रकाश**

यह राजा, राजा बुद्धि प्रकाश की मृत्यु के पष्चात् सम्वत् 1377 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 13 साल कालसी में शासन किया। उसकी मृत्यु सम्वत् 1390 विक्रमी में हुई।

**12. राजा वीरसाल प्रकाश**

यह अचल प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1390 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। यह राजा बड़ा पूजापाठी और न्याय करने वाला था। इस राजा ने 21 साल राज्य कर सम्वत् 1411 विक्रमी में अपने पुत्र ब्रह्म प्रकाश को राजपाट सौंप दिया और स्वयं साधू बन कर ईश्वर भक्ति के लिए जंगल में चला गया।

**13. राजा ब्रह्म प्रकाश**

यह राजा वीरसाल प्रकाश के शासन छोड़ देने के पश्चात् सम्वत् 1411 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसकी मृत्यु बीस साल राज्य करने के बाद सम्वत् 1431 विक्रमी में हुई।

**14. राजा भगत प्रकाश**

राजा ब्रह्म प्रकाश की मृत्यु के बाद यह राजा सम्वत् 1431 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। वह 12 साल राज्य करके सम्वत् 1443 विक्रमी में स्वर्ग सिधार गया।

**15. राजा जगत प्रकाश**

यह राजा अपने पिता भगत प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1443 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। इस राजा के शासन काल में राज्य में कुशासन चरम सीमा पर था। उसके कुशासन के कारण न केवल प्रजा बागी हो गई बल्कि जुब्बल, बलसन, कुमारसेन इत्यादि के ठाकुर भी स्वतन्त्र हो गए। इसी चिंता के कारण यह राजा सम्वत् 1445 में 2 साल शासन करके मृत्यु को प्राप्त हुआ।

**16. राजा वीर प्रकाश**

यह राजा अपने पिता राजा जगत प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1445 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। यह बड़ा बुद्धिमान और सुझबूझ वाला व्यक्ति था। उसने गद्दी पर बैठते ही विद्रोहियों को दण्डित करना आरम्भ किया और आक्रमण करके रियासत के उन सभी भागों को, जो उसके पिता के शासन काल में हाथ से निकल गए थे और जिन पर विद्रोहियों ने अपना स्वामित्व कर लिया था, फिर छुड़ा कर अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया।

पहाड़ी क्षेत्र के ठाकुरों को, जो राजा जगत प्रकाश के काल में स्वाधीन हो गए थे, फिर अपने अधीन किया । उन्होंने राजा का स्वामित्व कबूल करके बाज अदा किया। इस राजा ने हाटकोटी के स्थान पर जहां जुब्बल, शयरी और रावीं की सीमाएं मिलती हैं, पब्बर नदी के किनारे देवी का एक मन्दिर बनवाया। सिरमौर के राजाओं के परिवार में देवी पूजन शुरू से ही प्रचलित है।

इन राजाओं में जीत के अवसर पर इस प्रकार के मन्दिर

इत्यादि अपनी सीमाओं पर बनाने का रिवाज चला आता है। जैसा कि राजा मलेह प्रकाश ने गढ़वाल क्षेत्र में माली देवल मन्दिर बनवाया था। राजा वीर प्रकाश ने पब्बर नदी पर उत्तर की ओर एक पहाड़ी पर एक बड़ा दुर्ग बनवाया था जिसको हाटकोटी का दुर्ग कहते हैं।

उसने एक अन्य किला पब्बर नदी पर भी बनवाया था जिसको रावींगढ़ कहते हैं। इन दुर्गों के अवशेष और चिन्ह अभी तक मौजूद हैं तथा देवी का मन्दिर भी अभी तक कायम है। इस राजा ने दस साल शासन किया और सम्वत् 1455 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ।

**17. राजा नेकट प्रकाश**

यह राजा वीर प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1455 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने पहाड़ी इलाके नेरी में रिहायश बनाई। वह 16 साल राज्य करके सम्वत् 1471 विक्रमी में स्वर्ग सिधारा।

**18. राजा गर्व प्रकाश**

यह राजा नेकटप्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1471 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने अपनी रिहायश नेरी से बदल कर कोटजोगड़ी में बनाई जो रतेश के इलाके में है। उसने 18 साल शासन किया और सम्वत् 1489 विक्रमी को उसका स्वर्गवास हुआ।

**19. राजा ब्रह्म प्रकाश**

यह राजा अपने पिता गर्व प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1489 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। इस राजा ने सिरमौर के कोटदेवथल स्थान में वास किया। उसने 14 साल शासन कर सम्वत् 1503 विक्रमी में मृत्यु पाई।

**20. राजा हंस प्रकाश**

यह राजा ब्रह्म प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1503 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। यह राजा सिरमौर रियासत के पच्छाद में कोटदेवथल के स्थान पर रहता था। उसने 25 साल शासन किया और सम्वत् 1528 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ।

**21. राजा रतन प्रकाश**

यह राजा हंस प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1528 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने कोट देवथल में 24 साल राज किया। उसका स्वर्ग वास सम्वत् 1552 विक्रमी में हुआ।

**22. राजा पृथी प्रकाश**

यह राजा रतन प्रकाश के बाद सम्वत् 1552 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 27 साल कोटदेवथल में शासन किया उसकी मृत्यु सम्वत् 1579 विक्रमी में हुई।

**23. राजा बाहुबल प्रकाश**

यह राजा पृथी प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1579 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 16 साल कोटदेवथल में राज किया। उसकी मृत्यु सम्वत् 1595 विक्रमी में हुई।

**24. राजा धर्म प्रकाश**

यह राजा बहुबल प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1595 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। इस राजा ने अपना वास कोटदेवथल से कालसी में स्थानान्तरित किया। उसने 32 साल राज किया। सम्वत् 1627 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ।

**25. राजा प्रदीप प्रकाश**

यह राजा धर्म प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1627 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसने 15 साल राज्य किया। उसकी मृत्यु सम्वत् 1642 विक्रमी में हुई।

**26 राजा वख़्त प्रकाश**

यह राजा प्रदीप प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1642 विक्रमी में गद्दी पर बैठा और 20 साल राज्य करके कालसी में सम्वत् 1662 में स्वर्ग सिधारा।

**27. राजा बुद्धि प्रकाश**

यह राजा वख़्त प्रकाश की मृत्यु पर सम्वत् 1662 विक्रमी में सिंहासन पर बैठा। उसने अपना वास कालसी से बदल कर राजपुर में बनाया। यह स्थान कालसी के निकट है। उसने 10 साल शासन किया और सम्वत् 1672 विक्रमी में राजपुर में उसका निधन हो गया।

**28. राजा उदय प्रकाश**

यह राजा बुद्धि प्रकाश की मष्त्यु पर संवत् 1672 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। केवल एक वर्ष राज्य कर संवत् 1673 विक्रमी में राजपुर के स्थान पर उसका स्वर्गवास हुआ।

# दूसरा अध्याय

## 1. राजा कर्म प्रकाश प्रथम

यह राजा सम्वत् 1673 विक्रमी में राजा उदय प्रकाश की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठा। उसने 6 साल तक कालसी में निवास रखा। एक बार शिकार खेलता–खेलता वह उस स्थान पर आ पहुंचा जहां अब नाहन आबाद है। उस काल में यह स्थान एक घना जंगल था। जिस स्थान पर अब राजा के महल हैं वहां पर ज़ंगल में एक साधु बनवारी दास वैरागी डेरा डाले हुए था और अपने प्रभु की भक्ति में लीन था। कहावत है कि इस साधु के पास एक शेर रहा करता था जो कुत्ते की भांति इस से स्नेह कऱता था।

राजा कर्म प्रकाश अचानक ही साधु के डेरे पर पहुंचे और प्रणाम किया। साधु ने आशीर्वाद दिया। राजा को यह स्थान रियासत की राजधानी बनाने के लिए पसन्द आया। उन्होंने साधु को इस बारे में बताया। साधु को भी यह सुझाव पसन्द आया और उसने राजा को अपने डेरे के स्थान पर दुर्ग और महल निर्मित करने की आज्ञा दी। साधु ने अपना डेरा इस स्थान के निकट ही दक्षिण की ओर दूसरी जगह पर, जहां पर जगन्नाथ जी का एक प्राचीन मन्दिर है, अपना डेरा बनाया। राजा दुर्ग बनाने और शहर को आबाद करने में व्यस्त हो गया।

राजा ने सम्वत् 1679 विक्रमी में दुर्ग और शहर की नींव रखी। इस शहर का नाम साधु के साथ सलाह करके नाहन रखा। संस्कृत में जिसका अर्थ कभीं न मिटने वाला है।

कुछ एक लोग कहते हैं कि आरम्भ में इस शहर का नाम नाहर था। नाहर शेर को कहते हैं क्योंकि साधु के पास शेर रहता था

इस लिए इसके नाम पर शहर का नाम नाहर रखा गया। असल में शहर का नाम नाहन ही था जो संस्कृत शब्द ना, हन से मिल कर बना है। राजा ने सम्वत्1679 विक्रमी में कालसी से अपनी राजधानी नाहन में स्थानान्तरित की। यह राजा धर्म में सुदृढ़ विश्वास रखता था। वह बड़ा शूरवीर था। उसने 6 साल कालसी में और 8 साल नाहन में शासन किया। वह कुल 14 साल राज करके सम्वत् 1687 विक्रमी में स्वर्ग सिधारा। उसी समय से जगन्नाथ जी का मन्दिर नाहन में अपने पुराने स्थान पर स्थित है। इसके महन्त उसी समय से कड़ीवार, एक के बाद दूसरा, गद्दी पर बैठते चले आये हैं। यह मन्दिर नाहन में सबसे प्राचीन है। इसमें विष्णु की मूर्ति है। राजा साहिब नाहन इस मन्दिर के महन्त को बड़ा आदर देते हैं। हर वर्ष दशहरा के अवसर पर पूजा के लिए मन्दिर में जाते हैं फिर वहां से महन्त को अपने साथ लेकर प्राचीन महन्तों की समाधियों पर, जो कि रामकंडी पर पक्की बनी हुई हैं, दर्शनों के लिए जाते हैं। इस मन्दिर के महन्तों की वंशावली का व्याख्यान हम पहले ही कर चुके हैं जहां हमने मन्दिरों के हालात के बारे में लिखा है।

## 2. राजा मान्धाता प्रकाश

यह राजा अपने भाई राजा कर्म प्रकाश की सम्वत् 1687 विक्रमी में मृत्यु के पश्चात् गद्दी पर बैठा। यह राजा कर्म प्रकाश की भांति नाहन शहर के विकास और आबादी के विस्तार में व्यस्त रहा। यह राजा भी बड़ा बहादुर और दिलेर था। इसने अपनी बुद्धिमत्ता और बुलंद हौंसले से शाहजहां बादशाह के दरबार में बड़ा प्रभुत्त्व प्राप्त किया। बादशाह को उसकी वफादारी और बहादुरी पर बड़ा भरोसा था इस कारण लड़ाइयों में शामिल होने के लिए इस राजा को आदेश होते रहते थे। देहली के बादशाह शाहजहां ने अपने 28 जमादी–अल–सानी सन् 1064 हिजरी के आदेश में राजा को जम्मू और कांगड़ा के फौजदार ऐराज़खान के साथ मिलकर गढ़वाल के ज़मींदार के विरुद्ध युद्ध करने के लिए नियुक्त किया। राजा को आदेश हुआ कि वह अपनी फौज तैयार रखे और ऐरज़खान के साथ जाने के लिए तैयार रहे। बादशाह ने इसके बदले राजा को गढ़वाल का वह क्षेत्र जो

रियासत सिरमौर के साथ लगता था, देने का वायदा किया। (यह आदेश इस पुस्तक में दर्ज है)।

इसके पश्चात् शाहजहां ने 24 मुहर्रम 1065 हिजरी में, जब शाहजहां को 28 साल शासन करते हो गये थे, इस राजा को खलीलउल्लाह के साथ मिलकर श्रीनगर (गढ़वाल) पर आक्रमण करने का हुक्म दिया और बदले में सिरमौर की सीमा से मिलता हुआ गढ़वाल का कुछ और क्षेत्र देने का वायदा किया।

(नोट :– ऐसा प्रतीत होता है कि ऐरज़खान पहली बार श्रीनगर पर किसी कारणवश आक्रमण नहीं कर सका। इसलिए दूसरे साल खलीलउल्लाह खान इस कार्य के लिए नियुक्त हुआ जिस की राजा मान्धाता प्रकाश को दोबारा आदेश देकर सूचना दी गई। आदेश नम्बर दो भी पुस्तक के अनुपूरक में दर्ज है।

राजा ने अपनी सेना सहित खलीलउल्लाह के साथ मिलकर श्रीनगर पर आक्रमण किया और गढवाल देश को अपने अधीन किया। जौनपुर का क्षेत्र, जो गंगा नदी के उस पार गढ़वाल में था और शेरगढ़ का किला, कालसी तथा बैरट पर राजा का कब्ज़ा हो गया। यह राजा 17 साल नाहन में राज करके सम्वत् 1704 विक्रमी में स्वर्ग सिधारा।

### 3. राजा सुभाग प्रकाश

राजा मान्धाता प्रकाश की मृत्यु पर राजा सुभाग प्रकाश संवत् 1704 विक्रमी में राजसिंहासन पर बैठा। यह राजा देश के शासन में बहुत होशियार था और रियाया का बहुत ध्यान रखता था। वह मान्धाता प्रकाश की तरह मुग़लिया शाही दरबार में बड़ा प्रभाव रखता था तथा दरबार का वफादार था, इस लिए शाहजहां बादशाह ने 11 रबि–उल–सानी 1065 हिजरी में अपने फरमान (आदेश) में इस राजा की गढ़वाल की लड़ाई में दी गई सेवाओं के लिए बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और रियासत सिरमौर की सीमा से लगते गढ़वाल के इलाके को अपने अधीन करने के लिए लिखा तथा खलील उल्लाह खां की विनती पर बादशाह ने राजा को और भी सेवाएं देने के लिए कहा।

(नोट :– यद्यपि इन शाही आदेशों पर शाहजहां की मोहर है परन्तु उस समय राज पाठ औरंगज़ेब के हाथ में था)।

खलील उल्लाह की विनती पर बादशाह ने अपने शाही आदेश के अनुसार, जो जमादी–उल–अव्वल 22, हिजरी 1065 को जारी किया गया था, जब शाहजहां के शासन का 28 वां साल था, राजा को कोटाहा का इलाका जागीर के तौर पर उन हक–हकूक के साथ जो राजा को अपनी रियासत में प्राप्त थे, दे दिया। राजा सुभाग प्रकाश ने शाही आदेश के अनुसार कोटाहा के ज़मींदार को निकाल कर इलाके को अपने अधीन कर लिया। हिजरी 1068 में मुहम्मद औरंगज़ेब आलमगीर ने अपने फरमान अनुसार, जो प्रथम शव्वाल 1068 हिजरी में, जब शाहजहां के शासन का 32 वां साल था, मुगलिया शासन को स्वयं अपने हाथों में ले लेने की सूचना शहज़ादा मुहम्मद सुलतान के माध्यम से राजा को दी।

(नोट :– इन शाही आदेशों पर औरंगज़ेब की मोहर शहज़ादा के नाम से लगी हुई है क्योंकि शाहजहां जीवित था परन्तु बन्दी बनाया गया था। शासन असल में औरंगज़ेब ही करता था। इस आदेश में राजतिलक का वर्ष 32 लिखा गया है जो शाहजहां के शासन करने का वर्ष था। यह आदेश भी किताब के पूरक में फरमान न० 5 पर दर्ज़ है)।

इस आदेश में राजा की वफादारी और अच्छी सेवाओं का भी वर्णन है। औरंगज़ेब ने अपने आदेश, जो 19 जमादी–उल–अव्वल हिजरी 1069 को जारी किया था, में राजा को लिखा कि शहजादा मुहम्मद सुलतान को शुजा को बन्दी बनाने के लिए, जो हार कर बंगाल की तरफ भाग गया है, नियुक्त किया गया है और दारा शिकोह और उसके पुत्र सुलेमान शिकोह के बीच, जो कि गढ़वाल में रह रहा है, पत्राचार तुम्हारे क्षेत्र से होकर होता है। तुम को इस सिलसिले को बन्द करने के प्रयत्न करने चाहिएं, यदि कोई व्यक्ति चिट्ठी पत्री के साथ पकड़ा जाता है तो उसको देहली भेज दिया जाए (शाही आदेश नं० 6 )।

इस पर राजा ने दारा शिकोह और उसके पुत्र के बीच पत्राचार को रोकने के लिए उचित स्थानों पर चौकियां बनाई और बादशाह को इसकी सूचना दी। फिर बादशाह का दूसरा आदेश 16 शव्वाल 1069 हिज़री को राजा को मिला। इस में लिखा था कि तुम्हारी चौकियां स्थापित करने की सूचना हमें पहुंची। तुम होशियारी और खबरदारी से

प्रबन्ध रखो और श्रीनगर के ज़मींदार को दण्डित करने के लिए राजरूप को सेना के साथ भेजो और तुम भी श्रीनगर पर एक तरफ से आक्रमण करो (फरमान न0 7)।

इस के पश्चात् औरंगज़ेब ने अपने 16 मुहर्रम हिजरी 1069 को राजा साहब को सूचना दी कि एक तरफ से राजा राजरूप और दूसरी तरफ से मोअतमद राअद अंदाज़ खान श्रीनगर पर चढ़ाई करने के लिए नियुक्त हुए हैं। तुम को चाहिए कि खान के वहां पहुंचने पर तुम भी खान के साथ मिल कर पैदल और सवार फौज साथ ले जाकर उचित रास्ते से आक्रमण करो (फरमान न0 8)।

इन फरमानों से साफ पता चलता है कि राजा सुभाग प्रकाश देहली के शाही राज्य का बड़ा वफादार रहा है, तथा औरंगज़ेब उस का बड़ा आदर करता था। राजा की युद्ध में दी गई सेवाओं के लिए उस को कोटाहा और गढ़वाल का सिरमौर रियासत से लगता इलाका दे दिया गया (फरमान न0 9)। इसी प्रकार हिज़री 1071 में। जो औरंगज़ेब के राजतिलक का तीसरा वर्ष था, राजा को उस के अच्छे शासन के लिए केलाखेर (कलेशर) जो कि देहली प्रान्त के सहारनपुर में था, दे दिया गया। इस की आबादी इत्यादि का प्रबन्ध गंगा राम और भूपत ज़मींदार करते थे। इस राजा ने बड़ी होशियारी से बारह साल तक नाहन में शासन किया और संवत् 1716 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ। इस के दो पुत्र थे जिन का नाम महीचन्द और हरि सिंह था।

**4. राजा बुद्ध प्रकाश उर्फ मही चन्द**

राजा सुभाग प्रकाश की मृत्यु पर इस का बड़ा पुत्र महीचन्द संवत् 1716 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। वह भी अपने पिता की भांति दिल्ली दरबार का बड़ा वफादार रहा और दरबार की ओर से भी उसे पिता की तरह सम्मान मिलता रहा। महीचन्द ने राजा सुभाग प्रकाश के निधन का समाचार दिल्ली दरबार को दिया जिस पर औरंगज़ेब आलमगीर बादशाह की ओर से हिजरी 1078 में सिफर महीने की 14वीं तिथि को जारी किए गए फरमान के अनुसार (यह औरंगज़ेब के शासन का दसवां वर्ष था) महीचन्द को बुद्ध प्रकाश का खिताब दिया गया और

उसे एक कीमती खिल्लत (वस्त्र) देकर सिरमौर के राजा के तौर पर मान्यता दी गई (फरमान नम्बर 10)। उसको भी पिता की तरह युद्धों में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जाता रहा और वह पिता की तरह आदर प्राप्त करता रहा। हिजरी 1085 में औरंगज़ेब ने अपने फरमान में सिफर मास की पहली तिथि, जो औरंगज़ेब के शासन का 17वां साल था, को राजा को लिखा कि परगना अकबरपुर, जो सुहाना के नाम से प्रसिद्ध है और फिदबी खान को जागीर में मिला हुआ था, सूरजचन्द ज़मींदार के पुत्र पंजौरी ने छीन लिया है तथा किला मुज़फ्फरगढ़ व जगतगढ़ पर भी कब्जा कर लिया है, इसलिए रुस्तम बेग गुर्जबरदार (गदा उठाने वाले) को पिंजौरी को दण्डित करने के लिए नियुक्त किया गया है। तुम भी रुस्तम बेग के साथ जाओ और शत्रु को वहां से खदेड़कर इस परगनें को किलों के साथ फिदबी खान के सुपुर्द कर दो (फरमान न0 12)।

राजा ने शाही आदेश के अनुसार इस क्षेत्र को सूरजचन्द के पुत्र से छुड़ाकर फ़िदबी खान के हवाले कर दिया। इस राजा ने भी शाही परिवार में बड़ा प्रभुत्त्व स्थापित किया। शहजादों और शहजादियों से सीधे पत्राचार करने का सम्मान भी उसे प्राप्त था। इस रियासत में अभी तक शाहजहां की पुत्री जहांआरा के लिखे आदेश (फरमान) मौजूद हैं। इन फरमानों से प्रतीत होता है कि राजा की ओर से उपहार इत्यादि शाही परिवार में भेजे जाते थे, जिनको बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया जाता था। पत्राचार का सिलसिला राजा और शाही परिवार के सदस्यों के बीच जारी रहा (फरमान नं0 15)।

राजा सुभाग प्रकाश की मृत्यु के बाद गढ़वाल के उस क्षेत्र पर, जिसे राजा को दिल्ली दरबार ने युद्ध में सेवाओं के बदले दिया था, गढ़वाल के ज़मींदार ने अवसर पाकर कब्ज़ा कर लिया था। राजा बुद्ध प्रकाश ने देहली दरबार से इस क्षेत्र को वापिस दिलवाने का आग्रह किया।

**नोट** :—फरमान नं0 10 में इस राजा का नाम गद्दी पर बैठने से पहले बिहारी लिखा गया है, परन्तु सिरमौर परिवार की वंशावली में इस नाम का कोई व्यक्ति नहीं है लेकिन महीचन्द पुत्र सुभाग प्रकाश

दर्ज है। सम्भव है कि महीचन्द को बचपन के दिनों में उसके माता–पिता बिहारी कहते हों। परन्तु कागज़ात इत्यादि में महीप्रकाश दर्ज है, इसलिए मही प्रकाश ही सही है – ताम्रपत्र की नकल, जो इस पुस्तक के पूरक में संलग्न है, देखें।

देहली दरबार ने जम्मू के फौज़दार अज़ीज उल्लाह खान को नियुक्त किया कि वह इसमें राजा की सहायता करे। देहली दरबार ने राजा को इसकी सूचना रज़ब मास की 5वीं तिथि को, जो आलमगीर के राजतिलक का 21वां वर्ष था, दी। फौज़दार ने आक्रमण करके श्रीनगर के ज़मींदार से यह क्षेत्र वापिस लेकर विराट के दुर्ग और कालसी पर राजा का प्रभुत्त्व स्थापित कर दिया।

**नोट** :– विराट का दुर्ग, वही स्थान है, जहां महाराजा अशोक ने, जो महाराजा चन्द्रगुप्त का पोता था और मसीह से 263 वर्ष पूर्व हिन्दुस्तान का चक्रवर्ती राजा था। एक पत्थर पर, जो कि 10 फुट लम्बा और 10 फुट चौड़ा है, पाली भाषा में ब्राह्मी लिपि में, जो नागरी से मिलती–जुलती है, ये नियम अंकित करवाए थे, जो अब भी कालसी से एक मील की दूरी पर उस मार्ग के निकट, जो चक्रौता को जाता है, मौजूद है। इस पर राजा अशोक के आदेश, जो संख्या में 14 हैं, लिखित हैं। इसका राज्य हिन्दुस्तान में 12° अक्षांश से हिमालय तक, जिसमें नेपाल व कश्मीर सम्मिलित हैं तथा सिंध, स्वात्, युसूफज़ई, अफगानिस्तान, कन्धार, हरात, हिन्दूकुश पहाड़ और बलोचिस्तान इत्यादि तक था। इस राजा ने बुद्ध धर्म अपना लिया था और उसने बुद्ध मज़हब के विकास के लिए इस धर्म के नियम जगह–जगह पहाड़ों की चट्टानों, पत्थरों और मीनारों पर अंकित करवाये थे। इसी प्रकार के आदेश हिन्दुस्तान के निम्नलिखित स्थानों पर मौजूद हैं :– (1) युसूफज़ई की शाहबाज गढ़ी में, जो कि पेशावर से 40 मील उत्तर–पूर्व की ओर है, (2) शाहबाज गढ़ी के निकट ज़िला हजारा के मानसेरा में, (3) ज़िला सहारनपुर में कालसी में चक्रौता सड़क के किनारे, (4) बम्बई से उत्तर की ओर ज़िला थाना के सुपरा में, (5) गिरीनार में जूनागढ़ के पूर्व की ओर, (6) धौली के पास अश्वत्थागा में,

जो उड़ीसा के ज़िला कटक के भुवनेश्वर से चार मील दक्षिण–पश्चिम की ओर है, और (7) मद्रास के ज़िला गंजम के जोगाद में।

राजा ने दिल्ली का इस बारे पत्र लिख कर धन्यवाद किया। देहली दरबार ने अपने उत्तर में राजा को आगे से झगड़े फसाद से दूर रहने के आदेश दिए (फरमान न0 14)। इस राजा ने नाहन में जगन्नाथ जी का मन्दिर बनवाया और सिरमौरी ताल से प्राचीन मूर्ति ला कर मन्दिर में स्थापित की। उस ने 19 साल शासन किया और संवत् 1735 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ। पाठकों को राजा बुद्ध प्रकाश के हालात पढ़ने से ज्ञात हो गया होगा की इस ने देहली दरबार में बड़ा प्रभाव प्राप्त कर लिया था परन्तु इस का प्रभाव वैसा नहीं रहा जैसा कि राजा मान्धाता प्रकाश व राजा सुभाग प्रकाश का था क्योंकि इस राजा के काल में गढ़वाल के ज़मींदार ने गढ़वाल का क्षेत्र उस से छीन लिया था और राजा का उसकी वापसी के लिए देहली दरबार से आग्रह करना यह बात साबित करता है कि वह स्वयं इस क्षेत्र को वापिस लेने में असमर्थ था। इसके अतिरिक्त देहली दरबार का इस राजा को आगे से लड़ाई झगड़े से दूर रहने के आदेश देना भी यह स्पष्ट करते हैं कि अब देहली दरबार का इस राजा पर पूरा -पूरा स्वामित्व हो गया था। आने वाले समय में भी धीरे–धीरे सिरमौर के राजाओं की शक्ति कम होती गई और देहली के बादशाहों का स्वामित्व इन पर बढ़ता गया। यह बात शाही फरमानों से प्रकट होती है परन्तु इस से पूर्व यह रियासत अपना स्वामित्व रखती थी (एलफिन्स्टन का इतिहास, पेज 192)।

### 5. राजा मस्त प्रकाश उर्फ मेदनी प्रकाश

राजा बुद्ध प्रकाश की मृत्यु पर इस का बड़ा पुत्र योग राज संवत् 1735 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। राजतिलक के बाद वह मेदनी प्रकाश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। जब दिल्ली दरवार में राजा बुद्ध प्रकाश की मृत्यु का समाचार पहुंचा तो बादशाह औरंगज़ेब आलमगीर की ओर से हिजरी 1109 के रवी–उल–आखिर की 20 वीं तिथि को जारी किए गए फरमान के माध्यम से इस राजा को मस्त प्रकाश का खिताब तथा एक खिल्लत देकर उसको सिरमौर के राजा के तौर पर मान्यता दी

गई। (फरमान न० 20)।

इस फरमान से स्पष्ट होता है कि राजा मस्त प्रकाश को जम्मू के फौजदार के अधीन रहने और उसको सन्तुष्ट रखने के आदेश हुए। परन्तु इस से पहले के फरमान में, जो कि उसके पिता राजा बुद्ध प्रकाश की मृत्यु पर देहली दरबार से प्राप्त हुआ था, राजा के देहली दरबार के प्रति वफादारी और शुभ चिन्ता के शब्द दर्ज हैं न कि फौजदार के प्रति वफादारी। इस से स्पष्ट होता है कि देहली दरबार की प्रभुसत्ता धीरे-धीरे सिरमौर के राजाओं पर बढ़ रही थी। इस राजा के शासन काल में गुरु गोबिन्द सिंह, जो कि सिक्खों का दसवां गुरु था, और जो इस से पहले रियासत कहलूर के आनन्दपुर क्षेत्र में रहता था, रियासत सिरमौर के मौज़ा टोका में आ गया था। गुरु साहिब और राजा भीम चन्द कहलूर वाले के बीच एक हाथी के बारे में नाराज़गी हो गई थी। गुरु साहिब के पास एक सफेद रंग का हाथी था जो कि इनको बंगाल के राजा मान सिंह ने दिया था। इस हाथी को राजा भीम चन्द ने मांगा। गुरु साहिब ने इसे देने से इनकार कर दिया जिस पर राजा भीम चन्द ने गुरु को अपने क्षेत्र से चले जाने का आदेश दिया।

इस बात पर गुरु साहिब आनन्दपुर से तहसील नाहन के मौज़ा टोका में आ गए और वहां निवास करने लगे। अब तक भी इस मौज़ा में जो काला आम के निकट है, एक चबूतरा व एक झंडा निशानी के तौर पर स्थापित है जो कि गुरुद्वारा कहलाता है। इस गुरुद्वारे को रियासत सिरमौर से जागीर भी मिली हुई है। मौज़ा टोका से राजा मस्त प्रकाश उर्फ मेदनी प्रकाश ने गुरु साहिब को नाहन में आमन्त्रित किया। गुरु साहिब ने कुछ समय नाहन में व्यतीत किया। उनके निवास स्थान पर नाहन में अब तक एक चबूतरा व एक झंडा गुरुद्वारे की निशानी के तौर पर मौजूद है। कुछ समय से वहां लोगों ने चन्दा देकर एक गुरुद्वारा बना लिया है। यहां पर एक सिक्ख पुजारी, जिसको भाई कहते हैं, रहता है जो कि ग्रंथ साहिब को पढ़ाता है।

नाहन से गुरु साहिब पौंटा में, जो कि रियासत सिरमौर के क्यारदादून क्षेत्र में एक तहसील है, चले गए। गुरु ने वहां कुछ समय निवास किया। पौंटा में एक बड़ा अच्छा गुरुद्वारा गुम्बद वाला बना हुआ

है। वह अब तक मौजूद है। राजा से आज्ञा लेकर गुरु साहिब ने वहां पर एक दुर्ग भी बनवाया जिसकी नींव के चिन्ह अब तक वहां पाए जाते हैं। इसी बीच, जब गुरु गोबिन्द सिंह साहिब पौंटा में रहते थे, कहलूर के राजा भीम चन्द के पुत्र का विवाह गढ़वाल के राजा फतेह शाह के परिवार में होना तय हुआ। गुरु गोबिन्द सिंह और गढ़वाल के राजा का आपस में मेल जोल मैत्री भाव था इस लिए गुरु साहिब ने अपने दीवान नन्द चन्द को शादी का तम्बोल देकर फतेह शाह के दरबार में भेजा परन्तु कहलूर के राजा भीम चन्द को जब यह सूचना प्राप्त हुई तो उसने फतेह शाह को लिखा कि गुरु गोबिन्द सिंह से हमारी नाराज़गी है, यदि आप की और उसकी मित्रता और मेल जोल रहेगा तो हम विवाह नहीं करेंगे, इस पर फतेह शाह को मजबूरन तम्बोल वापिस करना पड़ा।

गुरु साहिब को इस से अति दुःख हुआ और वे अपनी रंजिश निकालने के इन्तज़ार में रहे। जिस समय राजा भीम चन्द गढ़वाल से विवाह करके वापिस आया तो गुरु साहिब ने उसको रोका और कहा कि तुम ने हम को अकारण ही हानि पहुंचाई और हमारा निरादर किया, इस लिए हम से युद्ध करके जाओ। राजा भीम चन्द और गुरु साहिब के बीच भंगानी नामक स्थान पर, जो कि पौंटा से 3 मील उत्तर की ओर है, युद्ध हुआ। राजा भीम चन्द के साथ राजा किरपाल चन्द कटोच, राजा केसरी चन्द जसवां वाला, राजा सुखदेव चन्द जसरोटा तथा राजा हरी चन्द हन्डूर वाला थे। एक बड़ा युद्ध हुआ जिस में गुरु साहिब को विजय प्राप्त हुई। राजा हरी चन्द, केसरी चन्द व सुखदेव चन्द लड़ाई में मारे गए। इस युद्ध की याद में गुम्बद वाला एक सती मठ टूटी फूटी हालत में भंगानी में अब तक मौजूद है। इस मठ पर पत्थर पर एक लेख अंकित है परन्तु पत्थर के घिस जाने के कारण पढ़ा नहीं जाता। जो भी टूटे–फूटे अक्षर पढ़े जाते हैं उनसे यह पता चलता है कि यह सती मठ किसी रानी का है, जो संवत् 1741 विक्रमी में सती हुई थी।

यह लड़ाई संवत् 1741 विक्रमी में हुई थी जैसा कि गुरु गोबिन्द सिंह के इतिहास में लिखित है इस लिए यह प्रतीत होता है

कि यह सती मठ उन राजाओं की रानियों का होगा जो भंगानी के युद्ध में मारे गए थे। गुरुगोबिन्द सिंह ने भंगानी में झंडा स्थापित किया,जहां पर अब एक गुरुद्वारा है। कुछ समय बाद मेदनी प्रकाश को गुरु गोबिन्द सिंह के साथ मैत्री भाव रखने के कारण देहली दरबार से फटकार पड़ी, परन्तु जब गुरु साहिब सिरमौर के क्षेत्र से चले गए और राजा साहिब का कोई सम्बन्ध गुरु के साथ साबित न हुआ तो फिर शाही दरबार से उनको आदर मिलता रहा। वह सोलह साल नाहन में राज करके संवत् 1751 में निस्संतान स्वर्ग सिधारे।

**6. राजा हरी प्रकाश**

राजा मस्त प्रकाश उर्फ मेदनी प्रकाश के निस्संतान होने के कारण उसकी मृत्यु के बाद उसका चाचा हरी सिंह, जो कि राजा बुद्ध प्रकाश का दूसरा पुत्र था, संवत् 1751 विक्रमी में हरी प्रकाश के नाम से गद्दी पर बैठा। औरंगज़ेब बादशाह ने 1125 हिजरी में अपने रवी–उल–आखिर की दूसरी तिथि को, जो उन के शासन का 46 वां वर्ष था, एक फरमान जारी किया जिसके माध्यम से हरी प्रकाश को सिरमौर का राजा मंजूर किया गया (फ़रमान नम्बर 21) और उसे एक खिल्लत भी दी। फ़रमान में इस राजा को फौज़दार के अधीन रहने के आदेश हुए। यह राजा रियाया का बड़ा ध्यान रखता था और जनता भी उसे बहुत चाहती थी। अब तक सिरमौर में खुशी के अवसरों पर यह कहावत कही जाती है कि हरी प्रकाश का युग हो रहा है। इस राजा ने नौ साल तक नाहन में बड़ी शान्तिपूर्वक शासन किया और संवत् 1760 विक्रमी में इसका स्वर्गवास हुआ।

**7. राजा भीम प्रकाश उर्फ भूप प्रकाश**

हरी प्रकाश की मृत्यु पर उसका पुत्र भूप प्रकाश संवत् 1760 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उसको देहली दरबार से औरंगज़ेब आलमगीर के पुत्र शाह मुहम्मद मुअज़म ने अपने रवी–उल–आखिर की 29 वीं तिथि को, जो उनके राजतिलक का दूसरा वर्ष था, हिजरी (वर्ष लिखित नहीं है) में जारी किए गए फ़रमान में राजा भूप प्रकाश को भीम प्रकाश का खिताब और ख़िल्लत दी। परन्तु यह राजा भूप प्रकाश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह भी अपने पिता की भान्ति बड़ा

शान्ति प्रिय था और धार्मिक मामलों में गहरी आस्था रखता था। इस ने नाहन में लक्ष्मी नारायण का एक मन्दिर बनवाया था जो कि अब तक मौजूद है। इस मन्दिर को रियासत से जागीर मिली हुई है। इस प्रकार गुरुद्वारा देहरादून को, जो कि गुरु राम राय का गुरुद्वारा है, कई गांव जागीर में मिले हुए हैं जिनके कागज़ात अब तक महन्त साहिब के पास मौजूद हैं। इस राजा ने दस साल शासन किया और सम्वत् 1770 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ।

## 8. राजा विजय प्रकाश

भूप प्रकाश की मृत्यु के बाद इसका पुत्र विजय सिंह सम्वत् 1770 विक्रमी में राज गद्दी पर बैठा। उस समय मुगलिया राज्य का पतन आरम्भ हो गया था। इसलिए देहली दरबार से कोई फ़रमान ( शाही आदेश) प्राप्त नहीं हुआ। यह राजा बड़ा दानी और आवभगत करने वाला था। इसके विचार भी धार्मिक थे। इसका विवाह कुमाऊं के राजा कल्याण चन्द की पुत्री से हुआ था। रानी साहिबा के विचार भी राजा साहिब की भांति बड़े धार्मिक थे। रानी के साथ कुमाऊं से काली देवी की मूर्ति आई थी जिसको राजा ने नाहन में एक मन्दिर बना कर स्थापित किया था, जो कि अब तक कालीस्थान के नाम से प्रसिद्ध है। रानी साहिबा कुमाऊं हृदय से जनकल्याण के कार्यों में बहुत रुचि लेती थी। उन्होंने नाहन में पानी की कमी को देखते हुए एक बड़ा कुआं और एक पक्का बड़ा तालाब बनवाया। रानी साहिबा की यह यादगार अब तक नाहन में मौजूद है और जनता इससे बड़ा लाभ लेते हुए रानी को अब तक याद करती है। रानी ने नाहन से आधा मील दक्षिण की ओर नॉनी के स्थान पर एक पक्की बावड़ी और एक ठाकुरद्वारा भी बनवाया। शिवपुरी जो नाहन से एक मील की दूरी पर उत्तर पूर्व की ओर है, में दो शिवालय व एक बावड़ी बनवाई थी। यह भी अब तक मौजूद है।

कहलूर के राजा महाचन्द का भाई मियां कुशलसिंह आपसी नाराज़गी के कारण राजा विजय प्रकाश के पास चला आया था। राजा ने उसको अतिथिगृह में रखा और उसकी खूब खातिरदारी की। मियां कुशल सिंह बहुत समय तक नाहन में रहा। उसने यहां एक ठाकुरद्वारा

भी बनवाया जो अब तक मौजूद है और मियां के ठाकुरद्वारा के नाम से प्रसिद्ध है। इस मियां ने एक कच्चा तालाब तहसील नाहन के मौज़ा वोगरीया में, जो कि नाहन शहर से 6 मील की दूरी पर है, बनवाया था। इस तालाब को बाद में महाराजा फतेहप्रकाश के पुत्र कंवर वीर सिंह ने पक्का करवा दिया था जो आज तक कुशले का जौहड़ (तालाब) के नाम से प्रसिद्ध है।

जिस समय मुगलिया क्षेत्र में गड़बड़ी हो रही थी और सिक्ख फ़िरका युद्ध पर उतारू था और जगह--जगह सिक्खों और मुसलमानों के बीच लड़ाई–झगड़े हो रहे थे, उस समय राजा विजय प्रकाश ने अपने सीमांत क्षेत्रों पिंजौर और सुहाना, जो रियासत की पूर्वी सीमा थी, की सुरक्षा के लिए मियां कुशल सिंह को रामगढ़ का थानेदार नियुक्त किया। परन्तु राजा कर्म प्रकाश के शासन काल में कुशल सिंह के उत्तराधिकारियों ने विद्रोह कर दिया। मियां कुशल सिंह का परिवार आज तक रामगढ़ में निवास करता है जिसको अंग्रेज़ी सरकार ने बाद में गोरखों के साथ युद्ध के समय की गई सेवाओं के बदले में जागीर के रूप में दिया (शेरे पंजाब का इतिहास, लेखक मुंशी काली राय, पेज 482) जो अब तक कायम है। राजा विजय प्रकाश ने 36 साल राज्य किया और सम्वत् 1806 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ।

### 9. राजा प्रतीत प्रकाश उर्फ प्रीति प्रकाश

राजा प्रतीत प्रकाश अपने पिता राजा विजय प्रकाश की मृत्यु पर संवत् 1806 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। यह राजा बड़ा आराम परस्त और ऐश पसन्द था। उस ने रियासत के मामलों की ओर कम ही ध्यान दिया। वह न बहादुर था न परिश्रमी। ये गुण किसी भी रियासत के शासक के लिए ज़रूरी होते हैं, खास कर उस काल में जब राज्य को बाहुबल की शक्ति और क्षमता से सुरक्षित रखा जा सकता हो। इस के शासन काल में कई बाज देने वाले मुखियाओं ने उस की अधीनता से मुंह मोड़ लिया और विद्रोह का रास्ता अपनाया। इस राजा ने आठ साल राज्य किया और संवत् 1814 विक्रमी में उसका स्वर्गवास हुआ। इस के चार पुत्र कीर्त सिंह (उत्तराधिकारी), जीवन सिंह, मोहकम सिंह और ईशरी सिंह थे।

## 10. राजा कीर्त प्रकाश

राजा प्रतीत प्रकाश की मृत्यु के बाद इस का बड़ा पुत्र कीर्त सिंह संवत् 1814 विक्रमी में कीर्त प्रकाश के खिताब से राजगद्दी पर बैठा। राजतिलक के समय वह छोटी आयु का था परन्तु बड़ा होशियार और बुलन्द हौंसले वाला था। गद्दी पर बैठते ही वह रियासत के प्रबन्ध में जुट गया। उस ने उन विद्रोहियों को दण्डित किया जिन्होंने प्रतीत प्रकाश के शासन काल में रियासत के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था और उनको तलवार के बल से अपने अधीन किया। इन्हीं दिनों जब मुगलिया राज्य में अफरा–तफरी मच रही थी और सिक्खों और मुसलमान राज्य के बीच युद्ध हो रहा था तथा सिक्खों ने सरहिन्द पर आक्रमण कर पूरे ज़िले को अपने अधीन कर लिया था और वह रियासत सिरमौर की पश्चिमी सीमा पर पिंजौर के क्षेत्र की ओर बढ़ रहे थे तब इस राजा ने सिक्खों का मुकाबला कर के किला रामगढ़ व डिंढ़ारू को, जिस पर मनीमाज़रा वाले ग़रीबदास का कब्ज़ा था, खदेड़ कर अपने कब्ज़े में कर लिया। इस राजा ने पूरे पिंजौर के क्षेत्र को बद्दी के किले तक अपने अधीन कर लिया। इसी प्रकार उस राजा ने नारायणगढ़ के किले को लक्ष्मी नारायण से छीन लिया और लाहड़ पुर के किले को अदायत खां रसूरिया से, जो कि सिक्खों की ओर से वहां नियुक्त था, छीन कर अपने अधीन किया। इस प्रकार उसने नारायणगढ़ के पूरे क्षेत्र पर अधिकार कर लिया ।

इस राजा ने नारायणगढ़ पर विजय की याद में, प्राचीन रिवाज के अनुसार जगन्नाथ जी का एक मन्दिर संवत् 1824 विक्रमी में बनवाया और मन्दिर के रख रखाव के लिए जागीर भी दी, जिस को अब तक अंग्रेज़ी सरकार ने बरकरार रखा हुआ है। उस ने रामगढ़ के निकट मौज़ा सूरजपुर को भी इस मन्दिर को दे दिया जिस को पटियाला की रियासत ने भी बरकरार रखा हुआ है। इसी प्रकार उस ने एक मौज़ा कीर्तपुर अपने नाम पर बसाया। यह राजा बड़ा दिलेर और बहादुर था। वह अपनी बहादुरी के कारण अपने बराबर के राजाओं में बड़ा आदर और मान पाता था। इस का मेल मिलाप और दोस्ती पटियाला के राजा अमर सिंह से भी थी। राजा कीर्त प्रकाश ने राजा

अमर सिंह की इच्छा अनुसार सेहफाबाद के किले को, जिस पर मुसलमानों ने कब्ज़ा कर लिया था, तलवार के बल पर छुड़ा कर राजा अमर सिंह के राज्य में शामिल करा दिया।

एक बार जब पटियाला में वज़ीर गंगा राम और राजा अमर सिंह के भाई हिम्मत सिंह के षड्यंत्र से विद्रोह हुआ तो राजा अमर सिंह ने विद्रोह को कुचलने के लिए राजा कीर्त प्रकाश से मदद मांगी थी। इस पर राजा ने पटियाला पहुंच कर विद्रोह को कुचल दिया और राज्य अमर सिंह को दिला दिया। इसी काल में जब गुलाम कादिर रोहीला, जिसने शाह आलम की आंखें निकलवा डाली थीं, ने रियासत कहलूर पर आक्रमण किया तो राजा कहलूर ने राजा कीर्त प्रकाश से सहायता मांगी। इस पर राजा कीर्त प्रकाश ने सेना भेज कर राजा कहलूर को गुलाम कादिर के पंजे से छुड़वाया।

इस के कुछ समय बाद जब रियासत गढ़वाल पर गोरखों ने अमर सिंह थापा की कमान में आक्रमण किया तो गढ़वाल के राजा प्रदूमन शाह ने राजा कीर्त प्रकाश की बहादुरी और शौर्य की प्रशन्सा सुन कर राजा कीर्त प्रकाश से सहायता का आग्रह किया। राजा अपनी सेना सहित गढ़वाल की ओर रवाना हुआ और गोरखों के साथ भिड़ गया परन्तु किसी कारणवश गढ़वाल के राजा ने वहां आने से आनाकानी की। जब सेना के लिए खाने–पीने और रसद पहुंचाने के लिए बहुत कठिनाइयां आईं तो राजा ने उचित समय देखकर शत्रु से, जो शक्ति में उस के बराबर था, संधि करना उचित समझा और शत्रु ने भी इसको सौभाग्य माना अन्ततः दोनों के बीच सुलह हो गई और गोरखों और रियासत सिरमौर के बीच दरिया–ए गंगा को सीमा मान कर संधिपत्र लिखा गया।

राजा कीर्त प्रकाश इस के बाद सिरमौर को वापिस हुए परन्तु रास्ते में उन की सेहत बिगड़ गई और उन्होंने हरिद्वार में लकड़घाट पर गंगा के किनारे 26 वर्ष की आयु में संवत् 1830 विक्रमी में प्राण त्यागे। इस राजा ने 16 वर्ष तक बड़े दबदबे के साथ शासन किया। इस के शासन काल में रियासत ने बड़ा विकास किया। उसके समय रियासत की सीमाएं उत्तर में किला हाटकोटी तक, दक्षिण में किला

नारायणगढ़ तक, पूर्व में ठाकुर द्वारा माली देवल, जो भागीरथी के किनारे स्थित है, तक और पश्चिम में किला बद्दी तक फैली हुई थी। इस के चार पुत्र जगत सिंह, धर्म सिंह, कर्म सिंह और रतन सिंह थे।

**11. राजा जगत प्रकाश**

कीर्त प्रकाश की मृत्यु पर उस का बड़ा पुत्र जगत सिंह जगत प्रकाश के नाम से संवत् 1830 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। इस राजा ने रियासत के अधीन क्षेत्रों पर अपना प्रभुत्व कायम रखा और वह अपने पिता के कदमों पर चलता रहा। मुग़लिया राज्य में उथल–पुथल के कारण सिक्ख जगह–जगह लूट–खसूट करते फिरते थे इस लिए राजा जगत प्रकाश ने अपने कोटाहा क्षेत्र की सुरक्षा के लिए बाकर अली खान को, जो गाड़ी में रहता था (बाकर के पूर्वज कासिम अली खान, जो बादशाह का हकीम था, को गाड़ी का क्षेत्र ज़ागीर में मिला हुआ था। इस में अठारह मौज़े शामिल हैं) इस क्षेत्र का नाज़िम नियुक्त किया और फौज की एक टुकड़ी इसके अधीन की। मीर बाकर अली राजा के आदेशानुसार कार्य करता रहा और क्षेत्र को शान्त और सुरक्षित रखा। बाकर अली के बाद भी इसके उत्तराधिकारी कार्य करते रहे परन्तु कुछ समय बाद अंग्रेज़ी सरकार ने बा़कर अली के उत्तराधिकारी को गोरखों के साथ लड़ाई में अच्छी सेवाएं देने के लिए कोटाहा के क्षेत्र को सिरमौर से अलग करके उसको दे दिया (इस बारे सनद के लिए मुंशी काली राय का सैर पंजाब इतिहास का 491 पेज देखें)। मीर साहिब का परिवार अभी तक कोटाहा क्षेत्र पर अपना स्वामित्व रखता है। कोटाहा में चौदह भोज और एक सौ इकहत्तर मौज़े हैं।

इसी बीच गुलाम कादिर रोहीला एक बड़ी सेना के साथ सिरमौर के क्यारदादून क्षेत्र में घुस आया और मौज़ा टोकियां में उसने अपने तम्बू गाड़ दिये। राजा जगत प्रकाश को जब यह सूचना मिली तो वह भी सेना लेकर शत्रु के मुकाबले के लिए चल पड़ा और कटासन के स्थान पर, जो नाहन से आठ मील दक्षिण पूर्व की ओर है, दोनों सेनाओं का आमना–सामना हुआ। एक घमासान युद्ध के बाद गुलाम कादिर की हार हुई और राजा जगत प्रकाश विजयी होकर नाहन को वापिस आया। उसने पुराने रिवाज़ के अनुसार कटासन में इस विजय

की याद में देवी का एक मन्दिर बनवाया जो अब तक वहां पर मौजूद है।

इसी समय में राजा महान चन्द कहलूर ने राजा राम सिंह हंडूर पर आक्रमण करके इस के क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया। राज हंडूर के आग्रह पर राजा जगत प्रकाश ने अपनी सेना रियासत हंडूर (नालागढ़) को भेजी और राजा महान चन्द से क्षेत्र छुड़वा कर राजा राम सिंह का दखल उस में करवा दिया। राजा जगत प्रकाश ने 19 साल शासन किया और संवत् 1849 विक्रमी में उसका निस्संतान स्वर्गवास हुआ।

### 12. राजा धर्म प्रकाश

राजा जगत प्रकाश की मृत्यु पर उसका छोटा भाई धर्म सिंह संवत् 1849 विक्रमी में गद्दी पर बैठा। उस ने अपने पूर्वजों द्वारा जीते हुए क्षेत्रों को अपने स्वामित्व में सुरक्षित रखा। यह राजा बड़ा बहादुर और बुलंद हौंसला था। इस के शासन काल में एक बार राजा राम सिंह हंडूरिया ने रियासत सिरमौर के बाजगुज़ार ठाकुरों पर आक्रमण आरम्भ कर दिया था। इस पर राजा धर्म प्रकाश अपनी सेना सहित इस आक्रमण को समाप्त करने के लिए रवाना हुआ। छलरा–भलरा के स्थान पर दोनों सेनाओं का आमना–सामना हुआ। इस युद्ध में राजा जगत सिंह बाघल वाला, जो इस आक्रमण में राजा राम सिंह हंडूरिया का सहायक था, पकड़ा गया। इस पर राजा राम सिंह ने संधि कर प्राप्त किए हुए इलाकों को दोबारा सिरमौर को दे दिया। बाजगुज़ार ठाकुरों ने पहले की तरह फिर सिरमौर को बाज देना आरम्भ कर दिया।

इसी बीच राजा धर्म प्रकाश को सूचना मिली कि गढ़वाल के कंवर पराक्रम शाह ने आक्रमण कर देहरादून के किला खुशहालपुर पर कब्ज़ा कर लिया है। इस पर राजा साहिब ने तुरन्त कंवर ईशरी सिंह को सेना सहित देहरादून को भेजा। दोनों सेनाओं में भीषण युद्ध हुआ जिस में पराक्रम शाह घायल होकर वापिस लौटा। कंवर ईशरी सिंह ने किले पर कब्ज़ा कर लिया और फिर वह नाहन को चला गया।

जब कांगड़ा के राजा संसार चन्द ने कहलूर के राजा महान

चन्द पर आक्रमण करके इस के कुछ क्षेत्र और किले, जो सतलुज के इस पार थे, अपने अधीन कर लिए, तो राजा महान चन्द ने अपने विश्वास पात्रों को राजा धर्म प्रकाश से सहायता प्राप्त करने के लिए भेजा।

राज़ा धर्म प्रकाश, जो बड़ा बहादुर और दिलेर था, ने इस आग्रह को मंजूर किया। उस समय राजा संसार चन्द बड़ा शक्तिशाली माना जाता था इसलिए राजा धर्म प्रकाश स्वयं अपनी और अपने अधीन ठाकुरों की सेना लेकर राजा राम सिंह हंडूरिया के साथ बिलासपुर कहलूर को चला गया। चरारतू के स्थान पर, जो सतलुज नदी के तट पर कांगड़ा और कहलूर की सीमा पर स्थित है, उसने डेरा डाला। दूसरी ओर से राजा संसार चन्द भी अपनी सेना लेकर मुकाबले के लिए आया। दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध हुआ।

उस समय राजा महाराजा स्वयं सशस्त्र युद्ध में शामिल होते थे इसलिए राजा धर्म प्रकाश भी स्वयं बड़ी बहादुरी से लड़ रहे थे। परन्तु शत्रु की सेना की ओर से आई गोली का निशाना बने और युद्ध में काम आए। इस के पश्चात् जब राजा के साथियों और शुभचिन्तकों को, जो उनके सुरक्षाकर्मी कहलाते थे, यह समाचार पहुंचा तो वह भी जी जान से लड़े और सब के सब राजा के शव के इर्द–गिर्द कट मरे। क्योंकि उन दिनों शत्रु द्वारा दूसरी ओर के राजा के शव को ले जाने का दस्तूर था, इसलिए शत्रु ने बहुत प्रयास किया परन्तु वहां उपस्थित राजा की सेना के योद्धाओं ने उन्हें ये शव न ले जाने दिया और वे सब के सब भी वहीं कट मरे। कहते हैं कि राजा साहब का शव उनके सैनिकों के शवों के नीचे से निकाला गया।

राजा धर्म प्रकाश ने चार साल शासन किया। वह बड़ी दिलेरी से लड़ता हुआ कांगड़ा के युद्ध में कांगड़ा के चरारतू नामक स्थान पर संवत् 1853 विक्रमी में काम आया। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि वह वज़ीर प्रेम सिंह मेहता के षड़यंत्र के कारण बन्दूक की गोली का निशाना बने। इस राजा का कोई उत्तराधिकारी नहीं था।

# पांचवां भाग

## पहला अध्याय

## राजा कर्म प्रकाश द्वितीय

राजा धर्म प्रकाश की मृत्यु पर इन का छोटा भाई कर्म सिंह, कर्म प्रकाश के लकब से, संवत् 1853 विक्रमी में राजसिंहासन पर बैठा। छोटा भाई होने के कारण राजा कर्म प्रकाश रियासत के कारोबार से बिलकुल बेखबर तथा रियासत के प्रबन्ध से बेपरवाह था क्योंकि राजा जगतप्रकाश के जीवन तथा अपने शासनकाल में राजा धर्मप्रकाश ही रियासत के सारे मामलों की देखरेख व प्रबन्ध स्वयं किया करते थे। बेचारे कर्म सिंह बगैर किसी कार्य के जीवन व्यतीत करते थे जैसे कि रियासत में राजकुमारों का जीवन होता है। न तो आरम्भ में ही उनकी शिक्षा दीक्षा की ओर पूरा ध्यान दिया जाता है और न ही रियासत की सेवाओं में उनको भाग लेने दिया जाता है। वह तो केवल बगैर किसी कार्य के जीवन व्यतीत करने के आदी बनाये जाते हैं। जिसका परिणाम अन्त में रियासत के लिए और खास कर स्वयं उन के लिए हानिकारक साबित होता है, क्योंकि इनमें वह क्षमता समाप्त हो जाती है जो एक प्रशासक के लिए अनिवार्य होती है, इस कारण उनका जीवन लाभदायक नहीं रहता।

यही व्यथा राजा कर्मप्रकाश के जीवन की हुई क्योंकि उनका आरम्भ का जीवन सुस्ती और निठल्लेपन में व्यतीत हुआ। उस समय उनको या किसी दूसरे को कदापि यह पता न था कि वह किसी समय शासक बनेंगे और इस के कारण रियासत का पतन होगा। इसी रियासत में नहीं बल्कि इतिहास में ऐसे बहुत से उदाहरण मौजूद हैं जहां पर उत्तराधिकारियों की क्षमता या अक्षमता के कारण रियासत का विकास हुआ या उनका पतन। इस राजा के शासन काल में

रियासत में कुशासन का बोलबाला रहा। बहुत से भाग रियासत के कब्ज़े से निकल गये जिसका कारण अधिकतर अहलकारों के बीच गुटबन्दी थी जो कि आम तौर पर अहलकारों में हुआ करती है, विशेषकर ऐसे शासक के काल में जो केवल किसी एक की राय पर कार्य करता हो।

कहते हैं कि राजा कर्मप्रकाश और मेहता प्रेम सिंह में पहले से ही आपस में गहरा मेल–मिलाप था। राजा कर्म प्रकाश गद्दी पर बैठने के दो वर्ष तक मेहता प्रेम सिंह वज़ीर की सलाह पर शांति पूर्वक शासन करते रहे परन्तु बाद में वज़ीर प्रेम सिंह व रियासत के दूसरे अहलकारों के बीच कुछ मनमुटाव हो गया और वे एक दूसरे के कार्य में अड़चन डालकर गड़बड़ी करने लगे। राजा कर्म प्रकाश जिन्हें कि प्रबन्ध का कोई अनुभव नहीं था इस मामले का हल नहीं ढूंढ सके। प्रेम सिंह अपने प्रभाव के कारण बहुत दिलेर हो गया था। एक बार मेहता प्रेम सिंह ने बातचीत के दौरान राजा साहिब को, चाहे हंसी–हंसी में या फिर गम्भीरता से यह कहा कि तुम्हारी खातिर तुम्हारे भाई के साथ वह कार्यवाही की गई और तुमको राज दिलवाया। राजा को मेहता की बातचीत का ढंग बहुत बुरा लगा। जवाब में राजा ने कहा कि अगर तू मेरे भाई का शत्रु था तो मेरा भी वैसा ही शत्रु है, मैं इसका बदला लूंगा।

मेहता प्रेम सिंह को इस बात से भय हो गया और वह राजा के विरुद्ध षड़यन्त्र करने लगा। उसने राजा रामसिंह हंडूरिया को सिरमौर पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया। रामसिंह ने हंडूर से लगते सिरमौर के कुछ क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया तथा कंवर किशन सिंह, जो कंवर ईशरी सिंह का ख्वास (रखैल) से उत्पन्न पुत्र था, को रियासत में गड़बड़ करने के लिए प्रेरित किया। किशन सिंह जो कि मनचला और बहादुर था परन्तु अच्छी सूझबूझ का मालिक था, गड़बड़ करने के लिए उतारू हुआ। उसने कुछ साथियों सहित रियासत, विशेषकर राजधानी नाहन में, लूटमार शुरू की और किला नारायण गढ़ को अपना निवास बना लिया। राजा कर्म प्रकाश को जब मेहता प्रेम सिंह के इस षड़यन्त्र की सूचना मिली तो उन्होंने प्रेम सिंह का वध करवा दिया और उसकी कुल सम्पत्ति को अपने कब्ज़े में कर लिया।

इस पर रियासत में बहुत उथलपुथल हुई और वे अहलकार जो कुनैत भाट जाति के थे बेनकेल ऊंटों की भांति काबू से बाहर होकर लूट खसूट करने लगे।

जब रियासत में ऐसा कुशासन और उथलपुथल फैली तो वे ठाकुर जो रियासत के अधीन थे और बाज दिया करते थे, स्वाधीन हो गये। इसी काल में अर्थात् सम्वत् 1856 विक्रमी में गोरखों ने सन्धि के विरुद्ध गंगा नदी से उतरकर देहरादून और इसके किलों पर कब्ज़ा कर लिया। कुछ दिनों बाद सिक्खों ने भी मौका पा कर पिंजौर पर आक्रमण किया और इसे अपने अधीन कर लिया। घाघर नदी के उस पार दक्षिण की ओर रियासत पटियाला का क्षेत्र था और नदी के इस ओर उत्तर को सिरमौर रियासत के क्षेत्र थे। घाघर नदी पर अब तक सिरमौर वालों का बनाया हुआ बुर्ज है। इस बुर्ज में सिरमौर की सेना की टुकड़ी क्षेत्र की सुरक्षा के लिए नियुक्त रहती थी । इसी बीच मियां मालदेव और नारायण सिंह जो मियां कुशल सिंह के पुत्र थे और रियासत की ओर से रामगढ़ में प्रबन्धक थे, सरदार जौद्ध सिंह की मदद से स्वाधीन हो गये।

इसी समय जब रियासत में ऐसी गड़बड़ हो रही थी तो कुछ मक्कार अहलकारों ने, जो वज़ीर प्रेम सिंह के साथी और रिश्तेदार थे, राजा कर्मप्रकाश के छोटे भाई कंवर रत्न सिंह से मिलकर षडयन्त्र किया और राजा कर्मप्रकाश को गद्दी से उतारने और उनका वध करने की चाल बनायी। राजा कर्म प्रकाश यह समाचार पाकर नाहन से सम्वत् 1860 विक्रमी में अपने कुटुम्ब सहित कांगड़ा के किले में, जो कि क्यारदादून में एक पहाड़ की चोटी पर नाहन से पूर्व की ओर लगभग 32 मील था, चले गये और वहां निवास बना लिया। इस किले के अवशेष अब तक वहां मौजूद हैं। जब राजा कर्म प्रकाश इसी किले में निवास कर रहे थे तो कुछ बेईमान अहलकारों ने मौका पाकर रियासत की सम्पत्ति को लुटाना आरम्भ कर दिया। कुछ अहलकार तो कंवर रत्न सिंह के साथ मिल गए और गड़बड़ी फैलाने लगे। कुछ अन्य अहलकारों ने कंवर किशन सिंह को अपना मुखिया बनाकर लूटमार आरम्भ कर दी। पूरी रियासत में कुशासन फैल गया। रियासत

की कोई खैर खबर लेने वाला नहीं रहा। यहां तक कि अहलकारों ने रियासत की सेना को भी अपने साथ कर लिया और राजा की जान के पीछे पड़ गए। उन्होंने सेना को लेकर किला कांगड़ा को घेर लिया और किले में प्रवेश कर राजा को बंदी बनाने का प्रयत्न करने लगे। राजा साहिब ने भी अपने कुछ शुभचिन्तकों के साथ मिलकर मुकाबला किया।

अन्त में राजा साहिब का एक सेवक जो शक्ल सूरत में राजा साहिब जैसा ही था, विद्रोहियों के हाथों मारा गया। शत्रु की सेना में जब राजा साहिब के वध का समाचार फैला तो वे किले की घेराबंदी में ढीले पड़ गये और राजा साहिब मौका पाकर रात के समय किले के पिछले दरवाज़े से रानी गुलेरी के साथ निकल गये। वह मौजा टावर, जो किला कांगड़ा से 3 मील की दूरी पर है, पहुंचे और वहां के नम्बरदार, जिसका नाम झाझु था, को अपनी व्यथा सुनाई और कहा कि हम को कालसी पहुंचा दो। नम्बरदार ने इनको सुरक्षित कालसी पहुंचा दिया।

इस बीच नाहन में गड़बड़ करने वाले अहलकारों ने कंवर रतन सिंह को रतन प्रकाश के नाम से गद्दी पर बिठा दिया परन्तु कंवर रतन सिंह अहलकारों के हाथ की पुतली बना हुआ था। उसका कोई दबदबा और प्रभुत्व नहीं था। इस लिए अशान्ति पहले की तरह चलती रही और कंवर किशन सिंह लूटखसूट करके लोगों को तंग करता रहा। राजा कर्म प्रकाश ने जब अपनी मौरूसी रियासत पर कब्ज़ा प्राप्त करने का कोई तरीका न देखा तो वह देहरादून गया और वहां काज़ी अमर सिंह थापा (काज़ी का अर्थ नेपाल में कारिंदा यानी कार्यकर्ता है) से, जो कि नेपाल के दरबार का एक उच्च सैनिक अफसर था, भेंट वार्ता की तथा उसे रियासत के अहलकारों के विद्रोही हो जाने के बारे में बताया। कर्म प्रकाश ने काज़ी अमर सिंह को याद दिलवाया कि नेपाल के दरबार और सिरमौर की रियासत के बीच एक संधि थी जिसके अनुसार गंगा नदी दोनों रियासतों के बीच सीमा मानी गई थी परन्तु आप ने (नेपाल) हमारी आपसी घरेलू लड़ाई के कारण इस संधि का उल्लंघन किया और देहरा के क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया। इस

पर भी आप यदि हमारी सहायता करें और रियासत सिरमौर के विद्रोहियों को दंडित करके भगा दें तो हमारा आपसी संगठन स्थापित रहेगा।

नेपाल के गोरखे जो कि हिन्दुस्तान के कुछ क्षेत्र अपने अधीन करने की फिराक में थे, इस बात का इंतज़ार कर रहे थे कि कोई ऐसा माध्यम निकले जिससे हिन्दुस्तान में दखल देने में आसानी हो। क्योंकि अंग्रेज़ी हकूमत का प्रभुत्व बढ़ रहा था इस लिए गोरखों को बहुत फिक्र थी।

**नोट** : नेपाल के वासियों को गोरखा कहते हैं क्योंकि नेपाल में गोरखपुर नामक एक क्षेत्र है जिसके कारण नेपाल के सारे निवासी गोरखा कहलाते हैं। असल में पहले गोरखा कोई विशेष कौम नहीं थी क्योंकि नेपाल के मूल निवासी तो नेवार इत्यादि कौमें थीं जो बुद्ध धर्म को मानते थे। इनको हिन्दुस्तान से राजपूतों ने नेपाल जाकर अपने अधीन किया विशेषकर समरसी महाराणा उदयपुर के एक राजकुमार ने वहां जाकर अपने राज्य की नींव ड़ाली और वहां राजपूतों के गहलोट परिवार को स्थापित किया। (टॉड का राजस्थान, वॉल्यूम वन, पेज 70 और फुट नोट, 272)। ईसवी 1767 व 68 में नेपाल के पूरे क्षेत्र पर गहलोट राजपूत परिवार का स्वामित्व और प्रभुत्व हो गया। (हंटर का इतिहास, पेज 470)।

जब राजा कर्म प्रकाश ने गोरखों से सहायता की इच्छा ज़ाहिर की तो गोरखों को ऐसा अवसर मिला जैसा कि अंधे को दो आंखें मिल गई हों। उन्होंने खुशी–खुशी राजा का आग्रह मंजूर किया। काज़ी अमर सिंह सेना लेकर नाहन पहुंचा और विद्रोहियों को दंडित कर रतन प्रकाश को निकाल दिया। फिर काज़ी हंडूर रियासत को चला गया। राजा कर्म प्रकाश भी राम नगर में अमर सिंह थापा तक गए। फिर वहां से लौट कर किला मोरनी में आकर ठहर गए क्योंकि नाहन से रतन प्रकाश तो चला गया था परन्तु वहां विद्रोह की आग अभी भी सुलग रही थी और पूरी तरह से शान्ति स्थापित नहीं हुई थी इस लिए राजा कुछ रोज़ किला मोरनी में ठहरे रहे और उन्होंने समय के अनुसार यही सही समझा। इसी बीच राजा के उत्तराधिकारी कंवर

गोपाल सिंह का देहान्त हो गया जिस के कारण राजा को बहुत दुःख हुआ। कुछ समय पश्चात् रानी गुलेरी से दूसरा पुत्र पैदा हुआ जिसका नाम फतेह सिंह रखा गया।

काज़ी अमर सिंह ने रियासत हंडूर पर कब्ज़ा करने के पश्चात् वहां अपने भरोसे के आदमी को प्रबन्ध करने के लिए छोड़ा और स्वयं सतलुज को पार करके कांगड़ा पर आक्रमण किया। वहां से वापिस आकर वह मोरनी पहुंचा और इसके बजाए कि वह राजा कर्म प्रकाश को सिरमौर रियासत के सिंहासन पर बैठा रहने देता, उसने अपने पुत्र रणजोर सिंह को शासक नियुक्त करके उसे नाहन भेज दिया। रणजोर सिंह ने नाहन पहुंच कर राजधानी को नष्ट किया ।

उसने राजधानी में बहुत से भवनों को नष्ट करवाकर जैतक के पहाड़ पर, जो नाहन से 4 मील की दूरी पर उत्तर की ओर है, एक किला अपने निवास के लिए बनवाया। राजा कर्म प्रकाश निराश होकर सपाटु के किले में, जो रामगढ़ क्षेत्र में था, चला गया। परन्तु वहां भी मियां मलदेव व नारायण सिंह, जो कुशल सिंह के पुत्र थे और रामगढ़ में सिरमौर रियासत की ओर से प्रबन्धक नियुक्त थे, ने धोखा दिया और राजा को वहां से चले जाने के लिए ज़ोर डाला। इस पर राजा ने मियां मलदेव की बेवफाई और विद्रोह की शिकायत पटियाला के महाराजा से की और सहायता मांगी। परन्तु इसका कोई लाभ न हुआ क्योंकि महाराजा पटियाला अपनी कठिनाइयों में घिरे थे और वह राजा सिरमौर द्वारा पिछले समय में दी गई सहायता को बिल्कुल भूल गए। किसी ने सच ही कहा है कि विपत्ति के समय कोई कम ही सहायता करता है, जब समय अनुकूल होता है तो हर कोई मित्र बन जाता है। शासन सदा तलवार और शक्ति के बल पर स्थापित रह सकता है नहीं तो अपने भी पराए हो जाते हैं और वे सहायता करने के स्थान पर हानि पहुंचाने का प्रयत्न करते हैं।

इसके उदाहरण इतिहास की पुस्तकों में भरे पड़े हैं। जब किसी ने सहायता नहीं दी तो राजा साहिब सम्वत् 1866 विक्रमी में तहसील जगाधरी के बौड़ियां नामक स्थान पर जा कर निवास करने लगे और नाहन पर गोरखों का प्रभुत्व स्थापित हो गया।

राजा कर्म प्रकाश की अकुशलता और अहलकारों की नमकहरामी से रियासत सिरमौर के इलाके को काफी हानि पहुंची। नारायण गढ़ पर कंवर किशन सिंह ने कब्ज़ा कर लिया। वह बड़ा दिलेर और बहादुर पुरुष था। सिक्खों ने भी इस पर एक बार आक्रमण किया था परन्तु उसने सिक्खों को अपने क्षेत्र से बाहर निकाल दिया। (पंजाब का इतिहास, लेखक मिस्टर लतीफ, पेज 369) दूसरी ओर रामगढ़ पर कुशलसिंह के पुत्रों मलदेव और नारायण सिंह ने कब्ज़ा कर लिया। मतलब यह कि जो जहां का प्रबन्धक था उसने वहीं पर कब्ज़ा कर लिया। पिंजौर क्षेत्र पर रियासत पटियाला ने और हंडूर के साथ लगते क्षेत्र पर राजा राम सिंह हंडूरिया ने अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया। उधर नाहन खास पर और दूसरे स्थानों पर गोरखों ने अपना कब्ज़ा जमा लिया अर्थात् रियासत के सारे क्षेत्र विभिन्न भागों में बंट गये तथा राजा कर्म प्रकाश निराश होकर बौड़ियां में अफसोस करते रहे और अपनी अकुशलता पर शर्मिंदा होते हुए फ़िक्र के सागर में डूब गए।

राजा कर्म प्रकाश की रानी गुलेरी बड़ी सूझबूझ वाली स्त्री थी। उसने सुझाव दिया कि अंग्रेज़ी सरकार से, जिसका प्रभुत्व हिन्दुस्तान में बढ़ रहा था, सहायता का आग्रह किया जाए। रानी ने जरनैल डेविड ऑक्टरलूनी से सहायता की प्रार्थना की। वह ईसवी 1811 में करनाल में ठहरे हुए थे और लुधियाना–करनाल कैम्प के कमाण्डिंग ऑफिसर थे। उनको अंग्रेज़ी सरकार ने गोरखों को हिन्दुस्तान से निकालने के लिए सेना सहित नियुक्त किया हुआ था।

नेपाल, जिसका शासक उस समय रणबहादुर शाह था, के कमांडर काज़ी अमर सिंह थापा, जो कि एक बड़ा होशियार और बहादुर अफसर था, ने हिन्दुस्तान की पहाड़ी रियासतों के पहाड़ी क्षेत्रों, जिन में कुमाऊं, गढ़वाल, कांगड़ा, सिरमौर, कहलूर इत्यादि शामिल हैं, पर अपना कब्ज़ा कर लिया था। वह भूटान और सिक्किम इत्यादि के क्षेत्रों में भी आक्रमण करता जाता था और उसने भूटान के मुखिया को बंदी बना लिया था।

इसी प्रकार वह प्रतिदिन अंग्रेज़ी सरकार के क्षेत्र में भी घुसपैठ करने लगा था। गोरखों ने अंग्रेज़ी सरकार के 18 पुलिस कर्मचारियों का वध भी कर दिया था (लैथीब्रज साहिब का इतिहास)। इस पर गवर्नर जनरल लॉर्ड मिन्टो ने नेपाल दरबार को इन कार्यों को रोकने के लिए लिखा मगर गारखों ने कुछ परवाह नहीं की। इसलिए ईसवी 1814 में गवर्नर जनरल लॉर्ड हेस्टिंग ने गोरखों को दण्डित करने का मनसूबा बनाया (हण्टर का इतिहास, पेज नम्बर 471)। उसने उन चार पहाड़ी स्थानों पर जिन पर कि गोरखों ने अपना कब्ज़ा जमा लिया था, अर्थात् कांगड़ा के पहाड़, सिरमौर के पहाड़, सपाटु के पहाड़ और कुमाऊं गढ़वाल के पहाड़, पर एक ही समय आक्रमण करने का प्रस्ताव रखा।

इस मनसूबे के अन्तर्गत जनरल गैलेस्पी एक सेना लेकर मिस्टर विलियम फ्रेज़र, कमीश्नर मेरठ, के साथ सिरमौर और गढ़वाल के पहाड़ों के लिए रवाना हुए और जनरल ऑक्टरलूनी लुधियाना और करनाल में नियुक्त सेना के साथ रामगढ़ और सपाटु की पहाड़ियों की ओर गए। जनरल रॉड कांगड़ा के पालियां दुर्ग की ओर चल पड़े और कर्नल गोर्डन मिस्टर कॉडनर के सहित कुमाऊं और अलमोड़ा की पहाड़ियों पर आक्रमण करने के लिए नियुक्त हुए।

# दूसरा अध्याय

## गोरखों और अंग्रेज़ी सरकार के बीच युद्ध का वर्णन

जनरल गैलेस्पी अक्तूबर 1814 ईसवी को सेना सहित रवाना हुए। वह सहारनपुर होते हुए ज्वालापुर पहुंचे। वहां से वह देहरादून गए। कमांडिंग ऑफिसर कर्नल पोली सेना सहित तथा मिस्टर विलियम फ्रेज़र कमीश्नर मेरठ एक रोज़ पहले देहरा पहुंच गए। जनरल गैलेस्पी शत्रु के बारे में समाचार प्राप्त करने के लिए ज्वालापुर में ठहरे रहे। सब अफसरों ने एक सभा करके सुझाव रखा कि एक पत्र गोरखों की सेना के कप्तान बलभद्र को भेजा जाए जो नला पानी के किले में सेना सहित ठहरा हुआ था। इस सुझाव के अनुसार एक पत्रवाहक के माध्यम से उसे पत्र भेजा गया, जिसका निष्कर्ष निम्नलिखित है "इस स्थान पर पहुंच कर हमें ज्ञात हुआ है कि किले की मज़बूत स्थिति के कारण इसके कप्तान के दिमाग में घमण्ड का धुंआ छा गया है इसलिए वह युद्ध करने पर उतारू है। कर्नल पोली जो कि कमांडिंग ऑफिसर है उसकी राय थी कि आक्रमण किया जाए परन्तु हमने इस विचार से कि बेगुनाह जनता मारी जाएगी तथा यह कार्य न्याय और रियासत की विधि से दूर था, कप्तान बलभद्र को सूचना देना उचित समझा। हमारे विचार में यह उचित ज्ञात होता है कि वह गडबड़ करने के विचारों को दिमाग से दूर करके अंग्रेज़ी सरकार के अधीन हो जाए। सरकार उनको और उनके साथियों को उस समय तक नज़रबन्द रखेगी जब तक इन पहाड़ियों को जीतने की मुहिम समाप्त नहीं हो जाती। यदि आप (बलभद्र) लड़कर भागना चाहोगे तो हर तरफ से

रास्ता बंद है। यदि आप पहाड़ पर चढ़ोगे तो पहाड़ी लोग आप से बदला लेने के लिए उतारू हो जाएंगे। इस तरह आप को नेपाल का मुंह देखना भी नसीब न होगा। अंग्रेज़ी फौज को स्त्री और बच्चों से लड़ते हुए शर्म आती है। यदि आप में कुछ मर्दानगी का नशा है तो मर्दों की तरह मैदान में आकर युद्ध करो। आप को दोपहर तक की मोहलत दी जाती है। इस समय में अपना भला बुरा सोच कर उत्तर दो और अपने इरादे से भी हमें सूचित करो। नहीं तो मोहलत समाप्त होने पर आक्रमण किया जाएगा।"

**नोट**:– यह हालात हम ने अधिकतर उस हस्तलिपि से लिए हैं जो मौलवी फज़लअजिम खैरआबादी, पूर्व डिप्टीकलैक्टर सहारनपुर, ने फारसी भाषा में लिखी है। यह मौलवी उस समय मेरठ के कमीश्नर मिस्टर विलियम फ्रेज़र के पेशकार थे और जनरल गैलेस्पी की सेना के साथ थे। उन्होंने कुछ समय तक नाहन में निवास किया था।

उस रोज़ तो पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा में आक्रमण नहीं किया गया। जिस समय रात एक पहर बाकी रही थी तो पत्रवाहक वापिस आया और उसने बलभद्र का समाचार इस प्रकार बयान किया "मैं आधी रात के समय किले में पहुंचा, उस समय कप्तान आग ताप रहा था। मैंने पत्र इसके हाथ में दिया परन्तु उसने पत्र नहीं पढ़ा और क्रोधित होकर पत्र को आग में डाल दिया। जब मैंने उत्तर के लिए कहा तो उसने अति क्रोधित होकर यह कहा कि उसका उत्तर आपको तोप के मुंह और तीर की भाषा से ज्ञात हो जाएगा। अंग्रेज़ अफसरों ने यह उत्तर सुना तो वो भी बहुत क्रोधित हुए और आक्रमण की तैयारियों में जुट गए। बिना समय गंवाए युद्ध का सामान और अस्त्र–शस्त्र लेकर वे किले की तरफ चल पड़े। जब वे किले पर पहुंचे तो अभी एक घड़ी रात बाकी थी। उचित स्थानों पर सत्तर तोपें स्थापित कर सूर्य उदय होने से पहले ही उन्होंने गोलाबारी शुरू कर दी। शत्रु ने भी अपनी ओर से मुकाबला किया।

दोनों ओर से दोपहर तक आपस में गोलाबारी होती रही परन्तु जब गोलाबारूद का भण्डार इत्यादि कुछ घट गया तो कमीश्नर मिस्टर विलियम फ्रेज़र ने चाहा कि एक बार ही शत्रु पर आक्रमण

किया जाए परन्तु कर्नल पोली जो एक अनुभवी अफसर थे ने इस को युद्ध के कायदे कानून के विरुद्ध मानकर सेना को कैम्प में भेज दिया। इस युद्ध में न तो कोई घायल हुआ और न ही कोई मरा। कर्नल पोली ने जनरल गैलेस्पी को युद्ध के बारे में विस्तार से सूचित किया। इसी बीच सरकार की दूसरी फ़ौजें भी देहरा पहुंच गईं। जनरल गैलेस्पी स्वयं भी 29 अक्तूबर 1814 ई0 को देहरा में सेना के साथ शामिल हो गए।

दूसरे दिन 30 अक्तूबर 1814 ई0 को शत्रु पर आक्रमण करने का प्रस्ताव हुआ। जनरल गैलेस्पी सेना के साथ रवाना हुए और उचित अवसर पर उन्होंने किले पर गोले बरसाने शुरू किये। अचानक ही एक गोला शत्रु के गोला भाण्डर पर गिरा जिससे शत्रु के चालीस आदमी हताहत हुए। शत्रु ने भी दूसरी ओर से डटकर मुकाबला किया। जब इस युद्ध का कोई परिणाम नहीं निकला तो जनरल ने आक्रमण करके किले पर कब्ज़ा करने का प्रस्ताव रखा। जनरल गैलेस्पी कमीश्नर विलियम फ्रेज़र और दूसरे अफसरों के साथ मोर्चों से निकलकर गोरा फ़ौज की दो कम्पनियां लेकर स्वयं आगे बढ़े और लड़ते हुए किले के दरवाज़े तक पहुंचे। आक्रमणकारियों में से बहुत से सैनिक और अफसर घायल हुए और मारे गए। जिस समय शत्रु ने अंग्रेज़ी फौज के दस्ते को इस प्रकार बढ़ते हुए देखा तो बारह जवान किले से बाहर निकले और बड़ी वीरता से मुकाबला करने लगे। दो जवान लड़ते हुए काम आये।

अंग्रेज़ी अफसरों ने किले को तोड़ने के बहुत प्रयत्न किये परन्तु कोई सफलता नहीं मिली। जब कमीश्नर विलियम फ्रेज़र बड़ी बहादुरी से किले की खिड़की तोड़ रहे थे, तब इनको एक तीर लगा और वह घायल हो गए।

इसी प्रकार और दूसरे अफसर भी कुछ घायल हुए और कुछ मारे गए। मजबूर होकर अंग्रेज़ी अफसरों और सैनिकों को किला छोड़कर मोर्चों पर वापिस आना पड़ा। परन्तु जनरल गैलेस्पी, जो एक ख्यातिप्राप्त दिलेर अफसर थे, को किले पर विजय किए बिना कब चैन आती, उन्होंने तुरन्त चुस्ती और चालाकी से गोरा फ़ौज के साथ किले

पर आक्रमण किया। दोनों ओर से गोलों और गोलियों की बौछारें हुई और जनरल गैलेस्पी किले के दरवाज़े पर जा पहुंचे। शत्रु तंग आ चुका था और सम्भवतः किला अंग्रेज़ी फ़ौज के कब्ज़े में आ जाता परन्तु अभी वह समय नहीं आया था कि विजय प्राप्त होती। बदकिस्मती से जनरल गैलेस्पी, जो कि बढ़ते हुए सेना को आगे ले जा रहे थे, के सीने में गोली लगी और वह वहीं ढेर हो गए। इस लड़ाई में अंग्रेज़ी सेना के 240 जवान और 20 अफसर घायल हुए थे।

इस घटना से अंग्रेज़ी सेना में उथल–पुथल मच गई। अंत में, कर्नल पोली ने उस दिन किले पर आक्रमण करना बुद्धिमानी नहीं समझी और वह सेना को लेकर वापिस अपने कैम्प में लौट आए। जनरल गैलेस्पी के मृतक शरीर को मेरठ भेज दिया गया और घायल लोगों को अस्पताल में भर्ती कर दिया गया। दो दिन तक जनरल पोली वहां रुके और मृतकों को दफ़्न करने के प्रबन्ध के पश्चात् देहरादून लौटे जहां उन्होंने युद्ध के लिए अस्त्र–शस्त्रों को सुधारना आरम्भ कर दिया। उन्होंने दिल्ली से बड़ी–बड़ी दुर्ग भेदी तोपों की मांग भी की। तोपों के आने के इन्तज़ार में वह एक महीना तक देहरादून में ठहरे रहे।

इस दौरान कप्तान बलभद्र ने बड़ी मूर्खता और घमण्ड से अंग्रेज़ों के साथ युद्ध करने के लिए बार–बार पत्राचार किया, परन्तु अंग्रेज़ अफसर तोपों की प्रतीक्षा में चुप बैठे रहे। कमीश्नर मिस्टर विलियम फ्रेज़र, जो कि घायल हो गए थे, अपने और दूसरे घायलों के उपचार में लगे रहे। जब 18 पौंड वजनी गोले फेंकने वाली दुर्गभेदी तोपें पहुंच गईं तो कर्नल पोली ने दूसरे रास्ते से, जो कि दुर्ग के पीछे की तरफ को जाता था, और उस दरिया पर से, जो कि दुर्ग के नीचे था, किले पर आक्रमण कर दिया। पहले ही आक्रमण में शत्रु के होश उड़ गए और उसकी फ़ौज़ के कुछ जवान मारे गए व बहुत से घायल हुए। अंग्रेज़ी सेना ने उन मोर्चों पर, जो कि किले के बाहर गोरखों ने पत्थरों से तैयार किए हुए थे और जिनमें गोरखा सिपाही बड़े घमण्ड से छिपे बैठे थे, कब्जा कर लिया। परन्तु कमीश्नर विलियम फ्रेज़र, जो कि इस लड़ाई में शामिल थे, एक बार फिर घायल हुए। दूसरे दिन

अंग्रेजी फौज ने किले को तोड़ने और उस पर स्वामित्व स्थापित करने की योजना बनाई। उन्होंने तोप के गोलों को किले पर बरसाना शुरू कर दिया। किले की घेराबंदी कर शत्रु के आने–जाने का रास्ता भी बंद कर दिया गया। यहां तक कि एक पानी का चश्मा, जो कि किले के पीछे था और जिससे वे पानी लाकर प्रयोग करते थे, इस पर भी अंग्रेजी सेना ने मोर्चाबंदी करके किले में पानी का जाना बंद कर दिया।

तीन दिन तक यही स्थिति रही, जिससे शत्रु बहुत तंग हो गया। परन्तु इतना कष्ट होते हुए भी कप्तान बलभद्र ने हिम्मत न हारी और किले में डटा रहा। चौथे दिन उस ऊंचे पहाड़ पर, जो कि किले से तीन मील की दूरी पर था, वर्दी पहने गोरखा सिपाहियों की एक टुकड़ी किले की तरफ आती हुई नज़र आई। पूछताछ से ज्ञात हुआ कि वह सिरमौर के पहाड़ से काज़ी रणजोर ने कप्तान बलभद्र की सहायता के लिए भेजी है और यह किले में पहुंचने का इरादा रखती है। इस पर अंग्रेज़ी अफसरों ने इस टुकड़ी को रोकने और किले की लगातार घेराबंदी करने का प्रस्ताव करके आदेश दिया कि दो–दो सौ जवान प्रत्येक बटालियन से चुने जाएं, जो कि एक ही बार किले पर आक्रमण करें। बड़े प्रयत्नों से किले की घेराबंदी की गई और लगातार उस पर गोलों की बौछार ज़ारी रखी गई।

जब किले वाले इस रात–दिन की घेराबंदी और खाने–पीने की वस्तुओं की कमी से तंग आ गए तो उन्हें किले को खाली करने के सिवाए और कोई उपाय न सूझा। कप्तान बलभद्र, जबकि एक पहर रात बाकी थी, अपने साथियों के साथ किले से बाहर निकला। उसने ऊंची आवाज़ में ललकार कर कहा कि किले को हम अपनी मर्ज़ी से छोड़ते हैं, न कि तुम्हारी शक्ति से प्रभावित होकर। इस तरह डींगें मारते हुए शत्रु पहाड़ से नीचे उतर कर नदी पर पहुंचा और वहां पानी पीकर दूसरे पहाड़ पर, जो कि किले वाले पहाड़ की सुरक्षा के लिए प्रयोग किया जा रहा था, चढ़ गया। अंग्रेज़ी सेना ने शत्रु को नहीं रोका और उस समय उसका पीछा न करना ही बुद्धिमानी समझा।

गोरखा सेना एक सप्ताह से किले की घेराबंदी के कारण सो नहीं पाई थी और इस कारण वह बहुत बेचैन थी। पहाड़ पर पहुंचते

ही सब गोरखा सिपाही ऐसे बेसुध होकर सोए कि वे पहरा इत्यादि लगाना भी भूल गए। गुप्तचर ने शत्रु की इस स्थिति की सूचना अंग्रेजी फ़ौज को दी, जिस पर अंग्रेज़ी फ़ौज ने तुरन्त आक्रमण किया और इस बेसुध अवस्था में सोए गोरखों को मौत के घाट उतार दिया। शत्रु के बहुत से आदमी घायल हुए और मारे गए, जो बाकी बचे वे भाग गए। कप्तान बलभद्र अपनी गलती पर बड़ा शर्मिंदा होता हुआ भाग खड़ा हुआ। इस प्रकार अंग्रेज़ी सेना को विजय प्राप्त हुई और किला उसके स्वामित्व में आ गया।

कर्नल कौरनेड और मेजर बाल्टिक कुछ सेना के साथ इलाके की सुरक्षा और प्रबन्ध के लिए कालसी के स्थान पर छोड़े गए, बाकी बचे सैनिक सिरमौर के पहाड़ को विजय करने तथा काज़ी रणजोर को वहां से भगाने के लिए पहली दिसम्बर, 1814 को रवाना हुए। चलने से पहले अंग्रेज़ अफसरों ने एक विज्ञापन आस–पास के इलाकों में जारी किया, जिसमें लिखा था कि अंग्रेज़ी सरकार ने केवल जनता और स्थानीय शासकों को गोरखों के निर्दयी पंजे से मुक्ति दिलाने के लिए और उनके जुल्म से नाराज़ लोगों को मुक्त कराने के लिए यह आक्रमण किया इसलिए सबके लिए यह उचित होगा कि इस बदबख़्त गोरखा कौम को यहां से भगाने के प्रयास करें और अंग्रेज़ी सरकार को सहायता दें तथा दुश्मन की बर्बादी में ही अपनी भलाई समझें।

इस विज्ञापन के जारी होने से उस क्षेत्र के ज़मीनदार और शासक, जहां से अंग्रेज़ी सेना गुज़री थी खुशी–खुशी सरकार की अधीनता स्वीकार करने और सहायता देने के लिए उपस्थित हो गए। अंग्रेज़ी सेना जमुना नदी को चिलकाना नामक स्थान के निकट से पार करके बढ़ती हुई नाहन की तलहट्टी में पहुंच गई और चौड़ा पानी, जो काला अम्ब के निकट है और नाहन से ग्यारह मील की दूरी पर है, पर डेरा लगाया। यह सेना दुश्मन के समाचार जानने के लिए वहां कुछ दिन ठहरी, इसी स्थान पर जनरल मॉर टैन्डल जो कि जनरल गैलेस्पी के स्थान पर नियुक्त हुए थे, सेना में शामिल हो गए।

काज़ी रणजोर अंग्रेज़ी सेना के आने का समाचार सुनकर अपने सिपाहियों समेत नाहन को छोड़कर किला जैतक में, जो कि

नाहन से 4 मील उत्तर की ओर स्थित है, चला गया और इस किले को गोला–बारूद तथा अस्त्र–शस्त्र से मज़बूत करके वहां डट गया। अंग्रेज़ अफसरों को जब यह सूचना मिली तो उन्होंने गोरखों पर दोनों तरफ से अचानक आक्रमण करने का प्रस्ताव किया और रातों–रात कूच करके अपने नियत स्थान पर पहुंच गए। 27 दिसम्बर की रात को अंग्रेज़ी सेना का एक भाग उस मोर्चे पर पहुंचा जो गोरखों ने किले की सुरक्षा के लिए तैयार किया था। अंग्रेज़ी सेना ने किले पर गोले बरसाने आरम्भ किए। गोरखों ने भी जवाब में गोलियां चलानी आरम्भ कीं। कुछ समय तक दोनों ओर से तीरों और गोलियों की बारिश होती रही। अंत में अंग्रेज़ी सेना ने एक बार ही धावा बोला और मोर्चे के निकट पहुंच गए। गोरखों ने बन्दूकों से लड़ते हुए पीछे हटना आरम्भ किया और मोर्चा खाली कर दिया।

अंग्रेज़ अफसर अपनी सेना सहित बड़ी कठिनाई से पहाड़ पर चढ़े और शत्रु को इस तरह पीछे हटते हुए देखकर उन्होंने समझा कि शत्रु के पैर उखड़ गए हैं परन्तु यह शत्रु की चाल थी जिसकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया। जिस समय गोरखों ने देखा कि अंग्रेज़ी सेना अपने अफसरों सहित पहाड़ पर चढ़ आई है और चढ़ाई चढ़ने के कारण सबकी सांस फूली हुई है, वे समझ गए कि इस स्थिति में न तो वे मुकाबला ही कर सकते हैं और न ही उनमें वापिस लौटने की शक्ति बची है। तब गोरखों ने अचानक पलट कर अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया और तलवारों और बन्दूकों का प्रयोग करने लगे। इससे अंग्रेजी सेना, जो कि रात को न सो सकने के कारण और पहाड़ की चढ़ाई चढ़ने से थक चुकी थी, में उथल–पुथल मच गई और वह मुकाबले की शक्ति न होने के कारण अपने होश खोकर पीछे हट गए। बहुत से तो पहाड़ की घाटियों और उन खाइयों में, जो कि गोरखों ने छुपे तौर पर बना रखी थीं, गिरकर मर गए और बहुत से शत्रु के हाथ से घायल और कत्ल हुए। इस स्थिति में कोई किसी ओर भागा और कोई किसी ओर। सेना में ऐसी अफ़रा–तफ़री फैली कि एक को दूसरे का पता न रहा। दो–तीन दिन के बाद अफसर और सैनिक एक स्थान पर सेना में शामिल हुए।

अंग्रेज सेना की दूसरी टुकड़ी पर, जो कि दूसरी ओर से किले की तरफ आ रही थी, गोरखों ने आक्रमण किया। वह टुकड़ी भी, जो कि संख्या में कम थी, गोरखों का मुकाबला करती हुई अपने कैम्प को वापिस हुई। इस लड़ाई में बहुत से अफसर और सैनिक घायल हुए और मारे गए। कत्ल होने वालों के शव कुछ तो इसी स्थान पर और कुछ अफसरों की लाशें नाहन शहर में लाकर पक्के तालाब के निकट दफन कर दी गईं। लड़ाई के बाद पक्के कमरे और एक पक्का मीनार कत्ल होने वालों की याद में निर्मित किया गया, जो कि अब तक वहां मौजूद है। इस पर अंग्रेजी लिपि में निम्नलिखित लेख अंकित हैं। चार अफसरों अर्थात् लैफ्टिनैंट नम्ब, लैफ्टिनैंट थैकरे, विल्सन साहिब व लैफ्टिनैंट ऐनसाईन स्टॉलक्रिट की कब्रें हैं, जो इस स्थान पर उन अफसरों ने बनवाई थी जो जीवित बच गए थे। कब्र का असली पत्थर किसी कारण जाता रहा था, फिर 25 वर्ष बाद एक व्यक्ति ने वर्तमान पत्थर लगवाया है।

SACRED

To the memory of William M.C. Murdo Wilson, Ensign, 2nd Battalion, 26th Regiment, N.I., killed on 27th December, 1814, aged 22 years, with the Light Company of his Regiment which, conveying the retreat of Major W.M. Richard's column on the height of Jaittik near Nahan, when the officer commanding the Company, Lieutenant Thackery, and 57 men were killed and wounded by a strong and overpowering column of Gurkhas led by Cazee Ranjor Thapa.

The remains of the deceased with three Lother officers (Lieutenant Numb, Thackery and Ensign Stalkrit) were buried at this spot, and this tomb erected by the surviving officers of the Light Battalian to their memory.

This slab was placed by an affectionate brother after a lapse of 25 years, the original having been lost.

**इस लेख का अनुवाद निम्नलिखित है : –**

यह मज़ार निम्नलिखित अफसरों की याद में बनाया गया है। डब्ल्यू.एम.सी. मुर्डो विल्सन, जो दूसरी बटालियन, 26 रेजिमेन्ट, नेटिव

(स्थानीय) इन्फैन्ट्री का इनसाईन था। 22 वर्ष की आयु में 27 दिसम्बर 1814 ई० को अपनी रेजिमेन्ट की लाईट कम्पनी के साथ, मेजर विलियम रिचर्ड की सेना की सहायता में जैतक की चोटी पर, जो नाहन के निकट है, जाता हुआ मारा गया था। जब इस कम्पनी का कमांडिंग ऑफिसर लेफ्टिनेंट थैकरे अपने 27 आदमियों सहित गोरखों की शक्तिशाली और भारी फ़ौज से, जो कि काजी रणज़ोर की कमान में लड़ रही थी, मुकाबला करते हुए मारा गया था। मृतकों की लाशें इनके तीन दूसरे मारे गए अफसरों सहित, अर्थात् लेफ्टिनेंट नम्ब, लेफ्टिनेंट थैकरे, लेफ्टिनेंट एनसाईन स्टॉलक्रिट इस स्थान पर दफ्न किए गए और यह मज़ार लाईट बटालियन के बच गए अफसरों ने उनकी याद में बनाई थी। यह तख्ती एक प्यारे भाई ने 25 वर्ष के बाद लगाई थी क्योंकि असली तख्ती पहले कभी खो गई थी।

इस लड़ाई के बाद अंग्रेज़ी सेना चौड़ा पानी नामक स्थान से आकर नाहन में ठहरी। नौणी के पहाड़ पर, जो कि नाहन से उत्तर दि ओर चार मील की दूरी पर है और जो जैतक पहाड़ी की रक्षा के लिए प्रयोग में लाया जा रहा है, फौज़ भेजी गई और मोर्चाबंदी की गई। किले का घेराव भी बड़ी भली–भांति किया गया और हर तरफ से किले को आने–जाने के रास्ते बंद कर दिए गए तथा किले में खाने–पीने की चीज़ों को जाने से रोका गया और उचित स्थानों पर पहरे लगा दिए। इसी बीच गुप्तचर ने समाचार दिया कि काज़ी अजमेर पंथ को अमर सिंह थापा ने, जो कि अर्की में ठहरा हुआ था, 500 सशस्त्र गोरखों के साथ काज़ी रणजोर की सहायता के लिए भेजा है और उसका उद्देश्य जैतक के किले में पहुंचना है। जब जनरल साहिब को यह सूचना मिली तो उन्होंने कैप्टन यंग को आठ हज़ार नए भर्ती किए हुए हिन्दुस्तानी सैनिकों सहित शत्रु को रोकने के लिए रवाना किया। कप्तान यंग अपनी सेना सहित सायंकाल तक चुनारगढ़ के निकट पहुंच गया। परन्तु उस के वहां पहुंचने से पहले ही एक पहाड़ी सरदार सेसराम अंग्रेज़ी सरकार के आदेश से 1000 जवानों को लेकर शत्रु को रोकने के लिए वहां पहले से ही नियुक्त था। उसने शत्रु को चुनारगढ़ के इलाके में घेर रखा था। कैप्टन यंग भी वहां अपनी सेना सहित पहुंच

गया और शत्रु को घेर लिया।

कैप्टन यंग ने दूसरे रोज़ शत्रु पर आक्रमण कर दिया और उनको बेखबरी में जा दबाया। परन्तु जब काज़ी अजमेर पंथ को, जो कि बहादुर योद्धा और अनुभवी अफसर था, सूचना मिली तो वह भी मुकाबले के लिए निकला और लड़ाई शुरू हो गई। लेकिन अंग्रेजी सेना के नए भर्ती किए हुए सिपाही शत्रु के मुकाबले में ठहर नहीं सके और उन्होंने हौंसला छोड़ दिया। कैप्टन यंग ने उनकी हिम्मत को बहुत बंधाया, परन्तु कुछ प्रभाव न पड़ा। ये सिपाही घबराकर भाग खड़े हुए। इनमें से बहुत से शत्रु मारे गए और बहुत से रास्ते की जानकारी न होने के कारण मौत के मुंह में चले गए। कप्तान यंग मजबूर और निराश होकर वापिस हुआ और काज़ी अजमेर पंथ डंके की चोट पर जैतक के किले में प्रवेश कर गया।

कहते हैं कि अंग्रेज़ी सेना ने जैतक के किले का पांच महीने तक घेरा जारी रखा और जब गोरखे रोटी–पानी से बहुत तंग हुए तो उनके बहुत से साथी किले से निकलकर उनसे अलग हो गए। बहुत से गोरखों ने अंग्रेजी सरकार की नौकरी कर ली। गोरखों की एक इनफैंट्री पल्टन नाहन में भर्ती हुई, जिसका नाम आज तक सिरमौर बटालियन प्रसिद्ध है। बहुत से गोरखा सैनिक भूख से मर गए। जब यह स्थिति हुई तो काज़ी रणजोर ने अमरसिंह थापा को, जो गोरखों का एक वरिष्ठ अफसर था और जनरल ऑक्टरलूनी से रामगढ़ में लड़ रहा था, सूचना दी। जनरल ऑक्टरलूनी लुधियाना रियासत हन्डूर की राजधानी नालागढ़ में पहुंचे और 30 घंटे की लगातार गोलाबारी के बाद शत्रु को किले से खदेड़ दिया और किले पर कब्ज़ा कर लिया। इसके बाद अंग्रेज़ी सेना नालागढ़ से रामगढ़ की तरफ चली गई।

गोरखों ने भी रामगढ़ में मुकाबला करने की तैयारी की, परन्तु अंग्रेज़ी सेना ने रामगढ़ पर आक्रमण करने की बजाए मलौण के किले की तरफ, जो कि इस क्षेत्र में एक बड़ा मज़बूत दुर्ग था, आक्रमण किया। जब गोरखों को यह सूचना मिली तो वे मलौण के किले की तरफ रवाना हुए परन्तु जनरल ऑक्टरलूनी ने रामगढ़ में गोरखों की संख्या कम देखी तो तुरन्त आक्रमण करके बड़ी आसानी से फरवरी

मास, 1815 में रामगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया और गोरखे हैरान रह गए।

फिर गोरखों ने 2000 फुट ऊंचे सूरजगढ़ के पहाड़ पर तथा मलौण के किले में मोर्चाबंदी की। इस पर जनरल ऑक्टरलूनी ने 14 अप्रैल 1815 को फ़ौज की एक टुकड़ी कर्नल टॉमसन और मेजर ऐल्सन की कमान में सूरजगढ़ भेजी और मलौण पर कैप्टन सांडर्स को मलौण पर आक्रमण करने के लिए सेना सहित भेजा। गोरखों ने भी इस तरफ से मुकाबला किया। कर्नल टॉमसन को विजय प्राप्त हुई परन्तु मेज़र ऐल्सन इस लड़ाई में मारे गए। दूसरे दिन काज़ी अमरसिंह ने अपने बहादुर और प्रसिद्ध जनरल भक्तिसिंह को फौज देकर अंग्रेज़ी फौज़ के मुकाबले के लिए भेजा। घमासान युद्ध हुआ, परन्तु बाद में अंग्रेजों को ही विजय प्राप्त हुई और जनरल भक्तिसिंह इस लड़ाई में मारा गया। इस प्रकार सूरजगढ़ का मोर्चा अंग्रेज़ों के हाथ आया और काज़ी अमरसिंह मलौण के किले में चला गया। जब अमरसिंह ने देखा कि वह मुकाबला करने की शक्ति नहीं रखता तो उसने शान्ति का संदेश जनरल ऑक्टरलूनी के पास भेजा। जनरल साहिब ने भी सुलह मंजूर कर ली। सुलह की शर्तें निम्नलिखित हैं :--

गोरखों ने जो सारा क्षेत्र काली नदी के पश्चिम में अपने अधीन कर लिया है, वे उसे छोड़ दें। गोरखों के ऐसा करने पर उनको पूरे सामान के साथ नेपाल वापिस जाने की अनुमति जनरल ऑक्टरलूनी ने दे दी। काज़ी अमरसिंह ने काज़ी रणजोर को भी, जो कि किला जैतक में बैठा हुआ था, लिख दिया कि किला को खाली कर दो। इस पर काज़ी रणजोर ने जनरल मॉरटैण्डल से मुलाकात की और जैतक के किले को खाली कर दिया। वह स्वयं अमरसिंह के साथियों के साथ जा मिला। अंग्रेजी सेना रामगढ़ होती हुई नाहन पहुंची। कुछ समय तक अंग्रेज़ी सेना नाहन में ठहरी। आवश्यक प्रबन्ध करवा करके वह अगस्त 1815 में नाहन से वापिस हुई।

1815 ई0 में जनरल ऑक्टरलूनी ने पार्टन से होकर काठमांडू और नेपाल पर आक्रमण किया जिस पर नेपाल दरबार सुलह करने पर मजबूर हुआ। अन्त में इसी वर्ष सागोली के स्थान पर नेपाल के दरबार और ब्रिटिश सरकार के बीच सन्धि हो गई और इस प्रकार गोरखों का

युद्ध समाप्त हुआ (हन्टर का इतिहास, पेज नं0 471)। जब गोरखे इस देश से कूच कर गए और रियासत में शान्ति और सुलह का वातावरण स्थापित हुआ तो ब्रिटिश सरकार ने राजा कर्मप्रकाश, जिनके कुशासन से रियासत में विद्रोह और बदइंतज़ामी फैली थी, का फिर रियासत में लौटना बुद्धिमत्ता न मानकर उनको तिलोकपुर के स्थान पर, जो कि नाहन से 6–7 मील पर एक कस्बा है, रहने के लिए आदेश दिए।

राजकुमार फतेह सिंह, जो कर्मप्रकाश का उत्तराधिकारी था, को राजा कर्मप्रकाश का वारिस मानकर सम्वत् 1872 विक्रमी, तदनुसार 1815 ईसवी में राजा कर्मप्रकाश के जीवन में ही राजगद्दी पर बिठा दिया। रानी साहिबा गुलेरी, जो कि बड़ी बुद्धिमान और समझ–बूझ वाली रानी और राजा फतेह प्रकाश की माता थी, को राजा का सरपरस्त बनाकर दोनों को नाहन भेज दिया परन्तु राजा कर्मप्रकाश ने रियासत के काम–काज में दखल देना आरम्भ कर दिया। इस कारण अंग्रेज़ी सरकार ने राजा कर्मप्रकाश का रियासत के इलाके से बाहर रहना मुनासिब समझ कर उसको ज़िला अम्बाला के बौड़िया नामक स्थान में चले जाने के आदेश दिए। पोलिटिकल एजेन्ट कैप्टन जॉर्ज ब्रिच ने मुन्शी–अज़ीज–उल्ला खां को राजा फतेह प्रकाश के नाबालिग होने के दौरान रियासत का प्रबन्धक नियुक्त करके नाहन भेज दिया।

यह बात बड़े अफसोस और दुःख के साथ लिखी जाती है कि गोरखों की जंग के बाद सिरमौर का क्षेत्र उतना नहीं रहा जितना वह था। इस रियासत के क्षेत्र में बहुत कुछ कमी आ गई (देखिये नम्बरदारों की सनदें, जो कि इस किताब के पूरक में दर्ज हैं)। गोरखों को बाहर निकालने के बाद अंग्रेज़ी सरकार ने कोटाहा रामगढ़ और जगतगढ़ रियासत से काटकर दूसरे सरदारों को दे दिया तथा जौनसार व बावर और कालसी के इलाके लड़ाई के खर्चे के बदले में अपने पास रख लिए। परन्तु 1833 में राजा फतेह प्रकाश ने लड़ाई के खर्चे का कुछ भाग अंग्रेजी सरकार को दिया, जिसके बदले क्यारदादून का इलाका रियासत को वापिस मिल गया। लड़ाई के खर्चे को निश्चित मियाद के अन्दर अंग्रेज़ी सरकार को न दे पाने के कारण यह इलाका अंग्रेज़ी सरकार में हमेशा के लिए शामिल कर दिया गया। फिर भी राजा

साहिब का परिवार अंग्रेज़ी सरकार का दिल से आभारी है कि उसने बड़ी कोशिशों से रियासत से गोरखों को निकाला और सुख–शान्ति स्थापित की तथा वर्तमान रियासत सिरमौर राजा फतेह प्रकाश को दी (इस रियासत की सनदें देखिए, जो कि इस किताब में संलग्न हैं), जिससे यह प्राचीन परिवार इस रियासत में अब तक स्थापित है।

राजा कर्मप्रकाश के तीन पुत्र, फतेह सिंह (उत्तराधिकारी), मानसिंह और जयसिंह थे और उनकी चार पुत्रियां भी थीं। राजा कर्मप्रकाश का अम्बाला के बौड़िया में विक्रमी सम्वत् 1883, तदनुसार 1826 ईसवी में स्वर्गवास हुआ। राजा फतेह प्रकाश पिता की मृत्यु का समाचार सुन नाहन से बौड़िया पहुंचे और वहां हिन्दू रीति–रिवाज के अनुसार उनका क्रिया कर्म करके नाहन लौट आए।

# छठा भाग

## पहला अध्याय

## राजा फतेह प्रकाश

राजकुमार फतेह सिंह विक्रमी संवत् 1872, तदनुसार 1815 ईसवी में गोरखों की जंग के बाद अंग्रेजी सरकार (देखिए सनद नम्बर 88, जो इस किताब में संलग्न है) की सनद के अनुसार 21 सितम्बर 1815 में, जब उनके पिता राजा कर्मप्रकाश जीवित थे, छः साल की आयु में राजगद्दी पर बैठे। उनकी पैतृक रियासत सिरमौर, कुछ क्षेत्र छोड़कर, उनको वापिस मिली। अंग्रेज़ी सरकार ने राजा फतेह प्रकाश को उनकी माता रानी साहिबा गुलेरी की देखरेख में नाहन भेज दिया। पोलिटिकल एजेन्ट कैप्टन जॉर्ज ब्रिच ने मुन्शी अज़ीज उल्ला खां को, राजा साहिब की नाबालिगी के दौरान रियासत का प्रबन्धक नियुक्त किया। मुन्शी अज़ीज उल्ला खां रानी साहिबा गुलेरी के साथ विचार विमर्श करके रियासत का प्रबन्ध चलाता रहा, परन्तु रियासत के कम नज़र अहलकार रियासत के प्रबन्ध में बाधा डालते रहे। जैसा कि जनरल ऑक्टरलूनी के रानी गुलेरी को लिखे गए पत्र से ज्ञात होता है, राजा फतेह प्रकाश को उनके बालिग़ होने पर अंग्रेज़ी सरकार ने वित्तीय और रियासत के दूसरे इख़्तियार देकर उनको खुदमुख़्तार बना दिया। इसकी सूचना जनरल ऑक्टरलूनी ने अहलकारों और रियाया के नेताओं को एक आदेश के द्वारा दी । इसी वर्ष संवत् 1884 यानी 1827 ईसवी में अंग्रेज़ी सरकार ने राजा फतेह प्रकाश को शिमला में एक दरबार के आयोजन में आमन्त्रित किया और रियासत की प्राचीनता को देखते हुए राजा को इस दरबार में ज़िला शिमला के तमाम राजाओं और सरदारों में प्रथम कुर्सी देकर उनका सम्मान बढ़ाया। इस बात की जानकारी राजा साहिब को ज़िला शिमला के

सुपरिन्टेन्डेन्ट जॉन अरस्किन ने एक पत्र द्वारा 30 मई 1827 को दी।

राजा फतेह प्रकाश बड़ा भाग्यशाली और दूरदर्शी था। वह कुशल प्रबन्धक और सुन्दर व्यक्तित्व का मालिक था। उसके चेहरे पर कुदरती बड़ा रोब झलकता था। इसके गद्दी पर बैठते ही वे सरदार और अहलकार, जो कि गोरखों के रियासत पर कब्जा करने के समय और रियासत में विद्राह होने पर राजा के अधीन नहीं रहे थे, राजा साहिब के पास आए। मियां कुशल सिंह के पुत्र देवी सिंह और दलीप सिंह तथा मालदेव सिंह, जिसे सिरमौर रियासत की ओर से रामगढ़ के क्षेत्र में प्रबन्धक नियुक्त किया गया था, जो राजा कर्मप्रकाश की कमज़ोरी के कारण विद्रोही हो गया था अब राजा फतेह प्रकाश के सामने पेश हुए और क्षमायाचना की। इसी प्रकार जुब्बल के राणा पूर्णचन्द साहिब ने भी अपना वजीर राजा फतेह प्रकाश के पास भेजा और क्षमा चाही।

जैसे ही राजा फतेह प्रकाश ने रियासत का शासन हाथ में लिया वैसे ही उन्होंने उन बुराइयों को दूर करने की ओर ध्यान दिया जिन के कारण रियासत कमज़ोर हुई थी। उन्होंने अपने आप को पूरी तरह रियासत की वित्तीय स्थिति सुधारने, रियासत के प्रबन्ध को पटरी पर लाने और खोई हुई शानो शौकत को दोबारा स्थापित करने में समर्पित कर दिया। राजा कर्मप्रकाश के शासन काल में रियासत की वित्तीय स्थिति और प्रबन्ध बुरी तरह प्रभावित हुए थे। न कोई खजाना रहा था, न ही कोई मूल्यवान वस्तु रही थी क्योंकि इस खलबली के समय में पहले तो अहलकारों ने ही धन दौलत इत्यादि को लूटा और फिर जो लोग रियासत के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे उन्होंने भी चल और अचल सम्पत्ति पर खूब हाथ साफ किया। इसके बाद जो कुछ बचा था उनको गोरखों ने नष्ट कर दिया। उन्होंने तो महलों और भवनों को भी नहीं बख्शा। वे इस पर भी संतुष्ट न हुए तो शहर के दूसरे भवनों को मिट्टी का ढेर बना दिया और भवनों में लगे पत्थर और लकड़ी को ले जा कर जैतक के पहाड़ पर एक किले का निर्माण किया जो कि नाहन से चार पांच मील की दूरी पर उत्तर की ओर है।

इस किले के अवशेष और चिन्ह अब भी वहां देखे जा सकते

हैं।सच तो यही है कि राजा फतेहप्रकाश को सिरमौर का कार्यभार बहुत ही बिगड़ी हुई स्थिति में मिला था। न तो सरकार का कोई कर्मचारी ही हमदर्द था, न कोई निकट सम्बंधी ही मददगार। यह सब स्थिति जनरल ऑक्टरलूनी के उस पत्र से स्पष्ट होती है जो उन्होंने राज फतेहप्रकाश के नाबालिगी के समय उन की माता रानी साहिबा गुलेरी को लिखा था। इस पत्र का तात्पर्य यह था कि कैप्टन जॉर्ज ब्रिच के लेखों और दूसरे लोगों की जुबानी ज्ञात हुआ कि रियासत के कर्मचारियों के लालच और खुदगर्ज़ी के कारण नाहन का प्रबन्ध बहुत बिगड़ गया है इत्यादि इत्यादि (इस से रियासत के कर्मचारियों का रियासत की अवनति में अब भी शामिल होना स्पष्ट होता है)।

इन परिस्थितियों में तमाम बुराइयों को दूर करके रियासत का प्रबन्ध ठीक करना एक साधारण समझ बूझ वाले व्यक्ति के बस का न था बल्कि एक बड़े समझबूझ वाले दूरदर्शी प्रबन्धक व्यक्ति की ज़रूरत थी। राजा फतेह प्रकाश ने बड़ी कुशलता के साथ तमाम बुराइयों को दूर करके अपने कुशल शासक और दूरदर्शी होने का प्रमाण दिया। राजा साहिब ने पहले तो उन कर्मचारियों को, जिन्होंने उथल–पुथल के समय राजा कर्मप्रकाश का उनकी मुसीबतों में साथ दिया था, बड़े–बड़े पदों पर बिठाया। इन में मौजीराम मैहता व मुंशी जमीयत राय इत्यादि शामिल थे। मौजी राम जो जाति से बनिया था उस को रियासत का वित्तीय दीवान नियुक्त किया। इस के ज़िम्मे रियासत की आमदनी और खर्च के हिसाब की निगरानी करना था। मुंशी जमीयत राय को जो जाति का कायस्थ था और सढौरा का रहने वाला था, वकील और मीर मुंशी (हैड क्लर्क या सैक्टरी) के पद पर नियुक्त कर उनकी वफादारी का बदला दिया।

पुराने अहलकार, जो रियासत के निवासी थे और अब बेरोज़गार होकर घरों में बैठे थे, उन द्वारा पिछले किए गए बुरे कार्यों को भुलाकर उनको उनकी कुशलता के अनुसार विभिन्न पदों पर नियुक्त किया। चुनांचे, प्रेमसिंह के पुत्र मेहता ठंडीदत्त को जो पूर्व में वजीर रह चुका था, वजीर–ए–आला नियुक्त किया, जो कि उस समय कलैक्टर के पद के बराबर होता था। पहाड़सिंह, अजबराम, धीरजसिंह और

लच्छमण दास इत्यादि, जो कि रखैलों के बेटे थे, को विभिन्न परगनों का वजीर नियुक्त किया जो उस समय तहसीलदार के पद के बराबर होते थे। भण्डारी सागरदास को भवनों के प्रबन्ध पर नियुक्त किया, शिवशरण भण्डारी को पेशकार बनाया, किशन सिंह को कोतवाल बनाया और किशनदास को अस्तबल का दरोगा (इन्स्पैक्टर) बनाया। जसावल बुद्ध सिंह और विद्यासिंह चकरेड़िया इत्यादि को अपना मुसाहिब नियुक्त किया। इस प्रकार सबको सन्तुष्ट करके इनको अपना आभारी बनाया। अपने भाइयों को भी, जो किसी कारण इनसे खुश नहीं थे, उनके हकहकूक देकर अपना हामी और मददगार बनाया। इस तरह थोड़े ही समय में राजा फतेह प्रकाश ने अपनी शान्ति और भाईचारे की नीति से सबको अपना शुभचिंतक बना लिया।

जब इस प्रकार की सब त्रुटियां दूर हो गईं तो राजा साहिब रियासत के वित्तीय और प्रशासनिक कार्यों की तरफ ध्यान देने लगे। उन्होंने रियासत सिरमौर को निम्नलिखित 12 वजीरियों अर्थात् परगनों में बांटा :— पझौता, राजगढ़, करगानों, क्यूनतन, कार्ली, पाल्लवी, कांगड़ा, दून, बजाहरा (खोल भौड – तिलोकपुर), पछाद (सैन, धारटी)। एक वजीरी में अनेक भोज होते हैं और हर परगने पर एक अहलकार अफसर था, जिसको वजीर कहते थे जो आजकल तहसीलदार के बराबर होता है। एक ग़ौलदार (समूह), जिसके अधीन कुछ सिपाही होते थे आजकल जिस प्रकार थानेदार होता है, नियुक्त किए गए। वजीरियों के अफसर आम तौर पर पूर्व में रहे अहलकार, जो सिरमौर के निवासी थे, नियुक्त किए गए। जनता में मान–सम्मान रखने वाले लोगों को ग़ौलदार नियुक्त किया, जो कि गुलदार के नाम से जाने जाते थे।

विभिन्न परगनों के वजीरों और गुलदारों के अधीन एक–एक आला नम्बरदार नियुक्त किया, जिसको चौंतरुस्याणा कहते थे। आला नम्बरदार के अधीन कुछ नम्बरदार होते थे, जो स्याणे कहलाते थे। भोजदार एक नम्बरदार होता था। नम्बरदार अपनी सहायता के लिए कुछ ढेनूदार (मददगार) रखता था। नम्बरदार मालगुज़ारी नकद और जिन्स के रूप में (जिसको कि काराकाटला कहते थे), वसूल करके

वजीर के पास जमा करता था। परगने का वजीर आला वजीर के अधीन होता था, जो कि परगने के मुख्य स्थान पर रहता था। विभिन्न परगनों का हरेक वजीर असौज महीने में दशहरा के अवसर पर नाहन आकर मालगुज़ारी की रकम इत्यादि सरकार के पास जमा करता था। यह राशि जगाधरी के निवासी लाला जमुनादास साहूकार की दुकान में, जो कि रियासत में पुराने समय से रहते आ रहे थे और रियासत के विश्वसनीय लोगों में से थे, जमा हुआ करती थी और खर्च भी इन्हीं की दुकान से होता था। फसल का साल असौज महीने से गिना जाता था।

परगने के वजीर के साथ नम्बरदार भी असौज महीने में दशहरा के अवसर पर नाहन आते थे। नम्बरदारों को उस समय रियासत की ओर से एक–एक पगड़ी दी जाती थी और प्रत्येक नम्बरदार एक–एक रुपया नज़राने के तौर पर पेश करता था। बकाया राशि के समंजन और अग्रिम वर्ष की मांग भी दर्ज करने के बाद मालगुज़ारी की एक–एक फर्द तैयार करके राजा साहिब के हस्ताक्षरों के बाद परगने के वजीर के द्वारा प्रत्येक नम्बरदार को दी जाती थी, इस फर्द को फांट कहते थे। इसमें पिछली और वर्तमान मालगुज़ारी की मांग तथा दाखिल ख़ारिज़ का हाल, जिसमें खरीदने तथा बेचने वालों के नाम मौज़ावार, दर्ज होता था। इन फर्दों के अनुसार नम्बरदार मालगुज़ारी वसूल करता था। ये सारी फर्दें (परगने के) हैड क्वार्टर की एक बही में, जिसको जमाबन्दी कहते थे, दर्ज होती थीं।

परगने के वजीर को दीवानी और फौज़दारी मुकद्दमों को सुनने का अधिकार नहीं होता था। परन्तु वह गौलदार की सहायता से प्रत्येक वर्ष फौजदारी मामलों की एक सूची तैयार करके आला वजीर के पास पेश करता था। यद्यपि इस विधि की पूरी पाबन्दी नहीं होती थी, फिर भी आम तौर पर परगने का वजीर और गौलदार स्वयं ही मौखिक फैसला करके जुर्माना आदि कर देते थे जिसका कुछ भाग सरकार के खजाने में जमा होता था और कुछ वह स्वयं हड़प कर जाते थे। फौजदारी और दीवानी मुकद्दमे आला वजीर के द्वारा राजा साहिब के पास पेश होते थे। बहुत सी शिकायतें मौखिक होती थीं और फैसला

भी मौखिक होता था। बहुत सी शिकायतें सादा कागज़ पर सिरमौरी लिपि में पेश होती थीं। कोई स्टाम्प आदि नहीं दिया जाता था परन्तु दीवानी मुकद्दमों में दावे की राशि का चौथा भाग लिया जाता था। सुनवाई के लिए कोई मियाद निश्चित नहीं थी। मुकद्दमों की सूची वजीर पेश करता था और जो आदेश उस पर होता था वह प्रत्येक मुकद्दमे के सामने लिखा जाता था, फिर कार्यवाही के लिए परगने के वज़ीर के पास भेजा जाता था।

फौजदारी मुकद्दमे के फैसले आम तौर पर शपथ पर होते थे। शपथ के चार तरीके :– पहला– ईश्वर जगन्नाथ की कसम, दूसरा– देवघड़ा गोला, तीसरा– देवडली, चौथा– देव कड़ाही। 1. देवघड़ा गोला की प्रक्रिया, इस तरह होती थी कि पीतल या ताम्बे के एक बड़े बर्तन को पानी से भरकर सात बार उबाल देते थे और आटे के दो गोले बनाए जाते थे। एक गोले में एक रुपया दूसरे में एक पैसा डालते थे और इन दोनो गोलों को इस पानी के बर्तन में दोनों तरफ के लोगों की अनुपस्थिति में डालते थे। फिर दोनो में से एक को बुलाकर अर्थात् दावा करने वाले या जिस पर दावा किया गया है, जैसा कि प्रस्तावित किया गया हो, गोले को खौलते पानी से निकालने के लिए आदेश दिया जाता। आम तौर पर यह आदेश अभियुक्त या जिसके विरुद्ध दावा किया गया हो, उसको दिया जाता था। यह गोला राजा साहिब या किसी सम्मानित अधिकारी के सामने निकाला जाता था। अगर वह गोला, जिसमें रुपया था, निकलता तो अभियुक्त बरी हो जाता और अगर पैसे वाला गोला निकलता तो अभियुक्त मुजरिम (कसूरवार) समझा जाता था। कभी–कभी पैसे रुपये के स्थान पर एक–एक कागज़ की पर्ची, जिसमें अक्षर गुनहगार या बेकसूर लिखा जाता था, आटे के गोले में डाली जाती थी, इसको धर्मचेरी कहते थे। अगर शब्द "गुनहगार" की पर्ची निकलती तो अभियुक्त गुनहगार और अगर बेकसूर की पर्ची निकलती तो अभियुक्त बेकसूर ठहराया जाता।

2. देवकड़ाही की प्रक्रिया इस तरह होती थी कि कड़ाही में तेल गर्म किया जाता था और अभियुक्त के हाथ में कपड़ा बांध कर इसको खौलते हुए तेल में डालते थे और दो रोज़ के बाद इस कपड़े

को खोलते थे। अगर अभियुक्त के हाथ में छाले आदि पड़ जाते तो वह कसूरवार समझा जाता था, अन्यथा बरी किया जाता था।

3. देव डली का प्रकरण इस तरह होता था कि एक लोहे का गोला आग में लाल किया जाता था और अभियुक्त के हाथ में रख दिया जाता था और कुछ कदम इसी तरह चलाया जाता था। अगर वह गर्म गोले को लेकर पहले से नियुक्त स्थान पर पहुंच जाता और उसका हाथ न जलता तो वह बेकसूर माना जाता था, अन्यथा कसूरवार माना जाता था।

ऊपर लिखे गए तरीकों के अतिरिक्त शपथ का एक तरीका और भी था जो जलडोबनी कहलाता था। यह बड़ी कठिन परीक्षा थी और आम तौर पर यह डाईन की परीक्षा के लिए की जाती थी। पहाड़ी क्षेत्रों में यह मान्यता है कि कुछ स्त्रियां कोई मंत्र जानती हैं, जिससे वह आदमी को मार देती हैं। जब कोई व्यक्ति ऐसी औरत के विरुद्ध शिकायत करता तो उस स्त्री को बुलाकार रेणुका के ताल में डाल दिया जाता। अगर वह सकुशल ताल से बाहर आ जाती तो वह बेकसूर मानी जाती, अन्यथा कसूरवार।

फौजदारी मुजरिमों के जुर्माने की सजा को चहेती और कैद की सजा को दण्ड कहते थे। हथकड़ी के स्थान पर लकड़ी का काठ डाला जाता था और राजा साहिब सप्ताह में एक बार और कभी--कभी दो बार कचहरी लगाया करते थे, जिसको दरबार कहा जाता था। कचहरी में सब अधिकारी, भाई बन्धु उपस्थित होते थे। कचहरी की तमाम कार्यवाही हिन्दी भाषा में होती थी और मुकद्दमे और आदेश सिरमौरी लिपि में लिखे जाते थे। ये अक्षर संस्कृत के अक्षरों में थोड़ा बहुत फेर बदल कर बना लिए गए हैं। साधारण बही–खाते और रोकड़े के कागज़ात और पत्राचार सिरमौरी लिपि में होते थे। बाहर के क्षेत्रों से किए जाने वाले पत्राचार व फरमान आदि फारसी लिपि में होते थे। अंग्रेज़ी भाषा उस समय रियासत में बिल्कुल प्रचलित नहीं थी और न कोई इसे जानता था।

राजा फतेह प्रकाश को केवल रियासत का प्रशासनिक प्रबन्ध ही ठीक नहीं करना था बल्कि अपनी चार बहनों की शादी करने

की ज़िम्मेदारी भी उन पर थी। इसके अतिरिक्त राजा साहिब को भवनों और महलों की मुरम्मत तथा रियासत में दूसरी वस्तुओं को भी उपलब्ध करवाना था। इसलिए उन्होंने इसकी तरफ भी उतना ही ध्यान दिया जितना कि प्रशासनिक सुधारों में। ये सब कार्य बड़ी अच्छी तरह समय–समय पर पूरे होते रहे। बैसाख विक्रमी सम्वत् 1884 में राजा कर्मप्रकाश की पुत्री, जो रानी साहिबा कोठारी से उत्पन्न हुई थी, की शादी गढ़वाल के राजा सुदर्शन शाह के साथ हो गई (राजा सुदर्शन शाह का कोई असली पुत्र राज उत्तराधिकारी नहीं था)। केवल एक पुत्र अविवाहित स्त्री से था, जिसका नाम भवनसिंह था। अंग्रेज़ी सरकार ने असली औलाद न होने के कारण पहले तो गढ़वाल की रियासत को ज़ब्त कर लिया परन्तु बाद में स्वर्गवासी राजा साहिब की सेवाओं को ध्यान में रखते हुए कंवर भवन सिंह को सनद न0 17, 6 सितम्बर 1859 के अन्तर्गत गढ़वाल रियासत दे दी गई – सन्धि पत्र, वॉल्यूम 2, पेज 61–रियासत गढ़वाल में अब तक भवन सिंह की औलाद राज्य करती है)।

राजा सुदर्शन शाह सूर्य वंशी राजपूत थे। वह एक प्राचीन रियासत गढ़वाल के शासक थे। यह विवाह बड़ी धूमधाम से हुआ था। राजा सुदर्शन शाह निसंतान स्वर्गवास हुए। इस प्रकार ज्येष्ठ विक्रमी संवत् 1884 में राजा कर्म प्रकाश की दो पुत्रियों, जो रानी साहिबा गुलेरी तथा रानी साहिबा पठानी से उत्पन्न हुई थीं, का विवाह रियासत बिलासपुर के शासक राजा खडक चन्द से हुआ। (बिलासपुर का राजपरिवार चन्द्रवंशी है और चन्देरी के राजा शिव पाल की संतान से है। राजकुमार वीर चन्द जो चन्देरी के राजा हरि चन्द का पुत्र था, ने बिलासपुर क्षेत्र पर विजय प्राप्त की थी और रियासत की नींव डाली थी। राजा खडक चन्द वीर चन्द से उनतालीस पीढ़ी बाद में हुआ था। ये चन्देल राजपूत कहलाते हैं।

इस विवाह के वक्त शहर में हैजे की बीमारी बहुत फैली हुई थी। इस कारण बारातियों में से बहुत से अपनी जान से हाथ धो बैठे। इस के बाद माघ विक्रमी संवत् 1889 में राजा कर्म प्रकाश की चौथी पुत्री, जो कि रानी सहिबा गुलेरी से उत्पन्न हुई थी, का विवाह ज़िला

शिमला के रियासत हंडूर नालागढ़ के राजा विजय सिंह से बड़ी धूमधाम से हुआ। राजा विजय सिंह भी निःसंतान ही स्वर्ग सिधारे। (राज विजय सिंह की भी कोई असली संतान नहीं हुई थी। इस लिए मियां रघुवीर सिंह, जो एक अविवाहित स्त्री से उत्पन्न हुआ था, को स्वर्गवासी राजा की सेवाओं को ध्यान में रखते हुए नालागढ़ का इलाका सनद न0 95, 19 जनवरी 1860 को दे दिया गया। संधि पत्र वॉल्यूम 2, पेज 333, मियां अगर सिंह की संतान अब तक रियासत नालागढ़ में राज कर रही है)।

इन शादियों से निपट कर राजा फतेह प्रकाश नए महलों के निर्माण में लगे और अन्य वस्तुएं इत्यादि इकट्ठी करते रहे। उन्होंने पहले पहल शीश महल का निर्माण करवाया और फिर विक्रमी संवत् 1856 में छोटी रानी साहिबा कहलूरी के लिए मोती महल बनवाया। महल के पास ही एक शिवालय और पक्का तालाब भी बनवाया। इस के पश्चात् एक शिवालय और एक बावड़ी जिसका नाम जोड़ी बांई है, छोटी रानी साहिबा कहलूरी की तरफ से विक्रमी संवत् 1893 में बनवाए गए। विक्रमी संवत् 1891 में सतियों के पुराने मन्दिर, जो पौंटा में जमुना के किनारे राजा विजय प्रकाश, राजा प्रति प्रकाश, राजा कीर्त प्रकाश और राजा धर्म प्रकाश की रानियों के थे तथा राजा प्रति प्रकाश के दो पुत्र कंवर इशरी सिंह और कंवर मोहकम सिंह की पत्नियों के थे, नए सिरे से बनवाए गए। ये बहुत पुराने होने के कारण काफी समय से खण्डहर बने हुए थे। नव निर्माण के बाद धार्मिक रीति रिवाजों के अनुसार प्रतिष्ठा व पूजन करके पूर्वजों की याद को दोबारा जीवित किया गया।

(पुराने समय में हिन्दुओं में अपने पति के मृतक शरीर के साथ सती होना बड़ा पवित्र माना जाता था। स्त्रियां उस काल में पतिव्रत धर्म के कारण अपनी जान की आहुति देना एक बड़ा धर्म मानती थीं। लोग भी ऐसी स्त्रियों को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते थे। राजा फतेह प्रकाश के काल की एक घटना है कि एक बार मियां हसता, जो राजा साहिब का सेवादार था, का स्वर्गवास हो गया। उस की पत्नी, जो सुन्दर और पतिव्रता नारी थी, पति के साथ सती होने के लिए तैयार

हुई। राजा साहब ने इस कारण कि अंग्रेज़ी सरकार द्वारा सती होना बन्द किया जा चुका था, उस नारी को समझाने की बहुत कोशिश की। राजा साहब स्वयं उसके घर गए और समझाया कि वह सती न हो परन्तु वह अपने निश्चय पर अटल रही। इस तरह दो दिन तक मियां हसता का मृतक शरीर घर पर पड़ा रहा क्योंकि इस नारी ने इसको नहीं छोड़ा। अन्त में राजा साहिब ने उस को सती होने की आज्ञा दे दी और वह दूसरे दिन की सुबह स्नान करके और आभूषणों से सज कर पालकी में बैठ मृतक पति की अर्थी के पीछे चली और जगन्नाथ जी के मन्दिर में गई। ठाकुर का चरणामृत लेकर श्मशान भूमि को रवाना हुई। जहां वह अपने पति के मृतक शरीर के साथ जल कर राख हो गई। इस के बाद नाहन सिरमौर में कोई स्त्री सती नहीं हुई)।

राजा साहिब ने नाहन के पुराने लक्ष्मी नारायण मन्दिर का, जो राजा भूप प्रकाश का बनवाया हुआ था, नये सिरे से निर्माण करवाया। उन्होंने रियासत के तमाम भवन जो जनता के कल्याण के लिए थे और उनमें से जो मुरम्मत के काबिल थे, उनकी मुरम्मत करवाई और इसके अतिरिक्त बहुत से नए भवन जिनकी ज़रूरत थी, भी बनवाए। इस तरह रियासत में अब तक ऐसे भवन मौजूद हैं जिनमें से बहुत सारे राजा फतेह प्रकाश द्वारा निर्मित करवाए गए हैं। उन्होंने दूसरी चल और अचल सम्पत्ति भी एकत्रित की जिसमें हाथी–घोड़े शामिल हैं, जो राजा के लिए ज़रूरी थे।

राजा फतेह प्रकाश के पास दलसंगार नामक एक हाथी भी था। जिसका हाथीघर महल के सामने, दरवाज़े के बाहर की तरफ था। यह हाथी बड़ा सुन्दर और भोला–भाला था। इस के बारे में मशहूर है कि छोटे–छोटे बच्चे इस के पास चले जाते थे और इसके दांतों को पकड़ कर झूला करते थे। एक बार इस हाथी के साथ लड़ाने के लिए सरदार लहना सिंह लाड़वा वाला अपने हाथी को लेकर नाहन आया था। लहना सिंह का हाथी दलसंगार से कद काठी में बड़ा था। जिस समय चौगान में दोनों हाथियों का मुकाबला हुआ तो पहले पहले तो सरदार लहना सिंह के हाथी ने दलसंगार को हटाया मगर बाद में दल संगार ने जोश में आकर इस हाथी को ऐसा धकेला कि वह बेचारा

मैदान छोड़ कर भाग निकला। दर्शकों ने खुशी से नारे लगाए। राजा फतेह प्रकाश ने दलसंगार की कब्र का पक्का चबूतरा सिक्खों के गुरुद्वारे के निकट सिरमौर क्लब के सामने बनवाया था। जब राजा को ज़रूरी कार्यों से समय मिला और खजाने में भी रुपया जमा हो गया तो क्यारदा दून का क्षेत्र जो कालसी, जौनसार और बावर के सहित दो लाख रुपया लड़ाई के खर्चे के बदले में अंग्रेज़ी सरकार के कब्जे में था, उसे छुड़ाने के लिए राजा साहिब ने प्रयत्न किए और इसको 1833 ई0 में 50 हज़ार रुपया देकर हासिल कर लिया जिसकी सनद 5 सितम्बर 1833 में अंग्रेज़ी सरकार की ओर से दी गई। (देखें सनद न0 89, जो इस पुस्तक में शामिल है)। 1844 ई0 में बाकी बचा रुपया अंग्रेज़ी सरकार के खज़ाने में दाखिल करने की अनुमति सरकार से मांगी ताकि कालसी, जौनसार व बावर के क्षेत्र को भी वापिस लिया जा सके परन्तु बहुत समय गुज़र जाने के कारण, उन का अनुरोध सरकार ने स्वीकार नहीं किया और यह क्षेत्र रियासत सिरमौर से सदा के लिए अलग हो गया।

जैसा कि उनके पूर्वज दिल्ली के बादशाहों के हामी और सहायक रहे हैं, राजा फतेह प्रकाश भी अंग्रेज़ी सरकार के बड़े शुभचिन्तक और वफादार थे। 1838 ईसवी में जब अंग्रेजी सरकार ने काबुल के तख्त पर दोस्त मुहम्मद खान के स्थान पर शाह शुजाउल–मुल्क को बिठाने के लिए काबुल पर चढ़ाई की तो राजा फतेह प्रकाश ने अपनी सेना से अंग्रेज़ी सरकार को सहायता देने की विनती की थी। जिसके उत्तर में गवर्नर जनरल ने अपने 5 नवम्बर 1838 के पत्र में सरकार की ओर से प्रसन्नता व्यक्त की थी। इसके पश्चात् 1845 ईसवी में पंजाब की लड़ाई के अवसर पर भी राजा साहिब ने अपनी सेना कंवर मदन सिंह की देख–रेख में अंग्रेजी सरकार की सहायता करने के लिए भेजी थी। यह सेना हरि के पत्तन के स्थान पर तैनात हुई थी।

इस सेना ने एरस्किन साहिब के आदेश पर घुंघराना के किले पर कब्ज़ा कर लिया था तथा बाद में सतलुज घाट पर फ़ौजी सेवाएं दी थीं, जिसके बदले में लड़ाई पर विजय प्राप्त करने के बाद अंग्रेज़ी

सरकार ने कंवर मदन सिंह को सर्टीफिकेट दिया और राजा साहिब को प्रसन्नता का एक पत्र लिखा। इसी बीच राजा फतेह प्रकाश ने अपनी पैतृक रियासत के उस भाग की, जो कि गोरखों की लड़ाई के बाद अंग्रेज़ी सरकार ने दूसरे रईसों को दे दिए थे, सरकार को पत्र लिखकर वापसी के लिए अनुरोध किया। परन्तु एक लम्बा समय बीत जाने के कारण इस पत्र पर सरकार ने कोई कार्यवाही करना उचित नहीं समझा और यह क्षेत्र सदा के लिए रियासत से अलग हो गया। राजा फतेह प्रकाश ने भी ज़माने के उतार–चढ़ाव पर विचार करके कि एक सी स्थिति कभी नहीं रहा करती, छोटे बड़े और बड़े छोटे होते आए हैं, इन क्षेत्रों की वापसी की दोबारा मांग नहीं की और चुप रहे।

राजा फतेह प्रकाश के छः विवाह हुए थे। पहला विवाह राणा क्योंथल के परिवार में हुआ था और फिर दो विवाह बिलासपुर रियासत के राजा जगत की दो बहनों से हुए। एक विवाह राणा बघाट के परिवार में हुआ और चौथा विवाह रियासत हण्डूर में। पांचवां विवाह कुठाड़ में और छठा विवाह कुम्हारसेन में हुआ था। पिछले समय में हिन्दुस्तान के राजाओं, रजवाड़ों और रईसों में अनेकों विवाह करने का रिवाज़ था। राजा फतेह प्रकाश और इनके पूर्वज़ों के विवाह ज़िला शिमला व कांगड़ा की रियासतों के राजाओं और रईसों के परिवारों में होते रहे हैं। राजा फतेह प्रकाश की बड़ी रानी कहलूरी साहिबा से एक पुत्र, जो राजा का उत्तराधिकारी था, उत्पन्न हुआ था। परन्तु कुछ समय बाद उसका स्वर्गवास हो गया था, फिर विक्रमी सम्वत् 1884 में रानी साहिबा बघाटी से राजकुमार रघुवीर सिंह उत्पन्न हुआ, जो बाद में उत्तराधिकारी बनकर रघुवीर प्रकाश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। रानी साहिबा बघाटी से एक पुत्री भी उत्पन्न हुई थी। फिर विक्रमी सम्वत् 1886 में छोटी रानी साहिबा कहलूरी से राजकुमार सुर्जन सिंह उत्पन्न हुए और इन्हीं रानी से सम्वत् 1889 में राजकुमार वीरसिंह पैदा हुए।

ये तीनों राजकुमार बहुत सुन्दर और स्वस्थ थे। विशेषकर टीका साहिब रघुवीर सिंह अति सुन्दर थे। राजा फतेह प्रकाश के अतिरिक्त तीन और राजकुमार इस परिवार के तीन ख्वासज़ादे (रखैलों के लड़के) थे, जिनको इस रियासत में सरतेड़ा कहते हैं। इनके नाम

मदन सिंह, तेगसिंह और नैनसिंह थे। रियासत सिरमौर में भी हिन्दुस्तान के दूसरे राजपूतों की तरह ख्वासें रखने का रिवाज़ है। ये ख्वासें, जो अविवाहित होती हैं, आम तौर पर शादी के समय बांदी के तौर पर दुल्हन के साथ आती हैं, जो कि अच्छी जाति की होती हैं, जैसे कि कनैत या भाट या कोई दूसरी जाति की सुन्दर नारी, जो घर में बिना विवाह के रख ली जाती है। इसी प्रकार राजा फतेह प्रकाश ने एक एल्फिन नामक स्त्री को, जैसा कि रईसों में दस्तूर है, ख्वास रखा था। इससे दो पुत्र उत्पन्न हुए थे, जो चूड़ा और चूहा के नाम से प्रसिद्ध थे। इस प्रकार ख्वासें रखने का रिवाज़ आम तौर पर राजपूत कौम में प्राचीन समय से चला आता है। टॉड साहिब के राजस्थान के इतिहास से ज्ञात होता है (टॉड का इतिहास, वॉल्यूम 1, पेज 183) कि राजपूताना में ख्वासों को गोली और ख्वासज़ादों को गोलीज़ादा कहते हैं।

जब ये राजकुमार शिक्षा ग्रहण करने के काबिल हुए तो राजा फतेह प्रकाश ने इनकी शिक्षा की तरफ ध्यान दिया। इनको संस्कृत भाषा की शिक्षा, जो कि उस समय आवश्यक मानी जाती थी, दिलाई गई। फिर इनकी शादियां रचाईं। टीका रघुवीर सिंह की पहली शादी माघ विक्रमी सम्वत् 1896 में ज़िला अम्बाला के रायपुर के रईस के परिवार में बड़ी धूमधाम से की गई। बारात रायपुर गई और वहां से दुल्हनें आईं। दूसरी शादी इस टीका साहिब की और राजकुमार सुर्जन सिंह की डोले के माध्यम से हथयाल के रईस की दो पुत्रियों से हुई। हथयाल पिछले समय में ज़िला कांगड़ा की एक रियासत होती थी, जो महाराजा रणजीत सिंह की लूट–खसूट के कारण बर्बाद हो गई और जम्मू के क्षेत्र में शामिल कर ली गई थी। यह विवाह सम्वत् 1899 में पांवटा के स्थान पर हुआ था। हथयाल रियासत के मुखिया ने अपनी वित्तीय स्थिति कमज़ोर होने के कारण डोला देना मंजूर कर लिया था ***(डोले की रस्म प्राचीन काल से चली आई है। वित्तीय कारणों के कारण दुल्हन के माता–पिता में से कोई दुल्हन को लेकर दूल्हा के यहां जाता है और दूल्हा के घर से बाहर किसी स्थान पर रस्मो–रिवाज के अनुसार विवाह किया जाता है,***

*इसको डोला देना कहते हैं। राजपूतों में वित्तीय स्थिति का ध्यान नहीं दिया जाता चाहे कितना ही छोटा राजपूत क्यों न हो, विवाह हो जाता है परन्तु जाति में बराबरी होना अनिवार्य है। टॉड का इतिहास, वॉल्यूम 1, पेज 143, अंग्रेज़ी)*। इसलिए विवाह पांवटा में हुआ। राजकुमार वीरसिंह की शादी जसरोटा के राजकुमार से हुई, जहां से डोला आया था, यह विवाह भी पांवटा में हुआ था।

जब राजा फतेह प्रकाश राजकुमारों के विवाहों से निपट गए तो उन्होंने अपने पुत्रों के निर्वाह के लिए निम्नलिखित जागीरें सनद में दीं और इनकी पुष्टि पॉलिटिकल एजेन्ट से करा दी। (1) कंवर सुर्जन सिंह को परगना पौनूवाला, खोल, भौड़, लाणाबाक्का, मौज़ा बोलियों और बाधजोडडा दिए। (2) कंवर वीर सिंह को परगना कांसर जामो, मौज़ा देवणी, लाणाच्योल, बाधजाबल और मौज़ा भारापुर, (3) कंवर मदन सिंह ख्वासज़ादे को मौज़ा डाकड़ा तथा करगानों दिए। (4) नैनसिंह ख्वासजादा को मौज़ा सरगानों और मौज़ा संगी दिए, इसके अतिरिक्त उसे 40/– नकद वार्षिक वज़ीफा भी दिया। (5) तेगसिंह ख्वासजादे को बॉबी मौज़ा ऐरों और 65/– रुपया वार्षिक वज़ीफा नकद।

इस प्रबन्ध से निपट कर उन्होंने तीर्थ यात्रा को जाने का मन बनाया। तीर्थ यात्रा करना हिन्दुओं के लिए अनिवार्य माना जाता है। विशेषकर गया में जाकर अपने पूर्वजों का श्राद्ध करना और दूसरे धार्मिक क्रियाकर्म करना अति अनिवार्य समझा जाता हैं। परन्तु आजकल के समय में इतने दुर्गम स्थानों, जैसा कि गया जी इत्यादि जाना कठिन ख़याल किया जाता था क्योंकि रेल इत्यादि नहीं चली थी और मार्ग भी भय से भरपूर थे। इसलिए राजा साहिब अपने संगी–साथियों और यात्रा के सामान सहित सम्वत् 1902 विक्रमी में रवाना हुए और पड़ाव–पड़ाव ठहरते, गया जी पहुंचे। कंवर वीर सिंह राजा साहिब के साथ यात्रा को गए थे। रियासत में टीका रघुवीर सिंह और कंवर सुर्जन सिंह रहे। विक्रमी सम्वत् 1902 में टीका रघुवीर सिंह की लाड़ी साहिबा हथयाली से एक पुत्र, जिसका नाम राजकुमार शमशेर सिंह

रखा गया, उत्पन्न हुआ। इस भाग्यशाली राजकुमार शमशेर सिंह के पैदा होने का शुभ समाचार राजा फतेह प्रकाश को इस यात्रा के दौरान मथुरा जी में मिला, जिसे सुनकर वह अति प्रसन्न हुए।

जब राजा फतेह प्रकाश तीर्थ यात्रा को गए हुए थे तो टीका रघुवीर सिंह को, जो एक साधारण प्रवृत्ति के व्यक्ति थे, कुछ तंगनज़र अहलकारों ने, जो रियासत के मुखिया के घर में फूट डलवाकर आपसी झगड़े पैदा करने में अपनी भलाई समझते थे, मौका पाकर राजा फतेह प्रकाश की ओर से टीका रघुवीर सिंह का मन फेर दिया। टीका साहिब को यह आभास कराना आरम्भ किया कि राजा साहिब आपको दिल से नहीं चाहते हैं। इस कारण आपको कोई शक्तियां आदि रियासत के काम काज में नहीं दी गई हैं। उन्होंने टीका साहिब को यह भी आभास करवाया कि इसी कारण राजा साहिब कंवर वीर सिंह को अपने साथ तीर्थ यात्रा पर ले गए हैं। उन्होंने टीका साहिब के मन में यह बात डालने की कोशिश की कि इस समय स्थिति आपके साथ है और आप जनता के नेताओं को अपने साथ करके अपना प्रभुत्व स्थापित करके खुदमुख़्तार हो जाएं तो ठीक रहेगा।

पहले तो टीका साहिब ने इस परामर्श को नहीं माना परन्तु फिर वह अहलकारों के झांसे में आ ही गए और इन्हीं अहलकारों ने जनता के कुछ लोगों को, जो कि सम्भवतः इन अहलकारों के रिश्तेदार और संगी–साथी थे, नाहन बुला लिया। परन्तु इस षडयन्त्र में ये अहलकार सफल नहीं हुए। जिस समय राज फतेह प्रकाश गया जी की तीर्थ यात्रा से वापिस नाहन आए तो इन्हीं षडयन्त्रकारी अहलकारों ने राजा साहिब से टीका रघुवीर सिंह की शिकायत की। जिसके कारण राजा साहब का मन टीका साहिब की तरफ से कुछ मैला हो गया था। इसी प्रकार इन कमीने अहलकारों ने इस तरफ की उस तरफ और उधर की इधर झूठ–सच सुना–सुना कर दोनों में फूट पैदा कर दी और यह आपसी मन–मुटाव यहां तक बढ़ा कि राजकुमारों में भी इसका प्रभाव देखने को मिला। विशेषकर टीका रघुवीर सिंह को कंवर वीर सिंह की ओर गुमराह कर दिया कि कंवर टीका साहिब की

शिकायतें राजा साहिब से करते हैं। यह मन–मुटाव दिल ही दिल में बढ़ता चला गया।

गया जी की तीर्थ यात्रा से वापसी के बाद राजा फतेह प्रकाश ने अपनी पुत्री का विवाह, जो रानी साहिबा बघाटी से उत्पन्न हुई थी, विक्रमी सम्वत् 1904 में बसौली के राजा से कर दिया, जिसका इलाका महाराजा रणजीत सिंह ने छीन कर अपने राज्य में शामिल कर लिया था और बाद में जम्मू वाले राजा ध्यान सिंह और गुलाब सिंह को दे दिया था। *(पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह ने बहुत सी राजपूत रियासतों को, जो कि ज़िला कांगड़ा और इसके आस–पास के क्षेत्रों में थीं, आक्रमण कर समाप्त कर दिया तथा कुछ को जम्मू के राजा गुलाब सिंह ने बाद में लूट मार करके अपने क्षेत्र में शामिल कर लिया। इस कारण कई प्राचीन परिवार समाप्त हो गए। इसी तरह कांगड़ा, कुल्लू, मण्डी, चम्बा, जसवां, दतारपुर, नुरपूर, गुलेर, सीबा, सुकेत, कुटलेहड़, जम्मू (पूर्व शासकों), जसरोटा, भद्दो, बलौर, भिम्बर राजौरी, चुनानी, साम्बा, भद्राल, कश्तवाड़, मानकोट और बसौली के राजाओं और मुखियों पर जो कि प्राचीनकाल से खुद मुख्तार थे, आक्रमण कर लूट लिया तथा उनके क्षेत्रों से उनको निकाल कर इन क्षेत्रों को अपने राज्य में शामिल कर लिया। बाद में इन क्षेत्रों का बहुत सारा भाग राजा गुलाब सिंह और ध्यानसिंह को, जो सूरजवंशी डोगरा राजपूत थे, और जिन पर महाराजा रणजीत सिंह बहुत मेहरबान थे, जागीरों के रूप में यह इलाका दे दिया। मियां गुलाब सिंह व ध्यान सिंह ने महाराजा की मेहरबानियों के कारण बहुत प्रगति की। वर्तमान जम्मू और रियासत जम्मू के दूसरे इलाके महाराजा रणजीत सिंह ने तीनों भाइयों मियां गुलाब सिंह, मियां ध्यान सिंह और मियां सुचेत सिंह को जागीर के तौर पर दिए थे और इनको राजा का खिताब भी प्रदान किया था। विशेषकर राजा ध्यान सिंह पर महाराजा की बहुत मेहरबानी थी। उनको राजा राजगान व राजा हिन्द पत बहादुर की उपाधि देकर*

*अपना प्रधानमंत्री नियुक्त किया था। राजा गुलाब सिंह ने जम्मू प्राप्त करने के बाद पहाड़ी रईसों के कई इलाकों पर भी अपना कब्ज़ा कर लिया था। सिवाए चम्बा, मण्डी और सुकेत के, दूसरे सभी रईस अपने असली और प्राचीन क्षेत्रों से सदा के लिए वंचित कर दिए गए थे। परन्तु शुक्र है कि अंग्रेज़ी सरकार ने बाद में अपनी मेहरबानियों से इन पुराने रईसों के हक अधिकारों को मानते हुए इनके गुज़ारे मुकर्रर करके इनको कायम रखा। राजपूतों के ये पुराने परिवार अंग्रेज़ी सरकार के दिल से धन्यवादी हैं और हमेशा उनके शुभचिन्तक रहेंगे)* परन्तु यह पुत्री कुछ समय बाद निःसंतान स्वर्गसिधार गई।

राजा फतेह प्रकाश को टीका रघुवीर सिंह के नाराज़ हो जाने और राजकुमारों के बीच फूट पड़ जाने का पता लग चुका था, इस वास्ते जब राजा साहिब का स्वास्थ्य ठीक नहीं रह रहा था तो उन्होंने, इस विचार से कि कहीं उनके बाद राजकुमारों में आपसी झगड़ा न हो, दूर अंदेशी का प्रयोग करते हुए, मई 1851 ईसवी में पॉलिटिकल एजेंट, ज़िला शिमला को एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था कि जो कुछ राजकुमारों को बांट दिया गया है उसे उनके बाद भी जारी रखा जाए। पॉलिटिकल एजेन्ट ने इस पत्र का संतुष्टिपूर्ण उत्तर दिया और कहा कि आपका निर्णय बरकरार रहेगा। राजा फतेह प्रकाश 8–9 महीने बुखार और पेचिश से ग्रस्त रहकर जेठ महीने में विक्रमी सम्वत् 1907 को स्वर्गसिधार गए। यह राजा बड़े कुशल प्रबन्धक, भाग्यशाली और दूरदर्शी थे। उन्होंने सिरमौर रियासत की वित्तीय स्थिति को सुधार कर इसकी खोई हुई शानो–शौकत को फिर से स्थापित किया। उन्होंने 35 वर्ष शासन किया।

# दूसरा अध्याय

## राजा रघुवीर प्रकाश

राजा फतेह प्रकाश की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी राजकुमार रघुवीर सिंह विक्रमी सम्वत् 1908 में गद्दी पर बैठे। उन्होंने गद्दी पर बैठते ही अपने मुसाहिबों (साथ उठने--बैठने वाले व्यक्ति) को उनकी कुशलता जांचे परखे बगैर रियासत के पदों पर नियुक्त कर दिया और रियासत का कामकाज उनके हाथों में सौंप दिया। यह राजा भोग--विलासी, तेज़ तबीयत और ज़िद्दी था। इसका ध्यान रियासत की ओर कम ही था। वह सैर और शिकार में अधिक समय बिताता था। उसको पशु रखने में बड़ी रुचि थी। उसने अच्छी किस्म के पशु जैसे गाय, भैंस मंगवाकर जमा किए थे। रियासत का कामकाज अहलकारों के हाथ में था और वे जो चाहते, करते थे। विशेषकर वे मुसाहिब, जो कि राजा के साथ सैर और शिकार में जाया करते थे, उन्होंने राजा पर पूरा प्रभाव जमा लिया था।

जब इन बेईमान अहलकारों व दुष्ट मुसाहिबों ने राजा साहिब की यह स्थिति देखी तो वे अपने लाभ के लिए किसी षडयन्त्र को रचने की योजना बनाने लगे। उन्होंने राजा के गद्दी पर बैठने के दूसरे वर्ष ही इनको राजकुमार सुर्जन सिंह और वीरसिंह का विरोधी बना दिया और इसे अपना उल्लू सीधा करने का एक अच्छा माध्यम बनाया। उन्होंने राजा साहिब द्वारा सुर्जन सिंह और वीर सिंह को स्वर्गीय राजा फतेह प्रकाश द्वारा दी गई जागीरों को इस बिना पर ज़ब्त करवाने का षडयन्त्र रचा कि वे जागीरें विधि अनुसार उन्हें नहीं दी गई हैं। इस तरह उन्होंने इस राजपरिवार में झगड़ों की नींव डाल दी। राजा साहिब, जो सादा प्रवृत्ति वाले व्यक्ति थे, इस चाल को न समझ

सके और उनके धोखे में आ गए। इन शरारती अहलकारों ने राजा साहिब की थोड़ी बहुत रज़ामन्दी प्राप्त करके जुल्म का तरीका अपनाना शुरू कर दिया और ऊपर लिखी गई जागीरों पर से कंवर साहिबान का कब्ज़ा उठा कर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। इस पर कंवरों ने फरियाद की परन्तु इन बदनीयत अहलकारों ने कोई सुनवाई नहीं होने दी।

अंत में कंवर साहिबान को यह मामला अंग्रेज़ी सरकार के समक्ष पेश करना पड़ा! उन्होंने 22 नवम्बर 1852 ईसवी को ज़िला शिमला के सुपरिन्टेण्डेन्ट विलियम जे.साहिब के पास फरियाद की परन्तु साहिब ने कोई रुचि न दिखाई और दावे को रद्द कर दिया। इस पर कंवर साहिबान ने लाहौर के चीफ कमिश्नर जॉन लारेन्स के पास अपील की। जॉन लारेन्स ने बजाए देहात (जागीरें) दिलाने के घर का खर्च चलाने के लिए नकद रकम देने के आदेश जारी किए। लेकिन कंवरों ने इसके विरुद्ध गवर्नर जनरल हिन्द, लॉर्ड डलहौजी के समक्ष अपील की। कंवर वीरसिंह स्वयं अपील की पैरवी करने कलकत्ता गए। गवर्नर जनरल ने अपील को मंजूर करके कंवर साहिबों को देहात का कब्ज़ा दिलाने के लिए अपने पत्र संख्या 674, तिथि : 22 अक्तूबर, 1855 में इस निर्णय का आदेश जारी किया। इस प्रकार कंवर साहिबान को उनके देहात का कब्ज़ा फिर मिल गया। परन्तु बाद में राजा साहिब की प्रार्थना पर सरकार ने बजाए देहात के नकद राशि का प्रस्ताव किया। हिन्द सरकार के सचिव ने लाहौर के चीफ कमिश्नर को अपने पत्र संख्या 1781 तिथि : 28 मार्च, 1856 तथा चीफ कमिश्नर ने अपने पत्र संख्या 366 तिथि : 6 जून, 1856 ईसवी को ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट को इसके आदेश जारी किए। इन आदेशों के अनुसार सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब ने बाका, जीवल, देवणी और भोग देहातों का निरीक्षण कर 1000/– रुपया वार्षिक इन देहातों के बदले में प्रस्तावित किया और अपने 4 फरवरी, 1857 में लिखे गए पत्र में इस निर्णय की राजा साहिब तथा कंवर साहिबान को सूचना दी, इस तरह यह झगड़ा समाप्त हो गया।

इन तीन–चार वर्षों के समय में शरारती अहलकार इसी एक

झगड़े से संतुष्ट नहीं हुए, बल्कि इस दौरान वे कोई न कोई दूसरे झगड़े राजा साहिब और राजकुमारों के बीच पैदा करते रहे और इनकी बाबत अंग्रेज़ी सरकार तक राजा द्वारा शिकायत करवाते रहे। इस कारण दोनों पक्षों में बहुत कुछ आपसी रंजिश हुई और हानि पहुंची। विशेषकर कंवर साहिबों का जीवन इस दौरान बहुत दुःख भरा और बेआरामी से व्यतीत हुआ। इसका अन्दाज़ा पाठक स्वयं ही लगा सकते हैं कि जहां पर शासक और प्रजा में सम्बन्ध इतने बिगड़े हों, वहां प्रजा की क्या स्थिति होगी। इसमें कोई शक नहीं कि अहलकारों ने इन झगड़ों को उठाने में बड़े ही कमीनेपन और तंग नज़र का सबूत दिया। उन्होंने एक ऐसे साधारण प्रवृत्ति वाले राजा को, जो उन पर पूरी तरह विश्वास रखता था, गुमराह करके ऐसी कार्यवाही करने को तैयार किया कि जिससे राजा को दुःख हुआ और उसकी नेकनामी पर धब्बा लगा। ये सब अहलकारों की खुदगर्ज़ी और कृतघ्नता को स्पष्ट करता है। ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब ने राजा रघुवीर प्रकाश को 21 फरवरी 1856 ईसवी में पत्र लिखा था, जिसमें कहा गया था कि आपके अहलकार फूट डलवाते और झगड़े करवाते हैं।

राजा रघुवीर प्रकाश के पांच विवाह हुए : पहला विवाह रायपुर में हुआ, वहां से दो रानी साहिबा थीं और दूसरी रानी साहिबा हथयाल ***(हथयाल रियासत चुनानी में एक मौज़ा था, जहां जम्मू के पुराने परिवार के मियां लोग रहते हैं),*** से थीं। तीसरा विवाह रियासत क्योंथल में हुआ और चौथी रानी साहिबा कहलूर से ब्याही गई, पांचवीं रानी साहिबा पठानकोट से थी। विक्रमी सम्वत् 1902 में रानी साहिबा हथयाली से एक भाग्यशाली पुत्र राजकुमार शमशेर सिंह उत्पन्न हुआ, फिर एक पुत्री ने जन्म लिया। रानी साहिबा क्योंथल ने विक्रमी सम्वत् 1909 में एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम राजकुमार सूरतसिंह रखा गया। इसके बाद इस रानी से एक पुत्री भी उत्पन्न हुई। रायपुरी, कहलूरी और पठानी रानियों से कोई सन्तान नहीं हुई। एक ख्वास से एक लड़का कंवर देवी सिंह था।

राजा रघुवीर प्रकाश के शासन काल में रियासत के प्रबंध में बड़ी अव्यवस्था रही। क्योंकि रियासत का काम काज अहलकारों के

हाथ में था और वे अपनी मर्ज़ी के मालिक हो गए थे। उनके द्वारा किए गए अच्छे–बुरे कार्यों को कोई पूछने वाला नहीं था तथा न ही उनके कार्यों पर किसी की नज़र थी। इस प्रकार वे जो चाहते वह करते। उन्होंने उचित और अनुचित का कोई विचार नहीं किया। इस तरह से जब रियासत के प्रबन्ध में अति खराबी आई तो उसकी सूचना सरकार तक पहुंची, जिस पर ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब ने 22 जुलाई, 1856 ईसवी में राजा साहिब को सूचित किया कि रियासत का प्रबन्ध खराब है, विशेषकर न्यायिक प्रबन्ध तो कुछ अधिक खराब हो गया है। राजा साहिब यह जानकर बहुत दुःखी हुए। उनके शासन का समय बहुत थोड़ा था, परन्तु वह पारिवारिक झगड़ों और अहलकारों की बेईमानी और फ़रेब के कारण बहुत निरस्त और उदास जीवन व्यतीत कर रहे थे। इस दौरान राजा साहिब रघुवीर प्रकाश को बवासीर का रोग लग गया और इससे इनका स्वास्थ्य बिगड़ता चला गया। कुछ समय वह खादरबाग में, जो मारकण्डा नदी के तट पर स्थित है और नाहन से पांच मील पूर्व की दूरी पर है, रहा करते थे। उन्होंने केवल पांच वर्ष शासन किया और भरी जवानी में 27 वर्ष की आयु में बवासीर की बीमारी से 20 जनवरी, 1857 ईसवी, तदनुसार माघ विक्रमी सम्वत् 1913 को उनका स्वर्गवास हो गया। वह अपने पीछे तीन नाबालिग पुत्र और दो पुत्रियां छोड़ गए।

राजा रघुवीर प्रकाश के बेवक्त स्वर्गवास से सारी रियासत में विशेषकर राजपरिवार में बड़ा तहलका मच गया। चारों तरफ घोर दुःख और शोक का वातावरण था। प्रत्येक व्यक्ति परेशान और हैरान था, क्योंकि कोई भी व्यक्ति रियासत को देखने वाला और इन नाबालिगों की सुध लेने वाला प्रतीत नहीं होता था। कंवर साहिबान तो आपसी मन–मुटाव के कारण अलग ही थे और न ही अहलकारों को इनका प्रबन्ध में शामिल होना मंजूर था। कोई अहलकार भी ऐसा दूरदर्शी और बुद्धिमान नहीं था।

कंवर सुर्जन सिंह और वीर सिंह ने दूरदर्शिता दिखाते हुए पुरानी तमाम रंजिशों को भुलाकर ऐसी स्थिति में नाबालिगों और बाकी परिवार के लोगों की देखभाल करना अपना कर्तव्य समझा और इसमें

व्यस्त हो गए। परन्तु उन्होंने रियासत के प्रबन्ध में कोई दखल नहीं दिया। अन्त में ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने अहलकारों की अकुशलता और कंवर साहिबान की रंजिश के कारण रियासत का प्रबन्ध उनके हाथ में देना उचित नहीं समझा और कोर्ट ऑफ वार्ड को नियुक्त करने की सिफारिश की। परन्तु लाहौर के चीफ कमिश्नर ने रियासत के मामलों में दखल न देना बुद्धिमानी समझी और सुपरिन्टेन्डेन्ट की सिफारिश को नामंजूर कर दिया तथा अहलकारों की एक कमेटी नियुक्त करने के आदेश दिए। इस पर शिमला ज़िला के सुपरिन्टेन्डेन्ट लॉर्ड विलियम जे. ने 19 फरवरी, 1857 ईसवी को रियासत के प्रबन्ध के लिए मेहता देवीदत्त व मोतीराम भण्डारी को प्रबन्धक नियुक्त किया।

छानबीन के दौरान खजाने में बहुत कम धन मिला, जो कि राजा फतेह प्रकाश के स्वर्गवास होने के समय के मुकाबले बहुत ही कम था। इस पर सरकार को अहलकारों के षड्यन्त्र और उनकी बेईमानी का भ्रम हुआ। इन प्रबन्धकों को न्यायिक मुकदमों और माल का नक्शा तथा आमदनी और खर्च का मासिक नक्शा प्रस्तुत करने के लिए आदेश दिया गया। ये दोनों प्रबन्धक न तो पढ़े–लिखे थे और न ही अपने कार्य में कुशल थे इसलिए ये प्रबन्ध अच्छी तरह न चला सके। कुछ दिनों रियासत का प्रबन्ध इन प्रबन्धकों की देख–रेख में चलता रहा परन्तु जब इस प्रबन्ध में बहुत ही खराबी आ गई तो ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब ने कंवर सुर्जन सिंह और वीर सिंह को न्यायिक मामलों का निर्णय करने और रियासत के प्रबन्ध में परामर्श देने के लिए नियुक्त किया।

# तीसरा अध्याय

**राजा शमशेर प्रकाश की नाबालिगी के समय रियासत के प्रबन्धक राजकुमार सुर्जन सिंह और राजकुमार वीर सिंह के हालात का वर्णन**

राजा शमशेर प्रकाश के अवयस्क होने के समय कंवर सुर्जन सिंह रियासत के प्रबन्ध में शामिल रहे तथा न्यायिक मुकदमों का रियासत के प्रचलित कायदे कानून के अनुसार निर्णय करते रहे और इस प्रकार रियासत का प्रबन्ध चलता रहा। परन्तु अहलकारों को इन कंवर साहिबान का प्रबन्ध में शामिल होना एक आंख न भाता था। इसलिए देवीदत्त मेहता और मोतीराम भण्डारी ने कंवर साहिबान की ज़िला शिमला के सुपरिन्टेंन्डेन्ट साहिब से शिकायत कर दी कि इनका रियासत का प्रबन्ध ठीक नहीं है परन्तु सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब को छानबीन करने पर यह शिकायत आधारहीन मालूम हुई। इसी प्रकार कुछ बेईमान लोगों ने, जिनका उद्देश्य राजा और कंवर साहिबान में फूट पैदा किए बिना पूरा नहीं हो सकता था, एक तरफ तो राजा साहिब को रियासत के प्रबन्धक कंवर सुर्जन सिंह के विरुद्ध झूठी शिकायत करके भड़काने की कोशिश की और दूसरी ओर कंवर साहिब को राजा साहिब के विरुद्ध उकसा दिया।

राजा साहिब बड़े चुस्त और बुद्धिमान थे, इसलिए यह षडयन्त्र कामयाब नहीं हो सकते थे और न ही वह षडयंत्रकारियों के जाल में फंस सकते थे। राजा साहिब ने कंवर साहिब के विरुद्ध लगाई गई शिकायतों की भली–भान्ति छानबीन कर कंवर साहिब को 16 पौष, विक्रमी सम्वत् 1917 को पत्र लिखकर सूचित किया कि "छानबीन करने के बाद उनके विरुद्ध सारी शिकायतें झूठी और निराधार साबित हुई

हैं। उन्होंने यह भी लिखा कि शिकायतकर्ताओं का उद्देश्य हमारे और आपके बीच जैसा कि हमारे पिता जी के साथ हुआ था, फूट डालने का प्रयास था, जिसमें उनके अपने ही लाभ की बात थी। परन्तु छानबीन से वास्तविकता स्पष्ट हो गई है, जिसका स्पष्ट होना बहुत ज़रूरी था, इसलिए आप कुछ विचार न करें"।

कंवर सुर्जन सिंह राजा शमशेर प्रकाश के बालिग होने तक इसी तरह रियासत का प्रबन्ध चलाते रहे और उन्होंने रियासत के सारे मामलों पर नज़र रखी। जब राजा साहिब बालिग हो गए तो रियासत का कामकाज राजा साहिब को सौंप दिया। इस पर राजा साहिब ने उनके नाबालिगी के समय रियासत के कामकाज को अच्छी तरह चलाने पर कंवर साहिब को पत्र लिखकर प्रसन्नता प्रकट की। पत्र का वर्णन निम्नलिखित है :--

**राजा शमशेर प्रकाश की ओर से कंवर सुर्जन सिंह को लिखे गए पत्र की नक़ल नम्बर 9**

मेहरबान चाचा कंवर सुर्जन सिंह साहिब। आप राजी खुशी रहें। मैं यह आपको स्पष्ट करना चाहता हूं कि आपने मेरे गद्दी पर बैठने के दिन से लेकर मेरी नाबालिगी के समय तक जो भी रियासत से सम्बन्धित कामकाज थे, वे बड़ी ज़िम्मेदारी से पूरे किए, जो हमें बहुत पसन्द आए। आपके पीठ पीछे प्रजा के किसी भी आदमी ने आज तक आपकी कोई शिकायत नहीं की। इससे मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि सारी प्रजा प्रसन्न और आपकी धन्यवादी है। इसलिए हम भी यह पत्र आपके कार्य की प्रशंसा में आपको देते हैं। आपको चाहिए कि इस पत्र को सनद के तौर पर अपने पास रखें। 8 भादो, विक्रमी सम्वत् 1919, ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेंट साहिब ने भी अपने 25 फरवरी, 1862 ईसवी के पत्र द्वारा कंवर साहिब के रियासत के कामकाज को बड़ी कार्यकुशलता से और सन् 1857 के गदर के दिनों में अच्छी सेवाएं देने के लिए अपनी प्रसन्नता को जताया है।

**ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट बहादुर के कंवर सुर्जन सिंह के नाम लिखे गए पत्र की नक़ल नम्बर 6**

सिरमौर के हाकिम व हमारे मेहरबान और सच्चे मित्र कंवर सुर्जन सिंह साहिब सलामत रहो। आप से मुलाकात के लिए हम बहुत उत्सुक हैं। आपको यह ज्ञात हो कि सिरमौर क्षेत्र की कोर्ट (दरबार) के आयोजन के समय हम ने पहले इस इलाके के अहलकारों को इंतज़ाम के वास्ते नियुक्त किया था परन्तु सरकारी व रियासत के कार्य सम्पूर्ण न होने के कारण हम ने आप को अहलकारों को सलाह देने की ज़िम्मेदारी सौंपी थी जो आप ने बहुत ही अच्छी तरह से पूर्ण की। सिरमौर की तरफ से कोई भी शिकायत हमारी नज़र से नहीं गुज़री। आप ने राजा साहिब के जवान होने के समय उन को फारसी की शिक्षा और रियासत के कारोबार को बड़े अच्छे ढंग से चलाने के लिए, जैसा कि चाहिए था, वैसे ही प्रेरित किया।

आप ने 1857 ईसवी के बलवे के समय भी भलि–भांति सहायता दी। जब राजा साहिब भले और बुरे की पहचान करने के योग्य हो गए तब आप ने रियासत का कारोबार राजा साहिब के हाथों में दे दिया। हम आप की योग्यता, प्रबन्ध और सतर्कता से अति प्रसन्न हैं और इस बारे आप को सूचित करने के लिए यह पत्र प्रेम की कलम से लिखा है। अपनी मेहरबानी के पत्र आप हमें हमेशा लिखते रहे। हस्ताक्षर सुपरिन्टेन्डेन्ट ज़िला शिमला...... 25 फरवरी 1862 ईसवी शिमला।

अपने पूर्वजों की तरह कंवर सुर्जन सिंह और वीर सिंह अंग्रेज़ी सरकार के वफादार रहे तथा सरकारी कामों को पूरा करने के लिए हमेशा उत्सुक रहे। अंग्रेज़ी सरकार भी इनका मान करती रही और सरकार के अधिकारी भी इन के साथ बड़ी मेहरबानी और प्यार से पेश आते थे। 1857 में मेरठ में गदर होने के समय ज़िला के सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब ने अपने 22 मई 1857 ईसवी को लिखे गए पत्र में इन दोनों कंवर साहिबान को सूचना देकर अपने क्षेत्र में बलवाइयों इत्यादि की

गतिविधियों पर नज़र रखने के आदेश दिये। इस के उपरान्त उन्होंने कंवर साहिबान को अपने 21 सितम्बर 1857 ईसवी को लिखे गए पत्र में देहली पर विजय प्राप्त हो जाने की सूचना दी। कंवर साहिबान सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब के आदेशों पर कार्य करते रहे और अपना एक जमादार पच्चीस व्यक्तियों सहित सहायता देने के लिए शिमला को भेजा। यह सुपरिन्टेन्डेन्ट के 23 जून, 1857 ईसवी को लिखे गए पत्र से ज्ञात होता है।

इस के उपरांत वह स्वयं 15 व्यक्तियों को अपने साथ लेकर शिमला में हाज़िर हुए और सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब के आदेश अनुसार शिमला नगर की सुरक्षा में डटे रहे क्योंकि गोरखा फौज में विद्रोह के आसार दिख रहे थे जिन पर निगरानी रखना अत्यन्त आवश्यक था। पोलिटिकल एजेन्ट साहिब ने कंवर साहिब के इस कार्य के बारे में अपने पत्र में प्रसन्नता व्यक्त की है।

**पत्र की नकल नीचे दी जा रही है:–**

मेहरबान और सच्चे मित्र कंवर सुर्जन सिंह साहिब! सलामत रहो। आप से मुलाकात के लिए हम बहुत उत्सुक हैं। आपको यह ज्ञात हो कि आप बलवे के समय 15 व्यक्तियों सहित शिमला में हाज़िर रहे और जो कार्य आप को सौंपा गया उसको आप ने भलि–भांति पूर्ण किया। इस पर हम अति प्रसन्न हुए। सदा पत्राचार करके हमें खुश रखें। 13 अक्तूबर, 1857 ईसवी, हस्ताक्षर पोलिटिकल एजेन्ट साहिब।

उपरोक्त लिखी गई सेवाओं के अलावा अंग्रेज़ी सेना की सहायता के लिए कंवर साहिब ने कुछ रुपया नकद भी पेश किया जो कि बड़ी मेहरबानी से मंजूर कर लिया गया। इस बारे सुपरिन्टेन्डेन्ट ज़िला शिमला ने अपने 20 जुलाई, 1857 के पत्र में प्रसन्नता व्यक्त की। कंवर साहिबान की सरकारी अधिकारियों में अच्छी पहुंच थी इस लिए ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट व सरकार के दूसरे बड़े अधिकारी उन से बहुत स्नेह के साथ मिलते थे और उन को बड़ी इज्ज़त और मान देते थे। जब वह नाहन पधारते थे तो सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब से मुलाकात

का सौभाग्य प्राप्त होता था और अंग्रेज़ी सरकार दरबार वगैरह के आयोजन के समय उनको आमन्त्रित करती थी जैसा कि पत्रों से ज्ञात होता है।

1857 ईसवी के विद्रोह के समाप्त होने के बाद अंग्रेज़ी सरकार ने कंवर साहिबान को उन की सेवाओं के बदले में एक कीमती वस्त्र और सर्टिफिकेट प्रदान किया। कंवर सुर्जन साहिब बहुत सादे स्वभाव, ज़िंदादिल, नेक तबीयत और दिलेर व्यक्ति थे परन्तु स्वभाव में कुछ गुस्सा ज़्यादा था जो जल्दी ही ठंडा हो जाता था और वह फिर रहम दिल बन जाता था। इन को संगीत विद्या और हाथी घोड़ों का बड़ा शौक था। इन के जीवनकाल में हमेशा ही दो हाथी और दस बारह घोड़े इन के पास रहे। उन के पास एक बिछवा नामक हाथी था जो बहुत सुन्दर था। इस हाथी के लिए उन्होंने अपने भवन के निकट एक पक्का हाथीघर बनवाया हुआ था। कंवर सुर्जन सिंह एक अच्छे सवार थे। एक बार जब राजा फतेह प्रकाश को एक घोड़े ने, जिसे राजा साहिब ने बहुत धन खर्च करके मंगवाया था और जो बहुत चालाक था, गिरा दिया था, कंवर साहिब जो बहुत दिलेर तबीयत रखते थे, उस पर सवार हुए और कहने लगे कि हम इस घोड़े को सुधारेंगे। परन्तु उस समय वह घोड़ा भी अपनी ज़िद्द पर अड़ा हुआ था। जैसे ही कंवर साहिब सवार हुए, घोड़े ने शरारत करनी शुरू कर दी और इधर से कंवर साहिब ने घोड़े को मारना शुरू कर दिया। अन्त में घोड़ा खड़ा हो कर ऐसा उठा कि कंवर सहित ज़मीन पर गिर पड़ा और इस से कंवर साहिब की टांग घोड़े के नीचे आकर टूट गई जिससे कंवर साहिब को कई दिन तक तकलीफ रही और टांग सदा के लिए लंगड़ी हो गई परन्तु घोड़े की सवारी फिर भी वह बड़े शौक और हौंसले से करते रहे।

कंवर साहिब जनकल्याण के कार्यों की पूर्ति की तरफ बहुत ज़्यादा ध्यान देते थे। उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1929 में काला आम, जो कि सिरमौर की दक्षिण पश्चिम सीमा पर नाहन से 11 मील की दूरी

पर अंग्रेज़ी सरकार के इलाके से मिलता हुआ एक स्थान है, में एक धर्मशाला का निर्माण करवाया। इससे पहले यहां पर यात्रियों के लिए कोई सराय नहीं थी। यह धर्मशाला अब भी मौजूद है और यात्रियों के ठहरने की सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं। विक्रमी सम्वत् 1924 में कंवर साहिब ने त्रिलोकपुर में, जो नाहन से 8–10 मील पश्चिम की ओर है, एक पक्का तालाब बनवाया। इस स्थान पर देवी बालासुन्दरी का एक प्राचीन मन्दिर है। असौज और चैत्र मास में यहां देवी का बड़ा मेला लगता है। कंवर साहिब ने यह तालाब पानी की कमी को देखते हुए निर्मित करवाया था। उन्होंने तहसील पांवटा के मौज़ा मिश्रवाला में विक्रमी सम्वत् 1922 में एक कुआं भी बनवाया था। विक्रमी सम्वत् 1923 में नाहन में पक्के तालाब के किनारे एक शिव मन्दिर का निर्माण भी करवाया था। कंवर साहिब ने काला आम की धर्मशाला और उपरोक्त लिखित शिव मन्दिर में गरीब लोगों के लिए सदाव्रत जारी किया था जिसमें एक वक्त का भोजन दिया जाता था।

कंवर वीर सिंह एक अच्छे प्रबन्धक, दूरदर्शी और संजीदा स्वभाव के व्यक्ति थे। वह अपने भाई कंवर सुर्जन सिंह का बड़ा मान करते थे और उनके आदेशों को पूर्ण करते थे और दोनों में प्यार भी बहुत था। इन कंवर साहिब ने नाहन में कच्चे तालाब के निकट विक्रमी सम्वत् 1925 में एक धर्मशाला का निर्माण करवाया था। उन्होंने मौज़ा लोगरियां में एक शिवालय और एक तालाब भी बनवाया था। ये दोनों एक सड़क के किनारे पर बने हुए थे। परन्तु वह सड़क कुछ समय बाद बदल दी गई और यह शिवालय अब जंगल में है उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1930 में रेणुका में, जो उन की जागीर कंसर का एक भाग था, एक धर्मशाला और एक पक्का घाट बनवाया था।

दोनों कंवर साहिबान इकट्ठे रहते थे, इन का कारोबार भी इकट्ठा था। उन्होंने अपने धन को जायदाद खरीदने में लगाया था। वे अंग्रेज़ी सरकार के न्याय को बहुत मानते थे तथा उन्होंने सरकारी इलाके ज़िला अम्बाला के बहुत से गावों में कृषि योग्य भूमि भी खरीदी

थी। इसके अतिरिक्त ज़िला शिमला खास में और डगशाई छावनी में कोठियां खरीदी थीं। इस तरह से उन्होंने अंग्रेज़ी सरकार की प्रजा बनकर ब्रिटिश प्रजा के अधिकार प्राप्त किये थे। क्यारदादून के क्षेत्र में जो उस समय आबाद नहीं था, उन्होंने बहुत से गांव खरीद कर उन्हें आबाद करने पर बहुत सा धन व्यय किया। परन्तु विक्रमी सम्वत् 1930 में बंदोबस्त के समय पट्टे की शर्तों के विरुद्ध भूमि रखने के कारण मिश्रवाला और क्यारदा को छोड़ कर सब गांव उन के हाथ से निकल गये। इस के अतिरिक्त कंवर साहिबान ने अपने क्षेत्र में बैंकिंग का सिलसिला भी जारी कर रखा था जिससे लोगों को आराम और कंवर साहिब को लाभ प्राप्त होता था। कंवर सुर्जन सिंह जायदाद की निगरानी का कार्य स्वयं करते थे। ये दोनों कंवर इकट्ठे रहकर बड़े अच्छे ढंग से अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे। इनमें आपस में कभी कोई झगडा फसाद नहीं हुआ इसलिए सिरमौर में इन दोनों भाइयों का प्यार मुहब्बत और भाईचारा मशहूर है।

कंवर सुर्जन सिंह के तीन विवाह हुए थे, पहला विवाह मियां हथियाल के परिवार में, दूसरा विक्रमी सम्वत् 1910 में ज़िला शिमला की रियासत कुनिहार में और तीसरा विवाह विक्रमी सम्वत् 1918 में रियासत सुकेत में हुआ था। पहले विवाह से दो पुत्रियां थीं, दूसरे विवाह से कोई संतान नहीं। तीसरे विवाह से एक पुत्री और एक पुत्र कंवर रणजोर सिंह जो विक्रमी सम्वत् 1930 में हुआ। लाड़ी साहिबा सुकेती का कंवर रणजोर सिंह के उत्पन्न होने के चौथे दिन स्वर्गवास हो गया। इसलिए कंवर रणजोर सिंह का, कंवर वीर सिंह साहिब की पत्नी लाड़ी साहिबा जसरोटी ने, जो बड़ी दयावान और नेक स्वभाव की स्त्री थी, पालन पोषण किया था। ख्वास से भी एक लड़का उत्पन्न हुआ था, जिसका नाम जीवन सिंह था।

कंवर वीर सिंह साहिब के दो विवाह हुए थे। एक जसरोटा में और दूसरा ज़िला शिमला के बाघल में। पहले विवाह से कोई सन्तान नहीं हुई परन्तु दूसरे विवाह से दो पुत्रियां हुई थीं और ख्वास से भी एक

लड़का उत्पन्न हुआ था जिसका नाम रुगनाथ था। कंवर सुर्जन सिंह साहिब की एक पुत्री का विवाह ज़िला कांगड़ा में नूरपुर के राजा जसवन्त सिंह से विक्रमी सम्वत् 1912 में हुआ था। **(राजा जसवन्त सिंह राजा वीर सिंह नूरपुरिये का पुत्र था। नूरपुर एक प्राचीन रियासत है)** मुस्लिम बादशाहों के समय नूरपुर के राजाओं का बड़ा आदर मान था परन्तु महाराजा रणजीत सिंह ने पंजाब की दूसरी रियासतों जैसे कि ज़िला कांगड़ा, नूरपुर को भी बर्बाद कर दिया था। मगर बाद में पच्चीस हज़ार का गुज़ारा नूरपुर के राजा का मुकर्रर कर दिया था। महाराजा रणजीत सिंह के शासन काल के बाद अंग्रेज़ी सरकार ने इस रियासत के शासक राजा जसवन्त सिंह का सालाना गुज़ारा 10 हज़ार रुपए मुकर्रर किया क्योंकि इस रियासत के वजीर रामसिंह ने, जब राजा जसवन्त सिंह अवयस्क था, अंग्रेज़ी सरकार के विरुद्ध विद्रोह किया था। इस रियासत के शासक पठानियां कहलाते हैं मगर असल में ये राजपूत हैं और पठानकोट में बस जाने के कारण पठानियां कहलाते हैं। दूसरी पुत्री का विवाह मियां शिव सिंह, जो सुकेत के राजा उग्रसेन का बेटा था, के साथ विक्रमी सम्वत् 1916 में हुआ था और तीसरी पुत्री का विवाह राजा बलदेव सिंह, जो रियासत जम्मू कश्मीर के पुंछ क्षेत्र के राजा मोती सिंह का पुत्र था, के साथ सम्वत् 1939 में हुआ था। यह विवाह कंवर साहिबान की मृत्यु के बाद बड़ी धूमधाम के साथ हुआ था। इस पर बहुत अधिक खर्च हुआ था।

यह देयी साहिबा रियासत पुंछ में अपने उत्तम स्वभाव और दानवीरता के करण बहुत लोकप्रिय थी। इनकी मृत्यु मार्गशीर्ष मास विक्रमी सम्वत् 1954 मे हुई। मृतक की इच्छा अनुसार राजा बलदेव सिंह साहिब ने उन की स्मषति में 1903 ईसवी में पुंछ में एक स्त्री अस्पताल का निर्माण करवाया।

कंवर वीर सिंह की बड़ी देयी साहिबा का विवाह चम्बा के राजा श्याम सिंह से विक्रमी सम्वत् 1940 में कंवर साहिबान की मृत्यु के बाद हुआ। एक देयी साहिबा अविवाहित ही स्वर्गवास कर गई।

कंवर साहिबान का राजा शमशेर प्रकाश साहिब बहुत आदर मान करते थे, विशेष कर कंवर सुर्जन सिंह साहिब को तो वह बड़ी इज्ज़त की नज़र से देखते थे। सिरमौर की प्रजा भी कंवर साहिबान की बड़ी इज्ज़त करती थी। कंवर सुर्जन सिंह साहिब 51 वर्ष की आयु में 27 मंगसर, विक्रमी सम्वत् 1937 को स्वर्ग सिधारे। वह अपने पीछे एक नाबालिग पुत्र रणजोर सिंह और एक देयी साहिबा को छोड़ गए। कंवर वीर सिंह साहिब को कंवर सुर्जन सिंह की मृत्यु का बहुत दुःख हुआ और वह भी इस दुःख में संतप्त होकर नौ महीने बाद भादो मास, विक्रमी सम्वत् 1938 में पचास वर्ष की आयु में स्वर्ग सिधारे। वह अपने पीछे दो देयी साहिबा छोड़ गए। उन के कारोबार की देखरेख करने वाला कोई नहीं रहा, जिस कारण उनकी जायदाद और कारोबार को बहुत हानि पहुंची।

## चौथा अध्याय (भाग एक)

## राजा शमशेर प्रकाश साहिब का वर्णन

राजा शमशेर प्रकाश साहिब विक्रमी संवत् 1902 में उत्पन्न हुए और अपने पिता राजा रघुवीर प्रकाश साहिब की मृत्यु के बाद 10 वर्ष की आयु में विक्रमी संवत् 1913 में राज सिंहासन पर बैठे। (राजा शमशेर प्रकाश की जीवनी अंग्रेज़ी भाषा में लिखी हुई है। यह बाल गोबिन्द कायस्थ नामक एक व्यक्ति ने राजा साहिब की मृत्यु के पश्चात् लिखी थी। वह राजा शमशेर प्रकाश के शासनकाल में नाहन फाउंडरी में कार्यरत था परन्तु अपनी बेईमानी और भ्रष्टाचार के कारण दण्डित हुआ और कारखाने से निकाला गया। उसने नाहन से जाकर यह पुस्तक लिखी और सन् 1901 ईसवी में इसको प्रकाशित करवाया। इससे पहले कि हम इस पुस्तक का वर्णन करें, यह बताना ज़रूरी

समझते हैं कि ऐसे नामी राजा की जीवनी लिखने की आज्ञा ऐसे व्यक्ति को देना जो केवल कुछ वर्ष तक क्लर्क रहा हो और फिर दण्डित हो कर सेवा से बर्खास्त किया गया हो, कदापि उचित नहीं था। क्योंकि ऐसे व्यक्ति द्वारा घटनाओं का सही–सही लिखा जाना असम्भव है। यह किताब इस कारण झूठ और बढ़ा–चढ़ा कर लिखी गई बातों से भरी पड़ी है। इस किताब की भूमिका से प्रतीत होता है कि लिखने वाले का दिल शत्रुता और घृणा से भरा पड़ा है। उसने पुस्तक के पहले पृष्ठ में लिखा है कि "मैं ऐसी घटनाओं को लिखने से नहीं रुक सकता चाहे वह किसी को बुरी ही क्यों न लगें, और फिर लिखा है कि "वह जीवनी जिसमें प्रशंसा ही प्रशंसा होती है बहुत खराब होती है। परन्तु हमें यह समझ नहीं आता कि अगर किसी व्यक्ति के कार्य अच्छे हों तो उसकी बुराई करना किस नियम पर आधारित है। इस किताब में कुछ घटनाओं और कथाओं को छोड़कर, जिन्हें राजा साहिब से सम्बन्धित किया गया है, ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन बहुत ही कम है। जिस कारण इस किताब से राजा साहिब के जीवन की घटनाएं सही और तरतीबवार मालूम नहीं होतीं, बल्कि ऐसी बेबुनियाद घटनाएं लिखी गई हैं जिनमें कुछ भी सच्चाई नहीं है। इस किताब को नावल के ढंग पर लिखकर इसमें सच–झूठ को भर दिया गया है और लेखक ने अपने दिल की भड़ास निकाली है। हम कुछ ऐसी घटनाएं नीचे लिख रहे हैं जिनसे लेखक के सफेद झूठ का पता चलता है। (1) पेज 12 में महन्त जगन्नाथ को राजगुरु लिखा है और फिर लिखा है कि 11वीं शताब्दी से लेकर 45 राजाओं के शासनकाल में केवल सात महन्त हुए हैं। लेकिन मन्दिर जगन्नाथ राजा कर्म प्रकाश प्रथम के समय में स्थापित हुआ जिसके शासनकाल में नाहन आबाद हुआ है। राजा कर्म प्रकाश प्रथम से राजा शमशेर प्रकाश तक 15 राजा हुए। अब ज्ञात नहीं कि 45 राजा कौन–कौन से हुए। दूसरी बात यह है कि सिरमौर के राजा महन्त के चेले नहीं होते हैं क्योंकि राजा शैव हैं और महन्त जगन्नाथ बैरागी अर्थात् वैष्णव हैं। न राजा शमशेर प्रकाश महन्त जगन्नाथ के

चेले थे जैसा कि बाल गोविन्द ने लिखा है। (2) पेज 25 में पण्डित किश्न लाल को प्राईम मिनिस्टर अर्थात् प्रधान मंत्री और फिर पेज 87 में लिखा है कि राजा शमशेर प्रकाश ने राजस्व, फ़ौज, पुलिस इत्यादि भागों में जो भी विकास किया वह मास्टर पण्डित किश्नलाल के कारण हुआ है। ये दोनों बातें असत्य हैं क्योंकि न तो मास्टर किश्नलाल कभी प्राईम मिनिस्टर हुए और न उन्होंने कभी प्रशासनिक मामलों में हस्तक्षेप किया। वह तो प्राईवेट सेक्रेटरी का काम करते थे। (3) पेज 73 में लिखा है कि राजा शमशेर प्रकाश को उनकी मृतक रानी ने मनुष्य शरीर धारण करके राजा साहिब को दूसरा विवाह करने के आदेश दिए, जो कि बिल्कुल निराधार और झूठ हैं। (4) पेज 79 में लिखा है कि राजा शमशेर प्रकाश अपने चाचा से नाराज़ हो गए थे क्योंकि उन्होंने राजा साहिब के बचपन के दिनों में रियासत का रुपया अपने अधीन कर लिया था, यह भी बिल्कुल असत्य है। न तो राजकोष कंवर साहिब से सम्बन्धित था और न कोई कोष से इस प्रकार रुपया ले जा सकता था। राजा साहिब ने बालिग होने पर और रियासत का प्रबन्ध सम्भालने पर कंवर साहिब को एक पत्र लिखकर उनके कार्य की प्रशंसा की थी। इसी प्रकार ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने एक पत्र लिखकर कंवर साहिब की कारगुज़ारी की सराहना की थी, जैसा कि कंवर साहिबान की आगे लिखी गई घटनाओं से ज्ञात होगा। (5) पेज 81 में लिखा है कि जिस समय अजबू और प्रीतम इत्यादि ज़मींदारों ने पहाड़ी क्षेत्रों में विद्रोह किया तो राजा शमशेर प्रकाश महल छोड़कर किसी सुरक्षित स्थान पर चले गए थे और मुन्शी नन्दलाल जो कि जाति का बणिया था और बन्दोबस्त का इंचार्ज था, फ़ौज लेकर विद्रोहियों से मुकाबले के लिए गया था। यह सम्पूर्ण असत्य है। (6) पेज 80 और 100 में लिखा है कि राजा शमशेर प्रकाश ने कंवर सुर्जन सिंह और वीर सिंह की मृत्यु के बाद, जब वह कंवर रणजोर सिंह के संरक्षक थे, जरूरत के समय स्वयं ही कंवर साहिबान का रुपया, जो उनको दिया हुआ था और जो इन कंवरों ने रियासत का भी लूटा हुआ था, उनके घर से निकाल कर

अपने यहां रखवाया और इससे अपने बिल इत्यादि निपटाए। यह भी घटित घटनाओं के विपरीत है। न तो कंवर साहिबान ने कभी रियासत का रुपया लूटा और न राजा साहिब ने बलपूर्वक कंवर रणजोर सिंह का रुपया लिया। वास्तव में घटना इस प्रकार है कि कंवर सुर्जन सिंह और वीर सिंह की मृत्यु के बाद राजा शमशेर प्रकाश ने कंवर वीर सिंह की विधवाओं से, जिनके अधीन कंवर साहिब का रुपया था, लेकर रियासत के कोष में बतौर जमा रख लिया था। (7) पेज 145 में लिखा है कि बृजराज हाथी पर राजा शमशेर प्रकाश को छोड़कर और कोई दूसरा नहीं चढ़ सकता था। क्योंकि राजा साहिब अद्‌भुत व्यक्ति थे। यह बात भी लेखक ने बढ़ा–चढ़ा कर लिखी है)।

यह राजा अच्छी शक्ल–सूरत तथा अच्छी आदतों वाले, बड़े ही होनहार और हिम्मत वाले प्रतीत होते हैं। वह ऐसी खेलों में रुचि लेते थे, जिनमें हिम्मत और हौसले की आवश्यकता होती है। गेंद–बल्ले को छोड़कर वह अपने बचपन के दिनों में बुलबुल और मुर्गे आदि लड़ाने का शौक भी रखते थे। इसके लिए उन्होंने भांति–भांति के पक्षी पाल रखे थे। एक नेवला भी पाला हुआ था, जिसको सांपों से लड़ाते थे और इनका तमाशा देखकर बहुत प्रसन्न होते थे। जैसे–जैसे इनकी आयु बढ़ती गई इनका बड़े जानवरों को लड़ाने का शौक बढ़ता गया। उन्होंने मेंढ़ों और बकरों को लड़ाना शुरू किया और फिर बाद में मस्त हाथियों को लड़ाने का शौक पैदा हुआ। उन्होंने कई अच्छे–अच्छे हाथी पाले हुए थे। उन्हीं दिनों उन्होंने एक शेर का बच्चा भी पाला, जिसको उन्होंने कुत्ते की भांति सिधा लिया था। राजा साहिब बिना किसी भय और खतरे के इससे खेला करते थे। लोग देखकर हैरान होते थे। हाथी का नाम राजा साहिब ने मोहन रखा था। उन्हें घुड़सवारी और घोड़े पर चढ़कर मर्दाना कर्तब करने का भी शौक था, जिसका उस समय राजपूत जाति में बड़ा रिवाज़ था। वह घोड़े पर चढ़कर अपने साथियों के साथ घुड़दौड़ में शामिल हुआ करते थे और घोड़े को भगाते हुए तोड़ेदार बन्दूक से निशाना लगाते थे। तोड़ेदार बन्दूक बहुत लम्बी

और वज़नी होती थी। वह इसी प्रकार के विभिन्न कर्तब किया करते थे।

शिकार खेलने का भी बड़ा शौक था और सप्ताह, डेढ़ सप्ताह बाद वह शिकार के लिए जाते थे। शीतकाल में तो अवश्य ही एक मास के लिए शिकार खेला जाता था और वे भिन्न–भिन्न प्रकार के जानवरों का शिकार करते थे, विशेषकर शेर, बघेरा, रीछ, सुअर के शिकार का उन्हें बहुत शौक था। वह बड़ी बहादुरी और हिम्मत से इनका पीछा और शिकार करते थे। एक बार जब राजा साहिब कंवर सुर्जन सिंह और वीर सिंह व दूसरे साथियों के साथ देहरादून के खनाव जंगल में गए हुए थे तो अचानक ही हांक के समय जंगल में एक हथिनी अपने दूध पीते बच्चे के साथ राजा साहिब के सामने आ निकली। राजा साहिब ने बच्चे को पकड़ने का इरादा किया और इस लक्ष्य के लिए हथिनी की तरफ बन्दूक का फायर किया, जिससे वह ज़ख्मी होकर भागी और बच्चा पीछे रह गया, राजा साहिब ने बच्चा पकड़ लिया। जब हाथिनी ने अपने साथ बच्चे को नहीं देखा तो आक्रमण करने वापिस आई परन्तु इस पर बन्दूकों से फायर किए गए जिससे वह बच्चे को छोड़कर वहां से भाग गई।

राजा साहिब बच्चे को खुशी–खुशी कैम्प में लाए और सुरक्षित रखा और धीरे–धीरे दूसरे हाथियों की तरह प्रशिक्षित किया। राजा ने इस बच्चे का नाम देवी प्रसाद रखा अर्थात् देवी का दिया हुआ। इसके पश्चात् राजा साहिब को जंगली हाथियों को पकड़ने का शौक हुआ। वह उस हाथी को पकड़ने की योजना बनाने लगे, जो कि क्यारदादून में आता जाता था। उन दिनों क्यारदादून आबाद नहीं था इसलिए जंगली हाथी वहां रहा करते थे और देहरादून के जंगलों से भी जमुना को पार करके क्यारदादून के जंगलों में आ जाया करते थे। यह हाथी दूसरे हाथियों के मुकाबले में बड़ा सुन्दर और साहसी था। आम तौर पर वह गांव की बस्तियों के नज़दीक खेतों को नष्ट कर जाता था। इसको पकड़ने के लिए राजा साहिब ने गहरे गड्ढे खुदवा दिए थे और

उनको पतली–पतली टहनियों और मिट्टी से ढांप दिया था। वे हाथी को घेरकर इन गड्ढों की तरफ लाते थे। हाथियों को हांकना यद्यपि बड़ा साहसपूर्ण कार्य है, मगर राजा साहिब स्वयं अपने साथियों सहित हांक में शामिल हुआ करते थे। कई वर्ष तक वह यह कार्य उत्सुकता से करते रहे।

वह हाथी कई बार इन गड्ढों में गिरा, परन्तु वह बड़ा शक्तिशाली था इसलिए वह इन गड्ढ़ों के किनारों को अपने तेज दांतों से गिराकर बाहर निकल जाता था। इस प्रकार वह कुछ ही दिनों में ऐसा चालाक और होशियार हो गया कि उस धरती को जहां उसको शक होता था, सूंड से टटोल लेता था। जहां उसको ज़मीन पोली मालूम होती वहां कदापि न जाता, चाहे वहां पर खाने पीने की चीज़ें गुड़, रोटी इत्यादि भी क्यों न होती। यह हाथी धीरे–धीरे ऐसा साहसी हो गया कि कभी–कभी नाहन के निकट, जहां रियासत के हाथी रहा करते थे, एक हथिनी के पास रात के समय आ जाता था। जब गड्ढों की योजना इस हाथी को पकड़ने के लिए सफल न हुई तो राजा साहिब ने लोहे के बड़े–बड़े कांटे बनाकर जंगलों में जहां पर कि यह हाथी आता–जाता था, बिछवा दिए, ताकि वह हाथी के पैरों में चुभकर इसको चलने–फिरने के लिए असमर्थ कर दें और वह पकड़ा जाए।

यह योजना सफल साबित हुई और वह कांटे हाथी के पैरों में घुस गए, जिससे वह चलने फिरने से लाचार हो गया और एक पहाड़ के नाले में जा गिरा तथा किसी को पता न चला कि वह कहां है। अंत में, कुछ दिनों बाद वह बेचारा इसी हालत में दम तोड़ गया। राजा साहिब की उसको जीवित पकड़ने की इच्छा विफल रही और वह बड़े मायूस हुए। ढूंढने पर कुछ दिनों के बाद वह एक खाले में मृतक पाया गया। इस हाथी के दांत बहुत लम्बे और मोटे थे, जिन पर राजा साहिब ने सुनहरी काम करवा कर कलकत्ता के संग्रहालय में भेजा था। एक बार राजा साहिब ऋषिकेश के जंगल में हाथी पकड़ने के लिए गए थे, उस समय दक्षिण से थारू लोग, जो कि हाथियों को पकड़ने में बहुत

कुशल होते हैं, बुलाए गए परन्तु वहां पर भी उनको सफलता नहीं मिली।

यद्यपि राजा साहिब को शिकार इत्यादि में बड़ी रुचि थी परन्तु वह अपनी शिक्षा से भी लापरवाह नहीं रहते थे। राजा साहिब की शिक्षा के लिए एक फारसी पढ़े–लिखे अध्यापक मियां हैदर अली को नियुक्त किया गया, जिसने राजा साहिब को उर्दू, फारसी की भली–भांति शिक्षा दी। राजा साहिब, जो स्वयं भी अच्छी बुद्धि के मालिक थे, ने जल्दी ही उर्दू, फारसी की शिक्षा ग्रहण कर ली और अंग्रेज़ी भाषा सीखने के लिए अपनी रुचि प्रकट की, जिससे उनकी विचार शक्ति का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। क्योंकि आजकल अंग्रेज़ी भाषा में हर प्रकार की कला और विज्ञान की पुस्तकें मिल सकती हैं, जिनसे भिन्न–भिन्न प्रकार की सूचना प्राप्त होती है। जब राजा साहिब की ऐसी रुचि के बारे मालूम हुआ तो पण्डित किशनलाल, जो ज़िला अम्बाला के मुस्तफाआबाद कस्बे के रहने वाले थे, अंग्रेज़ी भाषा के अच्छे ज्ञाता थे और जो किसी समारोह में भाग लेने नाहन आए हुए थे, को राजा साहिब की अंग्रेज़ी शिक्षा के लिए नियुक्त किया गया। उनका चुनाव बहुत ही लाभदायक साबित हुआ क्योंकि पण्डित किशनलाल जितने कुशल अंग्रेज़ी भाषा में थे उतने ही कुशल वह अपने विचारों में भी थे। पण्डित जी ने पहले राजा साहिब को अंग्रेज़ी भाषा से भली–भांति अवगत करवाया, फिर उनको इतिहास और भूगोल इत्यादि की शिक्षा भी दी जिससे उनको दुनिया के दूसरे भागों के बारे में भी जानकारी प्राप्त हुई।

## राजा शमशेर प्रकाश का बालिग अवस्था में पहुंचना और खुद मुख़्तार होना (भाग दो)

जब राजा साहिब खुद मुख़्तार हुए तो उन्होंने पण्डित किश्नलाल को अपना प्राईवेट सेक्रेट्री नियुक्त किया क्योंकि राजा साहिब उनकी शिक्षा से बहुत लाभान्वित हुए थे। पण्डित किश्नलाल राजा साहिब को बाद में भी आवश्यकता के समय परामर्श देते रहते थे। वह राजा साहिब और रियासत के दिल से शुभचिन्तक थे, राजा साहिब को इन पर बड़ा विश्वास था। इस रियासत के निवासी भी इनके नेक स्वभाव और चरित्र के प्रशंसक थे। प्रत्येक व्यक्ति उनको बड़ा आदर देता था। अंग्रेज़ी अधिकारियों के साथ रियासत के कारोबार के बारे में बातचीत करने के लिए वही भेजे जाते थे। अंग्रेज़ भी पण्डित जी के साधारण पहरावे और उनकी कुशल और साफ सुथरी भाषा से बहुत खुश होते थे और उन्हें इज़्ज़त देते थे। अंग्रेज़ी सरकार ने उन्हें राय बहादुर की उपाधि दी हुई थी।

यद्यपि राजा शमशेर प्रकाश फारसी और अंग्रेज़ी के कुछ बड़े विद्वान् न थे परन्तु इसमें शक नहीं कि उन्होंने शिक्षा की वे सम्पूर्ण बारीकियां प्राप्त कर ली थीं, जिनका प्राप्त करना ज़रूरी होता हैं और जिनसे मनुष्य के आने वाले जीवन पर प्रभाव पड़ता है, अर्थात् उन्होंने वह सम्पूर्ण अच्छी आदतें, बातचीत के तौर–तरीके और अपने कर्तव्य के बारे में वह शिक्षा ग्रहण कर ली थी, जो एक बड़े आदमी और शासक को सीखनी ज़रूरी होती है। उन्होंने छोटी आयु के होते हुए भी 1857 ईसवी, तदनुसार विक्रमी संवत् 1914 को हिन्दुस्तान में गदर के मौके पर इस रियासत की तरफ से अंग्रेज़ी सरकार को सेवाएं और सहायता देने का समर्थन किया था। रियासत की ओर से कुछ सेना ज़िला

शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब के पास भेजी गई थी जिसके बदले में अंग्रेजी सरकार ने गदर के समाप्त होने के पश्चात् उन्हें एक कीमती वस्त्र से सम्मानित किया और उन्हें सात तोपों की सलामी प्रदान की।

राजा शमशेर प्रकाश का विवाह उस समय के रिवाज़ के अनुसार छोटी आयु में जबकि वह 12–13 वर्ष के थे, ज़िला शिमला की क्योंथल रियासत के राजा महिन्द्र सेन की दोनों पुत्रियों से संवत् 1915 में हुआ। बहुत बड़ी बारात धूम–धाम से जुनगा गई थी। जुनगा के राजा साहिब ने भी बारात की बड़ी खातिरदारी की। विवाह के बाद बारात नाहन वापिस आई और वहां पर भी बड़ी खुशियां मनाई गईं तथा महलों में भी बड़ी रौनक रही। छोटी रानी साहिबा, जो जन्म से ही कुछ कमज़ोर थी, कुछ वर्ष बाद ही इस दुनिया को छोड़ गई। बड़ी रानी साहिबा बहुत समझदार और बुद्धिमान थी। उनका स्वभाव भी बहुत अच्छा था और बड़ी अतिथि सत्कार करने वाली थी। उन्होंने राजा साहिब को अपने स्वभाव से बड़ा प्रभावित किया और वह उसे बहुत चाहते थे।

रानी साहिबा प्रत्येक के दुःख–सुख में भाग लेती थी, जिस कारण वह सबकी प्रिय बन गई थी। हर छोटे–बड़े व्यक्ति की जुबान पर उनकी प्रशंसा थी। रियासत के काम–काज में भी वह राजा साहिब को ज़रूरत के समय परामर्श देती थी। राजा साहिब की अनुपस्थिति में रियासत के हररोज़ के साधारण कारोबार को भी वह पूरा किया करती थी। इस रानी से पहले एक देई साहिबा और फिर एक पुत्र जो उत्तराधिकारी था, उत्पन्न हुआ। ये दोनों कुछ समय जीवित रहकर एक–एक कर बचपन में ही स्वर्ग सिधार गए और अपने माता–पिता तथा सगे–सम्बन्धियों को जुदाई का जख़्म दे गए। इसके पष्चात् राजा साहिब ने तीर्थ यात्रा को जाने की योजना बनाई, जिसका हिन्दू धर्म में बड़ा महत्त्व है।

कंवर साहिबान ने भी इस विचार से कि राजा साहिब को विभिन्न स्थानों के भ्रमण से लाभ पहुंचेगा, इस योजना पर सहमति

जताई और अंग्रेजी सरकार से आज्ञा प्राप्त की। राजा साहिब दोनों कंवरों सुर्जन सिंह और वीरसिंह के साथ विक्रमी संवत् 1916 में तीर्थ यात्रा को रवाना हुए। रियासत के कारोबार का प्रबंध इस दौरान अधिकारी करते रहे। राजा साहिब अपने साथियों सहित पड़ाव–पड़ाव चलते, मथुरा और प्रयाग (इलाहाबाद) होते हुये गया जी (पटना) पहुंचे। वहां पर शास्त्रों के अनुसार अपने पूर्वजों के श्राद्ध इत्यादि की रस्में पूरी करके कलकत्ता होते हुए जगन्नाथ जी पहुंचे और वहां से दर्शन करने के पश्चात् वापिस हुए। वापिसी के समय राजा साहिब ने मथुरा में एक हाथी खरीदा। यद्यपि यह हाथी उस समय डील–डौल में कुछ बड़ा न था, परन्तु बाद में वह खूब बढ़ा। वह सुन्दर था और राजा साहिब ने, जो कि हाथियों के बहुत शौकीन थे, इसको होनहार देखकर पसन्द कर लिया।

इस हाथी का नाम बृजराज रखा। जिसका अर्थ है मथुरा के हाथियों में सबसे बड़ा हाथी। राजा साहिब हाथी को लेकर अपने साथियों सहित सकुशल नाहन आ गए। उनकी वापसी पर नाहन में खुशियां मनाई गईं क्योंकि उस समय वह यात्रा बड़ी दुर्गम और खतरे से भरी समझी जाती थी। रेल इत्यादि उस समय हिन्दुस्तान के बहुत कम भागों में चलती थी और रास्ते में डाकू–लुटेरों का भय रहता था। यह यात्रा यद्यपि बहुत लम्बी और कठिन थी, परन्तु इसमें शक नहीं कि राजा साहिब को विभिन्न स्थानों के भ्रमण से बहुत लाभ हुआ और उनके ज्ञान में वृद्धि हुई।

बष्जराज हाथी से राजा साहिब को बहुत मुहब्बत थी और वे उसको बड़े प्यार से रखते थे। इसके वास्ते महल के बाहर बड़े दरवाजे के निकट उन्होंने एक पक्का हाथीघर बनवाया था, जिसमें कि वह बांधा जाता था। राजा साहिब इसको दिन में एक बार अवश्य देख लिया करते थे। हाथी भी राजा साहिब से प्यार करता था और उनके आदेश मानता था। विशेषकर मस्ती की हालत में जब हाथी अपने महावत तक की भी परवाह नहीं करते, वह राजा साहिब का आदेश

मानता था। इस हाथी का रंग भूरा और कद 10 फुट पांच इंच था। इसकी कदकाठी बड़ी मुनासिब और सुन्दर थी। वह बहुत साहसी था, जंगली हाथी से मुकाबला करने में बड़ी हिम्मत दिखलाता था।

तीर्थ यात्रा से वापसी के बाद राजा शमशेर प्रकाश की बहन और कंवर सूरत सिंह की बहन का विवाह कांगड़ा के राजा प्रताप चंद से तय हुआ। विक्रमी संवत् 1917 में दोनों की शादी राजा प्रताप चंद से नाहन में सम्पन्न हुई। **(राजा प्रताप चंद मियां लुद्र चंद का पुत्र था, जो राजा फतेह चंद का पुत्र था। राजा फतेह चंद कांगड़ा के प्रसिद्ध राजा संसार चंद का छोटा भाई था। कांगड़ा की रियासत पहाड़ की पुरानी रियासतों में से एक बड़ी रियासत थी। प्राचीनकाल में कांगड़ा, सिरमौर, बुशहर और गढ़वाल चार बड़ी रियासतें मानी जाती थीं। इन चारों की सीमाएं आपस में मिलती थीं। पहले कांगड़ा की रियासत को गोरखों ने सिरमौर और गढ़वाल की रियासतों की तरह आक्रमण करके बर्बाद किया था, जिस पर महाराजा रणजीत सिंह ने राजा संसार चंद की सहायता की थी और गोरखों को रियासत से निकाला था। परन्तु बाद में उसने स्वयं रियासत पर कब्जा कर लिया। कुछ समय बाद राजा संसार चंद की मृत्यु के पश्चात् रणजीत सिंह ने कुछ क्षेत्र रखकर बाकी रियासत राजा संसार चंद के बेटे अनिरुद्ध चंद को वापिस कर दी, जो अनिरुद्ध चंद की मृत्यु पर उसके पुत्र रणवीर चंद को मिली। रणवीर चंद के निःसंतान मरने के बाद यह रियासत उसके भाई प्रमोद चंद को मिली परन्तु उसने पंजाब के युद्ध के समय सिक्खों से हाथ मिलाया और अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध हो गया जिस कारण उसकी रियासत ज़ब्त की गई और उसे बंदी बनाकर कुमाऊं के किले में कैद किया गया, जहां उसकी मृत्यु हो गई। रुद्रचंद की जागीर, जो कि 35000/– रुपये की थी, अंग्रेजी सरकार ने उसकी वफादारी के कारण उसी के**

**पास रहने दी, जो अब तक राजा जय चंद, जो राजा प्रताप चंद का पुत्र है, के स्वामित्व में है)।**

छोटी देई साहिबा, जो कंवर सूरत सिंह की बहन थी, से एक पुत्र राजा जयचन्द उत्पन्न हुए जो ज़िला कांगड़ा के बड़े जागीरदार हैं। यह नम्बर 38 डोगरा रेजिमेंट के ऑनरेरी कर्नल हैं। राजा प्रताप चंद की मृत्यु के बाद देई साहिबा, जो कि नाहन के शमशेर प्रकाश की बहन थीं, नाहन वापिस चली आईं और जीवन भर यहीं रहीं।

कंवर सुर्जन सिंह साहिब ने यात्रा से वापसी पर और अपनी पुत्रियों की शादी से निपट कर राजा साहिब को, जो अब बालिग होने वाले थे, रियासत के काम–काज की तरफ आकर्षित कर अपने साथ कचहरी में बिठा कर न्यायकारियों की जानकारी उपलब्ध करवाई। यह कार्य कुछ समय तक जारी रहा और राजा साहिब ने रियासत में प्रचलित शासन प्रणाली की अच्छी जानकारी प्राप्त कर ली। इस पर फ़ौजदारी मुकद्दमों के सुनने के लिए एक अलग कचहरी स्थापित की गई और वह फ़ौजदारी के मुकद्दमों की सुनवाई करने लगे। दीवानी मुकद्दमे कंवर सुर्जन सिंह साहिब की कचहरी में सुने जाते और उन पर फैसला किया जाता। यह सिलसिला विक्रमी संवत् 1918 तक जारी रहा। विक्रमी संवत् 1919 में जब राजा साहिब बालिग हो गए तो उनको सम्पूर्ण शक्तियां प्राप्त हो गईं। कंवर साहिब सारा कामकाज इनके सुपुर्द करके स्वयं जिम्मेदारी से मुक्त हो गए। राजा साहिब ने एक पत्र द्वारा कंवर सुर्जन सिंह की कार्य कुशलता की प्रशंसा की। ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिब ने भी एक पत्र में अपनी प्रसन्नता और संतुष्टि प्रकट की।

राजा साहिब ने प्रशासन का कार्य सम्भालते ही रियासत के प्रशासन में सुधार करना आरम्भ कर दिया क्योंकि हिन्दुस्तान की दूसरी रियासतों की तरह यहां पर भी किसी एक कायदे कानून की पाबन्दी नहीं होती थी और न न्याय का कोई मापदण्ड तय था। शासक के शब्द ही कायदा कानून थे। जिसके कारण रियासत के प्रशासन में

बेकायदगी और जनता में असंतुष्टि रहती थी। राजा साहिब जैसा कुशल और बुद्धिमान व्यक्ति ऐसी बेकायदगी को जारी रखना कब तक सह सकता था। इसलिए तुरन्त ही वे इसमें सुधार की तरफ ध्यान देने लगे। उन्होंने अंग्रेज़ी सरकार के कायदा कानून को अपनाना ही बेहतर समझा। पहले उन्होंने अंग्रेजी सरकार के दीवानी और फ़ौजदारी कानून रियासत में लागू किए तथा इनके अनुसार कार्य करना आरम्भ किया। जुडीशियल मुकद्दमे भी वह स्वयं सुनने लगे और उपरोक्त कानून के अनुसार निर्णय करने लगे।

राजा साहिब ने अंग्रेजी सरकार के कानूनों के अनुसार दीवानी और फ़ौजदारी मुकद्दमों को स्टाम्प पत्र पर लिखकर दाखिल करने का आदेश दिया। शुरू में कोर्ट फीस के छपे हुए कागज़ उपलब्ध न थे, इसलिए मोहर ही से काम लिया गया। बाद में इंगलैंड से कोर्ट फीस के पत्र छपवाकर मंगवाये गये और इन पर कार्यवाही होने लगी। इसके पष्चात् रियासत को 12 वज़ीरियों की जगह पर 4 तहसीलों में बांटा गया। वज़ीरों के स्थान पर तहसीलदार नियुक्त किए गए और गौलदारों के स्थान पर प्रत्येक तहसील में एक–एक थानेदार नियुक्त किया गया। कचहरियों में सिरमौरी भाषा के स्थान पर उर्दू को प्रचलित किया। अहलकार और उर्दू पढ़े–लिखे अधिकारियों की नियुक्ति होने लगी।

उस समय रियासत में कुछ ही लोग उर्दू पढ़े–लिखे थे इसलिए शुरू में राजा साहिब ने अपनी कचहरी में सढौरा के रहने वाले मुंशी रहमत अली को, जो कि फारसी पढ़े लिखे एक कुशल मुंशी थे और जो राजा साहिब की नाबालिगी के समय कंवर सुर्जन सिंह के पास पेशकार रह चुके थे, अपना सृश्तादार (इंस्पेक्टर) नियुक्त किया। मुंशी कन्हैया लाल कायस्थ को, जो रियासत के पुराने अहलकारों में से था, अहल–मद–जुडीशियल और पण्डित नत्थू लाल को कार्यालय का मुहाफिज़ (सुपरिन्टेन्डेन्ट) नियुक्त किया।

राजा साहिब ने नाहन के निवासियों को उर्दू फारसी

पढ़ने–लिखने की तरफ प्रेरित किया और कुछ समय बाद जसावल विष्ण सिंह, जीत सिंह, शिव सिंह भण्डारी, रामभज व शीतल प्रशाद ने उर्दू फारसी की जानकारी प्राप्त कर ली और वे नौकरियों के प्रत्याशी हुए। राजा साहिब ने जसावल विष्ण सिंह को अपना मुसाहिब (साथी) और रामभज भण्डारी व शिव सिंह को मोहर्रर जुडीशियल नियुक्त किया। शीतल प्रशाद को भण्डार का प्रबन्ध सौंपा, कन्हैया लाल और जीत सिंह को तहसीलदार नियुक्त किया। इसके पश्चात् राजा साहिब ने फारसी और उर्दू की शिक्षा के लिए नाहन में मदरसा स्थापित किया, जिसमें फारसी पढ़े–लिखे अध्यापक नियुक्त किए और उर्दू फारसी की शिक्षा आरम्भ हुई। जैसे–जैसे फारसी पढ़े–लिखे लोगों की संख्या बढ़ती गई वैसे–वैसे हिन्दी पढ़े–लिखे लोगों के स्थान पर फारसी पढ़े–लिखे लोगों को नियुक्तियां मिलती गईं। विक्रमी संवत् 1920 में अकाउंट ऑफिस में भी हिन्दी के स्थान पर उर्दू में कार्य होना शुरू हुआ और उर्दू पढ़े–लिखे लेखाकार नियुक्त किए गए। मीर तालिब हुसैन को हैड अकाउंटैंट नियुक्त किया गया और उर्दू में ही सारा हिसाब–किताब होने लगा।

इसके पश्चात् राजा साहिब ने यात्रियों की सुविधा के लिए काला आम से नाहन तक गाड़ी की सड़क बनवाने का निर्णय लिया। इससे पहले नाहन में गाड़ी नहीं आ सकती थी जिस कारण शहर के निवासियों को बड़ी कठिनाई होती थी। इसी वर्ष (विक्रमी 1920) में नाहन के पूर्वी भाग में एक अनाज मण्डी की नींव डाली, जिसका नाम उन्होंने अपने नाम पर शमशेर गंज रखा, जो कि नया बाजार कहलाता है। राजा सहिब का उदेश्य इस बाजार का निर्माण करने में नाहन शहर को रौनकदार तथा घनी आबादी वाला बनाना था। राजा साहिब में एक अद्भुत बात यह थी कि वह किसी एक विशेष कार्य में ही रुचि नहीं लेते थे, बल्कि हर तरफ उनका ध्यान था और प्रत्येक बात में उनका शौक था। वह रियासत के चौतरफा विकास में रुचि रखते थे। इसलिए सदैव किसी न किसी मामले की सोच में लीन रहते थे। जिस

नई चीज़ को देखते या सुनते या जो इनको लाभदायक प्रतीत होती, उसे वह अवश्य करते और जब तक वह कार्य पूरा न हो जाए तब तक वह चैन से नहीं बैठते थे।

एक समय की बात है कि जब वह विक्रमी संवत् 1918 में गंगा स्नान के लिए रुड़की के रास्ते हरिद्वार गए थे तो उनको रुड़की में फाऊंडरी कारखाना देखने का अवसर मिला। उनको इसके देखते ही विचार आया कि हमें भी इस प्रकार का कारखाना रियासत में स्थापित करना चाहिए। राजा साहिब को वैज्ञानिक शिक्षा की कोई जानकारी नहीं थी परन्तु उनको उनके स्वभाव और साहस ने प्रेरित किया और उन्होंने कारखाना चलाने की पूरी जानकारी प्राप्त कर ली। इसी प्रकार उन्होंने इस यात्रा के दौरान जब जमुना नहर को पार किया तो उनको विचार आया कि गिरी नदी की नहर क्यारदादून के क्षेत्र में, जो रियासत का एक मैदानी भाग है और उस समय गैर आबाद पड़ा था, बनाई जाए तो लाभदायक होगा। ये दोनों विचार राजा साहिब के दिल में बैठे रहे और जब वह गंगा स्नान से वापिस आए तो उन्होंने गोपालू लोहार को यह काम सीखने के लिए रुड़की के कारखाने में भेजा। जब वह दो साल बाद काम सीख कर वापिस आया तो विक्रमी संवत् 1921 में एक छोटा सा फाऊंडरी कारखाना नाहन में स्थापित किया गया और चार हौर्स पॉवर का एक छोटा सा इंजन तथा ब्वाईलर मंगवाया, कुछ खरादें भी मंगवाकर रखीं। एक छोटी सी भट्टी लोहा ढालने की बनवाई, फिर इसमें हररोज़ काम में आने वाली छोटी–छोटी लोहे की चीज़ें बनने लगीं।

कुछ समय तक तो यह कारखाना गोपालू मिस्त्री की देखरेख में चलता रहा। फिर एक अंग्रेज़ मिस्टर परटिया को इसका सुपरिन्टेन्डेंट नियुक्त किया,जो दो वर्ष तक कार्य करता रहा। उसके बाद मिस्टर टिस्वरी नियुक्त हुए, जिन्होंने कुछ ही समय तक कार्य किया। उनके बाद मिस्टर मैकडोनाल्ड सुपरिन्टेन्डेंट इंजीनियर ने पदभार सम्भाला। दूसरा इंजन 10–12 हौर्स पॉवर का मंगवाया गया और कारखाने में

जंगले और फाटक तैयार होने लगे। इसी समय में राजा साहिब को सूचना मिली कि गिरीपार क्षेत्र में लोहे की खानें हैं, जिनसे बहुत लोहा निकल सकता है। जैसे ही राजा साहिब को यह सूचना मिली कि उन्होंने अपने स्वभाव के अनुसार उसकी तरफ भी ध्यान देना शुरू किया। खानों की पूरी छानबीन करवाने का निर्णय लिया और मिस्टर मैकडोनाल्ड को आदेश दिए कि वह रियासत के विभिन्न स्थानों में जाकर लोहे की खानों को देखकर अपनी रिपोर्ट दें।

मैकडोनाल्ड साहिब कई स्थानों पर गए और वहां निरीक्षण करके मौजा चहेता की खान के बारे में राजा साहिब को रिपोर्ट दी कि वहां से बहुत मात्रा में लोहा निकल सकता है। राजा साहिब रिपोर्ट को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और लोहा निकालने के लिए जेल का नाहन से चहेता में स्थानान्तरण कर दिया और इन धातुओं की ढुलाई के लिए बहुत सी खच्चरें रखी गईं। एक इंजन 70 हौर्स पॉवर का मंगवाया और एक बड़ी बहुमूल्य भट्टी लोहा ढालने के लिए नाहन में तैयार करवाई गई। मैकडोनाल्ड साहिब ने लोहे की मात्रा के बारे तो छानबीन कर ली थी, परन्तु इसको ढोने के ऊपर आने वाले खर्च पर विचार नहीं किया था कि यह लोहा कुल खर्चों को मिलाकर विलायत से आने वाले लोहे के मुकाबले में मंहगा रहेगा या सस्ता। बगैर हिसाब–किताब किए चहेता से लोहे की धातु आनी शुरू हो गई और लोहा ढलने लगा। परन्तु जब बाद में हिसाब लगाया गया तो यह लोहा विलायत से आने वाले लोहे से महंगा पड़ा। अन्ततः खान से लोहे की ढुलाई बन्द करनी पड़ी जिससे रियासत को बहुत हानि हुई।

राजा साहिब ने इस असफलता के बाद भी अपना विचार नहीं बदला और कारखाने को जारी रखा। पांच वर्ष तक सेवा करने के बाद मैकडोनाल्ड का देहान्त हो गया और उनके बाद एल्डर साहिब कारखाना में इंजीनियर नियुक्त हुए, जो आठ साल मुलाज़िम रहे। उनके बाद कुछ समय तक टैटली साहब इंजीनियर रहे और यह कारखाने उसी अवस्था में कुछ समय तक चलता रहा और रियासत

पर इसके खर्च का बोझ पड़ता रहा परन्तु राजा साहिब ने घाटे और अपने सलाहकारों के विरोध के बावजूद भी इस कारखाने को जारी रखा तथा अपने निर्णय पर डटे रहे।

अन्ततः कमाण्डर–इन–चीफ लॉर्ड नेपीयर साहिब ने, जो राजा साहिब के मित्र थे, इस कारखाने के लिए जॉन साहिब की राजा साहिब से सिफारिश की, जिस पर राजा साहिब ने जॉन साहिब को 1876 ईसवी में कारखाने का सुपरिन्टेन्डेन्ट इंजीनियर नियुक्त किया। जॉन साहिब के प्रबन्धन के तहत भी काफी समय तक कारखाने की वही स्थिति रही और इसमें कुछ लाभ नज़र न आया। तब कुछ समय बाद जॉन साहिब ने गन्ने का रस निकालने की एक चर्खी तैयार की, जिसको कष्षकों ने बहुत पसन्द किया और इसकी बड़ी मांग हुई। धीरे–धीरे यूनाईटिड प्रोविन्स (यू.पी.) और पंजाब के बहुत से ज़िलों में इस चर्खी के लिए एजेन्सियां स्थापित हुईं और ये चर्खियां मासिक किराए पर कष्षकों को दी जाने लगीं, जिससे कारखाने को बहुत लाभ हुआ। इससे राजा साहिब बहुत प्रसिद्ध हुए और रियासत को भी आर्थिक लाभ हुआ।

राजा साहिब को विक्रमी सम्वत् 1921 में विचार आया कि सिरमौर नामक स्थान से जो रियासत सिरमौर की पहली राजधानी थी, गिरी नदी से एक नहर खुदवा कर क्यारदादून में लाई जाये और इस क्षेत्र की सिंचाई की जाए। यद्यपि यह काम बड़ा था जिस में बहुत अधिक धन और विशेषज्ञ व्यक्ति की आवश्यकता थी परन्तु राजा साहिब ने स्वयं ही बगैर किसी इंजीनियर की सहायता के इसको बनाने का निर्णय लिया। उन्होंने हुस्नु मिस्त्री, जो नाहन का निवासी था और किसी अंग्रेज़ी सरकार के सड़क विभाग में नौकरी का चुका था और जिसने बताया कि वह पैमाइश के काम की जानकारी रखता था, को नहर के काम की निगरानी के लिए नियुक्त किया। हुस्नु की जानकारी और कुशलता साधारण थी इसलिए वह नहर का सर्वे ठीक से नहीं कर सका और नहर का उद्गम निकास से नीचे रहा। परन्तु

यह गलती उस समय मालूम हुई जब पूरी नहर तैयार हो गई और पानी छोड़ा गया। इस गलती के कारण पानी का बहाव अच्छी तरह से नहीं हुआ और नहर चल नहीं पाई। राजा साहिब का लगभग एक लाख रुपया इस में खर्च हुआ और इस प्रकार राजा साहिब का पूरा प्रयास निष्फल गया और उनको अपनी इस असफलता पर बड़ा दुःख हुआ। इस नहर के अवशेष अब तक कई स्थानों में क्यारदादून में पाये जाते हैं।

इसी समय के बीच राजा साहिब ने तहसील रेणुका के प्लशला नामक स्थान पर गिरी नदी पर एक लोहे के पुल को बनाने का निर्णय लिया। इस के लिए पुल का सारा सामान मंगवा लिया परन्तु यह भी काम करने वालों की अकुशलता के कारण तैयार न हो सका और कुल सामान ज्यों का त्यों पड़ा रहा। रियासत की आय उस समय इतनी न थी जो राजा साहिब के विचारों में आने वाले विकास के कामों के लिए पूरी हो सकती। इसलिए वह आय को बढ़ाने के लिए विचार करने लगे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए देहरादून में एक चाय का बाग, कोलागढ़ जो कि ग्रांट था और मानुका वाला तथा बालां वाला की अचल सम्पत्ति और कुछ कोठियां शिमला में जरनल ऐल्सन साहिब ने विक्रमी सम्वत् 1924 में खरीदीं।

जब सम्वत् 1867 ईसवी में अंग्रेज़ी सरकार राजा साहिब के प्रबन्ध कार्यों से संतुष्ट हो गई और रियासत के कामकाज में भी विकास देखा तो राजा साहिब का उत्साह बढ़ाने के लिए उन की सलामी सात तोपों की जगह ग्यारह तोपों की कर दी। इसी साल विक्रमी सम्वत् 1924 में रानी साहिबा कुठलानी से राजकुमार सुरेन्द्र विक्रम सिंह उत्तराधिकारी उत्पन्न हुए जिस से रियासत की जनता के मायूस दिलों में खुशी की लहर दौड़ गई और आशाओं की फुलवारी फिर खिल उठी। उसके दो साल पश्चात् विक्रमी सम्वत् 1926 में इन रानी साहिबा से दूसरा राजकुमार वीर विक्रम सिंह उत्पन्न हुआ जिससे रियासत में खुशियां दुगनी हो गईं।

राजा साहिब का भाई राजकुमार सूरत सिंह जवान हो गया था। इसलिए राजा साहिब ने उसके विवाह के बारे में सोच विचार आरम्भ किया। इस राजकुमार का विवाह कांगड़ा के राजा प्रमोद चंद जो विद्रोह के कारण गद्दी से उतार दिये गए थे और कुमाऊं में बन्दी थे, की पुत्री से निश्चित हुआ। विक्रमी सम्वत् 1927 में बारात बड़ी धूम धाम से ज़िला कांगड़ा के सुजानपुर में गई और विवाह की रस्में पूरी की गईं। बारात में राजा साहिब व राजकुमार सुर्जन सिंह व वीर सिंह और दूसरे रिश्तेदार शामिल थे। विवाह के बाद बारात राजीखुशी नाहन वापस आई। कुछ समय पश्चात् राजा साहिब ने कंवर सूरत सिंह को रियासत के कायदे अनुसार जागीर, नकद राशि मकान बनाने तथा अलग रहने के लिए दी। विक्रमी सम्वत् 1939 में कंवर सूरत सिंह भवन तैयार हो जाने पर इस में चले गए और वहां रहने लगे।

कंवर सूरत सिंह ने कंवर की उपाधि के स्थान पर सरदार की उपाधि अपनाई (ऐसा प्रतीत होता है कि कंवर सूरत सिंह ने कंवर की उपाधि के मुकाबले में सरदार की उपाधि को अच्छा समझा। परन्तु पारिवारिक उपाधि को बदलना गलती थी क्योंकि कंवर एक पारिवारिक उपाधि है जो राजपूत राजाओं के परिवार के सदस्यों के लिए विशेष रखी गई है। राजपूताना में भी राजकुमारों को कंवर कहा जाता है जैसा कि टॉड के राजस्थान के इतिहास की पुस्तक के पेज नम्बर 431, वॉल्यूम 1 में लिखित है)। सरदार की उपाधि प्रदान की जाती है जो किसी भी व्यक्ति को प्रदान की जा सकती है चाहे वह राजा के परिवार से सम्बंधित हो चाहे न हो। आम तौर पर सिक्खों में सरदार शब्द प्रयोग में लाया जाता है। इनकी लाड़ी साहिबा कटोची से एक दो संतानें उत्पन्न हुई थीं परन्तु वे बचपन ही में स्वर्ग सिधार गईं। इसलिए सरदार साहिब ने दूसरा विवाह रियासत छम्बा के मियां सुचेत सिंह की पुत्री से विक्रमी सम्वत् 1243 में किया जिससे दो पुत्रियां और एक पुत्र कंवर रणदीप सिंह उत्पन्न हुए।

इसके पश्चात् राजा साहिब ने राजस्व के प्रबन्ध की ओर ध्यान दिया और पैमाइश के अनुसार माल गुज़ारी की तकसीम को ज़रूरी समझा। इससे पूर्व माल गुज़ारी का कोई नियमित तरीका न था इसलिए विक्रमी सम्वत् 1927 में कानूनी बन्दोबस्त शुरू किया। लाहौर के रहने वाले मुंशी नन्द लाल को बन्दोबस्त का प्रबन्धक और मुंशी फतेह सिंह को बन्दोबस्त का सुपरिन्टेन्डेंट नियुक्त किया। बन्दोबस्त के लिए छापे हुए फार्मों की ज़रूरत पैदा हुई इस लिए राजा साहिब ने इसी समय के बीच एक दो छापे के पत्थर मंगवा कर छापा खाना चालू किया और फार्म इत्यादि छपने लगे। जब गिरी पार क्षेत्र में पैमाइश शुरू हुई तो वहां के कृषकों में जो कि बहुत अज्ञानी थे, इसका बहुत चर्चा हुआ। क्योंकि वहां पर इससे पहले कभी पैमाइश नहीं हुई थी और वे लोग भूमि की पैमाइश को अच्छा नहीं मानते थे। उनका विचार था कि पैमाइश से उपज और भूमि कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त उनका यह भी भय था कि पैमाइश से माल गुज़ारी का बढ़ना सम्भव है इस लिए वे पैमाइश नहीं चाहते थे।

यही कारण थे कि गिरी पार क्षेत्र की पालवी तहसील के कष्षकों ने संगडाह के चौंतरू सयाने (आला नम्बरदार) उछबु और प्रीतम सिंह, जिनका इलाके में बड़ा प्रभाव था, की अगवाई में भूमि की पैमाइश करवाने से इनकार कर दिया। उन्होंने बन्दोबस्त कार्यकर्ताओं से लड़ाई झगड़ा किया। उन्होंने मुंशी जीत सिंह को, जो उस समय वहां का तहसीलदार था, बन्दी बनाने की योजना बनाई। इस लिए बन्दोबस्त कार्यकर्ता नाहन वापिस आ गए और राजा साहिब को पूरे हालात से अवगत करवाया। राजा साहिब ने इन कष्षकों को उन के नम्बरदारों के माध्यम से बहुत समझाया मगर वे अज्ञानी कब मानने वाले थे। मजबूर होकर राजा साहिब ने एक कम्पनी सशस्त्र सिपाहियों की विरोध कर्ताओं को पकड़ने के लिए नाहन से भेजी तथा ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेंट साहिब को इस घटना की सूचना दी।

जिस समय विरोधी कृषकों ने, जो संगडाह के स्थान पर पत्थरों की एक घेराबन्दी बना कर एक पहाड़ पर एकत्रित हो रहे थे, फौज को देखा तो भाग गए और अपने घरों को चले गए। उछबु और प्रीतम सिंह ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेंट के पास शिकायत लेकर पहुंचे परन्तु सुपरिन्टेन्डेंट को रियासत के पूरे घटनाक्रम का विवरण पहले ही मिल चुका था। इसलिए उन्होंने शिकायत पर कोई ध्यान नहीं दिया और उछबु और प्रीतम सिंह को बन्दी बना कर राजा साहिब के पास नाहन भेज दिया। वे कृषक जो इस विद्रोह में शामिल थे उन्हें भी हथियारों समेत बन्दी बना कर नाहन लाया गया। इन पर विद्रोह का मुकद्दमा बनाया गया और छानबीन और सबूतों पर आधारित इनको दण्ड दिये गए और इनके हथियार ज़ब्त किये गए। इस प्रकार यह विद्रोह समाप्त हुआ और पैमाइश का कार्य बगैर रुकावट के शुरू हुआ।

पैमाइश के बाद राजस्व के कागज़ात, जिन में सरकार और जनता की मलकीयत और जंगलों के अधिकार इत्यादि दर्ज हुए, पूरे कर लिए गए। विक्रमी सम्वत् 1929 में बन्दोबस्त समाप्त हुआ। इस बन्दोबस्त में जिन्स (गल्ला) के माध्यम से मालगुज़ारी देने की प्रणाली, जो रियासत के कुछ भागों में अब तक प्रचलित थी खत्म कर दी गई और नकद मालगुज़ारी देने का तरीका मुकर्रर हुआ। जो क्षेत्र रियासत की मलकीयत थे, बेच दिये गए और उनकी मलकीयत नज़राने के बदले लोगों को दे दी गई। गल्ला के स्थान पर नकद मालगुज़ारी लागू की गई जिससे रियासत के राजस्व में बीस प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई।

इस अवसर पर राजा साहिब ने संवत् 1929 में पुरानी जागीरों और मुआफी (Grant lands) पर स्वाई की प्रणाली स्थापित की और जागीरों और मुआफियों के सम्बध में नये कायदे कानून प्रस्तावित करके अधिसूचना जारी की जिस का उद्देश्य यह था कि जागीरों को लम्बे समय तक स्थापित रखने से रियासत को बहुत हानि पहुंचती है इसलिए जागीरों का 1/3 जागीरदार की मौत के बाद अर्थात् एक

पीढ़ी गुज़रने पर जब्त हो जाया करे ताकि चौथी पीढ़ी में कुल जागीर ज़ब्त होकर रियासत को वापिस हो जाए। यह रियासत में एक नई किस्म का आदेश था जिससे पुराने कायदे और शर्तों के रद्द हो जाने से हकदारों के हक खत्म हुए। यह कानून बिरादरी के हक में भी बड़ा हानिकारक साबित हुआ। इस अधिसूचना के अनुसार बहुत सी पुरानी मुआफियां मुआफ़ीदारों के जीवन तक ही रखी गईं और बहुत सी जब्त होकर रियासत में शामिल हो गईं और नई सनदें दी गईं जिस कारण जागीरदारों और मुआफीदारों की संख्या बहुत कम हो गई।

इस बन्दोबस्त में वजीरियों के स्थान पर रियासत में कुल चार तहसीलें प्रस्तावित हुईं और हरेक तहसील में एक तहसीलदार, कानूनगो, पटवारी व वासलवकी नवीस इत्यादि कार्यकर्ता अंग्रेज़ी सरकार में प्रचलित राजस्व कानूनों के मुताबिक नियुक्त किये गए। मुंशी नंद लाल को डिस्ट्रिक्ट जज मुकर्रर किया गया जो कि विक्रमी सम्वत् 1935 तक इस पद पर रहा। इसके चले जाने के बाद विक्रमी सम्वत् 1935 में मुंशी रहमत अली जो राजा साहिब की कचहरी में पेशकार था, को डिस्ट्रिक्ट जज लगाया गया। मुंशी रहमत अली के स्थान पर मुंशी शिव सिंह को पेशकार लगाया गया। सरकारी जंगलों की देखभाल के लिए वन विभाग की स्थापना हुई । भजो सिंह जो राजा रघुवीर प्रकाश का सेवक था, वनों का प्रबन्धक नियुक्त हुआ। यह व्यक्ति अनपढ़ था और वनों के कारोबार की जानकारी नही रखता था परन्तु वह बड़ा परिश्रमी था। इसलिए वह स्वयं जंगलों में घूमता था और अपने अधीनस्थों इत्यादि की भलिभांति निगरानी करता था।

भूमि के बन्दोबस्त से रियासत की आय में बढ़ोतरी हो गई थी इसलिए राजा साहिब को दूसरे कल्याणकारी कार्यों को, जो उनके विचार में ज़रूरी थे, आरम्भ करने की गुंजाइश निकल आई। इसलिए उन्होंने उपचार इत्यादि की प्रणाली जो नाहन में प्रचलित थी, को काफी नहीं समझा और कार्यरत वैद्य को संतुष्टिजनक न पा कर एक यूनानी हाकिम को जिसका नाम खादीम हुसैन था, दिल्ली से बुलवाया और

रियासत में उसको नौकरी दी। यह व्यक्ति यूनानी प्रणाली का विशेषज्ञ और सम्पूर्ण हाकिम था। इसके पश्चात् अंग्रेजी प्रणाली द्वारा उपचार के लिए, जो उस समय विकसित थी एक अस्पताल बनवाया और इस में सर्जरी के यंत्र और दवाइयां रखी गईं। इसमें एक हिन्दुस्तानी को हॉसपिटल असिस्टैंट और एक अंग्रेज़ डॉक्टर स्मिथ को नियुक्त किया परन्तु वह कुछ समय रह कर चला गया। विक्रमी सम्वत् 1929, तदनुसार 1872 ईसवी में एक अंग्रेज़ी डॉक्टर पियरसाल, जो बड़ा रहमदिल और अच्छे स्वभाव वाला था, को मैडिकल ऑफिसर नियुक्त किया।

डॉक्टर पियरसाल और हाकिम खादीम हुसैन की आला समझ से लोगों को बहुत लाभ पहुंचा और वह राजा साहिब के आभारी हुए। डॉक्टर पियरसाल मैडिकल सुपरिन्टेन्डेंट के अतिरिक्त म्युनिसिपल बोर्ड के प्रेज़ीडेंट भी थे। वह शहर की सफाई में बड़ी रुचि लेते थे। उन्होंने मार्गों पर वृक्ष और बाजार की गलियों में पक्के फर्श लगवाये थे। ग्यारह साल सेवा करने के बाद 1883 ईसवी, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1940 में उनका नाहन में स्वर्गवास हो गया। नाहन के उत्तरी भाग में चक्कर की सड़क के किनारे उस स्थान में जिसे उन्होंने अपने जीवन में ही अपनी कब्र के लिए चुना था, मिल्ट्री ऑनर के साथ वे दफ़न किये गये। उनकी पत्नी मिसेज पियरसाल ने एक भारी रकम खर्च करके 1885 ईसवी में उन की कब्र बनवाई। उनकी धर्मपत्नी जो अभी तक जीवित है और नाहन में वास करती है, अपने पति के तरह ही बल्कि उनसे ज़्यादा रहमदिल और भले स्वभाव की है। वह हरेक के साथ बड़े प्यार और मुहब्बत के साथ मिलती है इसलिए वह नाहन में बड़ी लोकप्रिय है । डॉक्टर पियरसाल की मृत्यु के बाद डॉक्टर डीन साहिब जो कि अंग्रेज़ी सरकार के पैंशनर थे, सिविल सर्जन नियुक्त हुए। उनका 1886 ईसवी में स्वर्गवास हुआ और उन को नाहन में दफ़न किया गया। उनके बाद डॉक्टर निकल्सन साहिब सिविल सर्जन बने

जिन की मृत्यु नाहन में 1904 ईसवी में हुई। वह भी इसी जगह दफन किये गए।

राजा साहिब को केवल राजस्व और प्रशासनिक प्रबन्धनों में ही रुचि न थी बल्कि वह फ़ौज में भी ऐसी ही रुचि रखते थे। शुरू में उन्होंने 150 पैदल सिपाहियों की संख्या बढ़ा कर 300 की और एक अंग्रेज़ मिस्टर वाट साहिब को कमांडिंग ऑफिसर नियुक्त किया ताकि फ़ौज को परेड इत्यादि के तरीके सिखा कर सशक्त करें। राजा साहिब स्वयं भी कभी–कभी फ़ौज की कमान सम्भालते थे। जब लॉर्ड नैपियर साहिब, जो राजा साहिब के मित्र थे, नाहन पधारे तो राजा साहिब की सिपाहीगिरी देखकर बहुत खुश हुए और उनको एक अभ्यास कैम्प (झूठी लड़ाई) में जो कि अम्बाला से करनाल तक होने वाला था सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित किया। राजा साहिब इस में बड़े उत्साह से शामिल हुए। उस समय लॉर्ड नैपियर राजा साहिब की हिम्मत, दिलेरी और चौकसी को देख कर अति प्रसन्न हुए और इस की चर्चा उन्होंने वाइसराय हिन्द लॉर्ड लिटन साहिब से की। इसके बाद राजा साहिब की फ़ौज में रुचि बढ़ती गई। उन्होंने पैदल सेना से अतिरिक्त सौ जवानों का एक रिसाला (घुड़सवार) भी भर्ती किया। इस में सिरमौरी और पूर्विये इत्यादि भर्ती हुए।

जब राजा साहिब को प्रशासनिक मामलों और रियासत के प्रबन्धन से समय कम मिलने लगा तो उन्होंने लॉर्ड नैपियर साहिब से एक अंग्रेज़ ऑफिसर को फ़ौज की कमान के लिए चाहा। लॉर्ड साहिब ने कर्नल आर0 सी0 व्हाईटिंग को जो कि अंग्रेज़ी सरकार का पैंशनर था, के बारे राजा साहिब से सिफारिश की। राजा साहिब ने उसे बुलाकर 1872 ईसवी में कमांडिंग ऑफिसर नियुक्त किया और फिर विक्रमी सम्वत् 1933, तदनुसार 1876 ईसवी में जब बादशाह ऐडवर्ड हफतम प्रिंस ऑफ वेल्ज़ की हैसियत से घूमने के लिए हिन्दुस्तान में पधारे तब इनके स्वागत और मुलाकात के लिए हिन्दुस्तान के गिने–चुने राजाओं और रईसों को कलकत्ता आमंत्रित किया गया। उस में राजा

शमशेर प्रकाश साहिब को भी लॉर्ड लिटन साहिब ने आमंत्रित किया फिर लॉर्ड साहिब ने कमांडर इन चीफ लॉर्ड नैपियर साहिब और शिमला ज़िला के सुपरिन्टेन्डेंट साहिब से राजा साहिब की कुशलता और उनकी प्रबन्धन क्षमता और सूझ–बूझ के बारे जानकारी प्राप्त कर इनको 1877 ईसवी में ऐम्पीरियर लेजिस्लेटिव काउंसिल में एडिशनल मैम्बर नियुक्त किया जिसकी ज़िम्मेदारी राजा साहिब ने दो वर्ष तक कुशलता से निभाई।

विक्रमी सम्वत् 1934, तदनुसार 1877 ईसवी में जब मलिका विक्टोरिया ने कैसरे –हिन्द का ख़िताब इख्तियार किया तब हिन्दुस्तान के वाइसराय लॉर्ड लिटन ने राजा साहिब को देहली दरबार में आमंत्रित किया। इस अवसर पर राजा साहिब के साथ ब्रजराज नामक वह बड़ा हाथी जो अति सुन्दर था बीस दूसरे हाथियों और एक गेंडे के साथ आया था। इस को देखने के लिए राजा साहिब के कैम्प के दरवाजे पर लोगों की भीड़ लगी रहती थी। इन दिनों अंग्रेज़ी सरकार ने राजा साहिब को KCSI के ख़िताब से सम्मानित किया। राजा साहिब को सदा ही रियासत के विकास की धुन लगी रहती थी। इस लिए वह अंग्रेज़ी अफसरों को रियासत में आमंत्रित करते रहते थे और उन्हें अपनी प्रबन्ध कुशलता को दिखला कर प्रशंसा प्राप्त करते थे। इस कारण पंजाब के कई लैफ्टिनैंट गवर्नर, कमांडर इन चीफ और कमिश्नर साहिबान नाहन में आते रहे।

राजा साहिब ने वाइसराय लॉर्ड लिटन को भी नाहन आने का आमंत्रण दिया जिसको लॉर्ड साहिब ने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया और वह विक्रमी सम्वत् 1935, तदनुसार 1878 ईसवी में देहरादून के रास्ते नाहन पधारे। राजा साहिब ने उनका बड़े आदरपूर्वक सम्मान किया। उनकी सेवा में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। लॉर्ड साहिब ने क्यारदादून में शेर का शिकार किया और प्रसन्न होकर वापिस चले गए। लॉर्ड साहिब के नाहन आने की याद को ताज़ा रखने के लिए नाहन में एक बड़े पक्के दरवाज़े की नींव डाली जिस पर शब्द लिटन

मैमोरियल अंकित किया गया। यह दरवाज़ा क्योंकि नाहन में दिल्ली की ओर बनाया गया है इसलिए जनता में यह देहली दरवाजे के नाम से प्रसिद्ध है। परन्तु यह अफसोस की बात है कि इस पर लॉर्ड साहिब के नाहन आने का वर्ष अंकित नहीं है जो बहुत ज़रूरी था।

राजा साहिब अंग्रेज़ी सरकार के भी वैसे ही शुभचिंतक थे जैसे कि वो अपनी रियासत के थे। अंग्रेज़ी सरकार के प्रति शुभचिंता प्रकट करना वह अपने बुजुर्गों की भांति अपना दायित्व समझते थे। जब सन् 1879 ईसवी, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1936 में काबुल की जंग शुरू हुई तो राजा साहिब ने 1880 ईसवी में अंग्रेज़ी सरकार से अपनी फौज को लड़ाई में भेजने की प्रार्थना की जिसको सरकार ने मंजूर कर लिया। रियासती फौज कर्नल आर. सी. व्हाइटिंग की कमान में रवाना होकर अंग्रेज़ी फौज में शामिल हुई और कमांडिंग जरनल के आदेश अनुसार कार्य करती रही। इस रियासती फौज की उत्तम सेवाओं के बदले में सरकार ने इनको ऐनफिल्ड राइफल्स दीं और राजा साहिब को वाइसराय से मिलने का अवसर देकर सम्मानित किया जिससे राजा साहिब का उत्साह बढ़ा और उन्हें बहुत प्रसन्नता प्राप्त हुई।

इसके बाद राजा साहिब ने रियासत की फ़ौज के लिए एक छावनी बनाने का निर्णय लिया क्योंकि इससे पहले फ़ौज विभिन्न स्थानों पर रहती थी। राजा साहिब ने नाहन के निकट पश्चिम की ओर एक किले पर जिसको सतियों का पहाड़ कहते थे और जहां मुर्दे जलाये जाते थे छावनी के लिए स्थान चिन्हित किया। यह एक सुन्दर पहाड़ है और नाहन शहर से ऊंचा है। मुर्दों की राख और अस्थियों को वहां से साफ करवा कर सिपाहियों के लिए छापड़ की बैरकें बनवाई गईं। फ़ौज इस छावनी में विक्रमी सम्वत् 1937 में स्थापित हुई। इस छावनी का नाम शमशेरपुर रखा गया।

भगवान ने राजा साहिब को ऐसा दिल और दिमाग़ दिया था कि वह कभी बेकार रहना या एक सीमा तक विकास करके सब्र कर लेना पसन्द नहीं करते थे। वह चारों तरफ का ध्यान रखते थे और एक

कार्य को पूरा कर लेने के बाद उसी उत्साह से दूसरी तरफ ध्यान देते थे। यही कारण था कि उनके शासन काल में रियासत का काफी विकास हुआ। राजा साहिब ने जनता के कल्याण की तरफ ध्यान दिया। उन्होंने व्यापार और कृषि के विकास के लिए, जो जनता के कल्याण का आधार है, नाहन में असौज मास में दशहरा के अवसर पर एक कृषि प्रदर्शनी लगाने का सिलसिला आरम्भ किया। इस अवसर पर जनता के मनोरंजन के लिए रामलीला करने का निर्णय भी लिया। रामलीला नाहन में विक्रमी सम्वत् 1935 के असौज माह में आरम्भ हुई। पूरी रियासत से कृषक अपनी उपज इत्यादि लेकर नाहन आए। बहुत से व्यापारी साथ लगते सरकारी इलाकों से इस अवसर पर एकत्रित हुए और उन के सामान की अच्छी बिक्री हुई। शहर में काफी रौनक रही। परन्तु किसी को क्या मालूम था कि यह रौनक बेरौनकी में बदल जाएगी। भगवान की बातें भगवान ही जानता है जो एक क्षण में खुशी को दुःख में बदल देता है। जब रामलीला हो रही थी और शहर में हर तरफ खुशी की लहर चल रही थी तो अचानक ही विक्रमी सम्वत् 1935 को सातवें नवरात्रे के दिन रानी साहिबा पठानी, जो राजा रघुवीर प्रकाश साहिब की रानी थी और कुछ समय से बीमार चली आ रही थी, का देहांत हो गया। इस कारण सारी खुशी दुःख और गम में बदल गई। यह दुःख यहीं पर समाप्त नहीं हुआ बल्कि इसके बाद भी कुछ वर्ष तक ऐसी ही स्थिति रही और दुःख पर दुःख आते रहे जिस कारण प्रदर्शनी दो तीन वर्ष तक चल कर बन्द हो गई।

विक्रमी सम्वत् 1936 के वैशाख मास में रानी साहिब कुठलानी, जो राजा शमशेर प्रकाश की रानी थी और बहुत ही अच्छे स्वभाव वाली, मेहरबान रानी थी और जो राजा साहिब के सांसारिक कामकाज में राजा साहिब की मदद करती थी स्वर्गवास कर गई। इस दिल दहलाने वाली घटना से राजा साहिब को बड़ा सदमा और रंज पहुंचा तथा तमाम सगे सम्बन्धियों और जनता को इस घटना से बड़ा आघात पहुंचा। परन्तु भगवान की जो इच्छा होती है उसको सब्र और शांति से

झेलना ही पड़ता है। इसके सिवा चारा नहीं क्योंकि हर व्यक्ति के लिए मौत का दिन निश्चित है। बड़े–बड़े विद्वान और योद्धा भी इससे बच नहीं पाये। यही कारण है कि इस संसार को नश्वर कहते हैं। कुछ समय के लिए राजा साहिब का उत्साह और शौक मध्यम पड़ गया। फिर कुछ महीनों के बाद विक्रमी सम्वत् 1936 के भादो मास में रानी साहिबा बघाटी, जो राजा शमशेर प्रकाश की दादी थी, स्वर्गवास कर गई। इन लगातार सदमों और दु:खों से राजा साहिब के दिल को बहुत धक्का लगा और वह मुर्झा गए परन्तु कंवर सुर्जन सिंह व वीर सिंह तथा रियासत के दूसरे कार्यकर्ताओं और साथियों ने राजा साहिब के दिल बहलाने और उन का गम गलत करने के लिए हर प्रकार के प्रयत्न किए। परन्तु रंज और खुशी ऐसी वस्तु नहीं है जो जल्दी मिट जाये। फिर भी राजा साहिब, जो बहुत समझदार और विद्वान थे, रियासत के कामकाज की तरफ ध्यान देने लगे परन्तु महलों से उनको कुछ ऐसी नफरत हुई कि वह स्वर्गवासी रानी साहिबा के महल में जीवन भर नही गए और एक नई कोठी में रहने का निर्णय लिया।

उन्होंने नाहन शहर से एक मील उत्तर पूर्व की ओर एक सुन्दर पहाड़ी पर विक्रमी सम्वत् 1937 में कोठी की नींव रखी और इसका नाम अपने नाम पर शमशेर विला रखा। यद्यपि राजा साहिब के दिल में दु:ख था परन्तु वह रियासत के कामकाज को पूरा करना अपना दायित्व समझते थे और अपने दायित्व से, इस दु:ख में भी मुंह नहीं मोड़ा। उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1937 में वाइसराय हिन्द, लॉर्ड रिपन जो खुले विचारों वाले व्यक्ति थे, को नाहन में आमंत्रित किया। लॉर्ड साहिब ने उतराई के समय (शीतकाल के समय पहाड़ों से वापसी) शिमला से डगशाई के रास्ते नाहन आने का इरादा प्रकट किया था। इसलिए राजा साहिब ने तलहेरी नदी के स्थान से जो रियासत सिरमौर की सीमा पर है, गाड़ी की सड़क बनाने का निर्णय लिया, ताकि वायसराय साहिब को पहाड़ी रास्ते के कारण कोई असुविधा न हो।

यद्यपि यह एक बड़ा कार्य था परन्तु राजा साहिब की हिम्मत इसकी कब परवाह करती थी। उन्होंने तुरन्त सड़क का काम शुरू करने का आदेश दिया और सड़क लॉर्ड साहिब के पधारने के समय तक पूरी हो गई। लॉर्ड साहिब इसी रास्ते से नाहन आये और राजा साहिब ने रिवाज़ के मुताबिक बड़े उत्साह पूर्वक इनका स्वागत किया और खूब खातिरदारी की जिससे वे अति प्रसन्न होकर वापिस गये। इसी समय, जब अभी पहला दुःख और गम दूर न हुआ था, कंवर सुर्जन सिंह साहिब का विक्रमी सम्वत् 1937 के मार्गशीर्ष मास में स्वर्गवास हो गया, जिसने पहले सारे दुःखों को फिर ताज़ा कर दिया। कंवर साहिब की बेवक्त की मृत्यु से राजा साहिब को बड़ा आघात पहुंचा क्योंकि कंवर साहिब बड़े ज़िन्दादिल व्यक्ति थे और राजा साहिब को उनसे बड़ा स्नेह था, परन्तु मौत से छुटकारा नहीं, हर स्थिति में सब्र करना ही पड़ता है।

कंवर वीर सिंह साहिब को भी भाई की मष्त्यु का बड़ा दुःख हुआ क्योंकि इन दोनों भाइयों में बड़ा प्यार था। यह दुःख कंवर वीर सिंह के लिए ऐसा असह्य हुआ कि वह दीवाना सा हो गये और सदा रोते रहते थे। अन्ततः वह नौ महीने बाद विक्रमी सम्वत् 1938 के भादो मास में स्वर्ग सिधार गये। इससे राजा साहिब और दूसरे निकट सम्बन्धियों को और भी ज़्यादा दुःख हुआ। कंवर वीर सिंह की मृत्यु के एक मास बाद विक्रमी सम्वत् 1938 के असौज मास में लाड़ी साहिबा कुनिहारी, जो कंवर सुर्जन सिंह की पत्नी थी, अचानक बीमार होकर कुछ दिन बाद स्वर्गवास कर गई। तीन–चार साल के समय के बीच इस परिवार में लगातार मौतें हुई और दुःख पर दुःख पहुंचे जो असह्य थे।

इन दोनों कंवर साहिबान के पीछे छूटे सम्बन्धियों व नाबालिगों की राजा साहिब के सिवाय, खबर लेने वाला कोई नहीं रहा और न ही उनकी अचल सम्पत्ति का कोई देखने वाला था। राजा साहिब को पहले तो अपने ही दुःख और रंज बहुत थे इस पर, कंवर साहिबान की

मृत्यु की घटना और आ पड़ी। इसके अतिरिक्त कंवर साहिब के पीछे रह गये निकट सम्बन्धियों की देखरेख और चल और अचल सम्पत्ति का बोझ भी इन पर आ पड़ा। राजा साहिब दूरदर्शी और हिम्मत वाले हाकिम थे। उन्होंने इन घटनाओं को हिम्मत से सहन किया।

राजा साहिब ने अपने विक्रमी सम्वत् 1938 के प्रथम कार्तिक के आदेश में कंवर रणजोर सिंह को इन दोनों स्वर्गवासी साहिबान की जायदाद का वारिस घोषित किया। कंवर वीर सिंह की जागीर को राजा साहिब ने विक्रमी सम्वत् 1939 के श्रावण मास की 18वीं तिथि को अपने आदेश पत्र द्वारा ज़ब्त करके रियासत में शामिल कर लिया क्योंकि उन की कोई जायज़ नर सन्तान नहीं थी। इन के पीछे रह गए निकट सम्बन्धियों के लिए गुज़ारा मुकर्रर किया। इसके पश्चात् राजा साहिब कंवर साहिबान की जायदाद इत्यादि और पीछे रह गए सम्बन्धियों की देख रेख में व्यस्त हुए। राजा साहिब ने कोर्ट ऑफ वार्ड स्थापित करके मुंशी ख़्वाजा हसन को, जो स्वर्गवासी कंवर साहिबान के सेवकों में से एक था और जो पत्र लिखने का कार्य करता था, सुपरिन्टेन्डेंट कोर्ट ऑफ वार्ड नियुक्त किया। हिसाब किताब को हिन्दी और सिरमौरी के स्थान पर उर्दू में करने का आदेश दिया और हिन्दी पढ़े लिखों के स्थान पर उर्दू पढ़े लिखे लेखाकार नियुक्त किये।

राजा साहिब स्वयं कंवर रणजोर सिंह के संरक्षक बने और स्वर्गीय कंवर साहिबान के समय के ऋणों की वसूली का आदेश दिया। कंवर साहिबान का यह बैंक का काम होता था जिसको राजा साहिब ने अब जारी रखना उचित नहीं समझा। इस अवसर पर यह बता देना उचित होगा कि राजा साहिब के मुंशी ख़्वाजा हसन को ऐसे बड़े जिम्मेदारी के पद पर, जिस पर कुल कारोबार निर्भर था, बैठाना अनुचित साबित हुआ। राजा साहिब का ऐसा करने का उद्देश्य यह था कि हकदार को हक मिलना चाहिए। परन्तु जिसने इतनी बड़ी जायदाद का प्रबन्ध कभी न किया हो, उसको कुल कारोबार का प्रबन्धक बनाना उचित न था। ख़्वाजा हसन की नियुक्ति के थोड़े ही समय

बाद कंवर साहिबान के दूसरे कार्यकर्ताओं और अहलकारों में आपसी मतभेद और नोकझोंक ज़ारी हो गई। वे एक दूसरे के कार्यों में रोड़े अटका कर काम बिगाड़ने लगे।

ख्वाजा हसन में कुशलता न थी कि वह इन सब को अपने अधीन कर काम चलाता। क्योंकि वह एक तो अकुशल था और दूसरे उसको मदिरा पान की आदत थी जिसने इसको बिल्कुल अकुशल बना दिया था। वैसे तो वह तबीयत का साधारण और मुंशी व्यक्ति था, उसकी नीयत जानबूझ कर हानि पहुंचाने की न थी परन्तु वह प्रबन्धन कार्यों के बारे बिल्कुल कोरा था। इसके अतिरिक्त वह अहलकारो के आपसी विरोध और खींचातानी से और भी घबरा गया और उसके होशो–हवास गुम हो गए और वह बिल्कुल प्रबन्ध न कर पाया। इस प्रकार आय कम होती गई, व्यय ज़्यादा होता गया और जायदाद की हालत खराब हो गई।

इसी बीच कंवर सुर्जन सिंह साहिब की देयी साहिबा का विवाह राजकुमार बलदेव सिंह, जो पुंछ के राजा मोती सिंह का पुत्र और उत्तराधिकारी था, के साथ तय हुआ। विवाह की तिथि विक्रमी सम्वत् 1939, फाल्गुन मास में निश्चित हुई परन्तु इसी तिथि का विवाह राजकुमार सुरेन्द्र विक्रम सिंह का रियासत सुकेत में निश्चित हुआ। पुंछ के राजा मोती सिंह साहिब ने इसी तिथि पर विवाह करना पसन्द किया और तिथि को नहीं बदलना चाहा। इसलिए राजा शमशेर प्रकाश साहिब ने मज़बूर होकर देयी साहिबा के विवाह का प्रबन्ध मुंशी ख़्वाजा हसन को सौंपा और स्वयं उत्तराधिकारी राजकुमार सुरेन्द्र विक्रम सिंह के विवाह में सुकेत गए। राजा साहिब की अनुपस्थिति और मुंशी ख़्वाजा हसन के कुप्रबन्ध के कारण देयी साहिबा के विवाह में कंवर साहिब का बहुत सारा रुपया व्यर्थ खर्च हुआ। बहुत सी वस्तुएं ज़रूरत से अधिक और बहुत सी बिना ज़रूरत ही विवाह में मंगवाई तथा बनवायी गई थीं।

अन्ततः पुंछ के उत्तराधिकारी की बारात बड़ी सजधज से नाहन पहुंची और इनकी खूब खातिरदारी की गई। विवाह विक्रमी सम्वत् 1939 के 5 फाल्गुन को सम्पन्न हुआ और बारात बड़ी प्रसन्नता से वापिस गई। इसके दो मास बाद कंवर वीर सिंह की बड़ी पुत्री का विवाह चम्बा के राजा श्याम सिंह से निश्चित हुआ। राजा साहिब की बारात विक्रमी सम्वत् 1940 के वैशाख मास में चम्बा से नाहन आई। विवाह के बाद बारात वापिस हुई। इस विवाह में भी काफी खर्च हुआ था। अच्छे प्रबन्ध न होने के कारण इन दोनों विवाहों में कंवर साहिबान का भारी खर्च हुआ। जब राजा साहिब ने इस कुप्रबन्ध के असर को, जो कंवर साहिबान के अहलकारों पर हो रहा था, स्त्री भवन के अन्दर भी पहुंचता देखा तो उन्होंने कंवर साहिब के ख़जाने को, जो कि घर के अन्दर था, नष्ट होने के ख़याल से अलग करना ज़रूरी समझा। इस कारण इस खज़ाने को घर से निकाल कर रियासत के कोष में रखवा दिया ताकि सुरक्षित रहे।

मुंशी ख़्वाजा हसन, जिसका कुप्रबन्ध और अकुशलता राजा साहिब को पता चल गई थी, को सुपरिन्टेन्डेंट के पद से अलग करके उसके स्थान पर जीत सिंह, जो रियासत में तहसीलदार था और नाहन का निवासी था, को इस पद पर लगाया गया। मगर वह भी उचित प्रबन्ध न कर सका और हिसाब–किताब तथा प्रबन्ध में खराबी रही। अन्ततः जब राजा साहिब ने लेखे–जोखे की जांच की और उनसे उत्तर मांगा तो डर के मारे उनके प्राण निकल गए। इसके पश्चात् एक बंगाली काली कुमार, जो कि लीडर था और बहुत शरीफ व्यक्ति था, सुपरिंटेन्डेंट नियुक्त किया गया। परन्तु वह भी दूसरे खुदगर्ज़ अहलकारों द्वारा पैदा की गई रुकावटों के कारण स्थिति को सुधार न पाया व प्रबन्ध न चला सका। इस कारण उसने भी त्यागपत्र दे दिया। उसके बाद राजा साहिब ने विक्रमी संवत् 1944 में मुंशी विष्ण सिंह जसावल को, जो नाहन का निवासी और पुराने अहलकारों में से था तथा बड़ा समझदार और कुशल प्रबंधक था, कोर्ट ऑफ वार्ड का सुपरिन्टेंडेंट

नियुक्त किया। उसके परिश्रम तथा प्रयासों से सारी कठिनाई दूर हुई और प्रबन्ध ठीक हो गया।

कंवर रणजोर सिंह के बालिग होने तक वही सुपरिन्टेन्डेंट रहा, बल्कि इसके बाद भी राजा साहिब ने उसको कंवर रणजोर सिंह का दो साल तक सलाहकार रखा। फिर कंवर रणजोर सिंह ने भी शक्तियां मिल जाने पर इसको उसकी मृत्यु विक्रमी संवत् 1965 तक अपने पास रखा। जैसा कि हमने इससे पहले वर्णन किया है कि राजा साहिब के परिवार में विक्रमी संवत् 1935 से लगातार तीन–चार साल तक मौतों पर मौतें होती रहीं और घटनाएं घटती रहीं। फिर भी राजा साहिब इन दुःखों के होते हुए भी अपने दायित्व से लापरवाह नहीं रहे और हौसले तथा हिम्मत के साथ कामकाज करते रहे। निकट सम्बन्धियों इत्यादि, विशेष कर अपनी बहन के ज़ोर देने पर, जो कि नाहन में रहती थी, राजा साहिब ने विक्रमी संवत् 1939 के मार्गशीर्ष मास में अपना विवाह ज़िला शिमला के कुनिहार के राणा तेगसिंह की पुत्री से तय किया ताकि रानी–महल का दरवाज़ा खुला रहे तथा निकटवर्ती रिश्तेदारों, जो रानी साहिबा कुठलानी की मृत्यु के कारण निराश और दुःखी थे, को खुशी का अवसर मिले और घरेलू कामकाज में सहायता प्राप्त हो।

राजा साहिब का दिल रानी साहिबा कुठलानी की मृत्यु से इतना मायूस हो गया था कि वह रानी महल में जाना तक पसन्द नहीं करते थे परन्तु उन्हें अपने दायित्व से मुंह मोड़ना भी पसन्द नहीं था। इसके बाद राजा साहिब ने राजकुमार सुरेन्द्र विक्रम सिंह, जो कि उत्तराधिकारी भी थे, के विवाह का निर्णय लिया और सुकेत के राजा रुद्रसेन की पुत्री से विक्रमी संवत् 1939 के फाल्गुन मास में विवाह होना निश्चित हुआ।

नाहन में इस विवाह की खुशी में बारात चलने से पहले प्रत्येक व्यक्ति को एक–एक सेर पक्की मिठाई बांटी गई और नाहन के सब निवासियों को भोज दिया गया। विवाह के जलसे के लिए नाच–गाने

वालियां और नक्काल दिल्ली, लखनऊ आदि से बुलाए गए थे। बारात में बहुत सारे मेहमान शामिल हुए, जिनकी अच्छी तरह खातिरदारी की गई।

बारात बड़ी धूमधाम के साथ नाहन से हाथी–घोड़ों और दूसरे सामान के साथ चली। पड़ाव–पड़ाव ठहरते हुए बारात नालागढ़ बिलासपुर होती हुई सुकेत पहुंची। यात्रा तो बहुत लम्बी थी परन्तु पण्डित बिशम्बर दास व जसावल बिष्ण सिंह, जो कि विवाह कार्यों के प्रबंधक थे, के अच्छे प्रबन्ध के कारण बारात बड़े आराम और सुविधा से पहुंची और वहां बारात का बड़ा शानदार जलूस निकाला गया तथा सोने–चांदी के सिक्के, जो कि राजा साहिब ने विशेषतया इस अवसर के लिए बनवाए थे, बखेरे गए और नेत्रवाड़ा (बुरी नज़र से बचाव) के लिए बांटा गया।

इससे वहां के निर्धन लोग मालामाल हो गए और अब तक इस विवाह को याद करते हैं। यह विवाह विक्रमी सम्वत् 1939 के 5 फाल्गुन को सम्पन्न हुआ। विवाह के बाद बारात पड़ाव–पड़ाव ठहरती हुई सुरक्षित नाहन वापिस हुई और एक लम्बे समय बाद रानी–महल में खुशियां नज़र आई और सभी सगे सम्बन्धियों को, ईश्वर की कृपा से फिर खुशी प्राप्त हुई। शीशमहल में, जिसमें रानी साहिबा कुठलानी रहती थी, एक बार फिर रौनक हुई।

विवाह के बाद अतिथियों, सम्बन्धियों और दूसरे लोगों को तोहफे भेंट किये गए और कर्मचारियों को बहुत सा ईनाम दिया गया। उस समय तक शमशेर विला भी बन कर तैयार हो गया था। राजा शमशेर प्रकाश साहिब रानी महल अपने उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह के हवाले करके स्वयं शमशेर विला में रहने लगे। एक ख़्वास को वहां रखा परन्तु हफ्ते दस दिनों में एक–दो बार वह रानी–महल में आते और सगे सम्बन्धियों को इससे प्रसन्नता होती। वह उनको अच्छे कार्य करने के लिए प्रेरित करते थे।

विक्रमी सम्वत् 1940, तदनुसार 1883 ईसवी में डॉक्टर पियरसाल का स्वर्गवास हुआ और उनके स्थान पर डॉक्टर डीन साहिब, जो कि अंग्रेज़ी सरकार के पैंशनर थे और बड़े कुशल डॉक्टर थे, सिविल सर्जन नियुक्त किये गए। इस डॉक्टर के इलाज से राजा साहिब को, जो एक लम्बे समय से पेट दर्द के रोग से ग्रस्त थे और काफी लम्बे समय से इनको दौरा पड़ता था, लाभ हुआ। डॉक्टर डीन साहिब तीन साल तक नाहन में जीवित रहे और अन्ततः 1886 ईसवी में स्वर्ग सिधारे। वह नाहन में दफन किये गए।

राजा साहिब का मेलजोल अंग्रेज़ी अफ़सरों से बहुत बढ़ गया था इसलिए हर साल रियासत में कोई न कोई अंग्रेज़ अफसर आमंत्रित किया जाता था। राजा साहिब बड़ी रुचि से उन की खातिरदारी करते थे और आला अफ़सरों का रियासत में आना गर्व की बात माना जाता था।

**संवत् 1914 विक्रमी में**

राजा साहिब ने वायसराय हिन्द लॉर्ड डफ़रिन को नाहन में आने के लिए आमंत्रित किया जिसको लॉर्ड साहिब ने बड़ी मेहरबानी से कबूल किया। 20 अक्तूबर, 1885 ईसवी को लॉर्ड साहिब शिमला से चल कर डगशाई के रास्ते सिरमौर रियासत की सीमा पर पहुंचे जहां राजा साहिब ने इन का बड़े उत्साह से स्वागत किया। वायसराय ने पहला कैम्प जागीर पोणुवाला में नैना में लगाया जो कि डगशाई से नौ मील की दूरी पर सिरमौर की सीमा पर है। दूसरा कैम्प दूसरे रोज़ पच्छाद सरांह में, जो नैना से बारह मील की दूरी पर है और जहां तहसील है, लगाया गया। तीसरे रोज़ तीसरा कैम्प बनेटी में, जो सरांह से चौदह मील पर है, लगा। चौथे रोज़ 23 अक्तूबर, 1885 ईसवी को लॉर्ड डफ़रिन साहिब सुरक्षित नाहन पधारे।

नाहन में भी लॉर्ड साहिब का बड़े हर्ष उल्लास के साथ स्वागत किया गया। लॉर्ड साहिब केवल एक ही रोज़ 24 अक्तूबर को नाहन में ठहरे। उनकी खूब खातिरदारी और सेवा की गई। दूसरे दिन 25

अक्तूबर, 1885 ईसवी को नाहन से चल कर वे शिकार खेलने के लिए क्यारदादून में पहुंचे जो कि शिकार खेलने के लिए उत्तम स्थान है। अगले दिन जंगल में शेर के शिकार के लिए हांक लग गई परन्तु उस दिन जंगल में शेर नहीं निकला और सबको बड़ी निराशा हुई। लॉर्ड साहिब राजा साहिब के अतिथि सत्कार और प्रबन्ध से बहुत खुश होकर गए जैसा कि लेडी डफरिन साहिबा ने अपनी पुस्तक में व्याख्या की है।

राजा साहिब जो सदा ही विकास की कोई न कोई योजना सोचते रहते थे, ने शहर वालों की असुविधा को दूर करने के लिए, जो कि उनको घराट में अनाज ले जाकर पिसाने के समय होती थी, विशेष कर बारिश के मौसम में जब ज़्यादा बारिश होने के कारण घराट बन्द हो जाते थे, ईंजन से आटा पीसने की चक्की विक्रमी सम्वत् 1940 में नाहन में स्थापित की। इसकी देखरेख मिस्टर जॉस साहिब के हवाले की । क्योंकि यह चक्की बहुत बड़ी थी जिसमें सौ दो सौ मण आटा प्रतिदिन पीसा जा सकता था तथा आटा भी उसमें कुछ ज़्यादा गर्म हो जाता था, कुछ समय चल कर बन्द हो गई। इसका कारण अनाज की कमी और नाहन के निवासियों की इसमें रुचि न होना थी।

इस बीच राजा साहिब ने व्यापार को विकसित करने और शहरवासियों की सुविधा के लिए, कंवर रणजोर सिंह के रुपयों से कपड़े का एक बड़ा स्टोर नाहन में स्थापित किया। इसके लिए कपड़ा विलायत से मंगवाने की योजना बनाई गई। यह योजना इस लिए बनाई गई थी क्योंकि नाहन में विलायती कपड़े की कोई अच्छी दुकान न थी जिससे शहर वालों और दुकान वालों को अंग्रेज़ी कपड़ा रियायत से मिल सके। लेकिन दुकानदारों ने इस स्टोर में रुचि नहीं दिखाई इसलिए यह कार्य उस ढंग से नहीं चल सका जिस ढंग से राजा साहिब ने इसे चलाना चाहा। फिर भी यह स्टोर अब तक जारी है जिससे लोगों को बहुत सुविधा और आराम है।

इसके पष्चात् विक्रमी सम्वत् 1942 में राजकुमार वीर विक्रम सिंह का विवाह ज़िला अलीगढ़ के सहवाली में राव बलवन्त सिंह की

पुत्री से निश्चित हुआ। बारात के चलने से लगभग एक महीने पहले, जब राजकुमार का यज्ञोपवीत संस्कार (जनेऊ) हो रहा था, राजा साहिब के चहेते हाथी ब्रजराज को कम्पन की बीमारी हो गई जिसका कारण बाद में ऐसा मालूम हुआ कि इस हाथी के खास महावत बहादुर खां ने, जो बड़ा होशियार व्यक्ति था, हाथी को शादी में जाने के योग्य बनाने के लिए कुछ ठण्डा मसाला दिया जिससे इसकी मस्ती कम हो जाए और वह बारात के जलसे में भाग ले सके क्योंकि मस्ती की हालत में हाथी बहुत खूंखार हो जाते हैं। मगर बुरे भाग्य के कारण हाथी को ठण्डे मसाले से कम्पन हो गया जिस कारण वह बहुत बीमार हो अन्ततः भूमि पर गिर पड़ा।

राजा साहिब को इसकी बीमारी से बहुत दुःख और फिक्र हुआ। उन्होंने इसका बहुत इलाज करवाया परन्तु मौत के सामने इलाज की क्या चलती है। बेचारा हाथी दो सप्ताह इस मर्ज़ में रह कर मर गया जिस से राजा साहिब को अति दुःख हुआ, क्योंकि उसकी मष्त्यु ऐसे समय हुई थी जब राजकुमार का विवाह निकट था जिसमें इस का भाग लेना ज़रूरी ख़याल किया गया था। मष्त्यु अपने निश्चित समय से कभी नहीं टलती चाहे किसी का इससे कितना ही नुकसान क्यों न हो। मष्त्यु को किसी के आराम और तकलीफ से कोई सरोकार नहीं। हाथी मौत के पंजे से नहीं बचा और राजा साहिब ने शहर से थोड़ी दूर इसको दफन करवाया और इसकी कब्र बनाने का प्रस्ताव रखा जिसको राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब ने राजा शमशेर प्रकाश साहिब की मष्त्यु के पश्चात् विक्रमी सम्वत् 1964 में निर्मित करवाया (इस हाथी की मष्त्यु का वर्ष कब्र पर नहीं लिखा गया)। यह हाथी विक्रमी सम्वत् 1942 में मरा था।

राजकुमार के विवाह में दूसरे हाथी, जिनकी संख्या बीस पच्चीस थी, शामिल हुए परन्तु ब्रजराज की अनुपस्थिति से जलूस में उतनी रौनक नहीं हुई जितनी उस की उपस्थिति से होती। ऐसा प्रतीत होता था कि इन हाथियों की कतार बगैर सरदार के है। राजा साहिब

को इसका ऐसा रंज था कि वह अलीगढ़ में बारात के जलूस के समय सोने के हौदे पर सवार न हुए बल्कि एक हाथी पर गद्दी डलवाकर साधारण ढंग से ही सवार हो गए जब कि उत्तराधिकारी दूसरे राजकुमार और रिश्तेदार हौदों में सवार हुए। बारात नाहन से प्रस्थान करके बरारा रेलवेस्टेशन पर स्पेशल ट्रेन में सवार हो कर अलीगढ़ पहुंची। शहर में हाथियों पर जलूस निकाला गया और चांदी के सिक्के जो कि नाहन में तैयार करवाये गए थे, उन की बखेर की गई। जलूस बड़ी धूमधाम से अलीगढ़ बाजार से होकर कैम्प में उतरा जो कि बारात के लिए लगाया गया था। शहर के सारे ब्राह्मणों और मन्दिरों इत्यादि को राजा साहिब ने दक्षिणा दी।

दूसरे दिन वहां से प्रस्थान करके बारात उसी जलूस के साथ सहवाली पहुंची। बारात के लिए वहां एक बड़ा शानदार कैम्प लगाया गया था। उसी रात राजा साहिब के बनाये गये तम्बू में उनके शयनकक्ष से राजा साहिब के वस्त्र जो कि उन्होंने दिन में पहने हुए थे उनकी जेब की घड़ी के साथ कोई आदमी चुराकर ले गया। इसका कुछ पता नहीं लगा। बारातियों की संख्या बहुत अधिक थी इसलिए सहवाली के रईस से इसकी खातिरदारी का उचित प्रबन्ध न हो सका। इसका कारण यह था कि उनके पास कोई कुशल प्रबन्धक न था। इसलिए राजा साहिब ने मुंशी बिशन सिंह जसावल को, जो कि विवाह का प्रबन्धक था, अपने कार्यकर्ताओं से सारे प्रबन्ध कराने का आदेश दिया। जिसको मुंशी ने आदेश अनुसार तुरन्त पूरा किया। विवाह की रस्में पूरी होने के बाद निर्धनों में धन बांटा गया। वहां से प्रस्थान कर बारात सुरक्षित वापिस नाहन आई।

विक्रमी सम्वत् 1942, तदनुसार 1885 ईसवी में कर्नल व्हाईटिंग साहिब, जो सेना के कमांडिंग अफसर थे, का नाहन में स्वर्गवास हो गया। उनके उत्तराधिकारियों की इच्छानुसार उन का मृतक शरीर अम्बाला पहुंचाया गया और वहां के कब्रीस्तान में पूरे सैनिक सम्मान के साथ कर्नल साहिब को दफना दिया गया। उनके स्थान पर जनरल

लैन साहिब, जो अंग्रेज़ी सरकार के पैंशनर थे, को कमांडिंग ऑफिसर नियुक्त किया गया। विक्रमी सम्वत् 1943, तदनुसार 1886 ईसवी में लॉर्ड डफरिन वायसराय हिन्द ने, जो अपने नाहन के दौरे से वापिसी पर अति प्रसन्न होकर लौटे थे, राजा शमशेर प्रकाश साहिब को उत्तम खिताब GCSI से सम्मानित किया। राजा साहिब को शिमला आमंत्रित कर स्वयं खिताब (Insignia) से सुशोभित किया और उनकी तोपों की सलामी में दो की बढ़ोतरी कर दी जिससे राजा साहिब की प्रसिद्धि और गर्व और भी बढ़ गया। इस पर जनता और सगे सम्बन्धियों ने बहुत खुशी मनाई। नाहन में एक विजयद्वार बनवाया गया। जब राजा साहिब शिमला से नाहन वापिस पधारे तो उनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया गया और शुभ कामनाएं दी गईं। जनता ने अंग्रेज़ी सरकार का आभार भी प्रकट किया।

पाठकों को राजा शमशेर प्रकाश साहिब की ऊपर लिखी गई जानकारी से उनके स्वभाव बारे अच्छी तरह ज्ञात हो गया होगा कि उनका मस्तिष्क और विचार शक्ति कभी खाली नहीं रहती थी और किसी न किसी नई योजना में लगी रहती थी। वह राजस्व और प्रशासनिक प्रबन्धन में ही लीन नहीं रहते थे बल्कि जनता के काम काज में भी वैसे ही गहरी रुचि लेते थे। उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1943 में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड एक्ट के अनुसार जनता के कल्याण के लिए रियासत में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड स्थापित किया और इसका विशेष कार्यालय नाहन में रखा और हर तहसील में लोकल बोर्ड स्थापित किये। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के प्रेजिडेंट स्वयं राजा साहिब बने और कंवर सूरत सिंह इसके वाइस प्रेज़िडेंट हुए। कंवर वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह तथा दूसरे अहलकार व जेलदार इत्यादि इसके सदस्य नियुक्त किये। जनता के तमाम मामले व भवन इत्यादि का प्रबन्ध और निगरानी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को सौंपी गई।

इसी प्रकार उसी वर्ष विक्रमी सम्वत् 1943 में नाहन के मदरसा (पाठशाला), जो कि साधारण स्थिति में था, को मिडल स्कूल बनाया

और नियमित किया अर्थात् अंग्रेज़ी पारसी के शिक्षक, जिन्होंने प्रशिक्षण कालेज में शिक्षा पाकर परीक्षा पास की थी, नियुक्त किये। पण्डित दीवान चन्द को इस का हैड मास्टर नियुक्त किया। यह व्यक्ति बड़ा कुशल और अच्छे स्वभाव वाला था। उसके प्रयासों से स्कूल का बहुत विकास हुआ और विद्यार्थी परीक्षा में उत्तीर्ण होने लगे जिससे राजा साहिब को प्रसन्नता हुई। राजा साहिब ने इस विकास और जनता में शिक्षा की रुचि देखी तो इस स्कूल को मिडल से हाई स्कूल बना दिया और शिक्षकों की संख्या में भी बढ़ोतरी कर दी। पण्डित दीवान चंद को हाई स्कूल का हैड मास्टर नियुक्त किया और उनके वेतन में इज़ाफा कर दिया। यह हाई स्कूल अब तक चल रहा है, प्रतिवर्ष विद्यार्थी उत्तीर्ण हो रहे हैं और महाराजा की लम्बी आयु की प्रार्थना करते हैं।

राजा साहिब ने रियासत के बड़े–बड़े कस्बों में स्कूल स्थापित किये जिनकी संख्या सत्तर थी। इनमें उर्दू हिन्दी अर्थात् नागरी की शिक्षा दी जाती थी। इन स्कूलों की निगरानी के लिए देहली के बाबू सौदागर लाल, जो बड़े कुशल व्यक्ति हैं, को इस्पैक्टर नियुक्त किया था परन्तु विद्यार्थियों की संख्या कम होने से कुछ समय बाद ये स्कूल बन्द करने पड़े, तथापि तहसीलों में एक एक प्राईमरी स्कूल चलता रहा। इस बीच राजा साहिब ने उद्योग और हस्तकला के विकास के लिए नाहन में एक आर्ट स्कूल भी स्थापित किया था। इस में लखनऊ से एक सरदार, ज़िला होशियारपुर से एक बढ़ई, मुरादाबाद इत्यादि से एक लोहार बुलाकर विद्यार्थियों के प्रशिक्षण के लिए नियुक्त किये परन्तु यह आर्ट स्कूल भी विद्यार्थियों की संख्या कम होने के कारण कुछ समय बाद बन्द कर दिया गया।

राजा साहिब अंग्रेज़ी सरकार के बड़े शुभचिंतक थे। जब कभी भी अवसर मिलता अपनी शुभचिंता और वफादारी जतलाने में कोताही नहीं करते थे। विक्रमी सम्वत् 1944, तदनुसार 1887 ईसवी में, जब हिन्दुस्तान की मलिका क्वीन विक्टोरिया के 50 वर्षीय शासन की हिन्दुस्तान में जुबली मनाई गई तो उस अवसर पर राजा साहिब ने

प्रसन्नता प्रकट करके इसकी यादगार में एक वाटरवर्क्स बनाने का प्रस्ताव किया। नाहन में ग्रीष्म काल में आमतौर पर पानी की कमी हो जाती थी इसलिए उन्होंने एक पहाड़ी स्थान से जिसका नाम लोहड़ी है जो नाहन से 5, 6 मील की दूरी पर है और जहां पानी का स्रोत था, पानी लाने की योजना बनाई थी और इसका नाम केसर–ए–हिन्द वाटरवर्क्स रखा था। इस योजना के लिए शहर के जाने माने व्यक्तियों और आम जनता ने भी खुशी से चंदा दिया था परन्तु यह कार्य स्रोत के सूख जाने से चालू न हुआ।

क्योंकि अब उत्तराधिकारी राजकुमार सुरेन्द्र विक्रम सिंह साहिब बालिग हो गये थे और शिक्षा इत्यादि से भी निपट गये थे इसलिए राजा साहिब ने उन्हें प्रशासन की शिक्षा देने और रियासत के कामकाज में शामिल करने का विचार किया। क्योंकि राजकुमारों को रियासत के कारोबार और प्रबन्ध से अनजान रखना, जैसा कि आजकल बहुत सी रियासतों में देखा जा रहा है, कदापि ठीक नहीं है, क्योंकि किताबी शिक्षा और चीज़ है और रियासतों के कारोबार चलाने की शिक्षा और है। यूरोप में भी आम तौर पर यही रिवाज है कि किताबी शिक्षा के बाद हरेक व्यक्ति को किसी व्यवसाय की शिक्षा दी जाती है जिसमें इसको काम करना है और फिर निम्न स्तर से धीरे–धीरे उसकी कुशलता के अनुसार उसको बड़े पद पर तरक्की दी जाती है परन्तु हिन्दुस्तान की रियासतों में एक अनोखा ही ढंग है कि बाप की मृत्यु के बाद राजकुमार को पूरी शक्तियां प्राप्त हो जाती हैं और पूरे प्रशासन का प्रबन्ध इसके हाथ में आ जाता है जिससे वह पूरी तरह अनजान होता है। इसका परिणाम यह होता है कि अच्छी शिक्षा के होते हुए भी प्रबन्धन के कार्यों में उसकी समझ–बूझ काम नहीं आती और वह कठिनाइयों में घिर जाता है और इसे कामकाज चलाना मुश्किल हो जाता है। इसी कारण वह किसी स्वार्थी चालाक अहलकार के जाल में फंस कर हर प्रकार के गलत कार्य करता है जिसके कारण वह स्वयं

तो बदनाम होता ही है, जनता को भी दुःख तकलीफ भोगनी पड़ती है। सरकार को तो कठिनाई होती ही है।

इसी कारण राजा शमशेर प्रकाश ने दूरदर्शिता से काम लेते हुए दोनों राजकुमारों को प्रशासन और प्रबन्धन की शिक्षा देने का निर्णय लिया और राजकुमार सुरेन्द्र विक्रम सिंह को पहले पहल विक्रमी सम्वत् 1944 में अस्तबल और हाथीघरों का प्रबन्धन और निगरानी का कार्य दिया। इसके बाद उनको मैजिस्ट्रेट तृतीय श्रेणी की शक्तियां देकर उनकी कचहरी अलग स्थापित कर दी। इसके पश्चात् जब उन्हें इस कार्य की जानकारी हो गई तो उनको मैजिस्ट्रेट द्वितीय श्रेणी की शक्तियां मिल गईं। दूसरी ओर कंवर वीर विक्रम सिंह को सेना में लैफ्टिनेंट नियुक्त किया और इनको फौजी प्रशिक्षण के लिए जनरल लेन साहिब के सपुर्द किया जो रियासती फौज के कमांडिंग ऑफिसर थे। इस प्रकार से राजकुमारों को प्रशासनिक और सैनिक कार्यों में प्रशिक्षित किया। जैसे-जैसे ये राजकुमार विकास करते रहे, वैसे-वैसे राजा साहिब ने उनकी शक्तियां भी बढ़ा दीं।

इसी बीच राजा साहिब ने पुराने बन्दोबस्त के समाप्त हो जाने पर नये बन्दोबस्त के आदेश जारी किये। नया बन्दोबस्त विक्रमी सम्वत् 1944 में लागू हुआ। मुंशी परमेश्वरी सहाय, जो कि अंग्रेज़ी सरकार में बन्दोबस्त के सुपरिन्टेन्डेंट के पद पर रह चुके थे और राजस्व विभाग के एक कुशल अधिकारी थे, अंग्रेज़ी सरकार के पैंशनर थे, को बन्दोबस्त का प्रबन्धक नियुक्त किया। तहसील नाहन और माजरा में नई पैमाइश हुई और तहसील पलवी पच्छाद में कुछ बदलाव किया गया। इस बन्दोबस्त में मालगुज़ारी की जांच पड़ताल बड़ी सख्त हुई जिससे मालगुज़ारी में पच्चीस प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। इसके अतिरिक्त पच्चीस प्रतिशत रकम की सवाई (सवा छः प्रतिशत) लोकरेट (मालवा ?) इत्यादि में बढ़ाई गई। सरकारी वनों में चरने वाले पषुओं पर प्रतिपशु के हिसाब से महसूल लगाया गया जिससे कष्षक नाराज़ तो हुए परन्तु किसी ने पुराने बन्दोबस्त की तरह विरोध नहीं किया और

बन्दोबस्त आसानी से सम्पन्न हुआ परन्तु इस बन्दोबस्त के कागज़ात ऐसे अच्छे नहीं बने जैसे कि होने चाहिए थे, क्योंकि जो कर्मचारी बन्दोबस्त के प्रबन्धक ने भर्ती किया था वह इस कार्य का विशेषज्ञ न था। नक्शे इत्यादि भी साफ और सही नहीं बने।

इस बन्दोबस्त के बाद तहसीलों में अंग्रेज़ी सरकार के कानून कायदों पर निर्धारित कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़ाई गई और ज़ैलदार नियुक्त किये गए। तहसील पलवी के स्थान पर रेणुका और माजरा के स्थान पर पांवटा में स्थानान्तरित हुई। इस अवसर पर यह बता देना भी रोचक होगा कि पहाड़ी क्षेत्र विशेष कर गिरी पहाड़ के क्षेत्र में जब बन्दोबस्त चल रहा था, तो कुछ लोगों ने गुरु जवाहर सिंह पर, जिसको एक करामाती सिक्ख साधू बताते हैं, विश्वास करके इसके नाम पर झण्डे स्थापित किये और अपने आप को इसका चेला घोषित किया। लोगों पर यह साबित करने के लिए कि इनमें बजद (खेल) आता है, अपने आप को गुरु का चेला ज़ाहिर किया। वे लोगों के आपसी झगड़े इत्यादि का निपटारा करने लगे तथा इनकी इच्छाओं इत्यादि की पूर्ति करने के बहाने और भविष्यवाणी की सहायता से इनको अपना अनुयायी बना लिया और इनसे भेंटें प्राप्त करने लगे। यह बात इतनी फैली कि सारे पहाड़ी क्षेत्र में लगभग हर एक गांव में गुरु जवाहर सिंह का झण्डा स्थापित हो गया और कोई न कोई व्यक्ति इस गुरु का चेला बन गया। साधारण लोग अपने मुकद्दमे इत्यादि इनके पास ले जाने लगे।

जब राजा साहिब को यह समाचार मिला तो उन्होंने जवाहर सिंह की परीक्षा ली। जब उसका षड्यन्त्र सामने आया तो राजा साहिब ने उनके तमाम झण्डे उखाड़ कर नाहन लाने के आदेश दिये ताकि गुरु जवाहर सिंह का झण्डा विभिन्न स्थानों की बजाय केवल नाहन में स्थापित किया जाये। राजा साहिब की इससे मनशा यह थी कि लोगों में इन के विश्वास के प्रति ठेस न पहुंचे और वह यह भी चाहते थे कि नाहन में रौनक हो इसलिए गुरु जवाहर सिंह का झण्डा

नाहन में एक पहाड़ी पर स्थापित किया गया और इसका एक चेला नियुक्त किया गया। अब प्रतिवर्ष होली, दशहरा और वैशाखी पर नाहन में गुरु का मेला होता है और पहाड़ी क्षेत्रों से लोग दर्शन करने आते हैं।

उपरोक्त घटना के कुछ दिनो बाद अचानक ही राजा साहिब की नाक से खून चलने लगा जो लगातार दो तीन दिन तक चलता रहा। इससे राजा साहिब को न केवल बहुत तकलीफ़ और कमज़ोरी हो गई थी बल्कि वह जीवन से निराश हो गए थे। मगर एक डॉक्टर मंसूरी से बुलाया गया जिसके इलाज से इनका स्वास्थ्य ठीक हो गया। गांव में लोगों ने राजा साहिब की इस बीमारी और तकलीफ़ को गुरु के झण्डे उखाड़ने से जोड़ दिया और इसकी पहाड़ों में बहुत चर्चा रही परन्तु यह तो केवल जाहिलों का विचार और विश्वास था। असल में राजा साहिब को नक़सीर फूटने का मर्ज़ बहुत पहले से था और ग्रीष्मकाल में इनके नाक से कभी–कभी खून जाता था जो सिर पर पानी डालने से दूर हो जाता था। परन्तु इस बार नकसीर का दौरा बड़ी ज़ोर से पड़ा क्योंकि बहुत दिनों से नकसीर नहीं फूटी थी।

जैसे–जैसे रियासत में विभाग बढ़ते गए वैसे–वैसे कार्यालयों और कचहरी इत्यादि के नये भवनों की ज़रूरत होती गई। इसके अलावा सड़कों और रियासती भवनों के निर्माण, निगरानी और मुरम्मत के लिए भी जानकार लोगों की ज़रूरत राजा साहिब को महसूस हुई। उन्होंने इसके लिए एक जनकल्याण का एक विभाग स्थापित किया और इसमें दो ओवरसियर नियुक्त किये और फाउण्डरी के सुपरिन्टेन्डेंट इंज़ीनियर जॉन साहिब को इन पर इन्सपैक्टर नियुक्त किया। इसी प्रकार जब अंग्रेज़ी उर्दू कार्यालयों के नियमित हो जाने से छपाई का काम बढ़ गया तो उन्होंने प्रैस और स्टेशनरी का विभाग अलग से स्थापित किया और इसके लिए अंग्रेज़ी टाईप के अक्षर इत्यादि मंगवाये। बाबू सराजुद्दीन को इस विभाग का सुपरिन्टेन्डेंट नियुक्त

किया जिसने छापेखाने के उद्देश्य से सिरमौर गज़ट नामक एक अखबार जारी किया।

विक्रमी सम्वत् 1940 रियासत के लिए बड़ा शुभ और खुशी का वर्ष हुआ है। चौदह माघ सम्वत् 1944 को उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह के घर लाड़ी साहिबा सुकेती से एक पुत्र रियासत का उत्तराधिकारी उत्पन्न हुआ। इससे तमाम परिवार व दूसरे सगे सम्बन्धियों व रियासत के हर आम और खास व्यक्ति को बड़ी प्रसन्नता हुई। इसी साल में 18 फाल्गुन को कंवर रणज़ोर सिंह का विवाह मियां शंकर सिंह साहिब, जो ज़िला कांगड़ा के "रे" के एक जाने माने रईस और तनवार राजपूत हैं, की पुत्री से हुआ। मियां शंकर सिंह नूरपुर के राजपरिवार में से हैं। विक्रमी सम्वत् 1945 में राजा साहिब ने उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह के पुत्र और अपने पोते के पैदा होने की खुशी में एक बड़ा समारोह किया। रियासत के तमाम कार्यकर्ताओं और ज़ैलदारों, नम्बरदारों इत्यादि को उनकी हैसीयत के अनुसार वस्त्र और नकदी इनाम दिये गये। राजकुमार का नाम अमर सिंह रखा गया और राजकुमार के उत्पन्न होने की खुशी में मुंशी लाडली प्रसाद ने, जो कि रियासत में वकालत का काम करता था, अमर पत्रिका नामक एक अखबार जारी किया। कुछ समय बाद सिरमौर गज़ट, जिसका ऐडिटर सराजुद्दीन था और अमर पत्रिका में नोकझोंक शुरू हो गई जो आपसी रंजिश में बदल गई क्योंकि एक अखबार ने हिन्दुओं का पक्ष लिया और दूसरे ने मुसलमानों का जैसा कि आमतौर पर अखबारों का रिवाज़ है। इस कारण दोनों के बन्द कर देने में ही भलाई समझी गई।

राजा साहिब को रियासत में हर प्रकार के विकास का खयाल रहता था इसलिए उन्होंने मवेशियों की नस्ल को सुधारने तथा उनके इलाज के लिए एक वैटरनरी ऐसिस्टैंट मुहम्मदीन को नियुक्त किया। नस्लों की तरक्की के लिए डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की आय से अच्छी नस्ल के सांड, घोड़े, बैल और दुम्बे इत्यादि मैदानी इलाके से मंगवाकर चारों लोकल बोर्डों में भेजे और दुम्बे पहाड़ी कष्षकों को दिये गये ताकि

इनकी नस्ल का विकास हो और ऊन के उत्पादन से कृषकों को लाभ पहुंचे।

इसके पश्चात् राजा साहिब को विचार आया की जनता को पत्र इत्यादि भेजने में कठिनाई होती है, विशेष कर उन लोगों को जो कि रियासत से बाहर नौकरियां करते हैं। रियासत सिरमौर के बहुत से निवासी अंग्रेज़ी सरकार की सेना में सेवारत हैं और बहुत से कृषक अंग्रेजी इलाके में मेहनत मज़दूरी करते हैं। नाहन खास में तो अंग्रेजी सरकार की तरफ से एक डाकघर स्थापित था परन्तु दूसरे क्षेत्रों में कोई डाकघर किसी जगह नहीं था जिस कारण गांव में पत्र पहुंचाने की कठिनाई होती थी। राजा साहिब ने विक्रमी सम्वत् 1944 में अंग्रेज़ी सरकार की प्रणाली पर चारों तहसीलों में डाकघर खोले और प्रत्येक डाकघर में हरकारे और पत्रवाहक नियुक्त किये जो प्रति सप्ताह हरेक गांव में पत्र इत्यादि पहुंचाते थे। इन रियासती डाकघरों में अंग्रेज़ी सरकार के डाकघर से डाक दी जाती थी जो हर दिन इन डाकघरों में पहुंच जाती थी। इससे जनता को बड़ी सुविधा हुई और लाभ पहुंचा।

फिर राजा साहिब ने आवश्यक समाचार इत्यादि नाहन से भेजने की कठिनाई को महसूस किया। नाहन से डाक सिर्फ एक बार जाती थी। ज़रूरी कामकाज के लिए रियासत तथा वाणिज्य व्यवसाय के लोगों को कठिनाई होती थी। यद्यपि इस काम के लिए रियासत में दो ऊंट रखे हुए थे परन्तु शहरवासियों को अधिक खर्च करके कुछ न कुछ कार्यवाही करनी पड़ती थी। इसलिए राजा साहिब ने 1885 ईसवी में अंग्रेज़ी सरकार से नाहन में टेलीग्राफ कार्यालय खुलवाया। रियासत से हर वर्ष कुछ राशि इस टेलीग्राफ कार्यालय के खर्च हेतु अंग्रेज़ी सरकार के टेलीग्राफ विभाग में जमा करवानी होती थी। रियासत तथा जनता को इससे बड़ा आराम हुआ। शुरू–शुरू में तो कुछ वर्ष तक यह राशि अपनी ओर से अदा करनी पड़ी परन्तु अब इस में कमी नहीं थी। जैसा हम पहले बता चुके हैं कि राजा साहिब अंग्रेज़ी सरकार के शुभ

चिंतक थे और उसकी सेवाओं को पूरा करना अपना उतना ही दायित्व समझते थे जितना कि रियासत के कामकाज को पूरा करना।

विक्रमी सम्वत् 1946, तदनुसार 1889 ईसवी में जब अग्रेज़ी सरकार ने महाराजाओं और राजाओं के साथ हुई सन्धियों के अनुसार रियासतों को सेना की एक निश्चित संख्या रखने और सरकार की सेवाओं के लिए अलग रखने की मुहिम चलाई तो राजा शमशेर प्रकाश साहिब उन रईसों में से थे जिन्होंने सबसे पहले इस प्रस्ताव का समर्थन किया था और 500 प्यादा फ़ौज और दो मैक्सीम टोपे देने की इच्छा प्रकट की थी। परन्तु सरकार ने केवल 150 प्यादा फ़ौज और तीस sapper मंजूर किये थे। राजा साहिब ने बाद में प्यादा फ़ौज के स्थान पर दो कम्पनियां sapper देने की इच्छा ज़ाहिर की जिसको सरकार ने मंजूर कर लिया। राजा साहिब ने राजकुमार कंवर वीर विक्रम सिंह को इसका commandant नियुक्त किया।

इसके बाद राजा साहिब ने रियासती वनों की दरुस्ती और नियमित करने की ओर ध्यान दिया। उन्होंने एक उतीर्ण रेंजर मनवीर गुरंग को नियुक्त किया और वनों के दो डिवीज़न उत्तरी और दक्षिणी बनाये। इससे पहले रियासत के कुल जंगलों का एक ही डिवीज़न था। कंवर देवी सिंह को जो कि पैंशनर कंज़रवेटर थे, दक्षिणी डिवीज़न का और मनवीर गुरंग को उत्तरी डिवीजन का अफसर नियुक्त किया और स्वयं कंज़रवेटर की शक्तियों का प्रयोग करने लगे। दोनों डिवीज़नों में फॉरेस्ट गार्ड नियुक्त किये और उनके कार्यालय भी अलग बनाये। राजा साहिब ने जंगलों के विकास और उन के संरक्षण में बड़ी रुचि ली। कुछ समय बाद दो के स्थान पर चार डिवीज़न बना दिये और उत्तीर्ण रेंजरों को इनका डिवीज़न ऑफिसर बनाया। एक अंग्रेज़ अफसर मिस्टर टॉमसन को, जो कि सरकार का रिटायर्ड कंज़रवेटर और बड़ा कुशल अफसर था, जंगलात और चाय बागान का सुपरिन्टेन्डेंट नियुक्त किया।

राजा साहिब ने रियासत में बहुत से विभाग तो सरकारी

प्रणाली के अनुसार स्थापित कर दिये थे परन्तु अभी भी कुछ विभाग स्थापित नहीं हो पाये थे और न पूरी तरह से सरकार के नियमों की पाबन्दी इन में होती थी। इसलिए उन्होंने अब सरकार का सिविल सर्विस कोड और दूसरे नियम जो अभी तक रियासत में लागू नहीं हुए थे, लागू कर दिये तथा विभागों में फिर से दुरुस्ती और कुछ फेर बदल किया। कुछ कार्यालयों में उर्दू के स्थान पर अंग्रेज़ी में कार्य करने के आदेश दिये। उर्दू पढ़े लिखों के स्थान पर इन में अंग्रेज़ी पढ़े लिखे क्लर्क नियुक्त हुए। विक्रमी सम्वत् 1947 में इजलास–ए–खास का नाम हैड ऑफिस रखा और उन के दफ्तर का काम अंग्रेज़ी में होने लगा। हैड ऑफिस में हरेक शाखा के अलग–अलग सैक्रेटरी नियुक्त हुए और इस वर्ष नियमित रूप से ज़िला सिरमौर की स्थापना हुई। अपने उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह को, जिन्हें कार्य की भालिभांति जनकारी हो गई थी कलैक्टर और ज़िला मैजिस्ट्रेट नियुक्त किया। उन्होंने इस कार्य को बड़ी कुशलता से चलाया।

अकाउंट और खजाना इत्यादि में भी उर्दू के स्थान पर अंग्रेज़ी लागू की गई। जगाधरी निवासी पण्डित विशम्भर दास को , जो कि हिसाब में बडे कुशल और समझदार व्यक्ति हैं, लेखा परीक्षक नियुक्त किया और उनके नीचे उर्दू और अंग्रेज़ी पढ़े क्लर्कों का अमला ज़रूरत अनुसार रखा गया। पण्डित विशम्भर दास के भाई पण्डित प्रभुदयाल को खज़ाने का हैड क्लर्क नियुक्त किया। पण्डित विशम्भर दास ने बड़ी मेहनत और होशियारी से रियासत के हिसाब किताब की प्रणाली को नियमित और ठीक किया। हरेक हिसाब की नियम अनुसार जांच पड़ताल होने लगी जिससे प्रबन्ध में बड़ी सुविधा हुई। जहां पण्डित विशम्भर दास की सेवाओं से अकाउंट ऑफिस के कामकाज में विकास हुआ वहीं पण्डित प्रभुदयाल ने भी खजाना के कामकाज को अच्छी तरह से चलाया।

अब राजा साहिब ने रियासत में सरकार के न्यायालयों की प्रणाली स्थापित की। नाहन के तहसीलदार को मैजिस्ट्रेट द्वितीय श्रेणी

व मुंसिफ़ द्वितीय श्रेणी और मुंशी रहमत अली को डिस्ट्रिक्ट जज तथा मैजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी और अपने उत्तराधिकारी को ज़िला मैजिस्ट्रेट नियुक्त किया। राजा साहिब की अदालत को अपील अदालत बनाया गया। जब ये अदालतें नियमित हो गईं तो राजा साहिब ने पुलिस विभाग को भी इसी तरह नियमित किया। मिस्टर एस.एस.व्हाईटिंग को, जो कर्नल आर.सी. व्हाईटिंग के पुत्र थे, पुलिस सुपरिन्टेन्डेट नियुक्त किया। चौधरी प्रताप सिंह को, जो ज़िला अम्बाला के बिलासपुर कस्बे के एक राजपूत परिवार में से हैं और कुछ वर्षों से रियासत में नौकरी कर रहे हैं, इन्स्पैक्टर नियुक्त किया। इन के अधीन कायदे के अनुसार कोर्ट डिप्टी इंस्पैक्टर, सारजैंट तथा कॉन्स्टेबल इत्यादि ज़रूरत अनुसार नियुक्त किये गए। इस विभाग के नियमित हो जाने से रियासत तथा जनता को बड़ा लाभ पहुंचा क्योंकि बहुत सी घटनाओं में अपराधियों का खात्मा होने लगा। जो अपराधी रियासत में अपराध करके सरकार के इलाके या दूसरी रियासतों में चले जाते थे उनकी वापसी का प्रबन्ध ा राजा साहिब ने किया। जिस कारण अपराधियों को अनुचित आश्रय मिलना बन्द हो गया और वे अपने कर्मों के लिए दण्डित होने लगे।

एक जेल सरकारी नियमानुसार स्थापित की गई जिसमें कैदियों की निगरानी के लिए एक दरोगा और कुछ बन्दूकधारी नियुक्त किये गए। सिविल सर्जन को जेल का सुपरिन्टेन्डेंट नियुक्त किया। कैदियों के रहने और खाने पीने का भी अच्छा प्रबन्ध किया और इनको सरकारी जेलों में नियमों के अनुसार दस्तकारी की शिक्षा दी जाने लगी। जब राजा साहिब को रियासत के कामकाज और प्रबन्ध से समय नहीं मिला और जुडिशियल काम--काज के लिए वह समय न बचा पाये तो उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1948 में एक उच्च न्यायालय अपीलों की सुनवाई के लिए स्थापित किया जिसका नाम बैंच कोर्ट रखा और इसमें दो जज रखे। सीनियर जज उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह को और दूसरा जज बाबू नारायण सिंह को, जो एक होशियार और कुशल तहसीलदार था, नियुक्त किया। इस न्यायालय में रियासत

की सारी अदालतों से सुनवाई के लिए केस आते थे। इस प्रकार राजा साहिब स्वयं जुडिशियल काम से मुक्त हो गए परन्तु दोनों जजों की राय में भिन्नता होने के समय राजा साहिब की राय से फैसला होता था।

जिस प्रकार राजा साहिब रियासत के प्रशासन का प्रबन्ध करते थे और विभिन्न विभाग खोलते थे उसी प्रकार वह रियासत के राजस्व को बढ़ाने के लिए कषषि और वाणिज्य की ओर भी ध्यान देते थे। उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1947 में कृषि सहित एक चाय का बाग जिसका नाम एनफिल्ड है, ज़िला देहरादून में और एक चाय बाग चीरापानी , ज़िला कुमाऊं में खरीदा। इन बागों से रियासत की आय में वृद्धि हुई। इसी वर्ष कंवर वीर विक्रम सिंह की सहावली वाली पत्नी से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम रणविजय सिंह रखा गया।

क्योंकि अब रियासत में अंग्रेज़ों की संख्या बढ़ गई थी और अंग्रेज़ों और राजकुमारों के आपस में मिल बैठने के लिए कोई मनोरंजन का स्थान नहीं था इस लिए राजा साहिब ने विक्रमी सम्वत् 1948, तदनुसार 1891 ईसवी में एक क्लब की नींव रखी और इस का नाम सिरमौर क्लब रखा। राजा साहिब, उत्तराधिकारी सुरेन्द्र विक्रम सिंह, कंवर सूरत सिंह, कंवर रणजोर सिंह, कंवर वीर विक्रम सिंह, डाक्टर निकलसन व मिस्टर जॉन्स इस क्लब के सदस्य बने। प्रत्येक सदस्य ने क्लब के भवन के निर्माण के लिए चंदा दिया। भवन पक्का बनाया गया था इसलिए चंदे की रकम काफी नहीं हुई। इस पर राजा साहिब ने म्यूनिसिपल कमेटी से सहायता दिलवा कर भवन को पूरा करवाया। इसमें बिलियर्ड टेबल, फर्नीचर इत्यादि सामान मंगवा कर लगाया गया। इसका मासिक चंदा दस रुपये प्रति सदस्य रखा गया। इस क्लब के होने से मिलने–जुलने और एक दूसरे से वार्तालाप करने की बहुत सुविधा हो गई।

1892 ईसवी में जब जनरल लेन साहिब सेवा से मुक्त हो गए तो राजकुमार वीरविक्रम सिंह को, जिन्होंने सैनिक प्रशिक्षण में अच्छी

जानकारी प्राप्त कर ली थी फौज का कमांडिंग ऑफिसर नियुक्त किया। उन्होंने बड़े चाव और प्रयास से सेना के विभाग का बड़ा विकास किया। अच्छी कार्य कुशलता के कारण रियासत और सरकार से उनको सम्मान प्राप्त हुए और अंग्रेज़ी फौज में honourary lieutenant नियुक्त हुए।

विक्रम सम्वत् 1950 में राजा साहिब की बहन देयी साहिबा बुखार से पीड़ित हुई। जब उनकी तबीयत ज़्यादा बिगड़ गई तो उन्होंने पांवटा, जहां पर देयी साहिबा ने एक ठाकुरद्वारा बनाया हुआ था, जाने की इच्छा प्रकट की। राजा साहिब ने देयी साहिबा के साथ प्रस्थान किया परन्तु पांवटा पहुंचने से पहले ही देयी साहिबा का देहान्त हो गया। इससे राजा साहिब को अति दुःख हुआ परन्तु भगवान की मर्जी के आगे सब्र और शांति के सिवा कोई चारा नहीं। अन्ततः देयी साहिबा के मृतक शरीर की पांवटा में जमना नदी के किनारे हिन्दू रीति–रिवाज से अंत्येष्टि कर दी गई। उनकी स्मृति में एक समाधि उन द्वारा बनवाये गये ठाकुरद्वारा के निकट निर्मित करवाई गई।

यह बात भी बताने योग्य है की राजा शमशेर प्रकाश के विचाराधीन वे सारे कार्य थे जिन पर देश का विकास और जनता का कल्याण निर्भर करता है। उन्होंने रियासत में ऐसे कार्य करवाये जो उस समय सरकार के क्षेत्र में भी कुछ खास–खास जगह ही हुए थे। हिन्दुस्तान में कृषि, उद्योग और हस्तशिल्प को विकसित करने का विचार, जैसा कि सरकार और रियासतों के शासकों को अब आ रहा है, उस काल में नहीं था। राजा शमशेर प्रकाश ने उस काल में अपनी रियासत में कृषि का विकास करने के विचार से डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के अधीन एक व्यक्ति को सुपरवाईज़र नियुक्त किया जिसका दायित्व कृषकों को खेती बाड़ी के नये तरीके बताना था और इस बारे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को समय–समय पर सूचना देना था।

नाहन में भी एक नर्सरी स्थापित की गई जहां पर बीजों इत्यादि पर काम होता था। यह नर्सरी कुछ समय तक सिविल सर्जन

डाक्टर निकल्सन के प्रबन्ध में रही फिर मिस्टर शेफिल्ड को जो इसी समय एक बड़े चाय बाग के प्रबन्धक रह चुके थे और जिनको कृषि में बड़ी रुचि थी इस नर्सरी का कार्य भार दिया गया। परन्तु जब इस कार्य में राजा की इच्छा अनुसार विकास नहीं हुआ तो राजा साहिब ने कुछ समय बाद इसको बन्द कर दिया। फिर कुछ कृषकों को खेतीबाड़ी के नये तरीके सीखने के लिए कानपुर भेजा परन्तु कृषकों ने इस में ज़्यादा रुचि नहीं ली और अपने पुराने तरीकों पर चलते रहना लाभदायक समझा इसलिए यह योजना भी कामयाब नहीं हुई।

इसके पश्चात् राजा साहिब को फिर घोड़ों, खच्चरों इत्यादि की नस्लों को विकसित करने का विचार आया। उन्होंने एक व्यक्ति को इस बारे जानकारी प्राप्त करने के लिए बाबूगढ़ भेजा। तहसील नाहन और पांवटा में एक–एक अबधित घोड़ा, गधा व बैल अच्छी जाति के रखवाये जो सिलसिला अब तक भी जारी है। इससे कृषकों को अत्यन्त लाभ हुआ। इसी प्रकार पैसे के लेन देन में सुविधा उपलब्ध करवाने के लिए राजा साहिब ने बैंक खोलना ज़रूरी समझा।

उस समय शहर में दुकानदार रुपयों का लेन–देन करते थे और लोगों को बड़ी कठिनाई से भारी सूद पर रुपया मिलता था। राजा साहिब ने इस कठिनाई को दूर करने के लिए और जनता को सुविध ा देने के उद्देश्य से जनता के रुपए से एक बैंक चालू करने का प्रस्ताव रखा। विक्रमी सम्वत् 1950 में राजा साहिब के आदेश से नाहन में बैंक स्थापित हुआ जिसका नाम नाहन नैशनल बैंक रखा गया और जिसका प्रतिशेयर बीस रुपया मुकर्रर हुआ। नाहन के हरेक निवासी को, जो शेयर लेने की स्थिति में था, कम से कम एक हिस्सा लेना ज़रूरी बनाया।

कंवर वीर विक्रम सिंह व कंवर रणजोर सिंह का रुपया बड़ी संख्या में शेयर के तौर पर बैंक में जमा करवाया गया। रियासत के प्रत्येक अहलकार के लिए बैंक का शेयर लेना अनिवार्य बनाया गया। शुरू में लोगों ने दिल से बैंक का शेयर लेना नहीं चाहा और विशेष कर

दुकानदारों इत्यादि ने तो इसको ज़्यादती बताया परन्तु जब धीरे–धीरे लोगों को इस में लाभ नज़र आया तो वे इसमें स्वयं शेयर लेने लगे। बैंक में एक सैक्रेरेटरी, एक अकाउंटेन्ट और दूसरे ज़रूरी कार्यकर्ता नियुक्त किये गए। इस बैंक के हिसाब किताब भी दूसरे बैंकों के नियमों के अनुसार बनाये गए। बैंक के हिसाब के लिए एक ऑडिटर की नियुक्ति का प्रस्ताव किया गया। कंवर वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह, पण्डित विशम्भर दास, एगज़ामिनर ऑफ अकाउंट को डायरैक्टर नियुक्त किया गया। इस प्रकार यह बैंक शुरू किया गया। जनता को इससे बड़ा लाभ व सुविधा हुई। थोड़े ही समय में बैंक ने इतनी तरक्की की कि लोगों की नज़रों में इसकी साख बहुत बढ़ गई। इससे रियासत के निवासियों के अतिरिक्त सरकारी इलाके के निवासी भी इस बैंक के शेयर लेने लगे और डिपॉज़िट रखना भी शुरू किया। अब यह बैंक बड़ी अच्छी स्थिति में चल रहा है और ज़रूरतमंद लोगों की ज़रूरत पूरी कर रहा है।

इसके पश्चात् रियासत की राशि से अंग्रेज़ी खाने पीने की वस्तुएं इत्यादि, भवन निर्माण सामग्री, घास, लकड़ी, कोयला इत्यादि की एक दुकान चलाई गई जो अब तक चल रही है। इसका नाम युनिवर्सल सप्लाई रखा गया।

जब राजा साहिब ने स्त्री शिक्षा की ओर ध्यान दिया तो लड़कियों की पाठशाला खोलने की योजना बनाई। उस समय तक लड़कियों की शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था। क्योंकि स्त्रियों की शिक्षा भी राष्ट्र की भलाई और विकास के लिए उतनी ही ज़रूरी है जितनी कि पुरुषों की, इसलिए राजा साहिब ने लड़कियों का एक स्कूल भी स्थापित किया। इसमें उर्दू व हिन्दी की शिक्षा तथा हस्तकला सिखाने के लिए श्रीमती रेड को, जो बैंड मास्टर श्री रेड की पत्नी है, मुख्याध्यापिका नियुक्त किया गया। कुमारी रेड द्वितीय अध्यापिका नियुक्त हुई। प्रत्येक धर्म और जाति की बहुत सी लड़कियों ने इस स्कूल में प्रवेश लिया। यह पाठशाला अब तक चल रही है।

इन्हीं दिनों राजा साहिब ने स्त्रियों के उपचार के लिए एक जनाना अस्पताल स्थापित किया। इसमें एक लेडी डाक्टर की नियुक्ति हुई। पहली लेडी डाक्टर श्रीमती बैलफोर थी जो बड़ी परिश्रमी और होशियार थी। इससे नाहन की स्त्रियों को बड़ा लाभ हुआ। इससे पहले बहुत सी स्त्रियां अपने रोगों के बारे डाक्टरों से खुल कर बात नहीं कर सकती थीं। विशेष रूप से गर्भ अवस्था में लेडी डाक्टर से औरतों को बहुत सहायता मिलती है जिसके लिए नाहन शहर की औरतें राजा साहिब की दिल से आभारी हैं।

राजा साहिब को सामाजिक कल्याण का भी उतना ही ख़याल था जितना कि दूसरे कार्यों का इसलिए उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1950 में इस किताब के लेखक की चाची जसरोटी जी की मष्त्यु के समय उस बुरी रस्म स्यापा अर्थात् मातम को, जो कि आम तौर पर मष्त्यु के समय पंजाब के हिन्दुओं में प्रचलित है, अपने यहां बन्द करने का निर्णय लिया, क्योंकि इससे स्त्रियों को बहुत तकलीफ और कठिनाई होती थी और यह रस्म शास्त्र के भी विरुद्ध थी। यह रस्म राजपूतों में तो उस समय से बन्द हो गई परन्तु ब्राह्मणों और महाजनों में अब भी जारी है।

जब राजा साहिब रियासत में सब विभागों को स्थापित कर चुके तो उन्हें विचार आया कि रियासत में आवागमन का कोई आसान माध्यम नहीं है। इससे पहले एक बार उन्होंने नाहन से बराड़ा रेलवेस्टेशन तक बैल गाडी का प्रबन्ध किया था और इसके लिए बैल तथा गाड़ियां इत्यादि बोर्ड विभाग की राशि से खरीद करके रखी थीं। हर दिन एक दो बार बैल गाड़ी नाहन से जाती और आती थी परन्तु ढुलाई का माल अधिक न होने और प्रबन्धकों की लापरवाही के कारण यह कार्य कुछ समय बाद बन्द कर दिया गया था। राजा साहिब का स्वभाव ऐसा न था कि किसी रुकावट के पैदा होने से वह अपने सुनिश्चित कार्य को बन्द कर दें। बल्कि इस कार्य को पूरा करने का विचार और भी सुदृढ़ हो जाता था। इसलिए उन्होंने रेल का सिलसिला

नाहन तक जारी करने का इरादा किया और इस बारे गहन सोच विचार किया। इन्हीं दिनों मिस्टर प्रैसटीज साहिब, जो सरकार के रेलवे विभाग में इंजीनियर और ठेकेदार रहा चुका था, नाहन आया। राजा साहिब की रेलवे में रुचि देखकर उसने राजा के विचार को और भी सुदष्ढ़ किया। उसने देहरादून से शिमला तक नाहन के रास्ते रेल लाईन ले जाने का और इस सम्बन्ध में एक कम्पनी स्थापित करने का, जिसमें राजा साहिब का 1/3 शेयर हो, प्रस्ताव प्रस्तुत किया और राजा साहिब ने रेलवे के लिए लकड़ी तथा भूमि मुफ्त देने का वायदा किया।

मिस्टर प्रैसटीज साहिब की सेहत गठिया की बीमारी और बुढ़ापे के कारण इतनी ठीक न थी कि वह इस प्ररताव को पूरा कर पाते और रेलवे लाइन पूर्ण हो जाती इसलिए यह प्रस्ताव कागज़ों में ही रहा और वह बेचारे कुछ दिनों बाद स्वर्ग सिधार गए । मिस्टर प्रैसटीज का प्रस्ताव उसकी मष्त्यु के कारण वैसे का वैसा पड़ा रहा। परन्तु राजा साहिब ने अपने विचार को पूरा करने के लिए एक छोटी रेलवे लाइन बराड़ा रेलवे स्टेशन से नाहन तक लाने का पक्का निश्चय किया। इस कार्य के लिए एक रेलवे इंजीनियर मिस्टर विलियम को नियुक्त किया और उसे सर्वे करने के आदेश दिये । रियासत के जनकल्याण विभाग को भी उसकी निगरानी में सौंप दिया।

जैसे–जैसे राजा साहिब रियासत में विकास करवाते जाते थे वैसे–वैसे सरकार भी उनको प्रोत्साहित करती रहती थी। 1896 ईसवी, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1952 में रियासत सिरमौर को ज़िला शिमला के सुपरिन्टेन्डेंट, जो कि पहाड़ी रियासतों का सुपरिन्टेन्डेंट होता है, की अधीनता से निकाल कर देहली डिवीज़न में देहली कमिश्नरी के अधीन कर दिया जिससे रियासत की इज्ज़त और मान में बढ़ोतरी हुई। जब राजा साहिब रियासत में रेलवे लाइन निकलने के बारे सोच रहे थे तो मिस्टर रोजर्स ने जो कि कोलागढ़ चाय बाग का मैनेजर था, राजा साहिब के आदेशों की अनदेखी करना शुरू की और इन पर कार्य रोक दिया। राजा साहिब को इस पर रोजर्स को सेवा से अलग करने

का नोटिस देना पड़ा। उन्होंने रोजर्स को आदेश दिया कि नियत समय तक बाग को खाली कर दे क्योंकि वह बाग ही में रहता था। रोजर्स ने बाग को छोड़ने से इनकार कर दिया और यह मामला सरकारी अफसरों तक पहुंचा।

इसी बीच राजा साहिब को, जब वह क्यारदादून के दौरे पर थे, माजरा नामक स्थान पर विक्रमी सम्वत् 1952 के फाल्गुन मास में रात्रि के समय अधरंग का गम्भीर दौरा पड़ा जिससे मस्तिष्क, दाहिनी टांग और बाजू प्रभावित हुए और वह पूरी तरह बेहोश हो गए। इस पर उत्तराधिकारी कंवर सुरेन्द्र वीर विक्रम सिंह व दूसरे सारे साथियों को बहुत दुःख और चिन्ता हुई। महाराजा साहिब को नाहन वापिस लाया गया। जब राजा साहिब नाहन पहुंचे और जनता को उनका हाल मालूम हुआ तो सब दुःख में डूब गए। अन्ततः राजा साहिब को शमशेर विला में ही रखा गया और माननीय उत्तराधिकारी उनके उपचार में व्यस्त हो गए। अम्बाला से सिविल सर्जन डाक्टर यंग साहिब और लाहौर से मेडिकल कालेज के प्रिंसिपल ब्राउन साहिब को उचित फीस देकर बुलवाया गया। इन दोनों डाक्टरों ने रियासत के सिविल सर्जन डाक्टर निकल्सन से परामर्श कर राजा साहिब का उपचार आरम्भ किया। इनके उपचार से राजा साहिब को कुछ लाभ हुआ और उनकी टांग और बाजू काम करने लग पड़े परन्तु मस्तिष्क पूरी तरह ठीक नहीं हुआ, जिसके लिए देहली के प्रसिद्ध हाकिम अब्दुल माज़िद खां को उचित फीस देकर माननीय उत्तराधिकारी ने बुलाया। काफी समय तक हाकिम साहिब का इलाज चलता रहा। मस्तिष्क में कुछ लाभ हुआ परन्तु पूरी तरह कामयाबी नहीं मिली।

राजा साहिब की बीमारी के समय सुरेन्द्र विक्रम सिंह साहिब रियासत के कारोबार को चलाते रहे और राजा साहिब को हवा पानी बदलने के लिए शिमला भेजा गया जिससे राजा साहिब की शारीरिक शक्ति को बहुत लाभ हुआ परन्तु दिमागी हालत ज्यों की त्यों रही। इसी बीच जब सरकार ने मिस्टर रोजर्स और राजा साहिब के मुकद्दमे

को लम्बा होते देखा तो पंजाब सरकार ने यही बेहतर समझा कि इसमें आपसी फैसला करवा दिया जाए। यह फैसला अंग्रेज़ पंचों द्वारा किया गया। रोजर्स को बाग छोड़ने का आदेश दिया गया और रियासत से सेवाओं के बदले एक सौ तीस हज़ार रुपया दिलाया गया।

जब राजा साहिब शिमला से वापिस आये और उनका स्वास्थ्य पहले से कुछ अच्छा हो गया तो वह पहले की तरह रियासत के कामकाज की तरफ ध्यान देने लगे। डाक्टरों ने उन्हें पूरा आराम करने के लिए कहा था पर वह कब मनाने वाले थे। यह बेकार रहना बिल्कुल पसन्द नहीं करते थे। इसलिए उन्होंने कामकाज करना आरम्भ कर दिया तथा प्रबन्धों में बदलाव लाने में व्यस्त हो गए। उन्होंने तमाम दीवानी अदालतों के स्थान पर एक बैंच अदालत रखी और इस के लिए दो बी.ए.एल.एल.बी. बुलवाये गये और इन को बैंच कोर्ट का जज नियुक्त किया। इन दोनों द्वारा आपसी सहमति से किया गया फैसला लागू होता था। अगर इन में सहमति न हो तो राजा साहिब से राय लेना तय पाया परन्तु गलती यह हुई कि दीवानी अदालत और प्रथम अपील दोनों की शक्तियां इसी एक अदालत को दे दीं क्योंकि इसके सिवाय कोई दूसरी दीवानी अदालत नहीं रखी गई थी। जो वकील, मुखतार आदि आज तक अदालत में काम करते थे उनको भी काम से अलग कर दिया क्योंकि उन्होंने सम्बंधित परीक्षा पास नहीं की हुई थी। इससे लोगों को असुविधा हुई क्योंकि इस समय तक पास हुए वकील उपलब्ध नहीं हुए थे।

इन्हीं दिनों राजा साहिब को एक विचार यह आया कि एक दुकानदार एक ही भांति की वस्तुएं बेचे जैसा कि बड़े शहरों में होता है। इसलिए नाहन के दुकानदारों को एक–एक भांति की वस्तु बेचने के आदेश हुए। अब तक हरेक दुकानदार हरेक भांति की वस्तु, कपड़ा, अनाज इत्यादि बेच सकता था। राजा साहिब के दोनों विचार अच्छे थे। वकालत पास किए वकीलों को नियुक्त करने में उनका यह आशय था कि जुडिशियल अदालतों का विकास किया जाए और दुकानदारों पर जो पाबन्दी लगाई जा रही थी उसका उद्देश्य दुकानों की संख्या को बढ़ाना था परन्तु ये दोनों प्रस्ताव बहुत अधिक लाभदायक साबित नहीं

हुए और लोगों ने इसमें बहुत कठिनाई महसूस की। इसी बीच राजा साहिब ने शिमला में रियासत की जायदाद, कोठियों इत्यादि को कुशल मैनेजर और अच्छे प्रबन्धक न होने के कारण जिनसे रियासत को अधिक लाभ नहीं होता था, बेच दिया। केवल बैन्टोनी नामक कोठी अपने रहने के लिए रखी।

## राजा शमशेर प्रकाश की बीमारी के समय रियासत का प्रबन्ध (भाग तीन)

राजा शमशेर प्रकाश की बीमारी के समय रियासत का सम्पूर्ण काम काज सुरेन्द्र विक्रम सिंह पर आ पड़ा था। वह अपने पिता की तरह बहुत सब्र वाले और कुशल व्यक्ति थे। उन्होंने इस जिम्मेदारी की कुछ परवाह नहीं की और बड़ी कुशलता और होशियारी से रियासत के कामकाज को चलाते रहे। यह कार्य इनके लिए कुछ नया था और सम्भव था कि वह इसमें कठिनाई महसूस करते परन्तु वह कलैक्टरी के कार्य को कर चुके थे इसलिए उन्होंने इसमें बहुत ही कम कठिनाई महसूस की। यह उसी दूरदर्शिता का परिणाम था जिससे राजा साहिब ने अपने जीवन ही में उत्तराधिकारी को रियासत के विभिन्न विभागों के कार्य भार सम्भाल कर उनको कामकाज करने की आदत डाल दी थी। इस कारण उत्तराधिकारी को कोई कठिनाई मालूम नहीं हुई नहीं तो एक साधारण कार्य के आरम्भ करने में भी नए व्यक्ति को बड़ी कठिनाइयां आती हैं यह तो एक रियासत के कारोबार को चलाना था। उत्तराधिकारी ने हरेक कार्य को बड़ी कुशलता से चलाया और साथ ही राजा साहिब के उपचार और देखभाल में व्यस्त रहे।

यह समय बड़ा ही नाजुक था क्योंकि एक तो राजा साहिब की बीमारी, दूसरे बीमारी तथा मुकदमों पर बढ़ता खर्च और तीसरे

रियासत के कारोबार की ज़िम्मेदारी का अचानक उन पर आ पड़ना परन्तु इस सब कठिनाइयों के होते हुए भी माननीय उत्तराधिकारी ने बड़ी समझबूझ और सब्र से रियासत के हरेक काम को सम्पूर्ण किया।

1897 ईसवी, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1953 में जब राजा शमशेर प्रकाश साहिब अस्वस्थ थे तब अंग्रेज़ी सरकार और सरहद के अफ़रीदी फिरका के बीच तिरह में युद्ध शुरू हो गया। उस समय माननीय उत्तराधिकारी ने अपने पूर्वजों की वफादारी को दोहराते हुए राजा साहिब की आज्ञा से सिरमौर सैप्पर्ज़ को इस लड़ाई में भेजने की अनुमति मांगी, जिसको अंग्रेजी सरकार ने मंजूर किया और सैप्पर्ज़ मेजर वीर विक्रम सिंह की कमान में लड़ाई के लिए रवाना हुए। यद्यपि राजा साहिब अपने ज़िगर के टुकड़े को लड़ाई में भेजना नहीं चाहते थे, विशेषकर उस समय जब वह अस्वस्थ थे परन्तु इस स्थिति में भी राजा साहिब ने अपने दायित्व का निर्वाह किया और राजकुमार को खुशी से सैप्पर्ज़ के साथ जाने की आज्ञा दी। राजकुमार वीर विक्रम सिंह ने सैप्पर्ज़ के साथ रहकर सेवा की, जिसके बदले में अंग्रेजी सरकार ने इनको 24 मई, 1898 को सी.आई.ई. की उपाधि दी।

मई, 1898 में जब महारानी विक्टोरिया की डायमण्ड जुबली मनाई गई थी और सारे हिन्दोस्तान में इसके जलसे हो रहे थे तब रियासत सिरमौर में भी सुरेन्द्र विक्रम सिंह ने, जो अपने पूर्वजों की भांति इस अवसर पर अपनी प्रसन्नता और वफादारी प्रकट करना दायित्व समझते थे, डॉयमण्ड जुबली की स्मपति में नाहन के पश्चिमी भाग में एक सिविल अस्पताल की नींव रखी जिसका नाम विक्टोरिया डायमण्ड जुबली हॉस्पिटल रखा गया। दो ढाई साल तक राजा शमशेर प्रकाश अस्वस्थ रहे। हर प्रकार का अंग्रेज़ी, यूनानी और वैद्यिक उपचार किया गया परन्तु सम्पूर्ण स्वास्थ्य लाभ न हुआ, केवल शरीर ही पुष्ट होता गया और दिमाग में कोई सुधार नहीं हुआ। अन्ततः 1898 की पहली अक्तूबर को सन्ध्या के समय जब वह अपनी कोठी शमशेर विला में बैठे हुए थे, उस समय अधरंग का तीसरा दौरा पड़ा और वह कुछ समय

के लिए अचेत हो गए। यद्यपि थोड़ी देर के बाद उन्हें होश आ गया, मगर सांस फूलनी शुरू हो गई। अन्ततः अगले दिन प्रातः अर्थात् 2 अक्तूबर 1898 ईसवी, तदनुसार 18 आश्विन 1955 को 8 बजे राजा शमशेर प्रकाश साहिब का देहान्त हो गया। सारा परिवार, सम्बन्धी और जनता में तहलका मच गया तथा सब जगह दुःख और उदासी की लहर दौड़ गई।

दूसरे दिन, सुबह बड़ी सजधज के साथ हिन्दुओं के रिवाज के अनुसार अर्थी को मिल्ट्री सम्मान के साथ शमशेर विला से उठाया गया। सबसे आगे हाथी--घोड़े थे, इनके पीछे बैंड था, उसके पीछे पैदल सेना और फिर सिरमौर सैप्पर्ज़, अंगरक्षक, जिनकी अगवाई इन्सपैक्टिंग ऑफिसर कर्नल स्कॉलिन कर रहे थे। इसके बाद राजा साहिब का काला अरबी घोड़ा था तथा फिर दो अहलकारों के पास राजा साहिब की उपाधियां, जी.सी.एस.आई. इत्यादि थे, उसके पीछे के इनसिगनिया (चिन्ह) तथा पदक इत्यादि की तश्तरियां थीं। इसके बाद महाराजा साहिब का पार्थिव शरीर, जिसको उत्तराधिकारी तथा कंवर वीर विक्रम सिंह, कंवर सूरत सिंह, कंवर रणजोर सिंह व दूसरे रिश्तेदारों ने उठाया हुआ था। पार्थिव शरीर के पीछे रियासत के अहलकार व सेवक अपनी–अपनी पदवी के अनुसार शोक वस्त्रों में थे। इसके पश्चात् दूसरे शहरवासी और बहुत से लोग थे।

इस प्रकार पार्थिव शरीर शमशेर विला से महलों के आगे होता हुआ शहर और बाज़ार के बीच फूलों की बारिश में से गुज़रता हुआ मारकण्डा नदी पर पहुंचाया गया, जहां हिन्दू रीति–रिवाज़ के अनुसार उनके मृतक शरीर का संस्कार किया गया। माननीय उत्तराधिकारी व कंवर वीर विक्रम सिंह दोनों ने सिर भद्रा करवाई और उत्तराधिकारी ने रीति अनुसार क्रिया कर्म किया। सारी बिरादरी ने हिन्दुओं के शास्त्रानुसार 13 दिन तक शोक रखा और मृत्यु की सारी रस्में पूरी कीं। 13 दिन के बाद मातम समाप्त हुआ, परन्तु राजा साहिब के परिवार में एक वर्ष तक कोई त्योहार नहीं मनाया गया और न ही कोई खुशी का कार्य

हुआ।

Sir Mackworth Young's Speech On The Occasion Of The Investiture of H.H. Surendra Bikram Prakash Bahadur As Ruler of Sirmoor State In 1898.

On this even more than on most similar occasions the rejoicings of the people of Sirmoor must be clouded over by grief for the recent death of their late distinguished Ruler. The late Raja Sir Shamshere Prakash was 45th in order of succession to the Sirmoor Gaddi to which he rose on 19th January 1857. Shortly after his accession on the outbreak of the mutiny the young Raja rendered valuable assistance and received the honour of a salute of 7 guns which in 1887 was raised to 11 guns. From the cvery commencement of his reign he showed his high appreciation of the benefits of a civilized Government and his efforts in the direction of improving the roads and the courts of his State were favourably noticed by Sir Herbert Edwards and other distinguished officers. His administration continued to be marked by an enlightened sense of his responsibilities as a ruler and a keen desire to increase and improve the resources of his State so that in 1876 he was invested with the title and dignity of a K.C.S.I. by the British Government which is never slow to recognise and reward such efforts.

In 1880 he in common with the other Punjab Chiefs and in fulfillment of the conditions of his sanad, evinced his active patriotism by asking to be allowed to send a contingent to assist in the Afghan War. His request was granted and 200 men of the Sirmur Troops served with distinction in that campaign. For these services the honour of a return visit from His Excellency the Viceroy was definitely accorded to the Ruler of the State.

The administration of the State continued to be excellent and to serve as a model to the other States in the hills and in the Punjab generally and Raja Sir Shamshere Prakash was in 1886 raised to the dignity of a G.C.S.I., when two guns were added to his salute and in 1896 the State was placed under the Political control of the Commissioner of the Delhi Division. In 1889 the

late Raja offered a contingent of troops for Imperial Services and two companies of Pioneers were raised. These were subsequently formed into the Imperial Service Sappers and Miners who recently served with distinction and efficiency throughout the Tirah campaign under the command of captain Bir Bikram singh, the second son of the late Raja, who at his father's special request, though the Raja was then prostrated by a fatal disease and felt the separation keenly, was given this opportunity of showing his fitness to command British troops in the field. He acquitted himself honorably and his services were recognized by the grant to him of the dignity of a Companionship of the Most Eminent Order of the Indian Empire while at the same time he received the signal honour of promotion to the rank of Captain in the British Army and is attached in that capacity to the Bengal Sappers and Miners.

It would be difficult to detail the numerous reforms introduced by the late Raja and his memory will always be perpetuated by the excellent roads and the public improvements which exist everywhere in the State. The foundry, the abolition of beggar, the Revenue and Forest Settlement, the improvement of postal facilities and the establishment of the Telegraph to Nahan are all due to the enterprise and genius of the late Raja, who recognized in perhaps a greater degree than any other Chief in the Punjab the necessity of securing well-trained and well-paid officers, if the administration is really to be honest and efficient.

His untimely death on 2nd October 1898 at the age of 53 owing to a brain disease possibly largely induced by his unstinted efforts in the interests of his State is deeply deplored by this Government and the Government of India have added the following expression of their regret on learning the said intelligence :-

" The late Raja rendered loyal services during the mutiny and the news of his death was received with regret by the Government of India."

This regret is however tempered by the knowledge that in the present Chief, Raja Surendra Bikram Prakash, the late Raja has left a worthy successor and the Sirmoor State has gained a

Ruler who has been thoroughly trained in practical administration under the eye of his father, whose example he promises to follow and whose achievements we may confidently hope that he will at least emulate.

For some five years the Raja has already exercised the Chief magisterial and collectorate powers in the State and during the past two years since his father was stricken down with paralysis he has practically wielded full powers of the State as de facto regent with a tact, capacity and success that afford every reason to lead us to anticipate for his brilliant future.

On behalf of the British Government I, therefore, have much pleasure in installing Raja Surendra Bikram Prakash as chief of the Sirmoor State and in formally investing him with all the powers of a Ruling Chief of the State.

**सिरमौर के राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश के गद्दी पर बैठने के अवसर पर सन् 1898 ईसवी में पंजाब के लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब सर मैकवर्थ यंग का भाषण**

इस अवसर पर तथा इसी प्रकार के दूसरे अवसरों पर सिरमौर के निवासियों के दिल प्रसिद्ध शासक की मृत्यु के कारण मुरझाए होंगे। स्वर्गवासी राजा शमशेर प्रकाश सिरमौर की गद्दी पर 45 वें शासक थे जिस पर वह 19 जनवरी, 1857 को बैठे।

जवान राजा साहिब ने गद्दी पर बैठने के थोड़े ही समय बाद गदर के समय सरकार की बहुत सेवा की, जो प्रशंसा के काबिल है। बदले में सात तोपों की सलामी का सम्मान प्राप्त किया था, जो 1867 ईसवी में 11 तोपें हुई। शासन सम्भालते ही अच्छे शासन के लाभों को समझ लिया था और उनके प्रयत्नों से रियासत में सड़क निर्माण में विकास हुआ और अदालत के प्रबन्ध में सुधार हुए, जिसकी मिस्टर हर्बर्ट एडवर्ड तथा दूसरे बड़े अधिकारियों ने प्रशंसा की।

राजा साहिब बड़ी कुशलता से एक कुशल शासक की तरह अपनी जिम्मेदारियों को निभाते रहे। रियासत के काम–काज के विकास में पूरा ध्यान देते रहे, जिस कारण सरकार ने 1876 ईसवी में

राजा साहिब को के.सी.एस.आई. की उपाधि से अलंकृत किया, क्योंकि सरकार ऐसे कार्यों को अनदेखा नहीं करती और सम्मान की नज़र से देखती है।

1880 ईसवी में पंजाब के दूसरे शासकों की भांति राजा साहिब ने सनद के अनुसार काबुल की लड़ाई के अवसर पर सेना को सरकार की सहायता के लिए भेजने की इच्छा प्रकट की। राजा साहिब के आवेदन को स्वीकार कर लिया गया और सिरमौर के 200 सिपाहियों ने इस लड़ाई में बहुत उत्तम सेवाएं दीं। इन सेवाओं के बदले में सिरमौर के शासक को हिज़ ऐक्सीलैंसी वॉयसराय से बातचीत करने के अवसर से सम्मानित किया गया।

रियासत का प्रबन्ध बहुत ही उत्तम रखा, जो कि पंजाब और पहाड़ी रियासतों के लिए आम तौर पर एक नमूना था। राजा शमशेर प्रकाश को 1886 ईसवी में जी.सी.एस.आई. की उत्तम उपाधि दी गई और उनकी सलामी में 2 तोपों की बढ़ोतरी की गई। 1896 में सिरमौर की रियासत को देहली डिवीज़न के पॉलिटिकल एजेन्ट के अधीन लाया गया। 1889 ईसवी में स्वर्गवासी राजा ने सरकार की सेवा के लिए सिपाही देने की इच्छा प्रकट की। उनकी दो सैप्पर कम्पनियों को कंटीनजैंट के तौर पर इम्पीरियल सर्विस ट्रुप्स में रखा गया, जिनको बाद में सैप्पर्ज़ माइनर्ज़ बनाया गया और जिन्होंने तिरह की लड़ाई के समय कैप्टन वीर विक्रम सिंह (राजा के दूसरे बेटे) की कमान में बड़ी अच्छी सेवाएं दीं। कैप्टन वीर विक्रम सिंह ने अपने पिता की इच्छानुसार फौज के साथ जाकर अपने दायित्व को बड़ी अच्छी तरह निभाया, जिसके बदले में सरकार ने इनको सी.आई.ई. की उपाधि से अलंकृत किया और इन्हें बंगाल के सैप्पर माइनर्ज़ में कप्तान की ऑनरेरी पदवी दी।

उन तमाम मामलों, जिन में स्वर्गवासी राजा साहिब ने सुधार किये थे तथा जिन का विकास किया था, का सम्पूर्ण व्यौरा देना कठिन है परन्तु वह मार्ग जिन्हें उन्होंने बनाया और विकसित किया तथा

जनकल्याण के वे कार्य जो उन्होंने किये और जो रियासत में अब भी मौजूद हैं, इन से उनकी स्मृति सदा के लिए ताज़ा रहेगी। फाउंडरी, बेगार का समाप्त किया जाना, राजस्व और वन विभागों का कुशल प्रबन्ध, डाक विभाग का विकास, नाहन में टेलीग्राफ ऑफिस की स्थापना, ये सब ही स्वर्गीय राजा साहिब की समझबूझ और प्रयासों का परिणाम है। वह पंजाब के दूसरे शासकों के मुकाबले में रियासत का प्रबन्ध और प्रशासन बड़े अच्छे ढंग से चलाने के लिए पढ़े लिखे अफसरों को उचित वेतन पर सेवा में रखना बहुत आवश्यक समझते थे।

2 अक्तूबर 1898 को 53 वर्ष की आयु में दिमागी मर्ज के कारण राजा साहिब की बेवक्त की मृत्यु हुई। पंजाब तथा हिन्दुस्तान की सरकारें उन की मृत्यु पर गहरा दुःख प्रकट करती हैं। हिन्द सरकार ने अपना दुःख निम्नलिखित शब्दों में प्रकट किया है " स्वर्गवासी राजा साहिब ने गदर के अवसर पर बड़ी वफादारी से उत्तम सेवा दी है और हिन्द सरकार ने इन की मृत्यु के समाचार को बहुत ही दुःख से ज्ञात किया है" फिर भी यह दुःख यह जानकर कुछ कम महसूस हुआ है कि स्वर्गवासी राजा साहिब ने वर्तमान शासक राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश के रूप में अपना एक कुशल उत्तराधिकारी रियासत के लिए छोड़ा, जिसने अपने पिता की देखरेख में रियासत के कामकाज की भालिभांति जानकारी प्राप्त की है। वर्तमान शासक अपने पिता के कामकाज में उनके कदमों पर चलने का वायदा करता है और हम आशा करते हैं कि वह ऐसा ज़रूर करेगा।

पांच साल तक वर्तमान राजा ने चीफ मैजिस्ट्रेट के पद पर कार्य किया है और दो साल तक, जब कि उनके पिता दिमागी फालेज के मर्ज से ग्रस्त थे, उनके एजेन्ट (कार्यवाहक) के रूप में रियासत का कामकाज बड़ी बुद्धिमानी तथा कुशलता से पूर्ण किया है जिसके कारण हम यह भविष्यवाणी कर सकते हैं कि वह आने वाले समय में भी अच्छी तरह कार्य करेंगे।

इसलिए ब्रिटिश सरकार की ओर से मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को गद्दी पर बैठाता हूं और उनको रियासत के शासक की तमाम शक्तियां प्रदान करता हूं।

# पांचवां अध्याय

## राजा शमशेर प्रकाश साहिब की शक्ल सूरत और विशेषताएं

राजा शमशेर प्रकाश एक सुन्दर छवि वाले युवक थे। उनका कद दरमियाना था, शरीर के भारी थे और चेहरा बड़ा प्रभावशाली था। इनके चेहरे का रंग गंदमी मगर शक्ल सूरत से किस्मत के धनी और बुद्धिमान जान पड़ते थे। आरम्भिक अवस्था में वह हिन्दू धर्म के अनुसार लिखी गई विधियों का समर्थन करते थे और उनकी उन पर आस्था थी। वह उस समय गया जी, पटना व जगन्नाथ की यात्रा को गये थे जब रेल इत्यादि हिन्दुस्तान में बहुत कम स्थान पर चलती थी। वह समय–समय पर दूसरे तीर्थ स्थानों पर स्नान करने जाते रहे। हरिद्वार तो वह कई बार स्नान के लिए गए और पुराणों में लिखी विधियों के अनुसार कार्य करते रहे। वह व्रत इत्यादि भी करते रहे और ब्राह्मणों और निर्धनों को दान दक्षिणा देते रहे। वह मन्दिरों में जाकर पूजा अर्चना करते रहे और पुराणों की कथा इत्यादि सुनते रहे।

परन्तु बाद में जैसे–जैसे उनकी विचार शक्ति और दूरदर्शिता बढ़ती गई वैसे–वैसे उनकी रुचि दर्शनशास्त्र की तरफ बढ़ती गई। उन्होंने पण्डित देवी चंद को, जो वेदान्त शास्त्र के अच्छे जानकार थे, उपनिषदों और नीति शास्त्र के सुनाने के लिए सेवा में रखा। पण्डित जी से राजा साहिब ने संस्कृत भाषा में लिखित वेदान्त की पुस्तकों को

सुना जिससे उनकी आस्था पुराणों से हटकर वेदान्त शास्त्र में बढ़ने लगी जो हिन्दुओं का एक उत्तम दर्शनशास्त्र है। वह बाद में इसी की शिक्षा पर चलते रहे और इसका समर्थन करते रहे। राजा साहिब को शुरू से ही नए काम करने का बड़ा शौक था। जो नया काम देखते थे उसके करने में बड़ी रुचि लेते थे। उसको बड़े शौक से शुरू करते और इसमें कैसी ही कठिनाई क्यों न आये और कितना ही खर्च क्यों न हो इस कार्य को पूरा कर लेना वह आवश्यक समझते थे जैसा कि फाउंडरी कारखाने के जारी करने से प्रतीत होता है। यह स्थिति केवल रियासत के प्रशासन और प्रबन्ध तक ही सीमित नहीं थी बल्कि सैर और शिकार करने के अवसरों पर भी वह वैसा ही करते थे। शिकार इत्यादि में कैसा ही कष्ट क्यों न हो उसको बड़ी प्रसन्नता और शौक से करते थे। वह कई साल तक जंगली हाथियों को पकड़ने में व्यस्त रहे और अन्त में इनको मार डाला।

राजा साहिब बड़े सब्र वाले व्यक्ति थे। बड़ी से बड़ी मुसीबत के समय भी वह बुद्धिमत्ता से काम लेते थे। वह बड़े मेहनती थे और दुःख तकलीफ सहन करने की उन में बहुत शक्ति थी। यात्रा में यदि ज़रूरत हो तो दो–दो तीन–तीन पड़ाव घोड़े पर ही पार कर लेते थे। गहरी नींद सोने का भी उनको शौक नहीं था। जैसा समय हो उसी अनुसार काम करते थे अधिकांश अवसरों पर वह यात्रा और शिकार में बगैर तम्बू के ही मैदान में डेरा डालकर समय व्यतीत कर लेते थे। उनका स्वभाव भी बहुत अच्छा था। हरेक से हंसकर और बड़े आदर पूर्वक पेश आते थे। उनका बात चीत का ढंग भी बहुत अच्छा था। हरेक व्यक्ति को, चाहे वह गुस्से से कितना भी भरा हुआ क्यों न हो, अपने कुछ शब्दों से ही प्रसन्न कर लेते थे और इसको अपना प्रशन्सक बना लेते थे।

मिलने–जुलने का भी उनको बहुत शौक था। जो कोई उनसे एक बार मिलता वह उनके गुणों और अच्छे स्वभाव के कारण प्रसन्न होकर जाता और उनकी प्रशन्सा करता था। इनको चलने फिरने का

अधिक शौक न था। वह बैठे रहने और वार्तालाप करने में अधिक रुचि लेते थे। वह सदैव हंसमुख अहलकारों और साथियों के बीच रहना पसन्द करते थे, उन्हें अकेलापन पसन्द न था। आरम्भ काल में काफी दिनों तक तो यह स्थिति रही कि महल में प्रातः व सायं काल उनके पास बहुत से लोगों की भीड़ एकत्रित रहती थी जो उनके साथ रसोई में खाना भी खाया करते थे । इसके अतिरिक्त सायं चार बजे से नौ बजे तक का समय तो ऐसा था जब अहलकार, निकट सम्बन्धी और शहर के दूसरे जाने–माने व्यक्ति उपस्थित होते थे और हर प्रकार की बातचीत होती थी। राजा साहिब को हंसी मज़ाक भी पसन्द था। सेवकों में एक दो मज़ाकिया किस्म के लोग भी थे जो राजा साहिब को समय समय पर अपनी हंसी मज़ाक की बातों से प्रसन्न किया करते थे परन्तु सभ्याचार का हमेशा खयाल रखा जाता था।

जब राजा साहिब शमशेर विला में चले गए तो वहां पर भी चार बजे से सात बजे तक लोगों का आना–जाना रहता था और हर प्रकार की बातचीत होती थी। राजा साहिब की नज़रें सभ्याचार, वस्त्र पहनने के ढंग, उठने–बैठने की तरीके और बातचीत पर रहा करती थी। जिस में जो कमी पाते थे उसको दूसरे के माध्यम से बता देते थे क्योंकि उनको अपने लोगों की आदतों को दुरुस्त करने और उन्हें सभ्य बनाने का बहुत खयाल था, साथ ही वह हरेक का लिहाज भी बहुत करते थे इसलिए वह किसी पर फिकरे कसना पसन्द नहीं करते थे। ऐसे नरम स्वभाव के बावजूद भी इनका हरेक व्यक्ति पर बड़ा प्रभाव और रोब था।

वह रियासत के मामलों में अहलकारों और बुद्धिमान व्यक्तियों से राय लेना पसन्द करते थे, फिर जो समय की मांग होती थी उस अनुसार करते थे। उनके अच्छे स्वभाव और खूबियों को देख कर अंग्रेज़ी सरकार ने कलसिया रियासत के शासक सरदार रणजीत सिंह साहिब को, जो कि नाबालिग थे, राजा साहिब के पास नाहन भेज दिया था ताकि वह उनके साथ रह कर सभ्याचार और अच्छी आदतें सीखें। राजा साहिब को दिखावा पसन्द नहीं था और वह बड़े सादे स्वभाव के

व्यक्ति थे। वह आम तौर पर उसी भूमि पर बैठे रहते थे जिस पर दूसरे लोग बैठते थे। कभी–कभी वह एक क़ालीन डाल लिया करते थे। वस्त्र भी वह हिन्दुस्तानी ढंग के पसन्द करते थे। उन्हें अंग्रेज़ी वस्त्र पसन्द न थे यद्यपि वह रियासत के शासन में अंग्रेज़ी तौर तरीको में विश्वास करते थे। यही कारण था कि उन्होंने सिरमौर में कामकाज का अंग्रेज़ी तरीका जारी किया।

राजा साहिब के पास अंग्रेज़ों के सिवाय रियासत का कोई कार्यकर्ता या उनका कोई निकट सम्बंधी अंग्रेज़ी वस्त्रों में जाने की हिम्मत न रखता था। यद्यपि कुछ समय बाद महाराजा साहिब स्वयं अंग्रेज़ी काट की कमीज और कोट पहनने लगे थे परन्तु कोट घुटनों तक लम्बा होता था। वे सफाई पसन्द थे। तड़क–भड़क वाले वस्त्रों से उनको नफरत थी। वह खाना भी बहुत स्वच्छ खाते थे जो हिन्दुस्तानी ढंग का होता था। वह अधिकतर चावल और शोरबा पसन्द करते थे लेकिन भवनों की बनावट और सजावट अंग्रेज़ी ढंग की पसन्द करते थे। सफाई का इन्तज़ाम भी अंग्रेज़ी ढंग का था और शासन प्रबन्ध भी अंग्रेज़ी ढंग का ही पसन्द था। वह अंग्रेजी सरकार की नीति को हरेक मामले में ध्यान में रखते थे और इसका समर्थन करना अच्छा समझते थे। रियासत के विकास में वह सदैव अपनी प्रसिद्धि को ध्यान में रखते थे और इस में दिन रात प्रयासरत रहते थे। वे भोग विलास में रुचि नहीं रखते थे। सदा ही किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहते थे। रियासती कारोबार को विकसित करने के लिए दिल से रुचि लेते थे और घंटों कचहरी में बैठ कर काम करते थे।

यद्यपि राजा शमशेर प्रकाश बड़े ज्ञानी नहीं थे परन्तु इनको बुद्धि भगवान की ओर से मिली थी। वे बड़े से बड़े मसले को समझ लेते थे और राय दिया करते थे, जिसकी अच्छे–अच्छे बुद्धिमान लोग प्रशन्सा किया करते थे। उनको बातचीत का ऐसा ढंग आता था कि दूसरे से बहुत जल्दी अपनी बात मनवा लेते थे। उनको बुद्धिजीवियों के बीच बैठने का बड़ा शौक था और वह उनसे बातचीत में बड़ी रुचि

लेते और खुश होते थे। राजा साहिब को हरेक कला और ज्ञान के व्यक्ति को अपने पास सेवा में रखने का बड़ा शौक था क्योंकि वह ऐसे ही व्यक्तियों को रियासत के विकास का माध्यम मानते थे। वह ऐसे व्यक्तियों को उचित वेतन देकर अपने यहां नौकर रखते थे चाहे वह किसी फिरके या धर्म का हो। उन्होंने हर धर्म और कौम के कुशल व्यक्तियों को अपनी सेवा में रखा। एक समय उनके शासन काल में फाउंडरी के इंजीनियर जॉस साहिब, एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर मिस्टर विलियम, फॉरेस्ट कंजरवेटर मिस्टर टॉमसन, सिविल सर्जन डाक्टर निकलसन, लेडी डाक्टर मिस बेलफोर, पुलिस सुपरिटेन्डेंट मिस्टर व्हाईटिंग और बैंड मास्टर मिस्टर रैड इत्यादि अंग्रेज़ रियासत की सेवा में थे। इनके अतिरिक्त मुसलमान, सिक्ख, बंगाली इत्यादि भी उनकी सेवा में थे। राजा साहिब उन्हें रियासत में घर, भवन और जायदाद प्राप्त करने के लिए उत्साहित करते थे ताकि उनके रियासत से चले जाने की सम्भावना न रहे। वह किसी का सेवा छोड़कर चले जाना अच्छा खयाल नहीं समझते थे, हर व्यक्ति को अपने धर्म के अनुसार कार्य करने और पाबन्द रहने का इख्तियार था।

राजा शमशेर प्रकाश को रियासत की स्थिति, लोगों के हालचाल और अहलकारों के कामकाज करने के ढंग बारे जानकारी प्राप्त करने तथा उनके स्वभाव और आदतों को ठीक करने का हमेशा खयाल रहता था। इसलिए वह अपने साथियो से उनके बारे में छानबीन करते रहते और उनकी दुरुस्ती करते रहते थे परन्तु कुछ कमीने लोगों ने इसमें अपने स्वार्थ के लिए राजा साहिब के पास सच्ची झूठी खबरें देकर खुश करने की विधि निकाली और लोगों की दुश्मनी के कारण झूठी और मनगढ़ं शिकायतें करना शुरू कर दिया जिससे कई लोगों को हानि पहुंची । जब राजा साहिब को इसकी जानकारी हुई तो वह चौकन्ने हो गए।

इनको किसी धर्म से वैर न था। हरेक धर्म और कौम के व्यक्ति अपनी कुशलता अनुसार रियासत में पदों पर नियुक्त होते थे। हर

व्यक्ति अपने धर्म के अनुसार पूजा पाठ करता था। मुसलमानों की मस्जिद की नींव इन के शासन काल में ही डाली गई। उन्होंने ईसाइयों को भी गिरजाघर बनाने को कहा था । वह संगीत विद्या को भी पसन्द करते थे और इसी लिए रियासत में एक दो गायक और एक दो तवाइफें सेवा में रखी गई थीं जो कि समय–समय पर या किसी त्यौहार इत्यादि के अवसर पर गाना सुनाया करते थे। राजा साहिब को स्वयं गाने बजाने का शौक नहीं था। न ही कभी उन्होंने इस कला में अभ्यास किया। हाथी घोड़ों का भी इनको बड़ा शौक था विशेष कर हाथियों का। एक समय उनके पास तीस हाथी हो गए थे और वह जंगल में खुले फिरते थे, इस कारण हथिनियां बच्चे देने लगी थीं।

राजा साहिब की रुचि किसी विशेष ओर न थी बल्कि वह हर ओर बराबर शौक रखते थे। वह सदैव रियासत के विकास और भलाई बारे सोचते व कार्यरत रहते थे ताकि इससे रियासत और उनकी मशहूरी हो। राजा साहिब बड़े भाग्यशाली और दूरदर्शी थे। उनकी दूरदर्शिता से ऐसे–ऐसे अहम कार्य पूरे हुए जिन्हें दूसरे लोग असम्भव मानते थे। उनके स्वभाव में ठहराव और सहनशीलता बहुत थी, क्रोध बहुत कम था। क्रोध में भी वह उत्तेजित नहीं होते थे परन्तु नाराज़गी का असर दिल पर जरूर रहता था जो कभी न कभी किसी शक्ल में प्रकट हो जाता था। वह बड़े रहम दिल थे। मालगुज़ारी व टैक्स इत्यादि में जो बढ़ोतरी उन्होंने की थी वह केवल रियासत के विकास के उद्देश्य से की थी, उनका अपना खर्च तो बहुत कम था। जो कुछ आमदनी थी वह रियासत के विकास और भलाई के लिए खर्च करते थे । यही नहीं उन्होंने रियासत के विकास के लिए अपने बाप दादाओं के समय की जमा पूंजी भी खर्च की। इसके अतिरिक्त उनकी रहमदिली और नरम स्वभाव का बड़ा सबूत यह है कि उन्होंने अपने शासन काल में किसी अपराधी को फांसी का दण्ड नहीं दिया।

राजा शमशेर प्रकाश को पण्डितों और बुद्धिजीवियों की गोष्ठी सुनने का भी शौक था। जब कभी कोई संस्कृत का पण्डित या कोई

फारसी का आलम रियासत में आता तो उसका बड़ा आदर सत्कार किया जाता और उनके साथ रियासत के पण्डितों का शास्त्रार्थ करवाया जाता जिसे राजा साहिब स्वयं बड़ी रुचि से सुनते थे। रियासत में संस्कृत के एक पण्डित ब्रह्म दत्त शास्त्री थे। वह नाहन के निवासी थे और उन्होंने काशी में संस्कृत का ज्ञान प्राप्त किया था। वह त्यागी थे और संत साधुओं की तरह शहर से बाहर रहते थे। एक पण्डित देवी चंद थे जो रियासत में नौकरी करते थे। वह वेदान्त शास्त्र के बड़े ज्ञानी थे। इन से राजा साहिब वेदान्त शास्त्र सुनते थे और कभी–कभी उन दोनों पण्डितों के बीच शास्त्रार्थ होता रहता था।

राजा साहिब को भवनों और रास्तों को ठीकठाक रखने का बहुत शौक था। उन्होंने नाहन बाजार की गलियों में पक्के फर्श लगवाये। उन्होंने बाजार के लोगों को उत्साहित कर उनसे दुकानें बनवाईं और बाजार शमशेर गंज स्थापित करके आबाद किया, जो नये बाजार के नाम से मशहूर है। उन्होंने शहर की सड़कों को गाड़ी चलने लायक बनवाया। शहर से बाहर कालाआम, दून, शिमला की सड़कें भी गाड़ी योग्य तैयार करवाईं और पड़ावों पर डाकबंगले बनवाये और दून की सड़क पर कोलर, माजरा में बंगले निर्मित करवाये।

नाहन में शमशेर विला कचहरी की कोठी और कार्यालय इत्यादि तथा दूसरे भवनों को तैयार करवाया। सिविल सर्जन और इंजीनियर डाक्टर पीयरसल के लिए कोठियां बनवायीं। इसके बाद डाक्टर डीन की कोठी तैयार हुई जिसमें अब ज़िला की कचहरी है। अपने इज़लास के लिए कचहरी की बड़ी कोठी बनवायी जो बाद में जॉन साहिब को दी गई। नाहन में फाउंडरी कारखाना स्थापित किया। एक कच्चा तालाब कारखाने के निकट बनवाया। बाद में एक कोठी बहुत सा धन खर्च करके इंजीनियर विलियम साहिब के लिए बनवायी। महलों में भी नये ढंग के भवन बनवाये तथा शिवपुरी में बावड़ी बनवायी और बाग लगाया। रानीताल में रानी साहिबा कुठलानी की यादगार में 1889 ईसवी में एक शिवालय और तालाब निर्मित करवाया। अपने रहने

के लिए आलीशान शमशेर विला अंग्रेज़ी डिज़ाइन पर तैयार करवाया। इसके अतिरिक्त और भी बहुत से छोटे–छोटे भवन इनके शासनकाल में बनवाये गए। यह कहना गलत नहीं होगा कि महाराज फतेह प्रकाश ने रियासत की नींव रखी और राजा शमशेर प्रकाश ने इसको पूरा किया और इसकी रौनक को दुगना कर दिया। उन्होंने रियासत सिरमौर को पंजाब के प्रांत में एक आदर्श रियासत के रूप में स्थापित किया।

**नोट :–**

लेखक ने सिरमौर के इतिहास में राजा शमशेर प्रकाश के शासन काल तक की घटनाएं इस पुस्तक में दर्ज करके इस पुस्तक को राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश बहादुर के जीवनकाल में छापने के लिए भेज दिया था परन्तु इसी बीच राजा सुरेन्द्र विक्रम साहिब का स्वर्गवास हो गया जिस पर राजा अमर प्रकाश साहिब ने अपने पूजनीय पिता स्वर्गीय राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश के शासनकाल की घटनाएं भी इस इतिहास की पुस्तक में शामिल करने के लिए आदेश दिया। राजा साहिब की इच्छा अनुसार राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब के शासन काल की घटनाएं एकत्रित कर इन्हें इस पुस्तक में शामिल किया गया।

# सातवां भाग

## पहला अध्याय (भाग एक)

## राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब का वर्णन

टीका सुरेन्द्र विक्रम सिंह साहिब अपने पिता राजा शमशेर प्रकाश सिंह साहिब की मृत्यु पर विक्रमी सम्वत् 1955 के कार्तिक मास में निम्नलिखित विधि से गददी पर बैठे। अंग्रेज़ी सरकार की ओर से पंजाब के लेफ्टिनैंट गवर्नर सर मैकवर्थ यंग नाहन पधारे और टीका साहिब को 27 अक्तूबर, 1898 तदनुसार 15 कार्तिक, विक्रमी सम्वत् 1955 को विधिवत् दरबार–ए–आम, जिसमें राजा साहिब के रिश्तेदार और रियासत के उच्चाधिकारी शामिल थे, में एक लम्बे भाषण के बाद राजा शमशेर प्रकाश साहिब के सुशासन और रियासत को विकसित करने के कार्यों की प्रशन्सा का वर्णन था तथा टीका साहिब सुरेन्द्र विक्रम सिंह (उत्तराधिकारी) के प्रबन्धन कार्यों को जो उन्होंने अपने पिता के बीमारी के दिनों में किये थे, पसन्द किया और संतोषजनक बताया और इन की कुशलता पर रियासत के आने वाले दिनों में विकास और भलाई की आशा प्रकट कर हिन्दुस्तान की सरकार की ओर से सिरमौर के राजा का खिताब और शक्तियां प्रदान की।

सरकार की ओर से एक घण्टा, एक जरीदार पगड़ी और तलवार राजा साहिब को पहना कर और एक कीमती वस्त्र (Robe) देकर सम्मानित किया। इसके बाद राजा साहिब ने सरकार व लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब बहादुर का निम्नलिखित शब्दों में धन्यवाद किया।

Your Honour

In thanking you for the address you have just delivered and for the kind and flattering manner in which you have alluded to my father, I wish to state that it will ever be the aim and rule of my life to endeavour to follow the example and walk in the footsteps of my late lamented and respected father in carrying out the advancement and enlishtenment which his efforts have bestowed upon the State and which was the work of his life. It willbe my duty and pleasure to devote myself to the good of the Sirmour State in conducting its government on the lines which he has laid down and which are modelled on those of the British Government to rule the people with justice and equity and to eonsider their prospeity and happiness of paramount importance. I am fully aware of the great responsibility which is now placed upon me and I hope to justify in the future the approbation you have been king enough to express regarding my actions in the past.

योअरऑनर, मैं इस ऐडरस के लिए जो कि आप ने अभी पढ़ा है और उस मेहरबानी और प्रशन्सा के लिए भी जो कि आप ने मेरे पिता की की है, मैं धन्यवाद प्रकट करने के बाद कहता हूं कि मेरे जीवन में मेरा यह कर्तव्य होगा कि मैं इस विकास और तरीके के कामों को जारी रखने में, जो कि मेरे आदरणीय पिता ने अपने जीवन में इस रियासत में किये हैं, अपने आदरणीय पिता के पदचिन्हों पर चलता हुआ उस विकास और तरक्की को चालू रखने की कोशिश करूंगा। यह मेरी खुशी का कारण और जीवन का उद्देश्य होगा कि मैं सिरमौर स्टेट के कामकाज को उसी ढंग से, जिस पर मेरे स्वर्गीय पिता ने जनता को न्याय उपलब्ध करवाने के लिए अंग्रेज़ी सरकार के क़ायदे कानून अनुसार शुरू किया था, चलाता रहूंगा और जनता की भलाई और खुशी को अवश्य जानता रहूंगा । मैं उन तमाम जिम्मेदारियों से जो कि

अब मुझको दे दी गई हैं भलि–भांति परिचित हूं और आशा करता हूं कि मैं भविष्य में भी उस कद्रदानी को जो कि आपने मेरे द्वारा भूतकाल में किये गए कार्यों के बारे में मेहरबानी करके जताई है, उसी प्रकार इस पर कार्यरत रहूंगा।

इस अवसर पर राजा को गद्दी पर बिठाने की रस्म के बाद लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब बहादुर ने राजा वीर विक्रम सिंह साहिब को सी.आई.ई. के पदक से जो, उनको तिरह की लड़ाई के बदले में दिया गया था, सम्मानित किया। इसके बाद दरबार उठ गया। उस समय सरकार की तरफ से गद्दी नशीनी की रस्म तो हो गई परन्तु राजा शमशेर प्रकाश साहिब के स्वर्गवास होने के कारण गद्दी नशीनी से सम्बन्धित कोई दूसरी रस्म या खुशी वगैरह नहीं की गई, वे रस्में एक साल बाद हुईं।

राजा सुरेन्द्र विक्रम साहिब ज़िला मैजिस्ट्रेटी और कलैक्ट्री का दायित्व पूरा करने के कारण राजस्व और जुडीशियल विभागों की कार्यवाही से पहले ही भलि–भांति परिचित थे। फिर बाद में जब दो वर्ष तक राजा शमशेर प्रकाश की बीमारी के समय उन्हें राजा साहिब का कार्यभार सम्भाल कर रियासत के सारे कारोबार को चलाने का अवसर मिला तो उनको दूसरे भागों के प्रशासनिक और प्रबन्ध कार्यों का भी अनुभव हो गया जिससे अब उनको रियासत के कामकाज चलाने में कोई मुश्किल पेश नहीं आई, जो कि आमतौर पर प्रत्येक नये कार्य से अपरिचित व्यक्ति को आया करती है। वह बड़ी असानी और स्वाधीनता से राज्य का कारोबार चलाने लगे।

परन्तु कुछ समय बाद राजा साहिब उन त्रुटियों को, जो उनको रियासत के कामकाज में मालूम हुई, दूर करने की तरफ ध्यान देने लगे। उन्होंने रियासत की माली हालत को ठीक करने की ओर भी ध्यान दिया। उन्होंने रहन–सहन के ढंग और मुलाकात इत्यादि के तरीकों में, जो अभी भी पुराने समय के रिवाज़ के अनुसार चल रहे थे, बदलाव किया अर्थात् हर विभाग के कामकाज को पूरा करने के लिए

सप्ताह का एक–एक दिन निश्चित किया और लोगों से प्रतिदिन मिलने के स्थान पर सप्ताह में दो दिन रखे। एक दिन अहलकारों से मुलाकात के लिए और एक दिन आम जनता से मिलने के लिए। इसी प्रकार उन्होंने अपने प्राईवेट स्टाफ और उनके कामकाज के तरीकों में परिवर्तन किया। क्योंकि राजा साहिब को अपने पूजनीय पिता के शासन काल के समय इन लोगों की स्वतन्त्रता और उनके कामकाज में हस्तक्षेप का तरीका, जैसा कि आम रियासतों में होता है, पसन्द न था इसलिए उन्होंने पहले स्टाफ को पैंशन इत्यादि देकर उनसे छुटकारा पाया और नया स्टाफ नियुक्त किया अर्थात् एक पुलिस सब–इंसपैक्टर को अड़दली अफसर नियुक्त किया और उसके अधीन जमादार अडदली नियुक्त किये। हरेक सेवादार के लिए वर्दी दी ताकि वहं ज़रूरत के समय साफ–सुथरे बनकर उपस्थित हुआ करें।

इसके पश्चात् उन विभागों और कार्यालयों में, जो सरकार के कायदे कानून के अनुसार नहीं थे या जिनकी कार्यशैली में कुछ कमी थी या जो बिना जरूरत के स्थापित किये हुए थे, में कुछ फेर बदल शुरू किये। क्योंकि राजा साहिब कार्यालय की कार्यशैली में सरकार के कायदे कानून की पूरी–पूरी पाबन्दी करना उचित समझते थे और इसी के अनुसार रियासत के विभागों में कार्यशैली को लागू करना चाहते थे। जो कार्यकर्ता और विभाग आवश्यक थे, उनमें छंटनी करके फालतू खर्च में कमी करना चाहते थे। उन्होंने इंजीनियर मिस्टर विलियम को, जिसको राजा शमशेर प्रकाश साहिब ने रेलवे लाईन के सर्वे और जनकल्याण विभाग के कामकाज की निगरानी के लिए रखा था, अनावश्यक समझा और रियासत के कारोबार के लिए केवल ऐसिस्टेंट इंजीनियर को ही ज़रूरी समझा। इसलिए विलियम साहिब तीस माघ, विक्रमी सम्वत् 1955 को सेवानिवृत्त कर दिये गए। इसके बाद रियासत में कई ऐसिस्टेंट इंजीनियर एक के बाद एक, कम वेतन पर नियुक्त होते रहे। विक्रमी सम्वत् 1956 में रियासत के हैड ऑफिस को ब्रिटिश सरकार के सचिवालय के नमूने पर चुस्त–दुरुस्त किया

अर्थात् कार्यकर्ताओं के पद सरकार की प्रणाली के अनुसार स्थापित किये और हैड ऑफिस की कार्यवाही ब्रिटिश सरकार के सचिवालय की प्रणाली के अनुसार बनाई।

राय बहादुर पण्डित किशन लाल, जो राजा स्वर्गीय शमशेर प्रकाश के समय प्राईवेट सैक्रेट्री थे, को पूरे वेतन पर सेवानिवृत्त करके प्राईवेट सैक्रेट्री के पद को समाप्त कर दिया। इनके स्थान पर बाबू नारायण सिंह, जो ऐसिस्टेंट के पद पर कुशलता पूर्वक कार्य कर रहे थे, को हैड ऑफिस का सैक्रेट्री नियुक्त किया। बाबू प्रभुलाल, जो हैड ऑफिस का हैड क्लर्क था, को ऐसिस्टैंट सैक्रेट्री नियुक्त किया। बाबू सौदागर लाल देहलवी को उनके पुराने पद मीर मुंशी पर ही रखा। हैड क्लर्क की पदवी पर मिस्टर जॉस को, जो सरकार के सैक्रेट्री कार्यालय का कार्यकर्ता था, रखा गया। बाबू बेली राम को कोश का हैड क्लर्क नियुक्त किया। इसी प्रकार दूसरा स्टाफ भी ज़रूरत अनुसार नियुक्त किया और सरकार की प्रणाली के अनुसार फाईल सिस्टम लागू किया गया। राजा साहिब ने, जो बड़े मेहनती थे और ऑफिस की कार्यवाही को विधिवत् चलाने में रुचि लेते थे, अपने हाथों आदेश लिखने का तरीका, जैसा कि सरकार के अफसर करते हैं, अपनाया। उनका यह विश्वास था कि कागज़ात पर स्वयं आदेश लिखना ज़्यादा लाभकारी था।

राजा साहिब ने यह आदेश भी जारी किया कि बहुत से कार्यालयों में असल चिट्ठी पर ही जवाब दे दिया जाता है तथा अंग्रेज़ी चिट्ठी का जवाब उर्दू में और उर्दू का अंग्रेज़ी में बिना किसी रजिस्टर में दर्ज किए भेज दिया जाता है जो कायदे अनुसार नहीं है। इसलिए अब अंग्रेज़ी का जवाब अंग्रेज़ी में और उर्दू का जवाब उर्दू में दिया जाये और असल चिट्ठी को वापिस न किया जाए बल्कि इसको विधिवत् रिकॉर्ड में रखा जाए। यह राजा साहिब जो भी कोई कमी देखते थे उसको दूर करने में विलम्ब नहीं करते थे। इसके पश्चात् राजा साहिब ने रियासत की कचहरियों को, जो ब्रिटिश सरकार की प्रणाली के

अनुसार नहीं थीं, ठीक करने की तरफ ध्यान दिया। दो–तीन साल से रियासत में दीवानी की प्रारम्भिक कार्यवाही तथा अपील के लिए केवल एक ही अदालत बैंच कोर्ट थी, जो कि कायदे अनुसार नहीं थी और इससे जनता को कठिनाई होती थी। इसलिए राजा साहिब ने विक्रमी सम्वत् 1956 से बैंचकोर्ट को घटाकर इसके स्थान पर दीवानी की प्रारम्भिक न्याय अदालत, जिसको द्वितीय श्रेणी के मुंसिफ की शक्तियां प्रदान की गईं, नाहन में स्थापित की।

इसी प्रकार क्षेत्र के तीनों तहसीलदारों को छोटे–छोटे मुकद्दमों की सुनवाई के पन्द्रह रुपया तक (दण्ड) की शक्तियां दीं। दूसरी अदालत डिस्ट्रिक्ट जज की स्थापित की, जिसको प्रथम श्रेणी मैजिस्ट्रेट की शक्तियां प्रदान कीं। तीसरी अदालत अजलास खास (special session) स्थापित किया। इसको डिवीज़नल जज, सैशन (session) जज और हाईकोर्ट की शक्तियां प्रदान कीं। इस अपील अदालत के जज वह स्वयं बने और अन्तिम अपील की उच्च अदालत के वास्ते एक जुडीशियल काउंसिल नियुक्त किया जिसमें पांच सदस्य–सरदार सूरज सिंह, मेजर वीर विक्रम सिंह, जॉस साहिब, बाबू नारायण सिंह और पण्डित बिशम्बर दास नियुक्त किये। राजा साहिब स्वयं इसके प्रैज़िडैंट बने। इस अदालत को अपील की अधिक शक्तियां दी गईं। इस काउंसिल के लिये क़ायदे कानून बनाये गए परन्तु जॉस साहिब को उर्दू कानून इत्यादि की जानकारी न होने के कारण इस काउंसिल की सदस्यता से हटा दिया गया और उनके स्थान पर टॉमसन साहिब को नियुक्त किया गया जिन्होंने कुछ समय काम करके त्याग पत्र दे दिया और उनके स्थान पर मिस्टर वरवर्टन सदस्य नियुक्त हुए।

जब यह न्यायालय विधिवत् स्थापित हो गया तब राजा साहिब ने रियासत के कलैक्टरी के पद के लिए, जिस पर वह स्वयं कार्य कर चुके थे तथा डिस्ट्रिक्ट जज के पद के लिए अनुभवी अफसरों की तलाश शुरू की क्योंकि रियासत के यही दो पद ऐसे हैं जिनसे जनता का अधिक सम्बन्ध रहता है और जिन पर प्रभावशाली, समझदार और

कुशल अधिकारियों की आवश्यकता होती है। विक्रमी सम्वत् 1956 के ज्येष्ठ मास से राजा साहिब ने राजकुमार मेजर वीर विक्रम सिंह और दूसरे सलाहकारों की सहमति से कलैक्टरी और ज़िला मैजिस्ट्रेटी के पद पर मिस्टर आर.पी.वार. बर्टन साहिब को, जो कि अंग्रेज़ी सरकार में एक्स्ट्रा ऐसीस्टैंट कमिश्नर था, नियुक्त किया। इन साहिब से यह ऐग्रीमैंट किया कि उनके साथ अंग्रेज़ी सरकार के क़ायदे कानून अनुसार व्यवहार होगा और उसको इसी क़ायदे के अनुसार पैंशन दी जाएगी, बल्कि उसकी मृत्यु पर उसकी मेम साहिबा और बच्चे को भी रियासत की ओर से पैंशन दी जाएगी और रियासत उसको सेवा से अलग नहीं कर सकेगी। इस ऐग्रीमैंट पर नाहन की जनता में बड़ी आलोचना और आपत्ति हुई परन्तु यह मामला सलाहकारों की सहमति से तय हुआ था। इस पर कुछ ध्यान नहीं दिया गया।

डिस्ट्रिक्ट जज के पद पर सरदार गुरुवचन सिंह को, जो कि अमष्तसर के जागीरदारों में से था और एक समय ब्रिटिश सरकार में ऐसीस्टैंट कमीश्नर था, नियुक्त किया। यह व्यक्ति होशियार और जुडीशियल कार्यवाही में बड़ा अनुभवी था। इसकी नियुक्ति इस पद पर उचित साबित हुई। राजस्व विभाग में राजा साहिब स्वयं कमीश्नर और फाइनेंशियल कमिश्नर की शक्तियां प्रयोग करते रहे। इस प्रकार रियासत के न्यायालय विधिवत् तरीके से स्थापित हो गए और जनता की कठिनाइयां दूर हो गई।

विक्रमी सम्वत् 1956 के माघ मास में बसन्त पंचमी के अवसर पर राजा साहिब ने अपना राजतिलक किया, जिसमें सारे नम्बरदार, जैलदार और जनता के गणमान्य व्यक्ति शामिल हुए। दो तीन दिन तक खूब जश्न रहा और सबने अपनी–अपनी पहुंच के मुताबिक राजा साहिब को रीति अनुसार भेंटें और उपहार दिए। राजा साहिब ने अपने तमाम निकट सम्बन्धियों को उनके दर्जे के अनुसार वस्त्र दिए। रियासत के कार्यकर्ताओं को उनके पदों के अनुसार एक–एक महीने का वेतन दिया। इस शुभ अवसर पर बहुत खुशियां मनाई गई।

जब राजतिलक की तैयारियां चल रही थीं, तो उससे पहली रात को डॉक्टर कर्नल स्कॉट का, जो कि लगभग तीन साल से डॉक्टर निकल्सन के चले जाने के बाद सिविल सर्जन के पद पर कार्यरत थे, अचानक ही देहान्त हो गया। सुबह के समय वह अपने बिस्तर पर मृत पाए गए, जिससे इनका सेवक बहुत चिन्तित हुआ और तुरन्त राजा साहिब के पास जाकर इस घटना की सूचना दी। राजा साहिब और दूसरे सभी व्यक्ति यह समाचार सुनकर बहुत अचम्भित हुए। राजा साहिब ने ऐसिस्टैंट सिविल सर्जन बाबू मेहमान चन्द्र और पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट मिस्टर व्हाईटिंग, जो कि कर्नल स्कॉट के निकट सम्बन्धी थे, को डॉक्टर साहिब की मृत्यु बारे छानबीन करने भेजा। घटना की छानबीन होने के बाद डॉक्टर साहिब के मष्तक शरीर को, राजतिलक हो जाने के बाद, शाम को सैनिक सम्मान के साथ कब्रिस्तान पहुंचाया गया। राजा साहिब, दूसरे राजकुमार, अहलकार और शहर के लोग उनकी अर्थी के जलूस में शामिल हुए और मृतक शरीर को कब्रिस्तान में दफ़न कर दिया गया। डॉक्टर स्कॉट बड़े मिलनसार और ज़िन्दादिल व्यक्ति थे। वह एक अनुभवी डॉक्टर थे। लोगों को उनकी अचानक मृत्यु से बहुत दुःख हुआ।

विक्रमी सम्वत् 1957 में डॉक्टर गॉर्डन हाल जो कि बड़े मिलनसार और कुशल डॉक्टर थे, सिविल सर्जन के पद पर नियुक्त किए गए। वह केवल डेढ़ वर्ष तक रियासत में सेवा करने के बाद त्यागपत्र देकर चले गए। इसके पष्चात् राजकुमार वीर विक्रम सिंह की सिफारिश पर डॉक्टर निकल्सन को दोबारा विक्रमी सम्वत् 1959 में सिविल सर्जन के पद पर नियुक्त किया गया।

राजा साहिब को केवल कारोबार का ही शौक न था बल्कि वह खेलों में भी रुचि रखते थे। विक्रमी सम्वत् 1956 में गद्दी पर बैठने के थोड़े ही समय बाद उन्होंने एक स्पोर्ट्स क्लब स्थापित किया, जिसमें हॉकी व फुटबाल इत्यादि खेल होने लगे। राजा साहिब स्वयं व राजकुमार वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह, रियासत के अधिकारी

और फौजी ऑफिसर भी इस क्लब में शामिल किए गए। नाहन में ऐसी खेलों का रिवाज नहीं था, इसलिए पहले दिन बहुत से लोग खेल देखने के लिए एकत्रित हुए। यद्यपि लोगों ने पहले–पहले राजा साहिब और राजकुमारों का इस तरह साधारण तौर पर खेल में शामिल होना अच्छा नहीं समझा परन्तु राजा सहिब ने इसकी परवाह नहीं की और वह खेलों में भाग लेते रहे। अधिकतर यहां हॉकी खेली जाती थी। हॉकी के कायदे भी अंग्रेज़ी से उर्दू में छपवाकर खिलाड़ियों को दिए गए ताकि वह विधिवत् खेल सकें।

बहुत लम्बे समय तक हॉकी बड़ी रुचि के साथ खेली जाती रही और धीरे–धीरे नाहन के आम लड़कों इत्यादि में भी हॉकी खेलने का रिवाज़ अधिक हो गया। पिछले समय में भी यह खेल खेला जाता था, परन्तु अब कुछ समय से क्रिकेट का रिवाज आम हो गया था लेकिन अब दूसरे खेलों के स्थान पर हॉकी में लोग ज़्यादा रुचि लेने लगे हैं। स्पोर्ट्स क्लब के स्थापित हो जाने से मिलने–जुलने और मनोरंजन में समय गुज़ारने का अच्छा अवसर मिलता था। वैसे तो राजा शमशेर प्रकाश साहिब के आम जलसे में, जो कि हर रोज शाम को हुआ करता था, मिलने–जुलने का मौका मिल जाता था परन्तु यह क्लब भी मिलने–जुलने का अच्छा स्थान बन गया। जलसे में तो केवल बातचीत का ही आनन्द मिलता था, परन्तु क्लब में शारीरिक व्यायाम भी होता था और इस तरह से मिलना–जुलना भी हो जाता था।

राजा साहिब को रियासत के विभिन्न विभागों की कार्यवाही को विधिपूर्वक करके विकास करने का सदैव ध्यान रहता था। इसलिए वह जिस किसी विभाग में कोई त्रुटि देखते तो उसको दूर करने में विलम्ब नहीं करते थे। राजा साहिब के विचार में रियासत का पुलिस विभाग इतना सम्पूर्ण नहीं था जितना होना चाहिए था इसलिए उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1957 में इस की त्रुटियों को दूर करना आरम्भ किया। पुलिस के सुपरिन्टेंडेंट मिस्टर व्हाईटिंग को अपना प्राईवेट सैक्टरी नियुक्त किया क्योंकि वह उर्दू भाषा से अनजान थे और पुलिस की पूरी

कार्यवाही उर्दू में होती थी जिसको वह पूरी तरह से नहीं समझ सकते थे। इसके अलावा वह बड़े सादे स्वभाव के थे इसलिए वह पुलिस का काम काज कुशलता पूर्वक नहीं निभा सकते थे। इसके स्थान पर चौधरी प्रताप सिंह को, जो एक समय पुलिस विभाग में इंस्पैक्टर रह चुके थे, तहसीलदार के पद से बदलकर एसीस्टेंट सुपरिन्टेन्डेंट नियुक्त किया। इस प्रकार दूसरे विभागों में भी तब्दीलियां की गईं। जो अधिकारी इत्यादि कुशल नहीं पाये गये उनको पेन्शन और ईनाम इत्यादि देकर सेवा निवष्त किया गया। पुलिस के वेतन में भी बढ़ोतरी की गई ताकि कुशल और होशियार अधिकारी प्राप्त हो सकें तथा पुलिस का बन्दोबस्त, जिस पर रियासत की सुरक्षा और शांति निर्भर है, सुचारू ढंग से चलाया जा सके।

इसी बीच विक्रमी सम्वत् 1957 में फौज के कमांडिंग ऑफिसर की सिफारिश पर एक पद असीस्टैंट कमांडेंट का स्वीकृत किया गया, बलदेव प्रसाद पाठक, जो रियासत बड़ौट का निवासी था और फौज के कायदे कानून की जानकारी रखता था, को इस पद पर नियुक्त किया गया।

राजा साहिब को कषषि और व्यापार के विकास में उतनी ही रुचि थी जितनी कि उनके पिता राजा शमशेर प्रकाश को थी। इसके विकास के लिए राजा साहिब ने वही तरीके अपनाने में बेहतरी समझी जिनको उनके पिता श्री ने अपनाया था। इसलिए उन्होंने विक्रमी सम्वत् 1957 के असौज मास से नाहन में एक वार्षिक कषषि और व्यापार मेले का प्रबन्ध किया। उन्होंने इस रियासत की जनता के प्रत्येक घर से एक व्यक्ति को अनाज और हस्तलिपियों इत्यादि को मेले में लाकर प्रदर्शित करने का आदेश दिया। लोगों के मनोरंजन के लिए इस अवसर पर रामलीला किये जाने की योजना बनाई। उसी साल में दशहरा के अवसर पर इस प्रदर्शन का श्रीगणेश हुआ। इसके प्रबन्ध के लिए एक कमेटी नियुक्त की गई जिसने प्रदर्शनी इत्यादि के लगाये जाने का सम्पूर्ण प्रबन्ध किया।

रामलीला के लिये एक ड्रामा—कम्पनी बनारस से मंगवाई गई जिस ने तीन सप्ताह तक नाहन में बहुत अच्छी रामलीला प्रस्तुत की। इसे नाहन शहर के निवासियों ने बड़ी रुचि से देखा। नाहन में इस अवसर पर खूब रौनक रही। दशहरा के अवसर पर निकटवर्ती इलाकों से पन्द्रह बीस हज़ार लोग नाहन में एकत्रित हुए। लोग व्यापार, कृषि और हस्तशिल्प की वस्तुएं लाये जिनको एक स्थान पर सजाया गया। राजा साहिब ने इन वस्तुओं को देखकर इनके लाने वालों को पुरस्कृत किया। यह सिलसिला तीन साल तक चलता रहा और रामलीला भी होती रही। इसके अतिरिक्त खेल तमाशे और आतिशबजी भी जनता की रुचि के लिए चलाई जाती रही। इस मेले से व्यापारियों को माल बेचने और खरीदने में बड़ा लाभ हुआ।

तीन साल रामलीला देखकर लोगों को इसमें अधिक रुचि नहीं रही इस कारण यह बन्द हो गई परन्तु यह व्यापारिक मेला हर साल राजा साहिब के जीवन काल तक बड़े उत्साह से होता रहा। रामलीला के स्थान पर विभिन्न खेल तमाशे, आतिशबाजी, भाषण इत्यादि समय की जरूरत अनुसार होते रहे। इस प्रदर्शनी से व्यापारियों को तो बहुत लाभ रहा तथा जमींदारों को भी एक दूसरे के इलाकों की उपज के बारे काफी जानकारी प्राप्त हुई। परिणाम स्वरूप कई स्थानों में कषकों ने कपास और गन्ने की फसलें लगानी शुरू कर दीं जो वहां पहले नहीं होती थी। दस्तकारों को भी अपने हस्तशिल्प और कारीगरी के नमूने प्रदर्शित करने का अवसर मिला परन्तु कषषि को उतना लाभ नहीं पहुंचा जितना कि राजा साहिब चाहते थे।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश ने, 1900 ईसवी, तदनुसार सम्वत् 1957 विक्रमी में अफ्रीका में बोर (युद्ध) (Boer war) के समय पचास हज़ार पौंड वजन की चाय ब्रिटिश सरकार की फौज को सहायता के तौर पर भेंट दी जिसको सरकार ने बड़ी मेहरबानी से मंजूर फरमाया। इसके बाद प्रीटोरिया (अफ्रीका) के युद्ध और शहर में दाखिल होने के समय नाहन में जलसे किये गए और खुशियां मनाई गई। इसी प्रकार

12 माघ, विक्रमी सम्वत् 1957, तदनुसार 24 जनवरी 1901 ईसवी में महारानी विक्टोरिया, जो हिन्दुस्तान की मलिका थीं, की मृत्यु के समय सारी रियासत में दुःख और संवेदना प्रकट की गई तथा उनकी स्मृति में सभाएं भी की गईं। रीति अनुसार हड़तालें इत्यादि भी हुईं। इसी प्रकार 1900 ईसवी में खुशहालगढ़ रेलवे लाईन के बनाने में राजा साहिब ने सिरमौर के सैपर्ज़ (Sappers) को इस कार्य में अंग्रेज़ी सरकार को सहायता देने की प्रार्थना की जिसको सरकार ने मंजूर फरमाया। सिरमौर सैपर्ज़ ने मेजर विक्रम सिंह की कमान में माघ, विक्रमी सम्वत् 1957 में नाहन से खुशहालगढ़ को प्रस्थान किया और वहां पर लगभग एक साल रह कर रेलवे लाईन की सड़क को बनाने में बड़ी मेहनत की यद्यपि वहां का वातावरण और पानी ठीक नहीं था जिस कारण बहुत से सिपाहियों की जानें गईं परन्तु उन्होंने अपने कार्य को बड़ी अच्छी तरह निभाया जिस पर सरकार बहुत प्रसन्न हुई।

इसी बीच सेना के कमांडिंग ऑफिसर की सिफारिश पर राजा साहिब ने फौज के प्रबन्धन को सुचारू करने के लिए एक एसिस्टैंट का पद स्वीकष्त किया, जिस पर मिस्टर व्हाईटिंग को, जो प्राईवेट सैक्टरी के पद पर कार्य कर रहे थे, नियुक्त किया।

नवम्बर 1901 ईसवी, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1958 में ब्रिटिश सरकार ने बादशाह एडवर्ड सप्तम की सालगिरह के अवसर पर राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को उच्च कोटि की पदवी के.सी.एस.आई से सम्मानित किया जिसका समाचार 9 नवम्बर 1901 ईसवी को वाइसराय ने राजा साहिब को दिया जिससे राजा साहिब के निकट सम्बंधियों, कर्मचारियों और जनता को बड़ी प्रसन्नता हुई।

जिस समय नाहन फाउंडरी के कार्य में बढोतरी हुई और दूसरे इंजीनियर की ज़रूरत महसूस हुई तब फाउंडरी के सुपरिन्टेंडिंग इंजीनियर मिस्टर जॉन ने राजा साहिब की आज्ञा से अपने एक निकट सम्बंधी मिस्टर ग्रेबल को, जिसने इंग्लैंड में इंजीनियरिंग की शिक्षा पायी थी, इग्लैंड से बुलवा कर 1901 ईसवी में एसिस्टेंट इंजीनियर के

पद पर नियुक्त किया।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश भी अपने पिता की तरह अंग्रेज़ी सरकार के अफसरों को रियासत में आमंत्रित करने में फक्र महसूस करते थे इसलिए जब 13 नवम्बर 1901 को भारत के कमांडर इन चीफ धर्मपत्नी सहित अम्बाला के रास्ते नाहन पधारे तो राजा साहिब ने उनका बड़ा आदर और स्वागत किया। उन्होंने इन आदरणीय मेहमानों को शमशेर विला में ठहराया। दूसरे दिन कमांडर इन चीफ साहिब ने फाउंडरी, नाहन नगर, छावनी, शमशेरपुर इत्यादि का दौरा किया और अति प्रसन्न हुए। उन्होंने राजा साहिब शमशेर प्रकाश साहिब की ऐसे पहाड़ी स्थान में फाउंडरी स्थापित करने के लिए अति प्रशंसा की।

दोपहर के बाद कमांडर इन चीफ ने धर्मपत्नी सहित फौजी क्रीड़ाएं और दूसरे खेल तमाशे, पहाड़ी नाच ठोडा (पहाड़ी नाचते समय एक दूसरे की तरफ तीर चलाते हैं) इत्यादि देखे। सायंकाल आतिशबाजी का तमाशा भी देखा, जिससे वह बहुत प्रसन्न हुए। 15 नवम्बर, 1901 को कमांडर इन चीफ साहिब शिकार खेलने के लिए दून की ओर पधारे और माजरा में दो दिन शिकार खेल कर वापिस हुए। उसी वर्ष विक्रमी संवत् 1958 के पौष मास में मिस्टर टॉमसन, जो जंगलात के कंज़रवेटर थे, ने जंगलों की देख--रेख के बारे में विचारों में सहमति न होने के कारण 15 जनवरी, 1902 को त्यागपत्र दिया और रियासत को छोड़कर चले गए। इनके स्थान पर मिस्टर मैकनन को विक्रमी संवत् 1959 के बैसाख मास में नियुक्त किया गया।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को प्रशासनिक और आर्थिक कार्यों के अतिरिक्त स्वास्थ्य सम्बन्धी मामलों में भी गहरी रुचि थी इसलिए उन्होंने प्लेग की बीमारी को समाप्त करने के लिए, जो एक समय से हिन्दुस्तान में फैल रही थी, प्रभावशाली कदम उठाए। जब 1902 ईसवी में पंजाब में प्लेग का प्रकोप हुआ और सिरमौर रियासत से लगते क्षेत्रों में प्लेग की घटनाएं होने लगीं तो राजा साहिब ने सिरमौर की जनता के बचाव के लिए विक्रमी संवत् 1958 के माघ मास में क्वारनटाईन

(Quarentine) प्रणाली, जो कि अंग्रेज़ी सरकार में प्रचलित थी, को रियासत में भी चलाया। रियासत की चारों सीमाओं पर जो रास्ते थे और जहां से लोगों का यातायात होता था वहां पर क्वारनटाईन चौकियां स्थापित की गईं तथा वहां पर एक–एक हॉस्पिटल एसिस्टैंट और कुछ स्थानों पर एक मुहर्रर (लिखने वाला) और चौकीदार नियुक्त हुए। बाहर से रियासत में आने वालों को क्वारनटाईन में बिना ठहरे रियासत में प्रवेश करना निषेध था। क्वारनटाईन चौकियों पर यात्रियों के लिए छप्पर इत्यादि बनवाए गए।

इस रोकथाम से शुरू–शुरू में यात्रियों और नगरवासियों को असुविधा हुई, परन्तु इस गम्भीर रोग से सिरमौर की रियासत सम्पूर्ण तौर पर बची रही और लोग स्वस्थ रहे। यद्यपि रियासत की सीमा से लगते अंग्रेज़ी सरकार के क्षेत्रों में कई बार इस बीमारी की घटनाएं घटीं, बल्कि एक बार तो तिलोकपुर के एक नागरिक के षड्यन्त्र से उसका कोई निकट सम्बन्धी, जो प्लेग से पीड़ित था, बिना क्वारनटाईन में ठहरे तिलोकपुर में आ गया जो नाहन से केवल 7–8 मील की दूरी पर है और वहां आकर उसकी मृत्यु हो गई। जिसके कारण प्लेग की कुछ घटनाएं वहां पर भी घटीं, जिसमें 4–5 लोग मर गए। इसी कारण उन्हीं दिनों नाहन खास में भी तीन–चार घटनाएं प्लेग की घटीं, परन्तु राजा साहिब बड़ी तेज़ी से इसको समाप्त करने में लग गए। वह स्वयं प्लेग कर्मियों के साथ तिलोकपुर पधारे और भवनों इत्यादि को बड़ी अच्छी तरह डिसइन्फैक्ट करवाया, घरों के चारों ओर सफाई भी करवाई।

राजा साहिब स्वयं प्लेग की रोकथाम के लिए नाहन गए और जिन भवनों में प्लेग की घटनाएं घटी थीं, उनमें अंगीठियां सुलगा कर प्रभावित भवनों को डिसइन्फैक्ट करवाया, जिससे यह खतरनाक बीमारी शीघ्र ही समाप्त हो गई। उस समय से रियासत में प्लेग का एक विभाग स्थापित कर दिया गया, जो अब तक चल रहा है। इसके लिए नियम भी बनाए गए, जिसमें क्वारनटाईन में ठहराने और

आवश्यक प्रबन्धों के बारे में आदेश शामिल हैं और इन आदेशों की अवहेलना करने वालों को दण्डित करने का भी नियम बनाया है। आरम्भ में तो यह विभाग डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की देख–रेख में चलता रहा, परन्तु बाद में इसके लिए अलग से सुपरिन्टैंडैंट और एक इन्स्पैक्टर नियुक्त किए गए। इस विभाग का सीधा सम्बन्ध मुख्य कार्यालय से स्थापित किया गया और महाराजा साहिब स्वयं इसकी देखभाल करते थे ताकि यह पूरी पाबन्दी में रहे और जनता प्लेग से सुरक्षित रहे।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को रियासत के विकास में उतनी ही रुचि थी जितनी उनके पिता को थी। इस मामले में वह अपने पिता के पगों पर चलते थे परन्तु वह सुविधानुसार व विधिवत् कार्य करना पसन्द करते थे। नाहन से रेलवे स्टेशन बड़ारा लगभग 40 मील की दूरी पर होने से यातायात में बाधा आती थी तथा यात्रियों के लिए असुविधा होती थी। राजा साहिब को यह असुविधा दूर करने का हमेशा ही ध्यान रहता था। इसलिए जब अंग्रेज़ी सरकार के डाक विभाग ने रियासत के डाकघरों को लेने की इच्छा प्रकट की तो राजा साहिब ने इन डाकघरों से अच्छी आय होने के बावजूद इनको अंग्रेजी सरकार को देना इस शर्त पर मंजूर किया कि सरकार बड़ारा रेलवे स्टेशन से नाहन तक टांगा सेवा आरम्भ करे और इन डाकघरों को पहले की तरह ही चालू रखे।

अप्रैल 1902 ईसवी, तदनुसार विक्रमी संवत् 1959 में रियासत के डाकघर अंग्रेज़ी सरकार के डाक विभाग को सौंप दिए गए। अंग्रेज़ी सरकार ने बड़ारा से काला अम्ब तक अर्थात् सड़क के उस भाग पर जो पक्का था, यह टांगा सेवा चालू कर दी जिससे यातायात में सुविधा हो गई परन्तु नाहन तक सड़क के पक्का न होने के कारण टांगा सेवा चालू नहीं की जा सकी। राजा साहिब का नाहन तक सड़क को पक्का करवाने का दृढ़ निश्चय था, उन्होंने इस कार्य के लिए व्यय का अनुमान भी करवाया था। फिर भी जनता राजा सुरेन्द्र

विक्रम प्रकाश की बड़ी आभारी है, जिनके कारण बड़ारा से काला अम्ब तक यह सुविधा प्राप्त हुई।

अंग्रेज़ी सरकार ने 1902 ईसवी में ऐडवर्ड सप्तम के राजसिंहासन के समय हिन्दुस्तान की रियासतों से कुछ गिने–चुने राजाओं, रईसों, फौज़ी अफ़सरों और इम्पीरियल सर्विस के अधिकारियों को जलसे में शामिल होने का आदेश दिया था। इस आदेशानुसार रियासत सिरमौर से मेजर राजकुमार वीर विक्रम सिंह सिरमौर सैप्पर के कमांडैंट के तौर पर शामिल होने के लिए प्रस्तावित किए गए, उनके साथ दो हवलदार भी सम्मिलित किए गए। राजा साहिब ने राजकुमार साहिब को विलायत की यात्रा का व्यय देकर नाहन के सिविल सर्जन डॉक्टर निकल्सन को, राजकुमार की इच्छानुसार उनके साथ साथी के तौर पर भेजा। राजकुमार मेजर वीर विक्रम सिंह डॉक्टर निकल्सन और दो हवलदारों बुद्धराम और भूलर सिंह के साथ 1902 ईसवी के मई महीने में, तदनुसार विक्रमी संवत् 1959 के जेठ मास में इंगलैंड के लिए चल पड़े। वहां पहुंच कर उन्होंने राज सिंहासन के जलसे में भाग लिया। वह विक्रमी संवत् 1959 के भादो मास में सकुशल नाहन वापिस आए।

1902 ईसवी की 28 मार्च को सायंकाल एक बड़ी दुःखभरी घटना नाहन में घटित हुई। कप्तान एस.एस. व्हाईटिंग ने, जो रियासती फौज़ के एडज्यूटैंट थे, अपने बंगले के स्नानघर में जाकर घरेलू दुःख के कारण छर्रे की बन्दूक से आत्महत्या कर ली। इस घटना को सुनकर नाहन के लोग चकित रह गए। राजा साहिब और दूसरे व्यक्तियों ने कप्तान साहिब की बेवक्त मष्त्यु पर बड़ा अफसोस प्रकट किया क्योंकि कप्तान साहिब बड़े अच्छे स्वभाव के नेक व्यक्ति थे। दूसरे दिन उनकी अर्थी फौजी सम्मान के साथ कब्रिस्तान में ले जाई गई। अर्थी के साथ राजा साहिब, राजकुमार और रियासत के अन्य अधिकारी भी कब्रिस्तान तक गए तथा मष्तक शरीर को रीति अनुसार दफन किया गया। कप्तान साहिब ने यूरोपियन मेम के अतिरिक्त हिन्दुस्तानी स्त्री भी रखी हुई थी, जिससे एक लड़का और लड़की थी।

राजा साहिब ने कप्तान साहिब की सेवाओं का ध्यान रख कर दया दिखाई और मेम साहिबा को रु0 50/– मासिक पैंशन स्वीकष्त कर और उन्हें यात्रा–भाड़ा देकर विलायत को भेज दिया। पीछे बचे बाकी लोग कुछ दिन तक नाहन में रहे, फिर वे देश के किसी भाग में चले गए।

9 अगस्त 1902, ईसवी को ऐडवर्ड सप्तम के इंगलैंड में राजसिंहासन की रस्म के समय नाहन में प्रसन्नता प्रकट करने के लिए 101 तोपों की सलामी दी गई। नाहन के हाई स्कूल के हॉल में यूरोपियनों और राजकुमारों के अतिरिक्त शहर के दूसरे निवासी भी एकत्रित हुए और सबने बादशाह की दीर्घ आयु के लिए प्रार्थना की।

11 अगस्त 1902, तदनुसार आषाढ़ विक्रमी संवत् 1959 को कंवर रणजोर सिंह का दूसरा विवाह कंवर साहिब की जागीर नैना टिक्कर में बीजापुर ज़िला कांगड़ा के जागीरदार मियां देवी चन्द की बहन से हुआ। डोला 31 आषाढ़ विक्रमी संवत् 1959 को नाहन पहुंचा और धाम का प्रबन्ध हुआ जिसमें राजा साहिब और राजकुमार भी सम्मिलित हुए।

विक्रमी संवत् 1959 के सावन की 17वीं तिथि को कंवर सूरत सिंह साहिब की चम्बयाली लाड़ी साहिबा, जो एक सप्ताह से बीमार चली आ रही थी, का अचानक लगभग दिन के 12.00 बजे देहान्त हो गया। कंवर सूरत सिंह उनकी मष्त्यु से एक दिन पहले ही अपने मौज़ा डाण्डा अम्बोह गांव के दौरे से वापिस आए थे। वह कुछ समय से वहीं रहा करते थे। वह स्वयं भी पीलिया के रोग से पीड़ित थे और कमज़ोर होते जा रहे थे। इस दुःखभरी घटना से उनको गहरा धक्का लगा तथा निकट सम्बन्धियों को भी इस असामयिक मष्त्यु का अफसोस हुआ।

लाड़ी साहिबा ने दो पुत्रियां और एक छोटी आयु का पुत्र अपने पीछे छोड़ा। परन्तु लाड़ी साहिबा की मष्त्यु से सरदार सूरतसिंह साहिब जो स्वयं भी कमज़ोर थे, को इतना गहरा दुःख हुआ कि वह स्वयं भी 20 सावन, विक्रमी संवत् 1959 की रात को दस्त और उल्टियों से

पीड़ित हो गए और उनकी स्थिति दिन प्रतिदिन बिगड़ती चली गई। बहुत उपचार किया गया, परन्तु कुछ लाभ नहीं हुआ और रोग बढ़ता चला गया। अंत में बहुत कष्ट के बाद उनका 27 सावन, विक्रमी संवत् 1959 को पचास वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। पीछे बचे निकट सम्बन्धियों को भारी धक्का लगा। राजा साहिब को छोड़कर इन सगे–सम्बन्धियों को कोई देखने वाला नहीं रहा।

स्वर्गवासी राजकुमार की अर्थी, जिसके साथ राजा साहिब, निकट सम्बंधी और रियासत के अधिकारी थे, को सैनिक सम्मान के साथ मारकण्डा नदी के तट पर ले जाया गया और वहां हिन्दू शास्त्रानुसार इसका अन्तिम संस्कार किया गया। इस सम्बन्ध में शहर में चार दिन तक हड़ताल रखी गई तथा रियासत के कार्यालय भी बंद रहे। मृत्यु की दूसरी रस्में मातम इत्यादि रीति अनुसार राजा साहिब ने पूरी करवाईं। इसके बाद उन्होंने स्वर्गवासी कंवर सूरत सिंह के पुत्र सरदार रणदीप सिंह को, जिसकी आयु 8 वर्ष की थी और दूसरे सगे सम्बन्धियों और जायदाद की देखभाल की ज़िम्मेवारी अपने ऊपर ले ली। स्वर्गवासी कंवर सूरत सिंह की भोग–विलास में रुचि और आरामदायक जीवन व्यतीत करने के कारण उनकी जायदाद का प्रबन्ध बिगड़ गया था इसलिए राजा साहिब ने उसको ठीक तरह से चलाने की ओर ध्यान दिया। उन्होंने कोर्ट ऑफ वार्ड नियुक्त करके गंगा राम संजाली को, जो कि सूरत सिंह स्वर्गवासी के पुराने सेवकों में से था, कोर्ट के मैनेजर के पद पर नियुक्त किया। राजा साहिब स्वयं इस जायदाद के संरक्षक बने और सूरत सिंह की मृत्यु के बाद कंवर रणजोर सिंह को जुडीशियल काउंसिल का सदस्य नियुक्त किया।

राजा साहिब को रियासत में उन कार्यों, जो कि राजा शमशेर प्रकाश साहिब के शासन काल में पूरे नहीं हो सके थे और जो जनता की भलाई के लिए अनिवार्य थे, को पूरा करने का सदा ध्यान रहता था। उन्होंने टेलीफोन हैड ऑफिस से महलों, छावनी और दूसरे कार्यालयों तक जो कुछ दूरी पर थे, टेलीफोन सेवा जारी की। राजा

साहिब ने एक टावर क्लॉक मंगवाकर लिटन मैमोरियल में, जो बगैर क्लॉक के अधूरा पड़ा था, 16 अगस्त, 1902 ईसवी को लगवाया। इससे जनता को बहुत लाभ हुआ।

इसी बीच राजा साहिब ने अर्दली अफसर के स्थान पर ए.डी. काँग के पद की स्थापना की, जिस पर पेशावर वासी आशिक हुसैन को, जो कि अंग्रेज़ी पढ़ा लिखा था और वर्तमान समय की सोसायटी के तौर तरीकों से परिचित था, भादों संवत् 1959 से ए.डी. काँग नियुक्त किया और अर्दली का पद समाप्त कर दिया गया।

इसी वर्ष स्वर्गवासी कंवर वीर सिंह के ख्वासज़ादे कंवर रुगनाथ सिंह का गुज़ारे के बारे में राजा साहब के साथ मुकद्दमा शुरू हुआ। यह गुज़ारा स्वर्गवासी कंवर वीर सिंह की जागीर के ज़ब्त होने के समय 18 सावन, विक्रमी संवत् 1939 को जारी एक पत्र द्वारा रियासत से कंवर रुगनाथ सिंह के लिए निश्चित हुआ था परन्तु अभी तक नहीं दिया गया था, क्योंकि राजा साहब ने राजा शमशेर प्रकाश के गुज़ारा दिए जाने के बारे 30 माघ, विक्रमी संवत् 1952 के एक आदेश के हवाले से जो उन्होंने कंवर रणज़ोर सिंह की एक बटा तीन जागीर ज़ब्त न करने के बारे में विक्रमी संवत् 1952 में एक फाईल पर लिखा हुआ था, रियासत की तरफ से गुज़ारा देने से इनकार किया और कहा कि यह गुज़ारा कंवर रणजोर सिंह से प्राप्त किया जाए। परन्तु कंवर रणजोर सिंह का इस गुजारे से कोई सम्बन्ध न था और उसकी ऊपर लिखित आदेश से सहमति नहीं थी क्योंकि यह आदेश उसको मिली हुई सनद के विरुद्ध था इसलिए रुगनाथ सिंह ने कुल जब्त की गई जागीर और कम से कम 1500/– रु0 गुज़ारा के लिए अंग्रेज़ी सरकार में गुहार लगाई, जिस पर पंजाब के लैफ्टिनैंट गवर्नर सर चार्ल्स रिवाज़ ने राजा शमशेर प्रकाश द्वारा 300/– रु0 प्रति वर्ष दिया जाना निश्चित किया और गुज़ारा कंवर रुगनाथ सिंह को कंवर रणजोर सिंह से दिलाए जाने का आदेश जारी किया।

हिन्दुस्तान के बादशाह एडवर्ड सप्तम की ताजपोशी के

समारोह से सम्बन्धित दरबार और जलसा देहली में जनवरी, 1903 को किया जाना प्रस्तावित हुआ था। इस दरबार में सिरमौर के राजा साहिब को हिन्दुस्तान के दूसरे महाराजाओं और राजाओं की तरह सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित किया गया, जिसको राजा साहिब ने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया और दरबार में शामिल होने के लिए तैयारियों में लग गए। राजा साहिब ने कैम्प इत्यादि के प्रबन्ध के लिए एक कमेटी नियुक्त की। बाबू नारायण सिंह व पण्डित बिशम्बर दास को इस कमेटी का सदस्य नियुक्त किया और स्वयं राजा साहिब इसके प्रेज़ीडैंट बने। कमेटी ने कैम्प के प्रबन्ध इत्यादि देहली में पूरे किए।

टीका अमर सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार विजय सिंह, सरदार कंवर देवी सिंह, मिस्टर जॉन्स, डॉक्टर निकल्सन, मिस्टर ग्रेवल, सरदार गुरवचन सिंह, बाबू नारायण सिंह, सचिव पण्डित बिशम्बर दास तथा सौदागर लाल मीर मुन्शी (हैड क्लर्क) के साथ राजा साहिब 22 दिसम्बर, 1902 को देहली रवाना हुए। राजकुमार वीर विक्रम सिंह सिरमौर सैप्पर्ज़ के साथ पहले से ही देहली में थे। वह भी राजा साहिब की पार्टी में शामिल हो गए। इस अवसर पर देहली में बड़ी साज–सज्जा के साथ कैम्प स्थापित किया गया था। कैट्सन लाईट (रोशनी) जो राजा साहिब ने इस अवसर के लिए इंगलैंड से मंगवाई थी, से कैम्प की सुन्दरता और भी बढ़ गई। इस रोशनी को देखने के लिए शाम के समय लोगों की भीड़ जुट जाती थी।

राजा साहिब 27 दिसम्बर 1902 ईसवी को दूसरे राजाओं की तरह वॉयसराय लॉर्ड कर्ज़न और गवर्नर जनरल ड्यूक ऑफ कनॉट के स्वागत के लिए रेलवे स्टेशन पधारे। वहां से जलूस में शामिल होकर बाग की सैर में भी उनके साथ रहे। 1 जनवरी, 1903 को राजा साहिब दरबार में शामिल हुए। 3 जनवरी की रात को राजा साहिब लाल किला में समारोह में आमन्त्रित किए गए, जिसमें लॉर्ड कर्जन ने इनको के.सी.एस.आई. के इनसिगनिया (insignia) से सम्मानित

किया। इसे प्राप्त करके राजा साहिब को अति प्रसन्नता हुई और वह गवर्नर जनरल के भी बहुत आभारी हुए।

इसी अवसर पर हिन्द सरकार, जिसे राजा साहिब की कार्य कुशलता और रियासत के कुशल प्रबन्ध का हाल मालूम हो चुका था, ने पंजाब सरकार की सिफारिश पर राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को जनवरी, 1903 ईसवी से इम्पीरियल लैजिस्लेटिव काउंसिल का एडीशनल मैम्बर नियुक्त किया, जिससे राजा साहिब की मान–मर्यादा और भी बढ़ गई। दरबार की समाप्ति पर जनवरी 1903 में राजा साहिब अपने साथियों सहित कुशल देहली से नाहन वापिस आए। समस्त नाहन वासियों ने बड़ी श्रद्धापूर्वक राजा साहिब का स्वागत किया। राजा साहिब को के.सी.एस.आई. की पदवी मिलने तथा कांउसिल के सदस्य के तौर पर नियुक्त किए जाने की स्मृति में एक विजय द्वार बनाया। राजा साहिब को एक सम्मान पत्र भी पेश किया गया और बाद में एक गार्डन पार्टी दी गई जिसमें राजा साहिब, राजकुमारों और अहलकारों को आमंत्रित किया गया।

30 जनवरी, 1903 को एक गुज्जर जिसका नाम ताज मोहम्मद था, को जानबूझ कर हत्या करने के जुर्म में जुडीशियल काउंसिल के आदेशानुसार, जिसकी तसदीक पोलिटिकल एजेन्ट ने की थी, नाहन जेल में फांसी दी गई। यह पहला व्यक्ति था जो नाहन में राजा साहिब के शासनकाल में फांसी पर चढ़ाया गया। फिर 5 फरवरी, 1903 को तुलसीराम नामक व्यक्ति को जानबूझ कर हत्या के जुर्म में पोलिटिकल एजेन्ट की मंजूरी के बाद नाहन जेल में फांसी पर लटकाया गया। 10 फरवरी, 1903 को राजा साहिब काउंसिल के जलसे में शामिल होने के लिए कलकत्ता चले गए। वह 13 अप्रैल, 1903 को काउंसिल का सैशन समाप्त होने के बाद कलकत्ता से नाहन वापिस आए।

21 असौज, विक्रमी सम्वत् 1960 को काली स्थान के महन्त बाबा जगन्नाथ एक सप्ताह ज्वर से पीड़ित रहकर अचानक ही स्वर्ग सिधार गए। यह संन्यासी बड़े अच्छे और सादे स्वभाव के व्यक्ति थे।

धनी और निर्धन, विशेष और साधारण सब व्यक्तियों से बड़ी नम्रता से मिलते थे। लोगों के दिलों में इनके लिए बड़ा आदर मान था। इनकी अचानक मृत्यु से लोगों को बहुत दुःख हुआ। इनको जोगियों के रीति रिवाज़ अनुसार मन्दिर के परिसर में जहां पर पहले महन्तों की समाधियां हैं, भूमिगत किया गया। मन्दिर का प्रबन्ध इनके चेले नेमी नाथ के सुपुर्द रहा।

4 दिसम्बर 1903, ई0 तदनुसार 19 मंगसर, विक्रमी संवत् 1960 को देहली के कमिश्नर एवम् पोलिटिकल एजेन्ट मिस्टर गोरडन वाकर नाहन पधारे। उन्होंने 5 दिसम्बर 1903 ई0 को दरबार किया और एक सोने का तमगा बादशाह एडवर्ड सप्तम की ताजपोशी की स्मृति में राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को प्रदान किया। उन्होंने एक–एक चांदी का तमगा कंवर रणजोर सिंह को व बाबू नारायण सिंह सैक्रेटरी को भी प्रदान किया।

15 अगस्त 1904, तदनुसार 31 आषाढ़ विक्रमी संवत् 1961 को जंगलात के डिप्टी कन्ज़रवेटर मिस्टर मैकियन ने सेवा से त्यागपत्र दे दिया और रियासत से चले गए। उनके स्थान पर पंडित विशम्बरदास को एक्टिंग डिप्टी कन्ज़रवेटर और चार बार देहरा का सुपरिन्टैन्डैंट नियुक्त किया गया। वह लगभग एक साल तक जंगल विभाग के कार्य को करते रहे।

18 सितम्बर 1904 ई0, तदनुसार 3 असौज विक्रमी संवत् 1961 को नाहन के सिविल सर्जन डा0 निकलसन, अधिक मदिरा पान के कारण कुछ समय से जिन का स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा था, का केवल एक दिन मिर्गी जैसे दोरे से उत्पीड़ित होकर अचानक ही स्वर्गवास हो गया। वह बडे साधारण और अच्छे स्वभाव के व्यक्ति थे। वह सब से बड़ी अच्छी तरह मिलते जुलते थे तथा बीमारों का, विशेष कर निर्धन व्यक्तियों का उपचार बड़े ध्यानपूर्वक करते थे। उनकी मृत्यु से लोगों को बहुत दुःख हुआ। इनके मृतक शरीर को दूसरे दिन सैनिक सम्मान के साथ कब्रिस्तान पहुंचाया गया। राजा साहब, राज कुमार,

अहलकार और नगर निवासी सभी कब्रिस्तान तक अर्थी के साथ गए और लाश को रीति रिवाज़ अनुसार दफ़्न किया गया। 12 मार्गशीर्ष, विक्रमी संवत् 1961 को स्वर्गीय डा0 निकलसन के स्थान पर डा0 मार्टन को नाहन का सिविल सर्जन नियुक्त किया गया।

राजा साहब ने विक्रमी संवत् 1961 के असौज मास में पंजाब के लैफ्टीनेंट गवर्नर सर चार्ल्स रिवाज़ को नाहन आमन्त्रित किया। सर चार्ल्स अपनी धर्मपत्नी लेडी रिवाज़ और स्टाफ के साथ 26 अक्तूबर 1904 ई0 को शिमला से रवाना होकर डगशाई के रास्ते 29 अक्तूबर 1904 को 10 बजे नाहन पधारे। राजा साहब ने कायदे अनुसार बड़े आदर और उत्साह से सर चार्ल्स का स्वागत किया। नाहन की म्यूनिसिपल कमेटी की ओर से एक विजयद्वार बनाया गया था। सर चार्ल्स और उनकी धर्मपत्नी को बडे आदरपूर्वक शमशेर विला में ठहराया गया।

उसी दिन दोपहर के बाद एक बजे राजा साहब टीका अ... सिंह, कंवर रणज़ोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह, मिस्टर वारबर्टन, बाबू नारायण सिंह सैक्रेटरी और बाबू प्रभु लाल एसिस्टेंट सैक्रेटरी के साथ लैफ्टिनैंट गवर्नर से मुलाकात के लिए गए। उसी रोज़ 4 बजे शाम लैफ्टिनैंट गवर्नर राजा साहब के महल में पधारे और एक दरबार लगाया गया, जिस में टीका साहब, अन्य राजकुमार और अहलकार शामिल हुए परन्तु राजकुमार वीर विक्रम सिंह शामिल नहीं हुए। रात के समय शहर रोशन किया गया और आतिशबाजी छोड़ी गई।

30 अक्तूबर 1904 को राजा साहब के आवेदन पर लैफ्टिनेंट गवर्नर साहब ने रियासत के कार्यालयों, हैड ऑफिस, ज़िले और फाउन्डरी का दौरा किया। 31 अक्तूबर को वह छावनी देखने गए जहां उन्होंने परेड तथा फील्ड इंजीनियरिंग इत्यादि को देखा फिर उसी रोज़ दोपहर के बाद सैनिक क्रीडायें, पहाड़ी नाच व ठोडा इत्यादि खेल देखे। दूसरे रोज़ पहली नवम्बर 1904 को लैफ्टिनेंट गवर्नर साहिब शिकार खेलने नाहन से माजरा की ओर गए जो क्यारदादून के मध्य में एक सुहावना स्थान है। यहां पर रियासत का एक बंगला बना हुआ है। राजा साहब और राजकुमार वीर विक्रम सिंह उनके साथ गए। वह

दो दिन माजरा में ठहरे और शिकार खेला।

5 माघ, विक्रमी संवत् 1961 को राजा शमशेर प्रकाश की ख्वास की उदरशूल से ृत्यु हो गई। इन की अर्थी हिन्दू रीति अनुसार सैनिक सम्मान के साथ मारकण्डा नदी के तट पर लाई गई। अर्थी के साथ राजकुमार और अहलकार इत्यादि गए और मृतक की इच्छा अनुसार दाह संस्कार किया गया।

राजा साहब को रियासत के प्रबन्ध कार्यों के कारण जुडीशियल कार्य पूर्ण करने के लिए कम ही समय मिलता था इसलिए बाबू नारायण सिंह को हैड ऑफिस के सैक्रेटरी के पदभार के अतिरिक्त एडीशनल सैशन व डिवीज़नल जज नियुक्त किया गया और यह नियुक्ति 25 सावन, विक्रमी संवत् 1962 को अधिसूचना नं0 7 द्वारा सूचित की गई।

नवम्बर 1905, तदनुसार कार्तिक विक्रमी संवत् 1962 को जब प्रिंस ऑफ वेल्ज़ हिन्दुस्तान पधारे तो दूसरे राजाओं और रईसों की तरह राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश, टीका अमरसिंह, कंवर रणज़ोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह, सरदार कंवर देवी सिंह, बाबू नारायण सिंह, सरदार गुरबचन सिंह, बाबू सौदागर लाल हैड क्लर्क के साथ प्रिंस से मिलने के लिए देहली प्रस्थान कर गए और रेलवे स्टेशन पर प्रिंस का स्वागत किया। इस के बाद प्रिंस से भेंट करने के लिए देहली के सर्कट हाऊस में, जहां प्रिंस ठहरे हुए थे, राजा साहब अपने साथियों सहित गए। इसके बाद प्रिंस ऑफ वेल्ज़ राजा साहब से मिलने राजा साहब की कोठी पर पधारे जिस से राजा साहब की मान मर्यादा और भी बढ़ गई। प्रिंस बहुत ही अच्छे स्वभाव के गम्भीर व्यक्ति थे। साधारण लोगों के सलाम को भी बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार करते थे। प्रिंस की वापसी के बाद राजा साहब नाहन वापिस आए।

वनों के वर्किंग प्लान का कार्य समाप्त हो चुका था और वनों का आबंटन 20 वर्ष की अवधि के लिए कर दिया गया था इसलिए राजा साहिब ने भारी वेतन वाले अधिकारी को रखना उचित नहीं समझा। राजा साहिब सदा ही आय की अपेक्षा व्यय को कम करना उचित

समझते थे और वह हमेशा ही इस नियम पर चलते थे। इसलिए उन्होंने विक्रमी संवत् 1963 के जेठ मास की पहली तिथि से कंज़र्वेटर जंगलात और सुपरिन्टैन्डैंट चाय बाग का पद समाप्त कर दिया। जंगलात के कंजर्वेटर का कार्यालय हैड ऑफिस में ही मिला दिया गया। इसकी देख--रेख और प्रबन्ध बाबू नारायण सिंह, सेक्रेटरी को सम्भाल दिया गया। राजा साहिब सुपरिन्टैन्डैंट और कंजर्वेटर की शक्तियों का प्रयोग स्वयं ही करते रहे, जैसा कि राजा शमशेर प्रकाश के शासनकाल में होता था। चार डिवीज़नों के स्थान पर दो डिवीज़न एक उत्तरी और एक दक्षिणी डिवीज़न बनाए गए। उत्तरी डिवीज़न का मुख्यालय राजगढ़ और दक्षिणी का नाहन खास में स्थापित किया गया। इन्हीं दिनों राजा साहिब ने दून के क्षेत्र की गिरी नदी से एक नहर के द्वारा सिंचाई करने की योजना बनाई जिसका प्रयास राजा शमशेर प्रकाश ने भी किया था। इस योजना को सिरे चढ़ाने के लिए इंजीनियर मिस्टर फईज़ साईमण्ड को सर्वे और प्रोजेक्ट तैयार करने के लिए नियुक्त किया गया, जिसने प्रोजेक्ट तैयार करके प्रस्तुत किया परन्तु इस प्रोजेक्ट को अमलीजामा पहनाने का अवसर नहीं मिला।

राजा साहिब रियासत के प्रबन्ध में स्वयं बड़ी रुचि रखते थे और रियासत के कारोबार को बड़े उत्साह से पूरा करते थे। वह अपने मातहत अधिकारियों और अहलकारों से भी ऐसी ही आशा रखते थे और हमेशा उन पर नज़र रखते थे। यदि किसी अधिकारी या अहलकार से कोई भूल चूक, गलती, अनियमितता हो जाती तो इसको दूर करने में बिल्कुल भी देरी नहीं करते थे। कुछ समय से कलैक्टर और ज़िला मैजिस्ट्रेट मिस्टर वारबर्टन के काम करने के ढंग से राजा साहिब संतुष्ट न थे, जिसके लिए उन्होंने कुछ मौकों पर उन्हें चेतावनी भी दी परन्तु इसके बाद भी मिस्टर वारबर्टन राजा साहिब के आदेशानुसार कार्य करने में असमर्थ रहे।

अंततः राजा साहिब ने विक्रमी संवत् 1963 के जेठ मास की 15 तारीख से मिस्टर वारबर्टन का स्थानांतरण, विक्रमी संवत् 1963 के

बैसाख की 30 तारीख को जारी सर्कुलर नं0 तीन द्वारा, कलैक्ट्री के पद से एडीशनल डिविज़नल एवं सैशन जज़ के पद पर कर दिया। पण्डित विशम्बर दास, जो एग्ज़ामिनर ऑफ एकोंउंट्स थे, को ज़िला मैजिस्ट्रेट और कलैक्टर नियुक्त किया। यद्यपि पण्डित जी जुडीशियल और राजस्व कार्यवाही से परिचित न थे, लेकिन रियासत के पुराने और अनुभवी अहलकार होने के अतिरिक्त वह एक अच्छे व शांत स्वभाव के मालिक थे। इसलिए राजा साहिब ने उनकी पूर्व में की गई सेवाओं का ध्यान रखते हुए उन्हें कलैक्ट्री के पद पर नियुक्त करना उचित समझा। हैड ऑफिस के असीस्टैंट सेक्रेटरी बाबू प्रभुलाल को पण्डित विशम्बर दास के पद पर एग्ज़ामिनर ऑफ एकाउंट्स नियुक्त किया। बाबू नारायण सिंह को एडीशनल जज के पद से मुक्त कर दिया। मिस्टर वारबर्टन को इस स्थानांतरण से गहरा दुःख हुआ, परन्तु शासक के आदेश से कौन मुंह मोड़ सकता है, आदेश की पूर्ति तो चाहे अनचाहे करनी ही पड़ती है।

इन्हीं दिनों राजा साहिब ने विक्रमी संवत् 1963 के 9 और 12 जेठ को अधिसूचना नं0 9 व 10 द्वारा 15 जेठ से मुनसिफ की अदालत को समाप्त कर इसके काम--काज को डिस्ट्रिक्ट जज के कोर्ट में शामिल कर दिया और क्षेत्र के तीन तहसीलदारों के छोटे मुकद्दमे बारे शक्तियों को 15/– रु0 से बढ़ाकर 50/– रु0 कर दिया।

विक्रमी संवत् 1963 के 8 कार्तिक मास को राजा शमशेर प्रकाश के सेवा निवृत्त प्राईवेट सेक्रेटरी पण्डित किशन लाल का तीन चार दिन ज्वर से पीड़ित रहकर स्वर्गवास हो गया। पण्डित जी का स्वभाव साधारण तथा बड़ा अच्छा था। वह रियासत के बड़े शुभ चिन्तक थे। उनकी मृत्यु पर राजा साहिब और रियासत के लोगों ने दुःख और सहानुभूति प्रकट की।

विक्रमी संवत् 1963 के असौज मास में राजा साहिब ने कमांडर इन चीफ लॉर्ड किचनर साहिब को नाहन आने के लिए आमंत्रित किया। लॉर्ड किचनर 28 अक्तूबर, 1906 को अपने स्टाफ

सहित बड़ारा और काला अम्ब के रास्ते नाहन पहुंचे। राजा साहिब ने लॉर्ड साहिब का रीति अनुसार स्वागत किया और उनको शमशेर विला में ठहरा कर बहुत आदर सत्कार किया। दूसरे दिन सुबह के समय लॉर्ड साहिब शिकार खेलने के लिए माजरा नामक स्थान को चले गए, जो क्यारदादून के मध्य स्थित है। उनके साथ राजा साहिब और मेजर वीर विक्रम सिंह भी गए। माजरा में उन्होंने 3 दिन रहकर शिकार खेला।

यद्यपि राजा साहिब को शिकार खेलने में कुछ अधिक रुचि नहीं थी परन्तु आवश्यकता के समय वह बड़ी बहादुरी व हिम्मत से शिकार खेलते थे, बन्दूक चलाने में भी वह निपुण थे। कुछ समय से तहसील नाहन के मौज़ा धौन के इर्द–गिर्द, जो नाहन से चार मील की दूरी पर है, एक शेर पषु आदि को हानि पहुंचा रहा था और ज़मींदार इससे बहुत परेशान हो चुके थे, इसलिए राजा साहिब विक्रमी संवत् 1963 के मंगसर मास की 5 तारीख को कंवर रणजोर सिंह, कंवर देवी सिंह, बाबू नारायण सिंह और चौधरी प्रताप सिंह के साथ उस स्थान पर पहुंचे तथा वहां जाकर शेर की हांक लगाई गई। प्रायः शेर उसी क्षेत्र में निडर होकर घूमता रहता था, हांक सुनकर बाहर निकला और राजा साहिब जहां घात लगाए खड़े थे, सामने आ गया, जिस पर राजा साहिब ने फायर किया। शेर जख़्मी होकर राजा साहिब के बहुत पास आ गया, परन्तु उसने राजा साहिब को नहीं देखा। राजा साहिब बड़ी हिम्मत और बहादुरी से वहां खड़े रहे और शेर पर तीन बार फायर किया, जिससे वह मर गया। यह शेर दस फुट लम्बा था, जिसे दूसरे दिन नाहन लाया गया। इसे देखने के लिए लोगों की भीड़ लग गई। लोगों ने इसके मांस की बहुत मांग की, जिसे राजा साहिब ने सबमें बांट दिया।

नाहन फाउंडरी के सुपरिन्टैंडिंग इंजीनियर मिस्टर एफ.आर. जॉन्स 30 वर्ष सेवा कर चुके थे इसलिए उन्होंने सेवा निवृत्त होने की इच्छा प्रकट की, जिसे राजा साहिब ने स्वीकृत करके विक्रमी संवत्

1963 के पौष मास की 16वीं तिथि, तदनुसार 1907 ईसवी को उनकी 30 वर्षों की सेवाओं का मुआवज़ा 30,000/– रुपया ग्रेज्युटी के तौर पर प्रदान किया और इन्हें सेवा–निवष्त कर दिया। उनके स्थान पर उनके असीस्टैंट मिस्टर ग्रेवल सुपरिन्टैंडैंट इंजीनियर नियुक्त हुए। मिस्टर जॉन्स अपने कार्य में निपुण थे। उन्होंने गन्ना पेलने की चर्खी का आविष्कार किया, जो कि पंजाब और हिन्दुस्तान के दूसरे प्रांतों में बड़ी लाभदायक साबित हुई। उन्होंने नाहन फाउंडरी की आय में बहुत वृद्धि की। इनके चले जाने से रियासत में एक कुशल अहलकार की कमी हो गई। राजा साहिब तथा मिस्टर जॉन्स के मित्रों ने उनकी जुदाई को बहुत महसूस किया। मिस्टर जॉन्स को भी नाहन से चलते समय बड़ा दुःख हुआ। उस समय बाबू महेन्द्र नाथ चैटर्जी, जो कुशल प्लीडर थे, को सरकार के काम–काज को निपटाने वाला नियुक्त किया गया।

जब अंग्रेज़ी सरकार ने रियासत सिरमौर की जुडीशियल अदालतों और उन द्वारा की जाने वाली कार्यवाही को नियमानुसार व विधिवत् देखा तथा राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश की कानूनी कुशलता और उनके मामलों को बारीकी से समझने के अनुभव के बारे में उसे पता चला, जैसा कि जुडीशियल मुकद्दमों से प्रतीत हुआ तो उनकी कार्य कुशलता से संतुष्ट होकर उन्हें फांसी के दण्ड की शक्तियां, जिसमें अधिकतर रियासत के हाकिमों को पोलिटिकल एजेंट की स्वीकृति और तसदीक़ की आवश्यकता होती है, विक्रमी संवत् 1963 से प्रदान की गई। राजा साहिब को फांसी का दण्ड देने के लिए स्वीकृति लेने से मुक्त कर दिया। इस प्रकार अंग्रेजी सरकार ने राजा साहिब की कुशलता की प्रशंसा की।

क्योंकि कालीस्थान के महन्त बाबा जगन्नाथ के चेले निमीनाथ को महन्त की गद्दी पर बिठाने के योग्य नहीं समझा गया था इसलिए राजा साहिब किसी अच्छे जोगी सन्त की तलाश में थे। अचानक ही एक संस्कृत पढ़ा लिखा फक़ीर, जिसका नाम मोतीनाथ था, मिल गया।

राजा साहिब ने विक्रमी संवत् 1964 के फाल्गुन मास की पहली तिथि से कालीस्थान मंदिर में परीक्षण के तौर पर उसको महन्त नियुक्त किया तथा निमीनाथ को पुजारी बना दिया। राजा साहिब का यह नियम था कि वह उम्मीदवार को परीक्षण के बाद ही स्थाई तौर पर नियुक्त करते थे। यद्यपि उस समय लोगों को निमीनाथ को उसके अधिकार से वंचित करना और मोतीनाथ को महन्त नियुक्त करना अच्छा नहीं लगा, परन्तु बाद में जब लोगों को महन्त मोतीनाथ की विशेषताएं मालूम हुई तो उन्होंने उसको राजा साहिब का एक उचित निर्णय स्वीकार किया।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश की रानी साहिबा सुकेती का दो–तीन वर्ष से स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा था और उपचार का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था। इसलिए रानी साहिबा ने, जो कि दूरदर्शी थी, तीर्थ यात्रा का मन बनाया। उन्होंने पहले ही कुछ समय से तीर्थ करने आरम्भ कर दिए थे। वे अयोध्या, मथुरा, प्रयाग, काशी और जगन्नाथ आदि तीर्थ एक–एक बार कर चुकी थीं जबकि द्वारका तथा रामेश्वरम् इत्यादि की यात्रा वह दो–दो बार कर चुकी थी। अब केवल बद्रीनारायण की यात्रा शेष थी, जो निकट भविष्य में हो जाती, परन्तु रामेश्वर की यात्रा से वापिस होने के कुछ समय बाद रानी साहिबा का स्वास्थ्य अधिक बिगड़ गया और इलाज करने के बाद भी रोग बढ़ता गया।

अंततः एक डॉक्टर ने देहरा में जहां पर कि रानी साहिबा हवा पानी बदलने गई हुई थी, इनके रोग की Bright's disease के नाम पर पहचान की, फिर उपचार शुरू किया गया परन्तु यह इलाज भी अधिक प्रभावशाली साबित नहीं हुआ और रानी साहिबा नाहन चली आई। ऐल्योपैथिक, यूनानी और आयुर्वैदिक प्रणाली से उपचार होता रहा, परन्तु परिणाम अच्छा नहीं रहा और रानी साहिबा की सांस भारी होती गई तथा शरीर में भी सूजन शुरू हो गई, अर्थात् उपचार की कोई भी प्रणाली सफल न हुई। विक्रमी संवत् 1964 के जेठ मास की 13वीं

तिथि को रानी का देहान्त हो गया। वह अपने पीछे एक उत्तराधिकारी राजकुमार व एक देई साहिबा (पुत्री) छोड़ गईं।

इस घटना से राजा साहिब, राजकुमार व देई साहिबा को बड़ा आघात पहुंचा। सारे सम्बन्धी और जनता भी दुःख में डूब गई। रानी साहिबा सुकेती बड़े अच्छे स्वभाव की थीं, सबसे बड़े स्नेह से मिलती थी और अतिथि सत्कार में भी कोई कमी नहीं रहने देती थीं। दूसरे दिन विक्रमी संवत् 1964 के जेठ मास की 14वीं तिथि को अर्थी पूरे सैनिक सम्मान के साथ रीति अनुसार मारकण्डा नदी के किनारे लाई गई। अर्थी के साथ राजा साहिब, टीका साहिब, दूसरे राजकुमार और निकट सम्बन्धी, अहलकार तथा नाहन के निवासी थे। मारकण्डा पर शास्त्रानुसार मृतक का कर्म करके दाह संस्कार किया गया। चौथे दिन रानी साहिबा की अस्थियां और राख रीति रिवाज के अनुसार साज--सज्जा सहित हरिद्वार भेजी गईं। 13 दिन तक शोक मनाया गया। रियासत के सभी कार्यालय बंद रहे और शहर में हड़ताल रही। 13 दिन के बाद नगर ब्राह्मणों को खाना खिलाया गया और शोक समाप्त हुआ। फिर भी चार मास तक कोई त्यौहार आदि नहीं मनाए गए।

लगभग डेढ़ वर्ष से वारबर्टन साहिब का स्थानांतरण कलैक्ट्री से एडीशनल जज पर किया गया था, ताकि इनके कार्य में कुछ बेहतरी हो तथा भारी जिम्मेदारी से मुक्त हो कर नए दिए गए कार्य को राजा साहिब की इच्छानुसार होशियारी से पूरा करें और अपनी कार्य शैली से राजा साहिब को संतुष्ट कर सकें। परन्तु इसका परिणाम विपरीत हुआ। जब राजा साहिब को उनके काम करने के ढंग से संतुष्टि नहीं हुई तो राजा साहिब ने इनको सेवा से मुक्त करना ही उचित समझा तथा सन्धि के अनुसार पंजाब सरकार से मिस्टर वारबर्टन के स्वभाव और कारगुजारी के बारे छानबीन करने के लिए कहा। पंजाब सरकार ने छानबीन करने का आदेश दिया जिस पर वारबर्टन साहिब ने स्वयं ही त्याग पत्र दे दिया, जिसको राजा साहिब ने स्वीकार कर लिया और मिस्टर वारबर्टन को उनकी 9 वर्षों की सेवाओं की ग्रेचुएटी की राशि

रु0 8000/– प्रदान करके विक्रमी संवत् 1965 के बैसाख मास की पहली तिथि को सेवा से मुक्त कर दिया। राजा साहिब ने बाबू नारायण सिंह को दोबारा एडीशनल सैशन व डिवीज़नल जज नियुक्त किया।

जब राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश पंजाब के लेफ्टिनैंट गवर्नर से मिलने विक्रमी संवत् 1965 के चैत्र मास में लाहौर गए थे तो उस समय रियासत सुकेत के राजा दुष्ट निकन्दन सेन का पुत्र टीका भीम सिंह, जिसका अपने पिता से कुछ मन मुटाव चल रहा था और जो शिक्षा ग्रहण करने के लिए लाहौर के चीफ्स कॉलेज में ठहरा हुआ था, राजा साहिब से जो उनके निकट सम्बन्धी थे, मिलने के लिए आया। उसने अपने पिता के दुराचार और अपनी कठिनाइयों आदि का वर्णन कर राजा साहिब से सहायता मांगी। बातचीत के दौरान टीका ने विवाह करने का इरादा भी व्यक्त किया। इस पर राजा सिरमौर ने उसको अपने चाचा के लड़के की लड़की अर्थात् सरदार सूरत सिंह की बड़ी देई साहिबा से मंगनी करने का विचार स्पष्ट किया, जिसके लिए टीका साहिब ने खुशी–खुशी अपनी रज़ामंदी जाहिर की परन्तु शर्त यह लगाई कि राजा साहिब दोनों ही तरफ का प्रबन्ध स्वयं करें, क्योंकि सुकेत के राजा से टीका साहिब को कोई आशा नहीं थी। इसका कारण यह था कि उनका पिता राजा सुकेत टीका साहिब की शादी करना नहीं चाहता था और न ही इसके लिए कोई आर्थिक सहायता देना चाहता था।

**इसलिए राजा सिरमौर ने इस बारे पहले तो पंजाब सरकार से पूछना उचित समझा और जब पंजाब सरकार ने आज्ञा दे दी तब राजा साहिब ने टीका भीम सिंह के पिता अर्थात् राजा सुकेत को भी पूछ लिया। राजा साहिब ने अपने एक अहलकार को पत्र देकर स्वयं सुकेत रवाना किया। परन्तु सुकेत के राजा ने यह समाचार जानकर अपनी असहमति प्रकट की और पत्र का कोई उत्तर नहीं दिया, बल्कि पंजाब सरकार को इस रिश्ते के बारे लिखित रूप से अपनी असहमति प्रकट की। पंजाब सरकार टीका साहिब की इच्छानुसार इस रिश्ते को करने की आज्ञा दे**

चुकी थी और टीका साहिब भी रिश्ता करने में प्रसन्न थे इसलिए राजा साहिब सुकेत के हस्तक्षेप से भी कोई प्रभाव नहीं हुआ और विवाह विक्रमी संवत् 1965 के जेठ की 24 तिथि को होना निश्चित हुआ। राजा सुकेत को इस विवाह बारे चुप ही रहना पड़ा। राजा साहिब सुकेत ने टीका साहिब के विवाह के लिए किसी प्रकार की सहायता और धन आदि कुछ नहीं दिया, बल्कि सुकेत से भी किसी को विवाह में शामिल होने की अनुमति नहीं दी। अंततः टीका भीम सिंह लाहौर से शिमला गए और वहां से चंद सगे सम्बन्धियों सहित जिसमें मियां उधम सिंह अर्की वाला, जो टीका साहिब के मामों में से एक था तथा मियां दुर्गा सिंह सुपुत्र मियां मानसिंह अर्की वाला व सरदार साहिब काठगढ़िया, जो कि टीका साहिब का दोस्त व सहपाठी था, कुछ दूसरे साथियों के साथ विक्रमी संवत् 12 जेठ को नाहन पहुंचे तो सिरमौर के टीका अमर सिंह ने टीका भीम सिंह का रीति अनुसार दूसरे राजकुमारों सहित स्वागत किया।

राजा साहिब ने टीका साहिब का स्टोनहिंज (stonehinge) कोठी पर स्वयं स्वागत किया। रियासत की सेना की एक कम्पनी ने रिवाज अनुसार टीका साहिब को कोठी पर सलामी दी। विक्रमी सम्वत् 1965 के 13 जेठ को रीति अनुसार सगाई की रस्म की गई। विवाह की तैयारियां होने लगीं परन्तु यह कौन जानता था कि दो दिन बाद क्या होने वाला है। 15 जेठ को अचानक ही टीका भीम सिंह साहिब को उस के भाई मियां लक्ष्मण सिंह का सुकेत से तार मिला जिस में लिखा था कि 14 जेठ को सुकेत के राजा तथा टीका साहिब के पिता दुष्ट निकंदन सेन साहिब का स्वर्गवास हो गया है। इस अचानक घटी घटना से सब को ही बड़ा दुःख हुआ और खुशियां गम में बदल गईं।

अब यह सोच विचार होने लगा कि विवाह की रस्म इसी समय पूरी की जाए या शोक की सारी रस्मों को पूरा करने के बाद विवाह किया जाए। अन्ततः सब की सहमति से यह फैसला हुआ कि टीका साहिब पहले सुकेत जाकर रीति रिवाज अनुसार क्रियाकर्म करें और बाद में विवाह के लिए कोई दूसरी तिथि निश्चित हो। टीका भीम सिंह

17 जेठ को अपने साथियों सहित नाहन से जालंधर को रवाना हुए और जालंधर के पोलिटिकल एजेण्ट से बातचीत कर सुकेत पहुंचे जहां उन्होंने अपने पिता का क्रियाकर्म विधिवत् पूरा किया। बाद में विवाह के लिए विक्रमी सम्वत् 1965 की 19 आषाढ़ की तिथि निश्चित की गई।

टीका साहिब अपने साथियों मियां उधम सिंह, मियां दुर्गा सिंह, काठगढ़ के सरदार साहिब इत्यादि, जिनकी संख्या दो सौ थी, सहित सुकेत से रवाना हुए। वे आषाढ़ की सातवीं तिथि को नाहन पहुंचे और विधिवत् उनका स्वागत किया गया। उन्हें स्टोनहिंज कोठी में ठहराया गया। 8 आषाढ़ को रस्म बाण, 9 आषाढ़ को रस्म सेहरा व दूसरी सारी रस्में टीका साहिब की नाहन ही में की गई। टीका भीम सिंह के विवाह की इन रस्मों के लिए सारा सामान तथा बारात के जुलूस के लिए सारा सामान जैसे घोड़े, हाथी, पालकी, फौजी बैंड इत्यादि सब सिरमौर के राजा साहिब ने उपलब्ध करवाया। टीका साहिब की बारात का जुलूस राजकुमार सूरत सिंह साहिब के मकान पर विक्रमी सम्वत् 1965 की 9 आषाढ़ को शाम 5 बजे पूरी तरह सजधज कर पहुंचा। राजा साहिब और दूसरे निकट सम्बन्धियों ने टीका साहिब का स्वागत किया परन्तु राजकुमार मेजर विक्रम सिंह स्वागत में शामिल नहीं हो सके क्योंकि वह उस समय शिमला में थे। 9 आषाढ़ को रात 2 बजे विवाह की रस्म (पाणि ग्रहण और फेरा) की गई और दस आषाढ़ को टीका साहिब को भोज कंवर रणजोर सिंह साहिब की कोठी में दिया गया। इस में सब बाराती शामिल हुए।

11 आषाढ़ को दुल्हन के भाई सरदार रणदीप सिंह के भवन में दूल्हे को तमाम बारातियों सहित दावत दी गई। 12 आषाढ़ को नाहन के राजा साहिब के महल में दावत हुई। 13 आषाढ़ को देयी साहिबा रीति रस्म अनुसार विदा हुई। 14 आषाढ़ को टीका भीम सिंह दुल्हन और बारातियों सहित सुकेत के लिए वापिस हुए। इस विवाह का दोनों तरफ का सारा प्रबन्ध राजा साहिब सिरमौर को करना पड़ा था क्योंकि टीका भीम सिंह साहिब की अपने पिता से अनबन चल रही

थी और दूसरे देयी साहिबा का भाई सरदार रणदीप सिंह नाबालिग था और उसके कारोबार का प्रबन्ध भी राजा साहिब की देख रेख में हो रहा था। इसलिए विवाह का प्रबन्ध करने के लिए राजा साहिब ने एक कमेटी नियुक्त की जिसने राजा साहिब की देखरेख में विवाह का सारा प्रबन्ध किया।

उत्तराधिकारी टीका अमर सिंह जवान हो गए थे और उन्होंने अपनी शिक्षा भी पूरी कर ली थी इस लिए राजा साहिब उनके विवाह के बारे में सोचने लगे। यद्यपि टीका साहिब के विवाह के लिए कई जगह से पत्र और संदेश मिल रहे थे परन्तु अभी तक किसी जगह बात पक्की नहीं हुई थी। राजा साहिब अपने पुत्र के लिए ऐसी दुल्हन की तलाश में थे जो कि पढ़ी लिखी और वर्तमान काल की अच्छाइयों की पूरी जानकारी रखती हो। परन्तु इन दिनों ऐसी लड़कियां राजपूतों में कम ही थीं। इन्हीं दिनों रियासत के सिविल सर्जन डा0 मर्टन ने मेजर राजकुमार वीर विक्रम सिंह को बताया कि नेपाल के पूर्व प्रधानमंत्री महाराजा देवशमशेर जंग, जो मंसूरी में रहते हैं, की एक सुन्दर और सुशील कन्या शादी योग्य है। यदि राजा साहिब चाहें तो वहां बात की जा सकती है।

मेजर वीर विक्रम सिंह साहिब ने इस बात का ज़िक्र राजा साहिब से किया और उनको इस बारे बात करने के लिए रज़ामंद कर लिया। राजा साहिब ने लड़की के हर तरह से पसन्द होने तथा उसके परिवार इत्यादि के बारे में छानबीन करने पर इस प्रस्ताव पर हामी भर ली। डा0 मर्टन साहिब के द्वारा, जो महाराजा देव शमशेर जंग को जानते थे, इस बारे में पत्राचार शुरू किया गया। महाराजा देव शमशेर जंग ने इस प्रस्ताव को बड़ी प्रसन्नता से मंजूर किया। बात पक्की करने के लिए उन्होंने डा0 मर्टन को लिख भेजा। जिस पर राजा साहिब ने नाहन में चीफ सैक्रेटरी बाबू नारायण सिंह को और पूछताछ करने तथा रिश्ते को बनाने के लिए महाराजा देव शमशेर जंग के पास मंसूरी भेजा जिसने मामले की छानबीन कर शादी के प्रस्ताव को पक्का कर दिया।

यह एक संयोग ही है कि जिन परिवारों के पूर्वजों के बीच एक समय इतनी शत्रुता थी कि उन्होंने एक दूसरे के क्षेत्र को उथल--पुथल कर दिया था। अब उन परिवारों की संतान में रिश्तेदारी हो रही है। इस लिए कहा गया है कि परमेश्वर की बातें परमेश्वर ही जानता है और जो उसको मंजूर होता है वही होता है। अन्ततः विवाह का प्रस्ताव पक्का हो गया और विक्रमी सम्वत् 1965 के नौ सावन को रस्म टीका (मंगनी) होनी निश्चित हुई। निश्चित तिथि पर महाराजा देव शमशेर सिंह ने अपनी बिरादरी में से राणा अमर जंग को टीका का सामान जैसे हाथी, घोड़े, मुकुट, घड़ी और ज़ंजीर, सोने चांदी के बर्तन व कपड़े इत्यादि देकर टीका की रस्म करने के लिए नाहन भेजा। टीके की रस्म 9 श्रावण को सुबह 9.30 बजे बारहदरी में दरबार लगा कर की गई जिसमें मेजर वीर विक्रम सिंह को छोड़ कर और अहलकार शामिल हुए। टीके की रस्म रीति अनुसार बड़ी धूमधाम से मनाई गई।

विक्रमी सम्वत् 1965 के असौज मास की 15 तिथि को कंवर देवी सिंह साहिब का स्वर्गवास हो गया। वह लगभग दो साल से बीमार चले आ रहे थे। पिछले दो महीनों से उनकी सांस फूल रही थी और नींद भी नहीं आती थी। डाक्टरों ने उनको दमे की शिकायत और शरीर में सूजन का मर्ज आर्थत ब्राइटडिज़ीज बताया था। वह अपने दो पुत्र छोड़ गए। मृत्यु के समय उनकी आयु 59 वर्ष की थी। कंवर साहिब की अर्थी दूसरे रोज़ सैनिक सम्मान के साथ मारकंडा ले जायी गई। राज कुमार, सगे सम्बंधी और अहलकार अर्थी के साथ मारकंडा तक गए और वहां पर मृतक का दाह कर्म शास्त्र विधि के द्वारा किया गया। स्वर्गवासी कंवर बड़े ही अच्छे स्वभाव के थे और हरेक से प्यार से मिलते थे।

विक्रमी सम्वत् 1965 के 30 असौज को डा0 मर्टन ने अपनी बीमारी के कारण स्वयं त्याग पत्र दे दिया। वह नौकरी छोड़ रियासत से चले गए। इनके स्थान पर डा0 विजयकर सिविल सर्जन नियुक्त हुए। वह भी दो साल सेवा करने के बाद चले गए। इनके स्थान पर

विक्रमी सम्वत् 1967 के आषाढ़ मास में डा0 मेकारमिक सिविल सर्जन नियुक्त हुए।

टीका अमर सिंह की अंग्रेज़ी और फारसी में शिक्षा–दीक्षा मीर मुंशी बाबू सौदागर लाल और मौलवी जलील–उल–रहमान की देखरेख में हो चुकी थी। अब केवल अंग्रेज़ी बोलचाल की महारत और अदालती कार्यवाही की जानकारी प्राप्त करना शेष थी इस लिए राजा साहिब ने विक्रमी सम्वत् 1965 में पहली असौज से टीका साहिब को तीसरे दर्ज़े के मैजिस्ट्रेट की शक्तियां देकर एक अलग अदालत स्थापित कर दी। एक साल बाद जब टीका साहिब को फौजदारी के कार्य का अनुभव हो गया तो उनको तीसरी श्रेणी के मुंसिफ की शक्तियां भी विक्रमी सम्वत् 1966 के असौज मास से दे दी गईं ताकि वह दीवानी कार्यवाही की जानकारी भी प्राप्त कर लें। टीका साहिब को डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के वाईस प्रेज़िडैंट के पद पर भी नियुक्त किया गया।

विक्रमी सम्वत् 1965 के मार्गशीर्ष मास में टीका साहिब को अंग्रेज़ी शिक्षा में विकास करने तथा बोलचाल इत्यादि में निपुण होने के लिए मैनेजर एच.आर. बारलो को उनका साथी नियुक्त किया गया। बारलो साहिब अंग्रेज़ी बोलचाल और लिखने में बड़े निपुण थे, वह लैटिन और फ्रेंच भी जानते थे। उनके जिम्मे यह कार्य था कि वह टीका साहिब के साथ रह कर उन्हें अंग्रेज़ी भाषा में पूरी निपुणता प्राप्त करवायें। मैनेजर साहिब लगभग एक साल तक टीका साहिब के साथ रहे और शिक्षा दी। वह नाहन से बमवाई को जाते समय देहली के स्थान पर विक्रमी सम्वत् 1966 के श्रावण मास की तीसरी तिथि को हैजे के मर्ज से पीड़ित होकर स्वर्गवास कर गये। वह बड़े खुश मिजाज़ और ज़िंदा दिल व्यक्ति थे। उनकी मृत्यु से उनके दोस्तों को नाहन में बहुत दुःख हुआ। मैनेजर बारलो के स्थान पर मिस्टर डोटि जो कि एम. ए. थे, नियुक्त हुए। वह भी कुछ मास सेवा करने के बाद सेवा से त्यागपत्र देकर चले गए।

विक्रमी सम्वत् 1966 के कार्तिक मास की सातवीं तिथि को मोतीनाथ जोगी को जो दो साल से परीक्षा के तौर पर काली स्थान के महन्त के पद पर कार्य कर रहे थे, राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश ने काली स्थान का विधिवत् महन्त नियुक्त करके गद्‌दी पर बिठाया। स्वर्गवासी महन्त जगन्नाथ के चेले निमिनाथ को इस स्थान का पुजारी नियुक्त कर दिया। इस अवसर पर राजा साहिब के साथ टीका अमर सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह और अहलकार उपस्थित थे।

विक्रमी सम्वत् 1966 के पौष मास की तेईस तारीख को कंवर रणजोर सिंह की धर्मपत्नी लाड़ी साहिबा कटोची दो तीन मास खांसी बुखार से पीड़ित रह कर स्वर्गवास कर गई। उन्होंने अपने पीछे एक छोटी लड़की छोड़ी। स्वर्गीया लाड़ी साहिबा की अर्थी मारकंडा पहुंचाई गई। अर्थी के साथ राजा साहिब, राजकुमार और अहलकार गए। स्वर्गीया का रीति रिवाज अनुसार दाह संस्कार किया गया। शहर में एक रोज़ हड़ताल रखी गई और रियासत के कार्यालय तीन दिन तक बन्द रहे।

टीका अमर सिंह साहिब का विवाह विक्रमी सम्वत् 1966 के फाल्गुन मास की 21 तारीख, तदनुसार 4 मार्च 1910 ईसवी को निश्चित हुआ था। राजा साहिब ने विवाह के प्रबन्ध के लिए एक कमेटी गठित की जिसके सदस्य पंडित बिशम्बरदास कलेक्टर, बाबू प्रभु लाल इगजामिनर एकाउंट्स नियुक्त हुए। इस कमेटी की देखरेख राजा साहिब ने स्वयं अपने ज़िम्मे ली। पहले मुहूर्त के अनुसार जनेऊ की रस्में शुरू हुई। विक्रमी सम्वत् 1966 के 7 माघ को शांत की रस्म जो चूड़ाकर्म से सम्बन्धित है और जनेऊ की रस्म की गई। 8 माघ को टीका अमर सिंह राजा साहिब और दूसरे निकट सम्बंधियों के साथ नगननुना मन्दिर में गये और वहां पर कर्ण बेध और चूड़ाकर्म की रस्म अदा की गई। 9 माघ को टीका अमर सिंह की जनेऊ की रस्म महलों में की गई। 13 माघ को राजा साहिब ने जनेऊ की रस्म की खुशी में

एक गार्डन पार्टी रानीतालबाग में दी जिसमें सब राजकुमार, रिश्तेदार व अहलकार इत्यादि आमन्त्रित किये गये। रात्रि के समय महल में नाच–गाना हुआ। 14 माघ को टीका अमर सिंह साहिबं का जन्म दिन था । इस अवसर पर रिवाज के अनुसार नाच–गाना इत्यादि किया गया।

विक्रमी सम्वत् 1966 के 10 फाल्गुन को शादी से सम्बंधित सर्वारम्भ रस्म की गई और 14 फाल्गुन को रस्म बाण हुई। 17 फाल्गुन को प्रातःकाल के समय शादी से सम्बंधित शांत की रस्म हुई और उसी दिन 3 बजे शाम सेहरे की रस्म की गई जिसकी खुशी में कैदी छोड़े गये। सेहराबन्दी के बाद टीका साहिब पालकी में सवार हुए और राजमहल से जलूस इस तरह रवाना हुआ कि सबसे आगे झंडे उठाने वाले, फिर बैंड वाले, इनके बाद नाचगाने वाली तवायफें और नकलें करने वाले थे जो इस अवसर के लिए बनारस और दिल्ली इत्यादि से बुलवाये गए थे। इसके पीछे दूल्हे की पालकी थी, जिसके साथ राजा साहिब और मेजर वीर विक्रम सिंह, रणजोर सिंह, रणविजय सिंह और रणदीप सिंह राजकुमार व दूसरे अहलकार थे। जलूस बड़े धूमधाम और शानोशौकत से बाजार में से होता हुआ जगन्नाथ जी के मन्दिर पहुंचा। वहां पर ठाकुर जी का पूजन करने तथा भेंट चढ़ाने के बाद जलूस वापिस हुआ। फिर बाजार से होते हुए। कालीस्थान के मन्दिर में पहुंचे। वहां देवी का पूजन कर, भेंट चढ़ाकर शमशेर विला कोठी को वापिस आये जहां बारात चलने से पहले टीका साहिब ने रात को विश्राम किया।

इस मौके पर यह बता देना भी ज़रूरी है कि राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब ने टीका अमर सिंह साहिब के विवाह में शामिल होने के लिए अपनी बिरादरी की देयी साहिबान को भी उनकी ससुराल से आमन्त्रित किया था जो कि राजा साहिब के परिवार में एक नई बात थी। ऐसा करने का राजा साहिब का उद्देश्य यह था कि उस कुरीति, जो पंजाब के राजपूतों में प्रचलित है, जिसके कारण विवाह के बाद

लड़कियों को अपने माता–पिता के घर वापिस आने पर मनाही समझी जाती थी, को समाप्त कर दें। इसलिए राजा साहिब ने कंवर रणदीप सिंह की बहन, जो सुकेत के राजा भीमसेन की रानी थी, को बुलाने एक अहलकार सुकेत भेजा। परन्तु यह बड़े दुःख के साथ बताया जाता है कि राजा भीमसेन साहिब, जिन्होंने पहले चीफ्स कॉलेज लाहौर से शिक्षा प्राप्त की थी और जिन से विवाह के समय यह आशा की गई थी कि वह इन कुरीतियों और बेहूदा रिवाजों को बंद करने में सहायता देंगे, आशा के विपरीत लकीर के फकीर साबित हुए और उन्होंने रानी साहिबा को नाहन भेजने से इनकार कर दिया, जिससे रानी साहिबा को तथा मायके वालों को बड़ी निराशा हुई। राजा साहिब स्वयं भी इस बात से बड़े दुःखी हुए क्योंकि उनको राजा भीमसेन से कदापि ऐसी आशा नहीं थी।

सरदार रणदीप सिंह की बहन को छोड़कर दूसरी सभी देयी साहिबान सोलन, महलोग और मण्डी से पधारीं और टीका अमर सिंह साहिब के विवाह में सम्मिलित होकर खुशियों को और बढ़ा दिया। विक्रमी संवत् 1966 के 18 फाल्गुन को टीका अमर सिंह साहिब व राजा साहिब और राजकुमार वीर विक्रम सिंह, रणजोर सिंह, रणविजय सिंह, रणदीप सिंह तथा अहलकार इत्यादि कुल बारात जिसकी संख्या लगभग 1500 थी, नाहन से देहरादून के लिए चले गए। पहला ठहराव सढौरा में हुआ, जहां पर कि राजा साहिब ने बारात के लिए कैम्प लगवाया था। साढौरा वालों ने बड़े उत्साह से राजा साहिब और दूल्हा साहिब का स्वागत किया और इस समारोह की खुशी में राजा साहिब ने कैम्प के निकट एक विजयद्वार बनवाया था। राजा साहिब ने प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मुलाकात की और उन द्वारा किए गए अतिथि सत्कार का धन्यवाद किया।

दूसरे दिन 19 फाल्गुन को बारात सढौरा से चलकर बड़ारा पहुंची, जहां पर सढौरा की तरह कैम्प लगा हुआ था। बारात कैम्प में ठहरी और 20 फाल्गुन को दो विशेष गाड़ियों के माध्यम से प्रातः 10

बजे बारात देहरादून के लिए चली गई। रास्ते में सहारनपुर रेलवे स्टेशन पर जगाधरी के रईसों लाला ज्योतिप्रकाश व रुगनाथ सिंह ने राजा साहिब और बारातियों को चाय पानी व नाश्ता दिया जिसको राजा साहिब ने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया तथा इन रईसों का धन्यवाद किया। पहली विशेष गाड़ी जिसमें राजा साहिब, दूल्हा, दूसरे राजकुमार व अहलकार थे, 20 फाल्गुन को 3.30 बजे शाम देहरा स्टेशन पर पहुंची। वहां सरकार की तरफ से रीति अनुसार 11 तोपों की सलामी हुई और राजा साहिब के स्वागत के लिए देहरा के असीस्टैंट कमिश्नर सरकारी फौज की एक कम्पनी को लेकर महाराजा देव शमशेर सिंह सहित आए। राजा साहिब दूल्हा और बारातियों सहित कैम्प में ठहरने के लिए चले गए। कैम्प को मेजर राजकुमार वीर विक्रम सिंह ने सार्जेन्ट म्यो साहिब की सहायता से बड़े सुन्दर ढंग से सजाया और तैयार किया हुआ था।

महाराजा देव शमशेर जंग की ओर से बारातियों को चार दिन की रसद दी गई। महाराजा शमशेर जंग की तरफ से राजा साहिब के चीफ सैक्रेटरी बाबू नारायण सिंह को इसके लिए प्रबन्धक बनाया गया, जिसको महाराजा शमशेर जंग ने राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब से विवाह के प्रबन्ध के लिए मांग लिया था। महाराजा शमशेर सिंह की तरफ से विवाह का सारा इन्तज़ाम बाबू नारायण सिंह ने किया।

इस विवाह में लम्बाग्राओं के राजा जयचन्द साहिब, सरदार जीवन सिंह साहिब शाहजादपुरिया, सोलन के राणा दलीप सिंह साहिब, बलदेव सिंह साहिब रायपुरिया और दूसरे छोटे बड़े रईस और अंग्रेज़ों इत्यादि को राजा साहिब ने विवाह के लिए आमन्त्रित किया था। ये सब अतिथि विक्रमी सम्वत् 1966 के 21 फाल्गुन को देहरा में शादी की रस्म में शामिल हुए। 21 फाल्गुन को 3 बजे शाम बारात का जलूस कोठी रणवीर हाल की तरफ बड़ी सज धज कर रवाना हुआ जहां पर महाराजा देव शमशेर जंग शादी के इन्तजाम के लिए ठहरे

हुए थे। बारात में सबसे पहले दो हाथी जिन पर जगाधरी के रईस लाला ज्योतिप्रकाश और लाला बेनी प्रसाद रुपयों की बोरियां ले कर बैठे हुए थे और रुपयों की बोछार कर रहे थे। इनके पीछे झंडा उठाने वाले फिर बैंड वाले चल रहे थे। इसके बाद रियासत की सेना की टुकड़ी फिर राजा साहिब के अंगरक्षकों की टुकड़ी, फिर दूल्हा साहिब का हाथी, इसके पीछे राजा साहिब किन्नौर थे जिन के साथ देहरा का क्लैक्टर मिस्टर डेम्पीयर भी था। इन के बाद अपनी–अपनी पदवी के अनुसार बाराती एक कतार में हाथियों पर बैठे थे। हाथियों की संख्या 37 थी जिनपर चांदी के हौदे रखे हुए थे।

बारात का जलूस बड़ी शानोशौकत से देहरा के बाजारों से होता हुआ रणवीर हॉल कोठी पर पहुंचा और रास्ते में रुपयों की खूब बोछार होती रही। दर्शकों और भिखारियों की भारी भीड़ थी परन्तु पुलिस का इन्तज़ाम बहुत अच्छा था, किसी किस्म का कोई नुकसान नहीं था। जब बारात रणवीर हॉल कोठी पर पहुंची तो महाराजा देव शमशेर जंग ने राजा साहिब सिरमौर और दूल्हा साहिब का स्वागत किया। राजा साहिब, दूल्हा साहिब राजकुमारों और अपने साथियों सहित हाथियों से उतर कर कोठी में गए जहां पर महाराजा शमशेर जंग ने इत्र और पान इत्यादि से खातिरदारी की और दूल्हा साहिब ने कुछ रस्म अदा की।

इसके बाद बारात का जलूस इसी प्रकार कैंप को वापिस हुआ। उसी रोज़ रात को दूल्हा साहिब फेरा इत्यादि की रस्म पूरा करने के लिए राजा शमशेर जंग की कोठी रणवीर हॉल गए। 11 फाल्गुन की रात के 4 बजे, तदनुसार 4 मार्च 1910 ईसवी को विवाह की रस्म अर्थात् पाणिग्रहण संस्कार हुआ और रस्म के पूरा होने के बाद दूल्हा साहिब अपने कैंप में वापिस आ गए। 22 फाल्गुन को राजा साहिब ने दोपहर के वक्त तमाम हिन्दुस्तानी अतिथियों को तवायफों के नाचगाने की महफिल में बुलवाया। नाचगाने वालियां शादी के अवसर पर कलकत्ता, इलाहबाद, बनारस और देहली इत्यादि से

बुलवायी गई थीं। उसी रोज़ रात को यूरोपियन अतिथियों को, जो शादी में शामिल होने बाहर से आये हुए थे तथा दूसरे यूरोपियन लोग जो देहरा में रहते थे, भोज के लिए बुलाया गया। अतिथियों की संख्या लगभग 150 थी। भोज का प्रबन्ध बहुत ही अच्छा था। भोज के बाद सब हिन्दुस्तानी और यूरोपियन अतिथि अलफ्रेड थियेट्रिकल कम्पनी के खेल तमाशे में शरीक हुए। इस कम्पनी को राजा साहिब ने शादी के मौके पर देहरा बुलवाया था। अतिथि इस कम्पनी का खेल देख कर बहुत खुश हुए।

विक्रमी सम्वत् 1966 के 23 फाल्गुन को महाराजा देव शमशेर जंग ने राजा साहिब, दूल्हा साहिब, राजकुमार मेजर वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह और सरदार रणदीप सिंह को अपनी कोठी पर भोज के लिए आमन्त्रित किया। दूसरे बारातियों के लिए कैंप में मिठाइयां भेजी गई। उसी दिन शाम के 4 बजे दुल्हन को विदा किया गया जिसका जलूस रणवीर हॉल से इस तरह रवाना हुआ कि आगे आगे बैंड, फिर सिरमौर रियासत की सेना की टुकड़ी, सिरमौर के राजा साहिब के अंगरक्षक थे। इसके पीछे दुल्हन की गाड़ी, इसके बाद राजा साहिब सिरमौर की गाड़ी और फिर पदवी अनुसार दूसरे व्यक्तियों की गाड़ियां एक के पीछे दूसरी चल रही थीं। दुल्हन साहिबा को सिरमौर के राजा साहिब की कोलागढ़ चाय बाग वाली कोठी में रात्रि विश्राम के लिए ठहराया गया। दूसरे बाराती कैंप के लिए वापिस आये। उसी रात 7 बजे आतिशबाजी चलाई गई जो कि राजा साहिब ने विवाह के समारोह के लिए कलकत्ता और देहली इत्यादि से मंगवाई थी। यह तमाशा अति सुन्दर था जिसको देखकर से सब अतिथि इत्यादि बहुत प्रसन्न हुए।

महाराजा देव शमशेर जंग ने दहेज में एक हाथी, आठ घोड़े और चांदी इत्यादि के बर्तन दिये। विदाई में राजा साहिब, दूल्हा साहिब और राजकुमारों को चांदी के बर्तन दिये गए। अहलकारों, बारातियों और रियासत के सेवादारों को उनकी पदवी अनुसार एल्यूमीनियम के

बर्तन और नकद रुपया जिनकी संख्या पांच रुपये से एक सौ रुपये तक थी, दिये गए। बाबू नारायण सिंह को मुनासिब विदाई देकर रुखसत किया।

विक्रमी सम्वत् 1966 के 24 फाल्गुन, तदनुसार 7 मार्च 1910 ईसवी को अतिथि जो विवाह में शामिल होने आये थे, उनको देहरा ही से विदा कर दिया गया। उसी रोज़ राजा साहिब, दूल्हा साहिब और दुल्हन साहिबा व दूसरे बाराती 12 बजे दोपहर को विशेष गाड़ी द्वारा वापिस हुए। राजा साहिब को विदा करने के लिए क्लैक्टर साहिब मिस्टर डैम्पीयर स्वयं तथा महाराजा देव शमशेर जंग और दूसरे जानेमाने व्यक्ति देहरा रेलवे स्टेशन पर आये। राजा साहिब बारात सहित शाम सात बजे बडारा पहुंचे। वहां पर चतुर्थी कर्म की रस्म की गई। दूसरे रोज़ 25 फाल्गुन को बडारा से प्रस्थान कर सढ़ौरा पहुंचे और उस रोज़ वहां पर विश्राम किया। 26 फाल्गुन को सढ़ौरा से चल कर शाम को 7 बजे सकुशल नाहन पहुंचे और दुल्हन साहिबा ने राजमहल में प्रवेश किया। इस अवसर पर नाहन के निवासियों ने राजा साहिब, दूल्हा साहिब और दुल्हन साहिबा का बड़े हर्षोल्लास से स्वागत किया। इस समारोह की खुशी में एक विजयद्वार बनवाया गया और रात को रोशनी की गई।

विक्रमी सम्वत् 1967 के चैत्र मास की दूसरी तिथि को राजा साहिब ने शादी के उपलक्ष्य में तमाम निकट सम्बंधियों को भोज दिया। फिर इसी तरह एक–एक दिन रियासत के विभिन्न विभागों के कार्यकर्ताओं को दावतें दीं और निकट सम्बंधियों और अहलकारों को उनकी हैसियत के मुताबिक तोहफे दिये, दूसरे सेवादारों को उनकी पदवी अनुसार नकद ईनाम दिये। इसके एक सप्ताह बाद दुल्हन साहिबा मुकलावे की रस्म के लिए अपने मायके वापिस चली गईं।

9 मई 1910 ईसवी, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1967 के 27 वैशाख की शाम को हिन्दुस्तान के बादशाह एडवर्ड सप्तम की दिल दहला देने वाली मृत्यु का समाचार मिला जो 6 मई 1910 को इंग्लैंड

में हुई थी। इस दुखद समाचार को सुनकर हर अमीर गरीब व्यक्ति को बड़ा दुःख हुआ। दूसरे रोज़ 28 वैशाख की सुबह को स्वर्गवासी बादशाह की आयु के वर्ष अनुसार 68 मिनट तक गन फायर किये गये। एक सप्ताह के लिए नाहन शहर में हड़ताल हुई। रियासत के सारे कार्यालय भी एक सप्ताह के लिए बन्द किये गये। 20 मई, 1910 ईसवी को 6 बजे शाम जब स्वर्गवासी बादशाह को दफ्न किया गया तो 68 मिनट तक गन फायर किये गये और उस रोज़ शहर में हड़ताल रही और रियासत के कार्यालय बन्द किये गये।

टीका अमर सिंह के विवाह के बाद राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश ने इस कारण कि टीका साहिब का विवाह हो गया है, उनके लिए महल में अलग से भवन की आवश्यकता महसूस की। इसके अतिरिक्त इस विचार से भी कि दो परिवारों का, विशेषकर दो विभिन्न विचारों के सम्बन्धियों का इकट्ठे रहना झगड़े तथा मनमुटाव का कारण बनता है। इसलिए राजकुमार वीर विक्रम साहिब के लिए अलग महल बनाने का प्रस्ताव रखा। वह अभी तक अलग से महल न होने के कारण राजा साहिब के साथ राजमहल में रहा करते थे, परन्तु राजकुमार साहिब ने किसी कारणवश अलग होना पसन्द नहीं किया। यद्यपि राजमहल में अब इनके लिए जगह उपलब्ध न थी फिर भी राजा साहिब ने, जो दूरदर्शी तथा शांत स्वभाव के थे, उन्हें अलग करने के मामले को फिलहाल टाल दिया।

**अतः राजकुमार साहिब ने कमांडिंग ऑफिसर की हैसीयत से एक नई कोठी 40,000/– रु0 की लागत से राजा साहिब की इच्छानुसार बनवाना स्वीकार कर दिया। इसके लिए राजकुमार साहिब ने शमशेरपुर छावनी में जगह पसन्द की और कोठी को अपनी पसन्द के अनुसार बनवाया। कोठी बन जाने पर राजकुमार साहिब विक्रमी संवत् 1967 की 5 ज्येष्ठ, तदनुसार 20 मई, 1910 ईसवी को राजमहल से इस कोठी में आ गए परन्तु लाड़ी साहिबा और अन्य राजकुमार राजमहल में ही रहते रहे। राजकुमार वीर विक्रम सिंह के साथ वह स्त्री जिसके साथ**

कुछ समय पूर्व उन्होंने कटार द्वारा रस्म अदा की थी, कोठी में चली आई। खाने–पीने का सारा खर्च पहले की तरह राजकुमार साहिब को रियासत से मिलता रहा।

क्योंकि नाहन में अभी तक हिन्दुस्तानी अहलकारों के लिए आपस में मिल--जुलकर बैठने और मनोरंजन करने का कोई स्थान नहीं था (यद्यपि सिरमौर क्लब था परन्तु इसमें बहुत सारे लोगों के बैठने की सुविधा नहीं थी) इसलिए राजा साहिब ने अहलकारों के लिए एक क्लब स्थापित करने का प्रस्ताव किया। उन्होंने एक कोठी, जो सिरमौर क्लब के बिल्कुल पास थी, निःशुल्क इस नए क्लब को दे दी। इसके साथ ही उन्होंने क्लब के लिए फर्नीचर और पुस्तकें इत्यादि खरीदने के लिए 1000/-- रुपया भी दिया। क्लब का नाम उन्होंने अपने प्रसिद्ध नाम पर सुरेन्द्र क्लब रखा और विक्रमी संवत् 1967 के 15 ज्येष्ठ, तदनुसार 28 मई, 1910 ईसवी को राजा साहिब ने स्वयं राजकुमारों सहित इस क्लब का उद्‌घाटन किया।

इस क्लब में रियासत के सब अहलकारों, हैडक्लर्क और नायब तहसीलदारों से लेकर उच्च पदों पर विराजमान अहलकार तथा वकील और प्रतिष्ठित व्यक्ति भी इसके सदस्य बनाए गए। प्रत्येक सदस्य से उनके वेतन और पदवी के अनुसार एक रुपये से पांच रुपये तक प्रतिमास चंदा लेना प्रस्तावित किया, ताकि इस चंदे से समाचार पत्र, पुस्तकें और क्रीड़ा इत्यादि का खर्च पूरा होता रहे। इस क्लब के खुल जाने से समस्त अहलकारों को आपस में मिलने--जुलने, समाचार पत्र व पुस्तकों के पढ़ने और क्रीड़ा आदि मनोरंजन के लिए बड़ी सुविधा हो गई। क्लब के सदस्यों ने उदारतापूर्वक सहायता के लिए राजा साहिब का आभार प्रकट किया। इस क्लब के बनने से राजा साहिब की याद सदा–सदा के लिए नाहन में बस गई।

16 जून, 1910 ईसवी को हिन्दुस्तान के बादशाह जॉर्ज पंचम की सालगिरह के अवसर पर राजा साहिब की सिफारिश पर रियासत के चीफ़ सैक्रेटरी बाबू नारायण सिंह को अंग्रेज़ी सरकार ने सरदार

बहादुर की पदवी प्रदान की और मेजर राजकुमार वीर विक्रम सिंह को ऑनरेरी लैफ्टिनैंट कर्नल के पद पर तरक्की दी, जिससे ये दोनों व्यक्ति अति प्रसन्न हुए।

प्लेग की क्वारनटीन (quarintine) के लिए डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का व्यय बढ़ गया था और आय–व्यय को पूरा नहीं कर पा रही थी इसलिए राजा साहिब ने प्लेग विभाग के व्यय को पूरा करने के लिए विक्रमी संवत् 1967 की खरीफ फसल से रियासत की मालगुज़ारी पर प्रति रुपया पर छः पाई की बढ़ोतरी की। इसके अतिरिक्त उन्होंने रीत की फीस को, जो कि राजा शमशेर प्रकाश साहिब के शासनकाल में औरत का दूसरा विवाह करने पर 10/–रु0 प्रतिशत ली जाती थी, उसे बढ़ाकर 15/– रु0 कर दिया।

टीका अमर सिंह की लाड़ी साहिबा की नाहन वापसी के लिए विक्रमी संवत् 1968 के 26 भादों का मुहूर्त निकला। लाड़ी साहिबा को लाने के लिए चीफ सैक्रेटरी सरदार नारायण सिंह को मंसूरी भेजा गया परन्तु टीका अमर सिंह साहिब के ससुर महाराजा देव शमशेर सिंह भी लाड़ी साहिबा को नाहन पहुंचाने उनके साथ आए। वह 10 सितम्बर 1910 ईसवी को नाहन पहुंचे और वहां दो सप्ताह ठहरे। इस बीच उन्होंने अपने छोटे पुत्र नरेन्द्र शमशेर जंग से कंवर सूरत सिंह की छोटी देयी साहिबा के साथ रिश्ता करने के लिए सरदार नारायण सिंह के माध्यम से बात चलाई, याद रहे कि इस रिश्ते बारे महाराजा देव शमशेर जंग ने पहले भी एक बार राजा साहिब सिरमौर से बात की थी और तब भी महाराजा साहिब नाहन आए थे। अंततः सरदार नारायण सिंह के प्रयास से राजा साहिब सिरमौर ने बड़ी टाल–मटोल के बाद इस रिश्ते को स्वीकार कर लिया। यद्यपि देयी साहिबा के कुछ एक रिश्तेदार रहन–सहन व रीति–रिवाज में विभिन्नता होने के कारण नेपाल वालों से रिश्ता करने के पक्ष में नहीं थे, मगर जो होना होता है वही होता है।

राजा साहिब की तरफ से कुछ शर्तें लगाए जाने के बाद,

जिनको महाराजा देव शमशेर जंग ने प्रसन्नता से मान लिया, रिश्ते की बात पक्की कर दी गई। इस बीच महाराजा देव शमशेर जंग ने अपनी छोटी पुत्री की कंवर सूरत सिंह के पुत्र सरदार रणदीप सिंह से मंगनी करने तथा दोनो शादियों को एक के बाद दूसरी करने के लिए इच्छा प्रकट की। परन्तु राजा साहिब ने कहा कि वह इस प्रस्ताव को पण्डितों से पूछने के बाद ही निश्चित करेंगे तथा बात आगे के लिए छोड़ दी। इसके बाद महाराजा शमशेर जंग ने 1910 ईसवी की 22 सितम्बर को सफलता के साथ खुशी–खुशी नाहन से प्रस्थान किया।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश ने विक्रमी संवत् 1967 के असौज मास में जब वह शिमला में थे, पंजाब के लैफ्टिनैंट गवर्नर सर लुई डेन को नाहन आने के लिए आमन्त्रित किया। लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब 24 अक्तूबर (किताब में तिथि 22 अक्तूबर लिखी है, परन्तु अगली सामग्री पढ़ने से यह प्रतीत होता है कि यह 24 अक्तूबर है) 1910, तदनुसार आठ कार्तिक, विक्रमी संवत् 1968 को बड़ारा, काला अम्ब के रास्ते मोटर गाड़ी द्वारा दिन के डेढ़ बजे नाहन पहुंचे। उनकी आज्ञानुसार कोठी शमशेर विला पर जहां वह ठहरे हुए थे, राजा साहिब ने टीका अमर सिंह, राजकुमार वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रण विजय सिंह, सरदार नारायण सिंह और पण्डित बिशम्बर दास सहित रीति अनुसार उनका स्वागत किया। लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब के साथ लेडी डेन, मिस डेन, प्राईवेट सैक्रेटरी मेजर बेली साहिब, एक अंडर सैक्रेटरी, एक ए.डी. कॉंग और चीफ इंजीनियर मिस्टर गॉर्डन थे। ये सब अतिथि मोटरकार में आए थे। सर लुई डेन साहिब पहले व्यक्ति थे जो मोटरकार द्वारा नाहन आए थे। यह पहला अवसर था जब मोटरकार नाहन में आई थी। नाहन की जनता इस को देखने के लिए बड़े शौक से एकत्रित हुई, इस पहाड़ी स्थान में कार को देखकर जनता चकित रह गई।

देहली के कमीश्नर और पोलिटिकल एजेन्ट कर्नल डायस और सैप्पर्ज़ के निरीक्षक अधिकारी मेजर बायलो लैफ्टिनैंट गवर्नर

साहिब के पहुंचने से एक दिन पहले नाहन आ गए थे। राजा साहिब ने इन सब अधिकारियों का बहुत ही अच्छा सत्कार किया। उसी दिन 24 अक्तूबर, 1910 के 3.30 बजे राजा साहिब, टीका अमरसिंह साहिब, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह, सरदार नारायण सिंह, सरदार गुरुवचन सिंह और चौधरी प्रताप सिंह लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब से बातचीत करने शमशेर विला पर गए और बातचीत करके वापिस आए। उस समय लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब ने सरदार नारायण सिंह को सरदार बहादुर का सम्मान दिया। यह सम्मान सरदार साहिब को पिछले साल जून मास में बादशाह जॉर्ज पंचम की सालगिरह के अवसर पर दिया गया था।

फिर उसी दिन दोपहर के बाद लैफ्टिनैंट गवर्नर अपने अहलकारों सहित राजमहल में राजा साहिब से मिलने आए। राजा साहिब ने उनका रीति अनुसार स्वागत किया और दरबार लगाया, जिसमें टीका अमरसिंह, सरदार रणविजय सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार नारायण सिंह, पण्डित विशम्बर दास, सरदार गुरवचन सिंह, चौधरी प्रताप सिंह, बाबू शिवचरण लाल और मीर मुंशी (हैड क्लर्क) बाबू सौदागर लाल उपस्थित थे। ये सब लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब के सामने पेश हुए और सबने भेंटें दी। इसके बाद इत्र–पान बांटा गया और दरबार समाप्त हुआ। लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब बहादुर अपनी कोठी को वापिस आए।

दूसरे दिन 25 अक्तूबर, 1910 ईसवी को सुबह आठ बजे लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब छावनी शमशेरपुर में परेड देखने आए और परेड देखकर अति प्रसन्न हुए तथा कर्नल वीर विक्रम सिंह और सेना की बड़ी प्रशंसा कर छावनी से वापिस होते हुए नाहन फाउंडरी का निरीक्षण किया, जिसे देखकर वह अति प्रसन्न हुए। इसके बाद लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब अपनी लेडी साहिबा के साथ चौगान में पधारे जहां उन्होंने जिमखाना की सैनिक क्रीड़ाएं देखीं और प्रसन्नता व्यक्त की। फिर वह अपने विश्राम गृह वापिस चले गए।

लैफ्टिनैंट गवर्नर सर लुई डेन बहुत ही हंसमुख, संजीदा; अच्छे स्वभाव वाले बुद्धिमान अधिकारी थे। वह सबसे बड़ी सभ्यता से मिलते–जुलते थे। 26 अक्तूबर, 1910 को लैफ्टिनैंट गवर्नर अपनी लेडी साहिबा और दूसरे अधिकारियों सहित क्यारदादून के माजरा में शिकार खेलने के लिए गए। उनके साथ राजा साहिब व कर्नल वीर विक्रम सिंह भी थे। माजरा में दो दिन शिकार खेलने के पश्चात् वह कालेशर के रास्ते नाहन वापिस हुए। वह सदैव ही कृषि, वाणिज्य, उद्योग में गहरी रुचि रखते थे। उन्होंने जब दून में अपने आप उगे हुए शहतूत के वृक्ष देखे तो राजा साहिब को रेशम के कीड़े मंगवाने तथा दून के जंगल में रबड़ के पौधे उगाने का परामर्श दिया, जिसके अनुसार राजा साहिब ने लायलपुर से रेशम के कीड़े और एक व्यक्ति, जो इन कीड़ों को पालने की जानकारी रखता था, बुलवाया। परीक्षण के तौर पर पांवटा में रेशम के कीड़ों को पाला गया और जंगल खारा और सिम्बल बाड़ा, जो दून क्षेत्र में स्थित हैं, में रबड़ के पौधे लगवाए गए।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश प्रशासन और वाणिज्य के प्रबन्ध में अपने पिता के कदमों पर चलते थे और वह कार्य जो उनके पिता के शासनकाल में पूरे नहीं हो पाए थे, उनको पूरा करना अनिवार्य समझते थे। उन्होंने विक्रमी सवत् 1964 में कन्या पाठशाला और विक्रमी संवत् 1966 में जनाना हस्पताल के भवन, जो अभी तक तैयार नहीं हुए थे, को तैयार करवाया। गिरी नदी पर जो पुल राजा शमशेर प्रकाश साहिब के शासनकाल में इंजीनियर की अकुशलता के कारण बन नहीं सका था, उसको बनाने के लिए राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश ने निर्णय लिया। उन्होंने तहसील रेणुका के कृषकों से, जिनका वहां आना–जाना अधिक था, मालगुज़ारी पर प्रति रुपया चार आने चंदा वसूल करने के आदेश विक्रमी संवत् 1967 के चैत मास में दिए, जिसको कृषकों ने कुढ़ते मन से दिया, परन्तु बदकिस्मती से इस बार भी पहले जैसा हाल हुआ। इंजीनियर की अकुशलता के कारण, जिन्होंने लोहे के ऐसे भारी स्तूप मंगवाए जिनका ऐसे पहाड़ों में ले जाना ही कठिन था और फिर

लोहे के रस्से भी कम लम्बाई के आए, पुल तैयार न हो सका। इस कारण पैसा व्यर्थ ही गया और इंजीनियर मिर्ज़ा ताहिर हुसैन रियासत से चले गए और इनके स्थान पर विक्रमी संवत् 1968 के चैत मास से मिस्टर मार्शल पब्लिक वर्क्स के एग्जैक्टिव इंजीनियर नियुक्त हुए।

इन्हीं दिनों विक्रमी संवत् 1967 में राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब ने नाहन में पानी लाने और वाटर वर्क्स बनाने का प्रस्ताव किया जिसकी नाहन में बड़ी आवश्यकता थी। उन्होंने पंजाब सरकार से एक कुशल इंजीनियर को नहर सबार के स्थान पर भेजने के लिए अनुरोध किया जहां से पानी लाने का प्रस्ताव था और जो नाहन से लगभग 15 मील की दूरी पर है। इस इंजीनियर का कार्य सर्वे करके परियोजना और उस पर लागत का अनुमानित व्यय लगाने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई। इस कार्य के लिए पंजाब सरकार ने इंजीनियर मिस्टर बेन को नियुक्त किया। इस इंजीनियर ने मौके पर जाकर और सर्वे करके परियोजना और इस पर आने वाले व्यय की रिपोर्ट तैयार की।

इसके पश्चात् राजा साहिब ने पानी का नमूना जांच के लिए लाहौर भेजा ताकि उसमें पाए जाने वाले तत्त्वों का पता चल सके। जब पानी की जांच हो गई और यह पीने योग्य प्रमाणित किया गया तो राजा साहिब ने बम्बई की एक प्रसिद्ध कम्पनी टर्नर होरस को वाटर वर्क्स बनाने का ठेका 2,80,000/– में दे दिया। इस कम्पनी ने इस परियोजना को दो वर्ष में पूरा करने का वादा किया। एग्रीमैंट लिखा गया और वाटर वर्क्स पर कार्य शुरू हो गया। राजा साहिब ने यह बड़ा धर्म का कार्य किया क्योंकि नाहन में पानी की बड़ी समस्या थी जिसकी आवश्यकता विशेष और साधारण व्यक्ति को हमेशा रहती थी। इस धर्मा के कार्य पर शहर का छोटा–बड़ा व्यक्ति राजा साहिब का दिल से आभारी हुआ और जनता राजा साहिब को सदा याद करती रहेगी तथा यह नाहन में राजा साहिब की अमिट यादगार बन गई है।

राजकुमार सूरतसिंह की छोटी देयी साहिबा का विवाह विक्रमी संवत् 1967 के 19 फाल्गुन, तदनुसार 2 मार्च, 1911 को होना निश्चित हुआ था। इसलिए राजा साहिब ने विवाह का प्रबन्ध पण्डित विशम्बर दास और बाबू प्रभुलाल की देखरेख में स्वयं किया। दूसरी ओर महाराजा देव शमशेर जंग साहिब के अनुरोध पर राजा साहिब ने विवाह के इन्तज़ाम के लिए सरदार नारायण सिंह को भेजा और दोनों तरफ विवाह का कार्य शुरू हो गया।

विक्रमी संवत् 1967 के 14 फाल्गुन को महाराजा देव शमशेर जंग साहिब अपने पुत्र दूल्हा नरेन्द्र शमशेर जंग और दूसरे तीन पुत्रों बहादुर जंग, जगत शमशेर व मंसूरी शमशेर तथा राणा ज्ञान जंग, जगत जंग और सरदार नारायण सिंह तथा दूसरे व्यक्तियों और सेवादारों सहित छः बजे शाम चौकी कांसीवाला पहुंचे। राजा साहिब सिरमौर, टीका अमर सिंह साहिब, कर्नल वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रण विजय सिंह, सरदार रणदीप सिंह, पण्डित विशम्बर दास और बाबू प्रभुलाल ने इनका स्वागत किया और सारे अतिथियों को चौकी कांसीवाला से हाथियों पर बिठाकर अपने साथ नाहन लाए। बड़े अतिथि गृह में उनको ठहराया जहां पर महाराजा साहिब की सलामी के लिए सेना की एक टुकड़ी उपस्थित थी।

महाराजा देव शमशेर जंग के साथ उनकी रानी साहिबा, ख्वासें और बांदियां इत्यादि भी थीं जो कि इस अतिथि गृह में उन महाराजा के साथ ठहरीं। दूसरे विशेष लोगों के लिए इस कोठी के निकट तम्बू लगाए गए। बारात में आए अन्य लोगों को, जिनकी संख्या लगभग 60 होगी, तम्बुओं में ठहराया गया। महाराजा साहिब और दूसरे सब बारातियों के लिए रीति अनुसार रसद इत्यादि दी गई तथा सबका स्वागत--सत्कार बड़े अच्छे ढंग से किया गया।

विक्रमी संवत् 1967 के 19 फाल्गुन को भोर के समय शांत की रस्म की गई। दूल्हे की तरफ से भी शांत और सेहरे की रस्म नाहन ही में की गई। जलूस के लिए सब सामग्री, बैण्ड, फौज, हाथी, घोड़े

और पालकी आदि राजा साहिब सिरमौर ने महाराजा देव शमशेर जंग को उपलब्ध करवाया। राजा साहिब ने अपने यूरोपियन तथा हिन्दुस्तानी अहलकारों को भी बारात में शामिल होने के आदेश दिए थे। बारात का जलूस 3.00 बजे शाम अतिथि गृह से बड़ी सज–धज के साथ बाजारों से होता हुआ पांच बजे दुल्हन के भवन पर पहुंचा। रास्ते में लगभग एक हज़ार रुपये बिखेरे गए। दुल्हन के घर पर राजा साहिब, राजकुमारों और बिरादरी के दूसरे व्यक्तियों ने दूल्हा व महाराजा देव शमशेर जंग का स्वागत किया।

दूल्हे को डाक बंगला में ठहराया और सब लोग वापिस हो गए। फिर 19 फाल्गुन की रात दो बजे शादी की रस्म (पाणि ग्रहण और फेरा) पूरी की गई। दूसरे दिन 20 फाल्गुन को राजा साहिब ने शाम चार बजे महाराजा देव शमशेर जंग और दूल्हा को शादी के समारोह के अवसर पर रानीताल बाग में एक गार्डन पार्टी दी जिसमें महाराजा साहिब, दूल्हा और दूसरे प्रसिद्ध व्यक्ति, रियासत सिरमौर के राजकुमार और अहलकार सम्मिलित हुए। पार्टी का प्रबन्ध बहुत अच्छे ढंग से किया गया था। 21 फाल्गुन को महाराजा देव शमशेर जंग और सब बारातियों को राजमहल में भोज दिया गया। 22 फाल्गुन को महाराजा देव शमशेर जंग और सब बारातियों को कंवर रणजोर सिंह ने अपने भवन में भोज दिया। फिर 23 फाल्गुन को दुल्हन साहिबा विदा हुई। 24 फाल्गुन को महाराजा देव शमशेर जंग, दूल्हा, दुल्हन और बाराती नाहन से मंसूरी को वापिस हुए। महाराजा देव शमशेर जंग ने सरदार नारायण सिंह को उनके सफलतापूर्वक किए गए कार्य के बदले में उचित इनाम देकर विदा किया।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश आम तौर पर फाल्गुन–चैत में रियासत के चाय के कारोबार व चाय–बागान देखने के लिए देहरादून की तरफ चले जाते थे। इस वर्ष पहले तो देयी साहिबा के विवाह के कारण और फिर शहर और महलों में कुछ बच्चों के खसरा निकलने के कारण वह नहीं गए। इसी बीच राजा साहिब का स्वास्थ्य भी कुछ ढीला हो गया परन्तु राजा साहिब ने, जो अपने दायित्व को हमेशा

प्राथमिकता दिया करते थे, इसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। इस पुस्तक के लेखक और दूसरे शुभचिन्तकों ने दौरे को स्वास्थ्य के ठीक हो जाने तक टालने का आग्रह किया। परन्तु राजा साहिब विक्रमी संवत् 1968 की 17 चैत को नाहन से देहरादून के लिए रवाना हुए। पुस्तक का लेखक भी एक दिन बाद दून को रवाना हुआ।

राजा साहिब ने क्यारदादून में कुछ जगहों का निरीक्षण किया और 20 चैत को तहसील पांवटा में पधारे जहां वह कुछ दिनों के लिए मनोरंजन हेतु और स्वास्थ्य के ठीक होने तक रहे। इन दिनों रानी साहिबा कुनिहार, देयी साहिबान व बच्चे इत्यादि भी पांवटा में थे क्योंकि राजा साहिब आम तौर पर महिलाओं को मनोरंजन के लिए और हवा--पानी बदलने के लिए वर्ष में एक–दो बार नाहन से बाहर भेज दिया करते थे। पांवटा में बच्चों का स्वास्थ्य फिर खराब हो गया, जिनकी देखभाल के कारण राजा साहिब का स्वास्थ्य ठीक होने की जगह पर और भी बिगड़ गया। एक सप्ताह बाद जब इस किताब का लेखक राजा साहिब के स्वास्थ्य के बारे में उनसे जानकारी प्राप्त करने मिस्त्र वाला से पांवटा गया, तो राजा साहिब ने बताया कि उन्हें केवल पेशाब अधिक आता है और ज्वर की शिकायत रहती है। जिस पर लेखक ने राजा साहिब से नाहन वापिस चलने का आग्रह किया। क्योंकि अभी देहरा का दौरा बाकी था इसलिए वह नाहन वापिस नहीं आए परन्तु विक्रमी 1968 के पहली वैशाख को राजा साहिब पांवटा से एनफील्ड को चले गए।

यद्यपि इस समय राजा साहिब का स्वास्थ्य ठीक नहीं था फिर भी वह अपना कार्य कर रहे थे। एनफील्ड जाते हुए उनका स्वास्थ्य और खराब हो गया। एनफील्ड पहुंचने पर वहां के हॉस्पिटल एसीस्टैंट को बुलाया गया, जिसने पेशाब की जांच करके बताया कि इसमें ऐलब्यूमिन आता है। इसके मालूम होते ही राजा साहिब के दिल पर ऐसा सदमा लगा कि वह बहुत डर गए तथा जीवन से निराश हो गए क्योंकि उनकी रानी साहिबा को ऐलब्यूमिन ही की शिकायत हुई थी।

इस बारे उनको जानकारी थी। इस रोग का कोई इलाज नहीं हो सकता। यह सोचकर उनका स्वास्थ्य और भी बिगड़ता चला गया।

इन्हीं दिनों रानी साहिबा और देयी साहिबा इत्यादि भी एनफील्ड चली गई थीं। उनके तसल्ली देने से राजा साहिब के चेहरे पर कुछ रौनक आई परन्तु उनको रोग के बारे चिन्ता लगी रही। दो–चार दिन बाद राजा साहिब एनफील्ड से देहरा में स्थित कोलागढ़ चाय बागान को चले गए। रानी साहिबा और देयी साहिबान भी उनके साथ चली गईं। देहरा में पहुंचकर वहां के सिविल सर्जन कर्नल फिशर और स्थानीय प्राइवेट डॉक्टर गांगुली को दिखाया गया, जिन्होंने जांच के बाद बताया कि पेशाब में ऐलब्यूमिन 1/3 के लगभग है तथा गुर्दा, जिगर, दिल इत्यादि में भी कुछ खराबी है। इस पर डॉक्टर गांगुली का इलाज शुरू हुआ। उन्होंने राजा साहिब को बड़ी ढाढ़स बंधाई। राजा साहिब ने डॉक्टरों की सलाह पर रियासत का सारा कारोबार स्वास्थ्य लाभ करने तक छोड़ दिया और इसे टीका अमरसिंह को सौंप दिया। राजा साहिब स्वयं कोलागढ़ में ठहरे रहे। बीमारी का समाचार सुनकर नाहन में जनता को बड़ी चिन्ता हुई। जब राजा साहिब ने एक पत्र में लिखा कि स्वास्थ्य में कुछ लाभ हो रहा है तो जनता का मन शांत हुआ।

लगभग डेढ़ महीने तक डॉक्टर गांगुली का इलाज चलता रहा और राजा साहिब कोलागढ़ में ही ठहरे रहे। इस पुस्तक के लेखक ने तेज़ गर्म मौसम के विचार से राजा साहिब को कई बार नाहन आने का अनुरोध किया, परन्तु जो होना होता है वैसा ही कोई न कोई कारण बन जाता है। इसलिए डॉक्टरों के परामर्श पर राजा साहिब ने तेज़ गर्मी के होते हुए भी पूरा स्वास्थ्य लाभ होने तक देहरा में ही ठहरना उचित समझा। वह इसी स्थान पर ठहरे रहे, परन्तु इलाज से बहुत ही कम लाभ हुआ।

27 मई 1911 को राजा साहिब का स्वास्थ्य अचानक ही अधिक खराब हो गया, पेशाब की जांच करने पर इसमें एलब्यूमिन

1/3 भाग पाया गया। राजा साहिब की नींद उड़ गई और सांस भी अधिक फूलने लगी जिस पर लाहौर के प्रसिद्ध वैद्य लाला मूलराज का इलाज शुरू हुआ परन्तु इससे भी रोग में कोई कमी नहीं आई। इसी बीच अधिक कष्ट का समाचार सुनकर टीका अमरसिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह देहरा को रवाना हुए। वहां पहुंचकर उन्होंने राजा साहिब की स्थिति बहुत खराब पाई। जब राजा साहिब ने निराशा की भाषा बोलनी आरम्भ की तो उन्हें इस पर बड़ी चिन्ता और दुःख हुआ।

5 जून, 1911 को टीका साहिब ने देहरा पहुंचते ही मंसूरी से सिविल सर्जन डॉक्टर बर्डवुड को बुलाया। उन्होंने पंजाब के लैफ्टिनैंट गवर्नर को भी एक तार एक अनुभवी डॉक्टर भेजने के लिए दिया। देहली से हकीम गुलाम मुर्तज़ा खान को भी बुलवाया। सबसे पहले डॉक्टर बर्डवुड कोलागढ़ पहुंचे। परामर्श के लिए डॉक्टर फिशर को भी बुला लिया गया। जिन्होंने राजा साहिब के रोग की पहचान ब्राईट्स डीज़ीज़ के रूप में की। दोनों डॉक्टरों ने एक मत होकर नुस्ख़ा प्रस्तावित किया और बर्डवुड साहिब का इलाज शुरू हुआ। क्योंकि राजा साहिब को भीषण गर्मी से असुविधा थी इसलिए बर्डवुड ने उनको मंसूरी जाने की सलाह दी जिस पर टीका साहिब और पुस्तक के लेखक ने स्वयं राजा साहिब पर नाहन चलने के लिए दबाव डाला। परन्तु राजा साहिब ने इस विचार से कि नाहन जाने के मुकाबले मंसूरी जाने में असुविधा कम होगी, मंसूरी जाना पसंद किया। इसलिए राजा साहिब की इच्छानुसार मंसूरी जाने का प्रस्ताव किया गया। वहां डॉक्टर के परामर्शानुसार एयरफील्ड नामक कोठी किराए पर ली गई जो कि दरमियानी ऊंचाई पर स्थित थी। 6 जून, 1911 को राजा साहिब कोलागढ़ से मंसूरी रवाना हुए। टीका साहिब, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह और भण्डारी शिवानन्द सिंह आदि भी राजा साहिब के साथ गए और कोठी में ठहरे तथा डॉक्टर बर्डवुड का इलाज चलता रहा।

दो दिन बाद कर्नल वीर विक्रम सिंह भी शिमला से मंसूरी पहुंच गए। डॉक्टर क्लार्क, जिन्हें पंजाब के लैफ्टिनैंट गवर्नर साहिब ने राजा साहिब के इलाज के लिए लाहौर से भेजा था, भी वहां पहुंच गया। दोनों डॉक्टरों की सहमति से इलाज शुरू हुआ। इसी बीच देहली से बुलाए गए हकीम गुलाम मुर्तज़ा खान भी वहां जा पहुंचे। परन्तु डॉक्टरी इलाज शुरू हो गया था, इसलिए उनके द्वारा इलाज नहीं हुआ और वह वापिस चले गए। जब डॉक्टरी इलाज से कोई लाभ नहीं हुआ और शरीर पर सूजन भी फैल गई तब राजा साहिब की इच्छानुसार, जिनको हिन्दोस्तानी इलाज पर विश्वास था, दोबारा गुलाम मुर्तज़ा खान को बुलाया गया और उन द्वारा 17 जून, 1911 से राजा साहिब का इलाज शुरू हुआ। परन्तु हकीम साहिब का इलाज भी लाभदायक सिद्ध नहीं हुआ, इसलिए दो दिन के बाद बंद कर दिया गया।

यद्यपि राजा साहिब का विश्वास और इच्छा आयुर्वैदिक पद्धति से इलाज करवाने की थी परन्तु उनकी देखभाल करने वालों ने अंग्रेज़ी प्रणाली के इलाज को लाभदायक और अच्छा समझकर दोबारा अंग्रेजी इलाज शुरू करने का प्रस्ताव किया। इसलिए 19 जून, 1910 से डॉक्टर क्लार्क साहिब, जो कि छुट्टी पर मंसूरी आ गए थे और जिन पर कर्नल वीर विक्रम सिंह को विश्वास भी था, के द्वारा दोबारा इलाज शुरू हुआ। डॉक्टर क्लार्क ने डॉक्टर बर्डवुड व मार्टन साहिब की सहमति से इलाज शुरू किया। इसी बीच रानी साहिबा और देयी साहिबा भी राजा साहिब का अधिक कष्ट सुनकर देहरा से मंसूरी चली गई। राजा साहिब को देयी साहिबा से बड़ा स्नेह था और उसकी शादी की भी चिन्ता रही। जब इनके रोग में कोई लाभ न हुआ और जीने की आशा न रही तो उन्होंने उत्तराधिकारी को देयी साहिबा व दूसरी पुत्रियों आदि के विवाह बारे आवश्यक आदेश दिए **(राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब के उत्तराधिकारी और देयी साहिबा के अतिरिक्त दो पुत्रियां और एक पुत्र रोमहर्षण सिंह ख्वासों से**

**भी थे)** तथा नाहन वापिस जाने की इच्छा प्रकट की परन्तु डॉक्टरों ने इसकी अनुमति न दी।

राजा साहिब को नींद न आने व सांस फूलने का रोग देहरा ही से था, लेकिन मंसूरी पहुंचने के दो–तीन दिन बाद से शरीर की सूजन दिन–प्रतिदिन बढ़ती गई। इसके साथ ही सांस भी भारी होता चला गया। इन रोगों से राजा साहिब की बेचैनी लगातार बढ़ती गई जिससे वह न लेट सकते थे और न सो सकते थे। दिन रात बराबर बैठे–बैठे काटते थे। यह दुःख इतना असह्य था कि राजा साहिब मज़बूत दिल होते हुए भी जीवन से तंग आ गए थे, कभी–कभी रोने तथा चिल्लाने पर भी मज़बूर हो जाते थे। देखने वालों को तो उनका दुःख देखकर तथा बात सुनकर कलेजा मुंह को आता था और दिल टुकड़े–टुकड़े हो जाता था। परन्तु सिवाए दुःख तथा परेशानी के कोई चारा न था। डॉक्टरों ने भांति–भांति के इलाज किए तथा कोई कसर नहीं छोड़ी, परन्तु कोई भी इलाज कामयाब न हुआ। इस तरह दुःख दिन–प्रतिदिन बढ़ता चला गया। कमज़ोरी इतनी हो गई कि पलंग से हिलना–जुलना भी मुश्किल हो गया, नींद तो ऐसी चम्पत हुई कि सख्त से सख्त नशे वाली दवाइयों के प्रयोग से भी नहीं आती थी। एक पल के लिए भी चैन न पड़ता था, जैसे ही लेटते थे वैसे ही दम भारी होना शुरू हो जाता था।

यह सब होते हुए भी डॉक्टर क्लार्क साहिब ने हिम्मत न हारी। राजा साहिब की ऐसी गम्भीर स्थिति होते हुए भी वह आशावान रहे। मगर रोगी तथा रोगी की देखभाल करने वालों को कब शांति थी। अन्ततः राजा साहिब की इच्छा पर कलकत्ता से वैद्य विजय रत्नसेन साहिब को भारी फीस देकर बुलाया गया। वह 1911 ईसवी की 1 जुलाई को मंसूरी पहुंचे। उन्होंने राजा साहिब की स्थिति देखकर कहा कि जीने की आशा कम है। फिर भी 2 जुलाई से उन्होंने इलाज आरम्भ किया। एक ही दिन इलाज करने के बाद वैद्य साहिब ने राजा साहिब के जीने की आशा बिल्कुल छोड़ दी और अपने कार्यभार से मुक्त होना

चाहा। लेकिन राजा साहिब का इसी इलाज पर विश्वास था और तुरन्त दूसरा इलाज करने वाला भी नहीं मिल सकता था इसलिए इन वैद्य साहिब का इलाज राजा साहिब के जीवित रहने तक चलता रहा। सांस के फूलने और एलब्यूमिन में कुछ कमी मालूम हुई, परन्तु दूसरी ओर राजा साहिब अधिक बेसुध रहने लगे।

जब यह स्थिति हुई और वैद्य जी ने पूर्ण रूप से निराशा प्रकट की तो राज कुमार वीर विक्रम साहिब ने डॉक्टर क्लार्क, डॉक्टर बर्डवुड और मार्टन साहिब को आठ बजे रात फिर बुलाया जिन्होंने आपस में परामर्श करके राजा साहिब कें दोनों बाजुओं में नमक के पानी की पिचकारी लगाने की सलाह दी। दोनों बाजुओं में पिचकारियां लगाई गईं परन्तु पिचकारी लगाते–लगाते ही राजा साहिब का 4 जुलाई, 1911 ईसवी को रात साढ़े बारह बजे, तदनुसार 22 आषाढ़ संवत् 1966 को देहान्त हो गया। इस दुःखदायक घटना को सुनकर निकट सम्बन्धियों तथा जनता में दुःख की लहर फैल गई और सब हाथ मलते रह गए, कोई भी इलाज कामयाब नहीं हुआ। नाहन में सरकार और निकट सम्बन्धियों को राजा की मृत्यु के तार दिए गए और नाहन में इस तार के पहुंचते ही महलों और शहर में कोलाहल मच गया। शहर में रिवाज के अनुसार हड़ताल हुई और कार्यालय बंद किए गए। 5 जुलाई, 1911 को रीति अनुसार सन्दूक तैयार किया गया और राजा साहिब के मृतक शरीर को हिन्दू रीति–रिवाज के अनुसार कफन पहनाकर सन्दूक में रखा गया।

लगभग एक बजे दोपहर मंसूरी से अर्थी उठाकर 7.00 बजे शाम उसी दिन कोलागढ़ पहुंचे। दूसरी सुबह 6 जुलाई 1911 को 8.00 बजे अर्थी को हिन्दू रीति रस्म अनुसार कोलागढ़ से उठाया गया। निकट सम्बंधी टीका अमर सिंह, कर्नल वीर विक्रम सिंह, कंवर रणजोर सिंह, सरदार रणविजय सिंह, सरदार रणदीप सिंह तथा चौधरी प्रताप सिंह, ग्रेवल साहिब, लाला ज्योति प्रसाद, भण्डारी शिवा नन्द सिंह, बाबू प्रभु दयाल, वैद्य गंगाराम, ज्योतिषी जातीराम, कोलागढ़ का मैनेजर बाबू

महेश दास और एनफील्ड का मैनेजर मिर्ज़ा आशिक हुसैन वा दूसरे अहलकारों के अतिरिक्त राणा नरेन्द्र शमशेर जंग, कप्तान सैनेली स्किनर साहिब, देहरा के गुरुद्वारे के महन्त लक्ष्मण दास, कंवर तेग़ बहादुर सिंह और वकील पण्डित आनन्द नारायण भी अर्थी के साथ थे।

जिस समय अर्थी स्टेशन पर पहुंची तो अंग्रेजी सरकार की ओर से 11 तोपों की सलामी हुई। दोपहर को अर्थी और उसके साथ आये सभी लोग एक विशेष रेलगाड़ी में हरिद्वार को रवाना हुए। वहां लकड़ घाट पर, जहां पर सिरमौर के राजा जगत प्रकाश का भी दाह संस्कार हुआ था राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश के शव का विधि अनुसार मृतक कर्म करके दाह किया गया। अस्थियों को इकट्ठा करने के बाद सब लोग 9.00 बजे रात को देहरा वापिस हुए। 8 जुलाई को टीका अमर सिंह साहिब और दूसरे व्यक्ति महिलाओं इत्यादि सहित नाहन को वापिस हुए। 9 जुलाई, तदनुसार विक्रमी सम्वत् 1968 के 26 आषाढ़ को बडारा के रास्ते नाहन पहुंचे। 12 जुलाई को रीति अनुसार अस्थि प्रवाह की रस्म से सम्बंधित सामान कपड़े, सोने–चांदी के आभूषण, घोड़े और हाथी लेकर बाबू सौदागर लाल हैड क्लर्क और सालीग्राम पुरोहित को हरिद्वार भेजा गया।

13 जुलाई को शिवपुरी में कर्म और दसाही, और 14 जुलाई को क्रिया कर्म पूरा किया। कर्म क्रिया के बाद 14 जुलाई को शमशेर विला कोठी में पगड़ी की रस्म की गई। 16 जुलाई को रीति अनुसार ब्रह्म भोजन हुआ जिसमें नाहन शहर के सारे ब्राह्मण बुलाए गए। परन्तु इन ब्राह्मणों में महाराजा विक्रम की असमय मृत्यु पर बहुत शोक था इसलिए बहुत कम ब्राह्मण भोजन में शामिल हुए। ब्राह्मण भोजन के बाद उसी दिन 7.30 बजे शाम स्वर्गीय राजा साहिब की अन्तिम सलामी में 11 तोपें चलाई गईं और आखिरी बिगुल बजाये गए। शहर में हड़ताल भी उसी समय समाप्त की गई। दूसरे दिन दफ्तर इत्यादि खोले गए जो 13 दिन से बन्द थे। इस प्रकार शोक की रस्मों की समाप्ति हुई परन्तु राज महल में और राज बिरादरी में साल तक कोई

त्योहार नहीं मनाया रखा। निकट सम्बंधी तथा राजपत्रित अधिकारियों ने एक साल तक काला निशान रखेंगे।

इस स्थान पर यह बता देना भी ज़रूरी है कि महाराजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश सिंह की मृत्यु का दुःख सब ने ही महसूस किया है। इसका प्रभाव काफी समय तक नहीं मिटेगा। नाहन में ऐसी बेरौनकी हुई कि यूं लगता था जैसे पूरे का पूरा शहर ही शोक गृह बन गया हो। सब विशेष और साधारण व्यक्ति राजा साहिब की अच्छाइयों और उनके शासन करने के ढंग को याद करके जवानी में हुई उनकी मृत्यु पर बहुत दुःख मनाते थे। इस पुस्तक के लेखक को, जिसका शाम का समय आम तौर पर स्वर्गीय महाराजा के साथ व्यतीत होता था, हर तरफ उदासी ही उदासी नज़र आती है। किसी स्थान पर भी दुःख दूर नहीं होता। दिल के दुःख का वर्णन करने के लिए न तो शब्द मिलते है, न जीभ को बोलने की शक्ति होती है न ही कलम में लिखने की सामर्थ्य है।

महाराजा सुरेन्द्र प्रकाश की मृत्यु से लेखक को केवल एक अच्छे शासक की असमय मृत्यु का ही रंज नहीं हुआ बल्कि एक मेहरबान दोस्त की जुदाई का दिल को तोड़ने वाला सदमा भी पहुंचा जिसकी आपूर्ति असम्भव है। अब अन्त में परमात्मा सर्व शक्तिमान से लेखक की यह प्रार्थना है कि स्वर्गीय महाराजा की आत्मा को शांति दे और उनके उत्तराधिकारी, सिरमौर के शासक राजा अमर प्रकाश साहिब को उनके पिता की तरह रियासत के कारोबार को चलाने की हिम्मत और हौसला दे।

# राजा साहिब की शक्ल सूरत, स्वभाव और विशेषताएं (भाग दो)

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश साहिब बड़े सुन्दर, लम्बे कद के हृष्ट पुष्ट युवा थे। उनका कद लगभग 6 फुट और अंग बड़े शक्तिशाली और शरीर खूब भरा हुआ था। चेहरे की बनवाट बहुत भली, रंग साफ, माथा चौड़ा, आंखें बड़ी--बड़ी और नाक उठी हुई थी जिससे चेहरा बड़ी रौनक वाला और सुन्दर मालूम होता था। वह बड़े चुस्त, चालाक और परिश्रमी थे। वह बड़े समझदार और सच बोलने वाले परन्तु सख्त स्वभाव के थे। वह एक कुशल प्रबंधक, दिलेर, सब्र करने वाले, पक्के मिजाज़ के मालिक थे। वह सफाई पसन्द, शौकीन और उत्तम वस्त्र पहनते थे। उनकी चाल ढाल में बड़ा रोब था। हर कार्य में सफाई का बड़ा ध्यान रखते थें, छोटे से छोटे काम में भी सफाई चाहते थे। बचपन के दिनों में उनकी खेल--कूद में बड़ी रुचि थी परन्तु जैसे--जैसे आयु बढ़ती गई वैसे--वैसे खेल--कूद से उनका दिल हटता गया और कार्य की तरफ ज़्यादा लगता गया। असल में काम की तरफ उनकी रुचि स्वाभाविक थी। सैर, शिकार, खेल और तमाशे में उन्हें ज़्यादा अधिक रुचि नहीं थी। न ही अधिक पढ़ने का शौक था। वह तनहाई को पसन्द करते थे। ज़्यादा भीड़ जुटाने में उनकी दिलचस्पी नहीं थी। उनका समय आम तौर पर कारोबार में ही व्यतीत होता था। जब काम से निपट लेते तो थोड़ी सैर से मनोरंजन करते थे या अपने निकट सम्बन्धियों से बातचीत करके अपना दिल बहलाते थे क्योंकि वह हास--परिहास में भी रुचि रखते थे।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश हर कार्य व हरेक मामले को विधिवत् करना पसन्द करते थे। कार्यालय के काम--काज में उनकी गहरी

रुचि थी तथा इसमें वे अधिक समय बिताते थे और हर काम को सरकार के कायदे कानून के अनुसार करने पर ज़ोर देते थे। सफाई इस हद तक रखी जाती थी कि दाग–धब्बा नहीं होता था। अहलकारों को सफाई और कायदे कानून की पाबंदी थी इसी कारण रियासत के विभिन्न कार्यालयों में और विशेष कर मुख्यालय में राजा शमशेर प्रकाश के शासनकाल के मुकाबले कर्मचारियों में बढ़ोतरी हो गई थी। परन्तु इसमें कोई शक नहीं कि कार्य विधिवत् होता था जिसकी अंग्रेज़ी सरकार के अधिकारी भी प्रशंसा करते थे। जिन दिनों वह हॉकी खेलते थे उन दिनों राजा साहिब ने खेल के कायदों की पुस्तक का अंग्रेज़ी से उर्दू में अनुवाद करवा कर खिलाड़ियों में बांटा था। उन्होंने खिलाड़ियों के लिए वर्दियां भी बनवायी थीं।

साधारण से साधारण स्थान जैसे कि घोड़ों के अस्तबल, हाथियों और पशुओं के गृह इत्यादि में भी सफाई रखने पर ज़ोर था। इसी प्रकार हरेक कर्मचारी की शारीरिक सफाई पर भी ज़ोर देते थे, सब को वर्दियां दी गई थीं, ताकि वे साफ सुथरे हो कर हाज़िर हुआ करें। बाजार गली–कूचों और सड़कों में भी बहुत अच्छी सफाई रखी जाती थी। सफाई के लिए मेहतर काफी संख्या में नियुक्त थे, हर जगह दिन में दो बार सुबह और शाम सफाई होती थी जिसकी निगरानी के लिए जमादार और इंस्पैक्टर नियुक्त थे। रियासत के भवनों की सफाई का राजा साहिब को इतना खयाल था कि वह हरेक भवन की सफाई का निरीक्षण स्वयं करते थे। चौकीदारों को आदेश थे कि वह खूब सफाई रखें। इन भवनों की साधारण मुरम्मत वर्ष में दो बार किये जाने के आदेश थे।

राजा साहिब को जनता के स्वास्थ्य के बारे में भी बड़ी रुचि थी। वह न केवल राजभवनों, महलों के भवनों बल्कि प्रत्येक सरकारी भवन और मार्गों पर सफाई का बहुत ध्यान रखते थे। उनके मुकाबले के मेहनती और परिश्रमी हिन्दुस्तान के राजाओं और रईसो में बहुत कम पाये जाते हैं। कार्यालय में वह छः सात घण्टे लगातार बैठ कर

कार्य करते थे। जुडीशियल कार्य में भी इन्हें बड़ी रुचि थी। मुकदमों को बहुत अच्छी तरह समझते थे। कचहरी में खास सैशन में वह जज और डिवीजनल जज की हैसियत से मुकदमों की सुनवायी करते थे। राजस्व विभाग में भी वह कमिश्नर और फाईनेंशियल की हैसियत से मुकदमों का फैसला स्वयं करते थे। वकीलों की बहस को बड़ी शांति और सहनशीलता से सुनते थे और कानूनी मामलों में बड़ी सोच समझ के बाद फैसला देते थे।

वह मुकदमों का निर्णय अंग्रेज़ी सरकार के कानूनों के आधार पर करते थे। संक्षेप में राजा सुरेन्द्र प्रकाश कानून को बहुत अच्छी तरह समझते थे और वह एक बड़े होशियार जुडीशियल अधिकारी थे। वह अब कार्यालयों में कार्यवाही तथा दूसरे मामलों और प्रशासन के प्रबंध में ज़रूरी कानूनों, जिनकी रियासत में आवश्यकता थी, का संकलन करने में व्यस्त रहते थे। उन्होंने शिकार खेलने के कानून बनाए और छोटी आयु के लोगों को नशे की चीज़ें बेचने पर भी पाबन्दी लगा दी। कार्यालय के समय के बाद वह हॉस्पिटल, जेल, अस्तबल, तम्बुओं व गोदाम आदि का निरीक्षण करते थे। वह वर्ष में एक बार हैडक्वार्टर के कार्यालयों तथा दूसरे क्षेत्रों के कार्यालयों का निरीक्षण अवश्य करते थे। कोई भी ऐसा कार्यालय नहीं था जिस पर राजा साहिब की नज़र न हो। अगर किसी स्थान पर सफाई में कमी पाते या कहीं विधि से कार्य न हो रहा हो या कार्यकर्ताओं के कार्य में कमी पायी गयी हो तो सम्बन्धित अधिकारियों को चेतावनी देने में कोई लिहाज नहीं करते थे। जिस किसी अधिकारी के कार्य में कोई कमी या दोष होता था तो उसको वह साफ–साफ कह देते थे। अगर कोई अधिकारी किसी कार्य को राजा साहिब की इच्छानुसार करने में असफल होता या न कर पाता तो राजा साहिब गुस्से में आकर उसकी कड़े शब्दों में आलोचना कर देते थे और स्वयं उस कार्य को करने का प्रबंध कर देते थे। वह सदा ही कुशल अधिकारियों की ढूंढ में रहते थे इसलिए उन्होंने कई अधिकारी बाहर से बुलवाए। परन्तु कुछ एक को

छोड़कर अन्य राजा साहिब को अपने कार्य से संतुष्ट न कर सके और रियासत से चले गए।

उनका स्वभाव बहुत ज़िद्दी था और वह अपनी इच्छानुसार ही कार्य करते थे। अगर किसी कार्य बारे वह अपनी कोई राय बना लेते तो उसको बदलना या ठीक करना एक कठिन कार्य होता था। परन्तु इसके साथ एक बात प्रशंसनीय थी कि वह माकूल (रीज़नेबल) व्यक्ति थे। वह सच्चाई को पसन्द करते थे। यद्यपि शुरू में वह किसी बात को नहीं मानते थे परन्तु उसके ठीक मालूम होने पर उसको बाद में मान लेते थे।

राजा साहिब अपनी रैयत को अनावश्यक जुल्म से भी सुरक्षित रखने का ध्यान रखते थे। उन्होंने रिश्वत और दूसरे अनुचित कार्यों आदि को अपनी रियासत में समाप्त कर दिया। रिश्वत आदि आम तौर पर उन रियासतों में अधिक हुआ करती है जहां के शासक आलस्य के कारण लापरवाह होकर निगरानी छोड़ देते हैं और केवल अहलकारों के हाथ ही कार्य सौंप देते हैं। उन्होंने कागज़ात इत्यादि को देखकर बिना किसी दूसरे की सहायता के स्वयं आदेश लिखने का तरीका जारी किया था और प्रत्येक व्यक्ति को यह अनुमति थी कि वह बिना समय नष्ट किए हैड ऑफिस में राजा साहिब के समक्ष हाज़िर होकर अपनी शिकायत का वर्णन कर सके जिसको सुनकर बिना किसी तीसरे के माध्यम और सिफारिश से उचित निर्णय लेते थे। यदि किसी की ओर से ज़्यादती या अनुचित कार्यवाही साबित हो जाती तो उसको दण्डित करने में कदापि संकोच नहीं करते थे और उसकी खूब खबर लेते थे, इसलिए सब लोग बड़े सतर्क और सावधान रहते थे और रैयत ज़ोर जबरदस्ती से बची रहती थी। इसके अतिरिक्त दूसरे कई प्रकार से भी रैयत की सहायता कर देते थे, जैसे कि उन्होंने विक्रमी संवत् 1965 में अकाल के दौरान ज़मींदारों की "तकावी" देकर सहायता की। उन्होंने अकाल के चलने तक ज़मींदारों की डिग्रियां करने पर प्रतिबंध लगा दिया था।

राजा साहिब का कार्य केवल कार्यालयों को सही रखने तक ही सीमित न था बल्कि वह रियासत के विकास की ओर भी उतना ही ध्यान देते थे। वह रियासत की आय व व्यय का भी ध्यान रखते थे और आमदनी से अधिक व्यय करना या अकारण खर्च करना कदापि पसन्द नहीं करते थे। उन्होंने बहुत से फिजूलखर्च कम कर दिए और रियासत की अर्थव्यवस्था को विकसित किया। उन्होंने अनिवार्य व लाभदायक कार्यों को पूरा करने के लिए खर्चों में बढ़ोतरी की जैसा कि सेना विभाग के बजट में पहले के मुकाबले लगभग दुगुना खर्चा बढ़ा दिया। इसी प्रकार दूसरे विभागों में भी अफसरों के वेतन में बढ़ोतरी की और अस्तबल, चिकित्सालय व जेल इत्यादि में भी सफाई रखने के लिए अधिक व्यय किया।

उन्होंने कई नवभवन निर्मित किए जैसे कि शिमला में बैन्टनी कोठी और कॉटेज, नाहन में बड़ा व छोटा अतिथि भवन, अस्तबल, महिला चिकित्सालय, कन्या पाठशाला, खादर बंगला, तहसीलों के भवन, डाकबंगला आदि। उन्होंने सेना के सिपाहियों के लिए पक्की बैरेकें व परेड ग्राऊंड की मंजूरी दी तथा काला अम्ब से नाहन तक पक्की सड़क और नैना से डगशाई तक नई सड़क बनवाने का प्रस्ताव किया। उन द्वारा किया गया सबसे उत्तम व लाभदायक कार्य वाटर वर्क्स है जिसको उन्होंने भारी लागत से बनवाया।

राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश को भ्रमण, शिकार और खेल–तमाशों में अधिक रुचि नहीं थी, परन्तु मनोरंजन और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए खेल इत्यादि में भाग लेते थे और बड़े हौंसले व खुशी से शामिल होते थे। टेनिस, हॉकी बहुत अच्छा खेलते थे। वर्ष में एक आधी बार शिकार खेलने के लिए जाते और बड़े ख़तरनाक जानवरों के शिकार में रुचि लेते थे। दूसरे जानवरों के शिकार का शौक नहीं था बल्कि इनकी सुरक्षा के लिए शिकार खेलने के नए कायदे व कानून बनाए थे। प्रत्येक जानवर के शिकार के लिए भारी फीस निश्चित की गई थी और इस पर भी विशेष व्यक्तियों को ही शिकार खेलने की अनुमति देते थे।

नाच–गाने व साज–संगीत में भी अधिक रुचि न थी परन्तु दशहरा आदि त्योहारों के अवसर पर अच्छी–अच्छी गाने वाली तवायफें बुलाई जाती थीं और चार–पांच दिन तक साधारण व विशेष महफिलों में गाना सुना करते थे।

राजा साहिब दूसरे खेल–तमाशे जैसे कि कुश्ती, जमनास्टिक और घोड़े के खेल आदि करवाते थे। वह अपने बिरादरी वालों को भी घोड़े के खेलों, नेज़ाबाजी आदि में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित करते थे। उन्होंने पोलो के लिए एक नया मैदान बनाया था, परन्तु पोलो के खिलाड़ियों की संख्या कम होने के कारण यह खेल जारी न हो सका। वह अच्छे वस्त्र पहनने के बड़े शौकीन थे। बड़े उत्तम फैशन के वस्त्र पहनते थे और दूसरों को भी अच्छे व साफ–सुथरे वस्त्रों में देखना पसन्द करते थे। वह आम तौर पर अंग्रेज़ी पहनावे पसन्द करते थे जिसके कारण नाहन में अंग्रेज़ी वेश–भूषा का अधिक रिवाज हो गया। वह रहना व खाना भी अंग्रेज़ी ढंग का पसन्द करते थे। वह कारोबार में भी यूरोपियन विधि के प्रशंसक थे।

राजा साहिब के स्वभाव में निश्चितता व बहादुरी भी अधिक थी। बीमारी या किसी दूसरी घटना के अवसर पर भी निश्चितता से कार्य लेते थे और कदापि नहीं घबराते थे। यह बात उनके द्वारा प्लेग, हैजा इत्यादि महामारियों को स्वयं जाकर रोकने तथा शेर आदि ख़तरनाक जानवरों के शिकार करने के समय प्रमाणित हुई। यद्यपि उनके स्वभाव में क्रोध कुछ अधिक था परन्तु सहनशीलता के कारण इससे कुछ अधिक हानि नहीं होती थी। धार्मिक मामलों में स्वतन्त्र विचार रखते थे, परन्तु त्योहार आदि के अवसर पर धार्मिक विधि अनुसार रस्मों को पूरा करते थे और वह हर धर्म के अच्छे नियमों को पसन्द करते थे। वह इन रस्मों को केवल दुनियादारी के लिए करते थे, वैसे तो उनका स्वभाव धार्मिक मामलों में स्वतन्त्र और विवकेशील था। उनके स्वभाव में धार्मिक कट्टरपंथ नहीं था। इसलिए कुछ समय से उनकी वेदान्त, दर्शनशास्त्र की ओर रुचि थी, इसलिए उन्होंने

उपनिषदों को सुनने के लिए पण्डित गरुड़ ध्वज, जो कि षट् शास्त्री (छः दर्शनशास्त्रों की जानकारी रखने वाले) और संस्कृत के बड़े विद्वान हैं, विक्रमी संवत् 1966 से सेवा में रखा था। उन्होंने उपनिषद् आदि भी मंगवाए थे, परन्तु आयु ने धोखा दे दिया और दिल की दिल ही में रह गई।

संक्षेप में यह कहना सही होगा कि राजा सुरेन्द्र विक्रम प्रकाश विवकेशील और बड़े जागरूक शासक थे, जो सदा ही अपने दायित्वों को बड़ी ईमानदारी और दृढ़ निश्चय से पूरा करते थे। रियासत के विकास व प्रसिद्धि में राजा शमशेर प्रकाश साहिब की तरह सदा सक्रिय रहते थे। रियासत के प्रबन्ध और प्रत्येक कार्य को उसी तरह करते थे जिस तरह राजा शमशेर प्रकाश साहिब करते थे बल्कि प्रत्येक कारोबार को उनसे भी बेहतर करते थे। विशेषकर उन्होंने जुडीशियल अदालतों को, जिस पर रैयत की शांति और सुरक्षा निर्भर है, एक अच्छे व ऊंचे स्तर पर स्थापित किया, जिससे इस रियासत के प्रबन्ध की प्रशंसा हुई। परन्तु जागरूक और होशियार शासक को ऐसी युवावस्था में सिरमौर की रैयत के सिर पर से मृत्यु ने इतनी जल्दी उठा लिया। अब आशा है कि सिरमौर के अगले शासक राजा अमरप्रकाश साहिब भी, जो बड़े दयालु व अच्छे स्वभाव के मालिक हैं, अपने पूर्वज के कदमों पर चलकर रैयत की भलाई और बेहतरी में इसी प्रकार सक्रिय रहेंगे।

शांति शांति शांति

# सिरमौर का इतिहास (अनुपूरक)

## इस भाग में शाही फ़रमान (आदेश) और सनदें, जो सिरमौर के राजाओं को जारी की गई हैं, शामिल हैं :—

**फ़रमान नं0 1 – अबुल मुज़फ्फर शहाबुद्दीन मुहम्मद शाहजहां बादशाह द्वारा राजा मान्धाता प्रकाश को जारी किया गया।**

(अनुवादक का नोट : – इन फ़रमानों से मुगल समय में प्रचलित, अलंकृत और भारी भरकम शाही भाषा को निकाल दिया गया है और केवल संक्षेप में फ़रमान का निष्कर्ष दिया गया है ताकि समझने व पढ़ने में असुविधा न हो)। अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा मान्धाता प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – – हमारा इरादा है कि बरसात का मौसम बीत जाने के बाद श्रीनगर के ज़मींदार पर चारों ओर से आक्रमण किया जाए। इसके लिए जम्मू और कांगड़ा के फ़ौजदार ऐरज़ खान को लिखा गया है कि वह काफ़ी फ़ौज के साथ और पहाड़ के सारे ज़मींदारों को साथ लेकर श्रीनगर के देश में दाखिल हो जाए। तुमको भी सूचना दी जाती है कि जब ऐरज़ खान उधर से पहुंचे और कुछ फ़ौज इधर से पहुंचे तो उस समय इस आक्रमण में शामिल हो जाओ। श्रीनगर के सब महलों के अतिरिक्त जितना भी क्षेत्र तुम चाहो उस पर कब्ज़ा कर लेना। हमने तुमको तुम्हारे देश की भांति प्रदान किया। कुमाऊं के निकट का क्षेत्र

कुमाऊं के ज़मींदार को, जो कि श्रीनगर के शासक का शत्रु है, दे दिया जाए। केवल दून, जो कि पहाड़ के बाहर स्थित है, शाही राज में शामिल किया जाएगा।

**फ़रमान नं0 2 – मुहम्मद शहाबुद्दीन शाहजहां बहादुर बादशाह की ओर से दोबारा राजा मान्धाता प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा मान्धाता प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – – –खलील–उल्ला–खां को दस हज़ार सवारों और इतने ही प्यादों के साथ श्रीनगर को नष्ट करने के लिए नियुक्त किया गया है। इस फरमान के मिलते ही यह उचित होगा कि तुम भी खलील–उल्ला–खां से परामर्श करके आक्रमण में अपनी सेवा देने की कोशिश करो। जीत प्राप्त हो जाने के बाद केवल दून का इलाका जो पहाड़ से बाहर मैदान में स्थित है शाही राज्य में शामिल किया जाएगा। शेष बचे क्षेत्र में से जितना इलाका तुम्हारे क्षेत्र से मिलता है वो तुमको प्रदान किया जाता है और बाकी बचा हमारे शुभचिंतक ज़मींदारों (रईसों) को दे दिया जाएगा। ताजपोशी के 28वें वर्ष के 24 मुहर्रम तदनुसार एक हज़ार पैंसठ हिजरी को लिखा गया।

**फरमान नं0 3 – अबुल मुज़फ्फर शहाबद्दीन मुहम्मद शाहजहां बादशाह की ओर से राजा सुभाग प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – –तुम्हारा आवेदन जिसमें तुम्हारी खैरख्वाही और फ़रमाबरदारी का इज़हार था, हमारी नज़र से गुज़रा। इस कारण कि तुम अपने सवारों और प्यादों को लेकर खलील–उल्ला–खां के पास हाज़िर हुए, गढ़वाल के पहाड़ी क्षेत्र से, जो तुम्हारी रियासत से मिलता है, जितना क्षेत्र चाहो अपने कब्ज़े में कर लो। इसके पश्चात् अगर खलील–उल्ला–खां तुम्हारे बारे

में कुछ और अर्ज़ करेगा तो वह भी मंजूर किया जाएगा। 11 रावी–उल–सानी 1065 हिजरी।

**फ़रमान नं0 4 – अबुल मुज़फ्फर शहाबुद्दीन मुहम्मद शाहजहां बादशाह की ओर सें राजा सुभाग प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – –खलील–उल्ला–खां के आवेदन से ज्ञात हुआ कि तुम्हारे पास उत्तम सेना है और तुम शाही सेवाओं को बड़ी शुभचिंता और प्रयासों से पूरा करते हो और यह आशा रखते हो कि कोटाह का इलाका जो तुम्हारी सीमा से लगता है, तुमको प्रदान किया जाए। हमने मेहरबानी करके कोटाह तुम्हारी जागीर में इन्हीं शक्तियों के साथ, जो तुमको अपने देश में हासिल हैं, प्रदान किया। तुमको अनुमति है कि कोटाह के ज़मींदार को बाहर निकाल करके क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लो। ताज पोशी के 28वें साल की 22 जमादी उलबल, तदनुसार 1065 हिजरी ।

**फ़रमान नं0 5 – मोहयुद्दीन मुहम्मद औरंगज़ेब आलमग़ीर बहादुर की ओर से राजा सुभाग प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – – भगवान की मेहरबानी से राज्य के प्रबन्ध की बागडोर हमारे हाथ में आई तथा तुम्हारी सेवाएं और हम पर तुम्हारा पूरा भरोसा रखने बारे हमें मालूम हुआ। क्योंकि यह वर्ष हमारे तख्त पर बैठने का पहला वर्ष है इसलिए तुमको चाहिए कि तुम हमेशा हमारे शुभचिंतक और आज्ञाकारी बने रहो। (यह फरमान) शवल की पहली तिथि सन–ए–जालूस (तख्त पर बैठने के) 32वें साल, (शाहजहा) तदनुसार हिजरी 1065 को लिखा गया।

**फ़रमान नं0 6 – मोहयुद्दीन मुहम्मद औरंगज़ेब आलमगीर बहादुर की ओर से मुहम्भद सुलतान बहादुर द्वारा राजा सुभाग प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – –शुजा हम से लड़कर और हार कर बंगाल में आवार फिरता है। उसको बन्दी बनाने के लिए शहज़ादा सुल्तान बाहदुर को नियुक्त किया गया है और हम राजधानी अकबार में रौनक फरमा रहे हैं। ज्ञात हो कि बदनसीब बेशिकोह (दारा शिकोह) के पत्र श्रीनगर में उसके बेटे सुलेमान बेशिकोह के पास और सुलेमान बेशिकोह के पत्र बदनसीब दाराशिकोह के पास तुम्हारे क्षेत्र में होकर आते जाते हैं। इसलिए तुम पर अनिवार्य है कि इस सिलसिले को तुरन्त बन्द करने का प्रयास करो। यदि कोई व्यक्ति पत्र के साथ पकड़ा जाए तो उसको हमारे पास भेज दो । अगर सुलेमान बेशिकोह इस रास्ते से कहीं जाने का इरादा करे तो न जा सके बल्कि उसको बन्दी बनाया जाए। 19 जमादी–उल–अबल की 1069 हिजरी।

अनुवादक का नोट : दाराशिकोह को घृणा से बदनसीब और बेशिकोह (बगैर शानो शौकत वाला) लिखा है इसी प्रकार सुलेमान शिकोह को बेशिकोह लिखा है। शिकोह का अर्थ शान और शौकत होता है।

**फ़रमान नं0 7 – आलमगीर बहादुर की ओर से राजा साहिब सुभाग प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन हैं, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – – दारा शिकोह जो कि ज़ंगलों में आवार फिरता है, और इसके बेटे सुलेमान शिकोह, जो पहाड़ में बन्दी है, के बीच पत्राचार के सिलसिले को समाप्त करने बारे, तुम्हारी उचित स्थानों पर चौकियां स्थापित करने की

सूचना का आवेदन हमने देखा। तुमको चाहिए की इस बारे में बड़ी होशियारी और सतर्कता से इनका प्रबन्ध चालू रखो और अपने लिए इसको बेहतरी का ज़रिया समझो। श्री नगर का ज़मींदार जो दूरदर्शी न होने के कारण तुमसे सदा झगड़ा करता है, इसको सजा देने के लिए अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुनें हुए राजा राजरूप और दूसरे सरदारों की एक भारी फ़ौज बहुत शीघ्र भेजी जाएगी। तुमको भी चाहिए कि अपने सामान और सैनिकों सहित तैयार रहो और जब यह सेना वहां पहुंचे तब ऐसी उचित राह से श्रीनगर की सीमाओं में प्रवेश करके उसको ऐसा दण्ड दो कि सदा के लिए उसकी शत्रुता का झगड़ा मिट जाए और इस तरह तुम हमारी मेहरबानियां हासिल करने के हकदार बन सको। तख़्त पर बैठने के पहले साल के सावल महीने की 16वीं तारीख को लिखा गया।

**फ़रमान नं0 8 – आलमगीर बहादुर की ओर से राजा साहिब सुभाग प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों के आशावान होकर मालूम हो कि – – – –अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए और बादशाही मेहरबानियों का आशावान राजा राजरूप को सेना देकर श्रीनगर के ज़मींदार को मिटाने के लिए नियुक्त किया गया है। तुम, जो अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में अग्रणी हो, को चाहिए कि अपना अस्त्र–शस्त्र ठीक करके तैयार रहो और जब राजा राजरूप श्रीनगर में पहुंचे तो तुम भी किसी और उचित रास्ते से श्रीनगर के ज़मींदार पर आक्रमण कर दो। रादअन्दाज खां को यहां से खास इसी वास्ते सेना के साथ रवाना किया गया है कि वह तुम्हारे साथ मिल जाए। उसके पहुंचने पर अपनी सवार और प्यादा फ़ौज को ले और इसके साथ मिल कर श्रीनगर के ज़मींदार को सदा के लिए मिटा दो। राजगद्दी पर बैठने के पहले साल के मुहर्रम महीने की 16वीं तारीख को लिखा गया।

**फ़रमान नं0 9 – खला खीर के बारे में।**

ज्ञात हुआ की गंगा राम और भूपत इत्यादि जो खला खीर के निवासी हैं, इस मोहल (क्षेत्र) को अच्छी तरह आबाद और विकसित नहीं कर सकते।, यह क्षेत्र सहारनपुर की सरकार से सम्बंधित है और शाहजहां आबाद राजधानी के प्रान्त में स्थित है। हमारी हिम्मत रैयत को खुशहाल करने और वहां पर भवन निर्माण का विकास करने में हर समय व्यस्त रहती है इस लिए सच्चकान येल मास (तुर्की साल) के खरीफ फसल के आरम्भ से अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए सिरमौर के राजा सुभाग प्रकाश को इस क्षेत्र को देते हैं। इस राजा का बर्ताव प्रजा के साथ बहुत ही उत्तम है और इसकी शक्ल और सूरत से स्पष्ट होता है कि वह इस क्षेत्र को आबाद और विकसित करेगा। वर्तमान और भविष्य के जागीरदार, फ़ौजदार और करोड़ी (खजांची) इस क्षेत्र के ज़मींदारों को राजा सुभाग सिंह के अधीन समझ कर इनसे सम्बंधित समझकर तमाम शक्तियों को उसका हक जानते रहें। ..............................राजतिलक के तीसरे साल की सातवीं जीलहजा (अरबी मास का नाम) को लिखा गया।

**फ़रमान नं0 10 – आलमगीर बहादुर की ओर से राजा बिहारी सिंह (राजा बुद्ध प्रकाश) के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा सुभाग प्रकाश जो इस्लाम के अधीन, बिहारी सिंह ––ज्ञात हो कि तुम्हारा आवेदन तुम्हारे पिता सुभाग प्रकाश की मृत्यु बारे और तुम्हें राजा के ख़िताब से सम्मानित करने बारे हमारी पवित्र और अति उत्तम नज़र से गुज़रा और हम तुम्हें बुद्ध प्रकाश का ख़िताब और सिरमौर रियासत के राज्य से सम्मानित करते हैं। पहले समय की भांति ही हमारे अधीन रहो और शाही सेवाओं को उत्तम ढंग से करते रहो और इनको अपनी तरक्की और खुशहाली का सबसे अच्छा माध्यम समझो। यह फ़रमान राजतिलक के 10वें साल के सिफ़र मास की चौदहवीं तिथि को लिखा गया।

**फरमान नं0 11 – राजा बुद्ध प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा बुद्ध प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – –सूरजचंद ज़मींदार के नालायक पुत्र को परगना अकबर नगर, जिसे सुहाना के नाम से भी जाना जाता है, से निकाल दिया था और यह परगना इससे छीनकर हमने फिदायी खां कोका (दायी का पुत्र) को उन शक्तियों के साथ, जो उसे अपने देश में प्राप्त हैं, दिया था। परन्तु ज्ञात हुआ कि सूरज चंद के बेटे ने इस परगने पर, मुज़फ्फरगढ़ और जगतगढ़ के क्षेत्र सहित, जो इसी परगना में है, कब्ज़ा कर लिया है। हमने रुस्तम बेग गुर्जबरदार (मुगदर उठाने वाला) को आदेश दिया है कि वह तुम्हें उस परगने में ले जाए ताकि तुम उस मर्दूद को मिट्टी में मिला दो। तुम पर यह अनिवार्य है कि तुरन्त बिना समय नष्ट किये उसका वध कर दो या उसको बाहर निकाल दो। इस परगने और इसमें स्थित क़िलों पर फिदाई खां के आदमियों का कब्ज़ा करवा दो और ऐसा बन्दोबस्त करो कि जिससे भविष्य में कोई भी बदकिस्मत फिर ऐसा कार्य न कर सके। राजतिलक के 17वें वर्ष के सिफर मास की पहली तिथि, तदनुसार 1085 हिजरी को लिखा गया।

**फ़रमान नं0 12 – अबुल मुज़फ्फर मोहयुद्दीन औरंगज़ेब बादशाह का राजा बुद्ध प्रकाश के नाम आदेश जो मुवज़्ज़म बिन आलमगीर (आलमग़ीर के बेटे) की मोहर से जारी हुआ।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा बुद्ध प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – –तुम्हारा आवेदन आदर और सम्मान की महफिल से लाभान्वित होने वालों के द्वारा हम तक पहुंचा। जम्मू और कांगड़ा की दून के पहले फ़ौजदार शुजआत शुआर अजीज़ के नाम फरमान भेजा गया है कि शाही सेवादारों और उस क्षेत्र के ज़मींदारों से काफी फ़ौज जमा करके तुम्हारी सहायता करे तथा

जिन स्थानों पर श्रीनगर के ज़मींदार ने तुम्हारी अनुपस्थिति में कब्ज़ा कर लिया है, जिस तरह भी हो इससे छीनकर तुम्हारा कब्ज़ा करवा दे। इस कब्ज़े की रसीद तुम से लेकर बगैर दारबखा से मिले यहां चला आए और उसका इन्तज़ार न करे। राजतिलक के 21वें वर्ष की रजब मास की पांचवीं तिथि को लिखा गया।

**फ़रमान नं0 13 – मुहम्मद मोहयुद्दीन औरंगज़ेब आलमगीर बाहदुर बादशाह गाज़ी का फ़रमान बुद्ध प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा बुद्ध प्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि – – – –तुम्हारा भेजा हुआ आवेदन कि श्रीनगर के राजा ने शाही फरमान के अनुसार बेराठ और कालसी का किला रियासत के हवाले कर दिया है हमारी नज़र से, जो अति पवित्र और सबसे ऊंची है, गुज़रा। तुमको यह उचित रहेगा कि इसके बाद झगड़े और दुश्मनी के निकट भी न फटको और श्रीनगर के राजा के क्षेत्र पर किसी प्रकार का आक्रमण न करो। शाही हुक्म को न मानने के रास्ते पर चलने को शत्रु की सफलता और अपना दुर्भाग्य समझो ..................................

**फ़रमान नं0 14 – शाहजहां की पुत्री जहांआरा के हस्ताक्षर सहित राजा बुद्धप्रकाश को 13 वें शासनवर्ष के समय भेजा गया (संक्षिप्त विवरण)**

तुम्हारा प्रार्थनापत्र कुछ वन्य प्राणियों और डाली अनार के साथ मिला, जिसका विवरण अलग पत्र में लिखा गया है। हमने इसे पढ़ा। तुमने जो लिखा है कि तुम्हारी सिफ़ारिश बादशाह हजूर के पास की जानी चाहिए। इस बारे में तुम्हें ज्ञात हो कि जांहपनाह इन दिनों अकबराबाद में तशरीफ़ रखते हैं और हम यहां पर हैं। इसलिए तुम्हारी सिफ़ारिश करने में देर हो रही है। यह समझो कि हमारा ध्यान तुम्हारी ही तरफ है, जमादी–उल–सानी 13 वां शासनवर्ष।

**फ़रमान नं0 15 – शाहजहां की पुत्री जहांआरा की ओर से राजा बुद्ध प्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालो में से चुने हुए राजा बुद्ध प्रकाश जो इस्लाम के अधीन ........ को ज्ञात हो कि तुम्हारा प्रार्थना पत्र इन दिनों पीली हरड़ और खट्टे अनार, नरबसी मुर्गेज़री (कोलसा) और कस्तूरी के साथ हमें मिला है। हम चाहते हैं कि एक और मुर्गेज़री प्राप्त करके हमें भेजें। मेहरबानी के तौर पर हम तुम्हें एक शाही वस्त्र (खिल्लत) देते हैं।

हमें हमेशा अपना मेहरबान समझो .........11 शव्वाल 14 वां शासन वर्ष।

**फ़रमान नं0 16 – जहांआरा की ओर से राजा बुद्धप्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा बुद्ध प्रकाश जो इस्लाम के अधीन .......... को ज्ञात हो कि तुम्हारा प्रार्थना पत्र कस्तूरी और चंवर के साथ हमने मुलाहिज़ा किया। तुमने जो लिखा था कि सोंढा इत्यादि हमारे तहवीलदारों के हाज़िर–ज़ामनी और माल ज़ामनी परगना साढोरा के ज़मींदारों ने कर ली थी और फिर उनको नकदी और जिन्स के साथ भागने में मदद की। और तुमने यह भी लिखा था कि म्याने दो अब (दोआबा) के फ़ौजदार रुह अल्ला खां और सरहिन्द के फ़ौजदार दिलावर खां और परगना साढोरा के फ़ौजदार अली–अकबर अमीन के नाम आदेश जारी हो जाए। सो तुमको मालूम रहे कि तुमने इस ज़ामनी के लेने में ग़लती की है। हम इस प्रकार के शाही मामलात में दख़ल नहीं दे सकते और न किसी को कुछ लिख सकते हैं।

बादशाह हजूर में इस बारे में प्रार्थना पत्र दो ताकि वहां से उनके नाम में आदेश हो जाए और वह ज़मींदारों और तहवील दारों को बांधकर माल सहित तुम्हारे पास भेज देंगे। जब तक यह मामला बादशाह हजूर तक नहीं पहुंचेगा, रुह अल्ला खां इत्यादि उन्हें

गिरफ्तार कर तुम्हें नहीं दे सकते।.........

21 रवी उल सानी–शासनवर्ष 18.

**फ़रमान नं0 17 – जहांआरा द्वारा बुद्धप्रकाश को भेजा गया।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने गए राजा बुद्ध प्रकाश को ....... ज्ञात हो कि तुम्हारे प्रार्थनापत्र लगातार बर्फ के संदूकों के साथ हमारी नज़र से गुज़रते रहे। तुमने लिखा था कि बर्फ को सरकारी भण्डार से सैयद शफ़ी और भूरे ने निकालकर भेजा है। परन्तु उनकी तहरीर (पत्र) नहीं पहुंची। बर्फ खराब थी। गढ़वाल के ज़मींदार ने लिखा था कि बर्फ मैंने भेजा है। इस बारे हक़ीक़त खुदा ही जानता है और तुमने एक और बात लिखी थी कि हक हकदार को ही मिलना चाहिए। इस बारे हम सिफारिश बादशाह हजूर में करें। जो कुछ उचित था हमने पहले ही हजूर में अर्ज़ कर दिया था। इसलिए हज़रत ने बख्शियों की मार्फत फिर आदेश जारी किया है कि जो व्यक्ति ज़्यादती करेगा, उसकी सज़ा पाएगा। उसने लिखा था और बादशाही हाकम के रू–बरू भी यही बयान किया है कि उस (ज़मींदार गढ़वाल) ने ज़्यादती नहीं की और हमेशा से यह इलाके उसके बाप–दादा के कब्ज़े में थे। परन्तु तुम (बुद्धप्रकाश) ने ज़बरन ले लिए थे। जब उसे मौका मिला उसने कब्ज़ा कर लिया। तुम्हारा ब्यान कुछ है और वह कुछ कहता है। इस मामले में जब तक मध्यस्थ मुकर्रर नहीं होगा तब तक असली हाल पता नहीं चलेगा। फ़ौज को अभी तैनात नहीं किया जा सकता क्योंकि इन दिनों दक्षिण और काबुल में फ़ौज की मांग हो रही है। इसलिए किसी दूसरी जगह फ़ौज भेजना मुश्किल है। जमादी–उल--अव्वल 21 वां शासनवर्ष।

**फ़रमान नं0 18 – जहांआरा की ओर से।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा बुद्ध प्रकाश को ज्ञात हो ...... तुम्हारा प्रार्थनापत्र शहद और बाज़ सहित हमारी नज़र से गुज़रा। दोनों चीजें उत्तम हैं। श्री नगर के

ज़मींदार की शत्रुता के बारे में भी ज्ञात हुआ। तुम्हारे और उसके बीच हमेशा झगड़ा रहता है और वह अपनी बद बख़्ती (हरकतों से) से बाज़ नहीं आता। अच्छा हुआ कि तुमने उसके बारे में बादशाह हजूर को सूचना दे दी। बर्फ के गिरने और दारोगा अब्दुल–रहमान की सुस्ती का भी हाल मालूम हुआ। उसे लिखा गया है कि गिरदावरी अच्छी तरह से करे और मज़दूरों को ध्याड़ी भी अच्छी दे। यदि वह पिछले साल की तरह कोताही करेगा तो उसका अच्छा फल नहीं पाएगा। ....... 25 मुहर्रम शासन वर्ष 23।

**फ़रमान नं0 19 – बादशाह आलमगीर की ओर से असदखां के माध्यम से जोगराज उर्फ मस्तप्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए तथा इस्लाम के अधीन जोग राज को ज्ञात हो कि तुम ने जो प्रार्थना पत्र अपने पिता बुद्ध प्रकाश की मृत्यु के समाचार के बारे में भेजा है तथा अपने लिए खिताब दिये जाने का आग्रह किया है हमारी नज़र से गुज़रा। हम तुम्हे मस्त प्रकाश के खिताब, सिरमौर का राज्य तथा राजवस्त्र से सम्मानित करते हैं तथा पिछले परम्परा के अनुसार तुम इस क्षेत्र के फ़ौजदार के अधीन रहो और इसे संतुष्ट रखो। ...........बीस रबी–उल–आखिर 31 वां शासन वर्ष तद्नुसार 1109 हिजरी।

**फ़रमान नं0 20 – बादशाह आलमगीर की ओर से राजा हरीप्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए तथा इस्लाम के अधीन हरीप्रकाश को ज्ञात हो कि तुम्हारा प्रार्थना पत्र तुम्हारे भतीजे मस्त प्रकाश के स्वर्गवास होने तथा अपने लिए खिताब और सिरमौर का राज्य दिये जाने का प्राप्त हुआ।

हम तुम्हारा प्रार्थना पत्र स्वीकार करते हैं और तुम्हें राजवस्त्र तथा राजा का खिताब देते हैं। तुम अपने बाप–दादा की परम्परा पर कायम रहो और इसे अपनी खुशहाली और भलाई का माध्यम समझो। वहां के भोजदार के अधीन रह कर उसको खुश रखो। दो

रबी–उल–आख़िर 46वां शासन वर्ष।

**फ़रमान नं0 21 – बादशाह आलमगीर के बेटे अब्बुलनसर सैयद कुतुबुद्दीन मुहम्मद मुअज्ज़म शाहआलम का फ़रमान भीमप्रकाश के नाम।**

अपने समकालीन और एक जैसी पदवी रखने वालों में से चुने हुए राजा भीमप्रकाश जो इस्लाम के अधीन है, को बादशाही मेहरबानियों का आशावान होकर मालूम हो कि इन दिनों तुमने जो प्रार्थनापत्र हमें भेजा था, हमारी नज़र में गुज़रा। तुम्हें एक शाही खिल्लत और सिरमौर की ज़मींदारी और राजगी के खिताब से सम्मानित किया। तुम्हें यह उचित होगा कि तुम इस मेहरबानी का शुक्रिया करो तथा हमारे दरबार की ताबेदारी करते रहो जोकि तुम्हारे फायदे और बेहतरी का माध्यम है। रबी–उल–आखिर की 29वीं तिथि। शासन काल का दूसरा वर्ष।

महाराज महीप्रकाश साहब सिरमौर के हस्ताक्षरों व मोहर लगे ताम्रपत्र की नकल

मोहर रामसत

श्री महाराज महीप्रकाश जी ने मगरू और भगता को पहले की तरह ही उदपालटा गांव का नम्बरदार नियुक्त किया है। जो कोई भी महीप्रकाश के उत्तराधिकारियों में हो वह इस आज्ञा का पालन करना रहे। मगरू और भगते को मालगुज़ारी छोड देना जो कि जौनसारों से वसूल होती रहे और ......... रसद पानी साल भर का इन्हें देते रहना और बकरा तथा शराब भी। अगर कंवर जी के पास आएं तो उन्हें ... भर के वस्त्र देते रहें। (सिरमौरी हिन्दी से अनुवाद)

सिरमौरी हिन्दी में लिखी सनद की नकल

मोहर श्री महाराज कर्मप्रकाश जी हस्ताक्षर श्री कर्मप्रकाश जी

हमने कोटाहा में भगत गालू आत्मा चौधरी को हमेशा के लिए जागीर दी है, वे उसका फायदा उठाएं। इसमें किसी को ही हुज्जत न हो, मिति चैत गते 27, संवत् 1862 विक्रमी 1 इसरू हजूर के सामने उनके हुक्मानुसार एसरू पटवारी ने लिखा।

सिरमौर जोकि नाहन के नाम से जाना जाता है

(हिन्द सरकार द्वारा दी गई सनदों की किताब से लिया गया)

जब गोरखों को पहाड़ी क्षेत्र से निकाल दिया गया, उस समय सिरमौर पर राजा कर्मप्रकाश का राज था परन्तु अपनी कमज़ोर बुद्धि के कारण उसे राज से हटा दिया गया और वहां का शासन उसके बड़े बेटे फतेहप्रकाश को दिया गया।

**सनद नं0 88** जो राजा को 21 सितम्बर 1815 ईसवी को दी गई, उसके अनुसार उसका पुराना क्षेत्र उसे और उसके उत्तराधिकारियों को हमेशा के लिए दे दिया गया है। परन्तु किला वा परगना मोरी (मोरनी) वहां के मुसलमान हाकम को उस द्वारा शत्रु के विरुद्ध दी गई सहायता के बदले में दे दिया गया है। क्यारदादून को इसके पश्चात् 1843 ई0 में सनद नं0 89 के अनुसार 50,000 रुपए नज़राना के बदले दोबारा सिरमौर के शासक को दिया गया। गिरी नदी के उत्तर में एक पहाड़ी ज़मीन का टुकड़ा राणा क्योंथल को मिला और परगना जौनसार और बावर जो देहरादून में स्थित हैं, उन्हें अंग्रेज़ी इलाके में शामिल किया गया।

19 वर्षीय सिरमौर के वर्तमान राजा शमशेर प्रकाश को उसकी बलवे में सेवाओं के बदले 5000/– रु0 का राजवस्त्र दिया गया और उनकी सलामी 7 तोपों की की गई। वह राजपूत खानदान से है और सिरमौर की सालाना आय लगभग 100000/– रु0 है। राजा के 250 [illegible] हैं जो अच्छी कवायद करने वाले हैं और जनगणना के अनुसार यहां की जनसंख्या 95175 है। राजा सरकार को कोई मालगुज़ारी नहीं देता परन्तु उससे सिपाहियों की सेवाएं उलपब्ध करवाने का वादा हुआ है।

फतेहसिंह साहेब राजा नाहन को दी गई सनद का अनुवाद जो 21 सितम्बर 1815 को लिखी गई :

क्योंकि गोरखा फौज इन सभी ज़िलो से निकल गई और सारे पहाड़ी क्षेत्र पर अंग्रेज़ों का कब्ज़ा हो गया इसलिए गवर्नर जनरल

बहादुर के आदेशानुसार यह सनद राजा फतेह सिंह को प्रदान होती है जिसके मुताबिक सिरमौर का इलाका पर तमाम हकूक और शाक्तियां इस राजा और इसके उत्तराधिकारियों को दिए गए। जगतगढ़ और मोरनी के क़िले और क्यारदादून तथा जौनसार बावर के ज़िले को सिरमौर राज्य से अलग करके अंग्रेज़ी सरकार के कब्ज़े में दे दिया गया है। इसके अतिरिक्त हन्नर और करचरी के किले तथा गिरी नदी के पश्चिमी छोर की भूमि क्योंथल की ठकुराई में शामिल की गई है। घाट और सलेहर के किले जो इस नदी के पूर्व की ओर हैं, सिरमौर राज्य में शामिल कर दिए गए हैं।

फतेह सिंह के लिए यह उचित है कि वह अंग्रेज़ी सरकार की मेहरबानियों का धन्यवादी हो और जो क्षेत्र उसे मिला है, उसपर कब्ज़ा करे तथा ऊपर लिखे गए क्षेत्रों पर अपना कोई हक या दावा न रखे जो सिरमौर से काटकर अंग्रेजी सरकार के इलाके और क्योंथल की ठकुराई में सम्मिलित हुए हैं।

इसके इलावा उसके लिए यह भी मुनासिब है कि वह सिरमौर के राज्य के प्रबन्ध के लिए कोई दीवान या दूसरा अधिकारी अंग्रेज़ी हाकम की इत्तलाह और मंजूरी के बगैर जो वहां नियुक्त होगा, न रखे। राजा को ऊपर लिखे गए करारों पर अमल करना होगा और उसे अंग्रेज़ी सरकार के हुक्म को मानकर लड़ाई के समय सरकार के आदेशानुसार अंग्रेज़ी फौज में शामिल होकर सरकार की मदद करनी होगी और राजा अपने क्षेत्र में 12 फुट चौड़ा रास्ता भी तैयार करवाएगा। अगर राजा ऊपर लिखित शर्तों में से किसी शर्त का पालन नहीं करेगा या दूसरे के इलाके में हस्तक्षेप करेगा तो वह अंग्रेज़ी सरकार को नापसन्द होगी और उसे बेदख़ल कर दिया जाएगा।

राजा के लिए यह भी मुनासिब है कि वह लिखित को जायज़ और विश्वसनीय माने और इन शर्तों के अनुसार जो इलाका उसको दिया गया है उस पर कब्ज़ा करे तथा रैयत की भलाई और कृषि के विकास और रियाया को इन्साफ़ दे और रास्तों की सुरक्षा के लिए

प्रयत्नशील हो। जो उसके लिए मुकर्रर किया गया है उससे ज्यादा रैयत से न ले। संक्षेप यह कि सभी को खुश रखे। रियाया का यह फर्ज़ होगा कि वह फतेहसिंह को अपना राज़ा माने और उसके आदेश का पालन करे।

**सनद 89 :** राजा साहेब नाहन राजा फतेह प्रकाश के नाम।

क्योंकि राइट ऑनरेबल काउंसिल के अधिवेशन में खुशी से नाहन के राजा फतेह प्रकाश और उसके वारिसों और उत्तराधिकारियों को क्यारदादून का इलाका सिरमौर राज्य को प्रदान करते हैं। यह मालूम रहे कि यह क्षेत्र फतेह प्रकाश, उसके वारिसों और उत्तराधिकारियों को निम्नलिखित शर्तों के अनुसार हमेशा के लिए दिया जाता है :–

(1) फतेहप्रकाश और उसके उत्तराधिकारी इस क्षेत्र के वासियों के हकों का ख़याल रखेंगे और बगैर किसी भेदभाव के उन्हें न्याय देंगे और इस मामले में हर फिरका और हर प्रकार का काम करने वालों को एक जैसा इन्साफ़ देंगे।

(2) फतेह प्रकाश और उसके उत्तराधिकारी किसी भी वाणिज्य या वस्तु जो उनके क्षेत्र से बाहर जाएगी या आएगी उस पर कर नहीं लेंगे।

(3) फतेहप्रकाश और इसके उत्तराधिकारी राज्य के उन रास्तों की देखरेख करेंगे जो वहां अब मौजूद हैं तथा उन रास्तों की तैयारी और मुरम्मत में आदेशानुसार सहायता करेंगे जो आईंदा अंग्रेज़ी सरकार गाहे–बगाहे तैयार करवाना चाहेगी।

(4) फतेहप्रकाश और उसके उत्तरा ........ पुलिस की मुनासिब (उचित) संख्या रखेंगे और उचित दूरी पर अपने इलाके में इन रास्तों में यात्रियों और व्यापारियों की सुरक्षा के लिए चौकियां कायम करेंगे।

(5) फतेहप्रकाश और उसके उत्तरा ............... कदापि किसी भी हीले बहाने से नज़राना आदि जिसको नज़राना रूमाली कहते हैं, नहीं लेंगे और न ही प्रजा पर किसी तरह का जुर्माना लगाएंगे।

मुहर तथा हस्ताक्षर
राइट ऑनरेबल गवर्नर जनरल बहादुर
काउंसिल ईन सैशन
5 सितम्बर 1833 को प्रदान हुए

हस्ताक्षर
डब्लयू सी बेकिंग व
सी.टी. मेटकॉफ व
ईरॉस साहेब

# सिरमौर रियासत
# का इतिहास

